श्रीश्री अद्वैतप्रकाश
॥ सङ्गणकसंस्करणं दासाभासेन हरिपार्षददासेन कृतम् ॥

श्रीश्रीविष्णुप्रिया गौरांग पत्रिका का
कलियुग पावनकारी
श्रीश्रीनिताईगौर सीतानाथ व
श्रीश्रीराधाकृष्ण की ब्रजलीला समन्वित

श्रीश्री अद्वैतप्रकाश

श्रीईशान नागर महाशय
द्वारा विरचित का यथारूप सम्पादन

श्रीलाद्वैतं गुरुं वन्दे हरिणाद्वैतमेव तं ।
प्रकाशितं परंब्रह्म योऽवतीर्णः क्षितौ हरिं ।।
अन्तः कृष्णं बहिर्गौरं कृष्णचैतन्य संज्ञकं ।
प्रेमाब्धिं सच्चिदानन्दं सर्वशक्त्याश्रयं भजे ।।
श्रीनित्यानन्दरामं हि दयालु प्रेमदीपकं ।
गदाधरन्च श्रीवासं वन्दे राधेश सेविनं ।।

Editor :
Deen Laxmi Narayan Das
Address :
Shri Shri Vishnu Priya Gauranga Sewa Asharam
Chaitnya Colony
Near Vankhandi Mahadev
Radhakund, Mathura (281504)

Sub Editor :
Shri Radha Gaur Gopal Das Ji

Prepared & Designer :
Brijbhoosan Pathak

Printing :
D.D. PRINT & PACK
Address :
1/11175 Subhash Park, Street-12
Naveen Shahadara
Delhi-32

समर्पण

श्रीश्रीनिताईगौर सीतानाथ पादपद्मों में एकनिष्ठ एवं
श्रीश्रीराधाकृष्ण चरणकमलों में एकान्त आश्रित उन मेरे दीक्षागुरु एवं
समस्त शिक्षागुरु वर्ग को यह ग्रन्थ समर्पित करता हूँ।
जिन्होंने मुझे श्रीश्रीअद्वैतप्रकाश की शिक्षा देकर
इस ग्रन्थ को प्रकाशन करने के योग्य बनाया।

निवेदन

श्रीश्रीअद्वैतप्रकाश भवसागर से पार करने वाली एवं श्रीकृष्णप्रेम
प्रदान कारिणी है। जगत् के हित के लिये इस ग्रन्थ का पठन–पाठन
अत्यावश्यक है। कलिकाल के दोषों को दूर करने के लिये एकमात्र
अमृतस्वरूप महौषधि है।
अतः समस्त सुधीजन इसके प्रचार–प्रसार में हमारा सहयोग दें।
यदि भूल से इस ग्रन्थ श्रीश्रीअद्वैतप्रकाश में मुझसे कोई त्रुटि हो, तो
मुझे अपना दास समझकर क्षमा करें आपकी अति कृपा होगी।
आपका धन्यवाद्।

सम्पादक

दीन लक्ष्मीनारायण दास
स्थायी पता– श्रीश्रीविष्णुप्रिया गौरांग सेवाश्रम,
वनखण्डी महादेव के पास
श्रीचैतन्य कॉलोनी, राधाकुण्ड, मथुरा (उ० प्र०)
पिन कोड नं० : 281504

विषय–सूची

प्रथम अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।1

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो जय हो, सीतानाथ, श्रीअद्वैत प्रभु की जय हो, बलराम स्वरूप श्रीनित्यानन्द प्रभु की समस्त भक्तगणों के सहित जय हो।

कलि घोर पापमय देखि पंचानन। कैछे जीव निस्तारिमु भावे मने मन।।2

श्रीशंकर भगवान् कलिकाल को घोर पापमय देखकर
यह सोचने लगे कि कलि जीव निस्तार कैसे होगा?

तबे बहु विचारिला योगमाया सह। हरि बिनु जीव निस्तारिते नाहि केह।।3

योगमाया के साथ बहुत विचार करने पर उन्होंने यह स्थिर किया कि भगवान् श्रीहरि के प्रकट हुए बिना कोई भी जीवों का उद्धार नहीं कर सकता।

एत कहि सदाशिव सदानंद चित। कारणसमुद्र तीरे हैला उपनीत।।4

इतना कहकर श्रीसदाशिव सदानन्द चित्त होकर कारणसमुद्र
के तट पर तपस्या के लिए बैठ गये।

योगासने महायोगी योग आरंभिल। योगे सप्तशत वत्सर अतीत हइल।।5

योगासन पर बैठकर महायोगी शिव ने तपस्या प्रारम्भ की।
इसप्रकार सात सौ वर्ष व्यतीत हो गये।

सेई घोर तपस्या ते हञा तुष्ट मन। जगत्कर्ता महाविष्णु दिला दरशन।।6

उस घोर तपस्या से प्रसन्न होकर जगत्कर्ता महाविष्णु ने उन्हें दर्शन दिया।

साक्षात्कारे पंचानन देखि नारायणे। बहुविध स्तुति कैला ना जाय कथने।।7

महाविष्णु श्रीनारायण का साक्षात्कार करके श्रीशिव ने उनकी बहुत प्रकार से स्तुति की।

महाविष्णु कहे तुहु नह आर केह। तोर मोर एक आत्मा भिन्न मात्र देह।।8

महाविष्णु ने कहा– "शिवजी! तुम पृथक् कोई नहीं हो,
तुम्हारी मेरी आत्मा एक है केवल शरीर भिन्न हैं।

एत कहि पंचानने कैला आलिंगन। दुई देह एक हैल के जाने तार मन।।9

इतना कहकर उन्होंने श्रीशिवजी को आलिंगन किया।
आलिंगन करते ही दोनों शरीर एक हो गये।

अत्याश्चर्य हैल एक शुन सर्वजन। शुद्ध स्वर्णवर्ण अंग उज्ज्वल वरण।।10

अत्याश्चर्य की बात यह हुई कि वह शरीर शुद्ध स्वर्णवर्ण का हो गया।

"कृष्ण कृष्ण" बलि प्रभु छाड़ये हुँकार। दैववाणी हैल तखन अति चमत्कार।।11

वह मिलित–विग्रह "कृष्ण–कृष्ण" कहकर हुंकार करने लगा
एवं उसी समय एक आकाशवाणी हुई–

शुन महाविष्णु तुमि ए हेन मूर्तिते। अवतीर्ण हओ आगे लाभार गर्भते।।12

हे महाविष्णु! तुम इसी रूप (शिव एवं महाविष्णु के मिलित रूप) में लाभा देवी के गर्भ से प्रकट होओ।

पाछे मुई अवतीर्ण हइमू नदीयाय। शची जगन्नाथ घरे देखिवा आमाय।।13

पीछे मैं शची एवं जगन्नाथ के घर नदिया में अवतीर्ण होऊँगा। वहां मुझे मिलना।

बलराम आदि करि जत भक्तगण। जीव उद्धारिते सबे लभिवे जनम।।14

श्रीबलराम आदि जितने भी भक्तगण हैं,
जीवोद्धार के लिए सभी जन्म ग्रहण करेंगे।

एत शुनि महाविष्णु शिवाभिन्न हञा। शान्तिपुरे लाभागर्भे प्रवेशिला गिञा।।15

यह सुनकर महाविष्णु शिव से पृथक् होकर शान्तिपुर में आकर लाभा देवी के गर्भ में प्रवेश कर गये।

लाभादेवी तपस्विनी सती धर्मयुता। तर्क पंचानन कुबेराचार्य वनिता।।16

लाभादेवी धर्मपरायण तपस्विनी सती नारी थीं और
तर्क पंचानन कुबेर आचार्य की गृहिणी थीं।

पूर्वे धनपति कुबेर शिव, पुत्र लागि। बहु तप जप कैला हैञा अनुरागी।।17

पूर्वकाल में धनपति–कुबेर ने शिव जैसा पुत्र प्राप्त
करने की इच्छा से तप किया था।

तपे तुष्ट हैया शिव तथास्तु कहिला। तथि लागि धराय कुबेर जनमिला।।18

श्रीशिवजी ने तपस्या से प्रसन्न होकर तथास्तु कहा।
इसी कारण से श्रीकुबेर कुबेराचार्य रूप में पृथ्वी पर प्रकट हुए।

नाम तोर हैला श्रीमान् कुबेर आचार्य। धर्म विद्याबले हैला सकलेर पूज्य।।19

उनका नाम हुआ श्रीमान् कुबेराचार्य।
धर्म, विद्या, बल से वे सर्वत्र पूजित हुए।

तान गुण वर्णिते मोहर शक्ति नाई। नृसिंह संतति वलि लोके जारे गाय।।20

उनको लोग नृसिंह–सन्तान कहकर गान करते हैं।
ऐसे श्रीकुबेराचार्य के गुण वर्णन करने की शक्ति मुझमें नहीं है।

जेई नरसिंह नाड़ियाल बलि ख्यात। सिद्ध श्रौत्रियाख्य आरु ओझार वंशजात।।21

यह नाड़ियाल नरसिंह नाम से विख्यात थे एवं

सिद्ध क्षोत्रिय ओझा वंश में इनका जन्म हुआ था।

जेई नरसिंह यशः घोषे त्रिभुवन। सर्वशास्त्रे सुपंडित अति विचक्षण।।22

यह सर्वशास्त्र में अति विलक्षण पंडित थे एवं

इनका यश त्रिभुवन में सर्वत्र फैला हुआ था।

जाँहार मंत्रणा बले श्रीगणेश राजा। गौड़िया बादशाहे मारि गौड़े हैला राजा।।23

इनकी मंत्रणा से ही श्रीगणेश राजा ने गौड़ प्रदेश के

तत्कालीन (संभवतः यवन) राजाको मारकर राज्य प्राप्त किया था।

जाँर कन्या विवाहे हय कापेर उत्पत्ति। लाउड़ प्रदेश हय जाँहार वसति।।24

इनकी कन्या के विवाह के बाद वरेन्द्र ब्राह्मणों की उत्पत्ति हुयी।

लाउड़ प्रदेश में इनका उस समय निवास था।

सेई वंश उद्दीपक श्रीकुबेराचार्य। राजधानीते छिल ताँर द्वारपण्डित कार्य।।25

उन्हीं के वंश उद्दीपक के रूप में श्रीकुबेराचार्य उत्पन्न हुए।

राजधानी में यह द्वार–पण्डित का कार्य करते थे।

विवाहान्ते क्रमे ताँर बहु पुत्र हैल। पुत्रगण मैले ताँर विवेक हउल।।26

विवाह के पश्चात् इनके क्रम से कई पुत्र हुए। किन्तु कोई भी पुत्र न बचा।

पुत्रों के शरीरान्त के कारण इनके हृदय में विवेक की जागृति हुई।

तबे गंगातीरे रम्ये शान्तिपुरे आइला। लाभा सह किछु दिन ताहा गोङाइला।।27

तब ये अपनी पत्नी लाभादेवी के साथ गंगा के

सुरम्य तीर पर बसे शान्तिपुर नाम ग्राम में आये।

एकदिन श्रीकुबेर तर्कपंचानन। आकारे जानिला लाभार गर्भेर लक्षण।।28

एकदिन श्रीकुबेराचार्य ने श्रीमतीलाभा देवी में गर्भ के लक्षण देखे।

नारायण पूजा कैला नाना उपहारे। ब्राह्मण दरिद्र अन्धे तुषिला आहारे।।29

उन शुभ लक्षणों को देखकर उन्होंने श्रीनारायण भगवान् की पूजा की एवं ब्राह्मण,

दरिद्र एवं अन्धे व्यक्तियों को भोजन कराया।

हेनकाले राजपत्री कुबेर पाइला। वनिता सहिते निज देशेते चलिला।।30

इसी समय श्रीकुबेराचार्य को राजा का संदेश प्राप्त हुआ। संदेश पाकर श्रीकुबेराचार्य

ने सपत्नीक अपने देश को प्रस्थान किया।

लाउरेते नवग्रामे छिल ताँर वास। दिव्यसिंहराजार याँहा राजस्व विलास।।31

लाउड़ प्रदेश के नवग्राम में इनका निवास था। यहाँ पर दिव्यसिंह राजा का

राज्य था।

तबे कुबेर भार्या सह नवग्रामे गेला। सेई ग्रामेर लोक ताँर सम्मान करिला।।32

श्रीकुबेराचार्य के सपत्नीक यहाँ पहुँचने पर

समस्त ग्रामवासियों ने उनका समुचित सम्मान किया।

बहुदिन परे राजा देखि आचार्येरे। प्रणमि कुशल पूछे आनन्द अन्तरे।।33

बहुत दिन पश्चात् आज श्रीकुबेराचार्य एवं राजा का सम्मिलन हुआ था।

राजा कहे कह कह तर्क पंचानन। मंगल काहिनी आर विलम्ब कारण।।34

अतः राजा ने इनसे समस्त कुशल क्षेम पूछा एवं

बहुत विलम्ब से स्वेदश लौटने का कारण जानना चाहा।

तोमार सत्संग मोर आनन्देर खनि। तुयां बिनु राजपाट शून्य करि मानि।।35

राजा ने कहा तुम्हारे सत्संग से मुझे आनन्द प्राप्त होता है एवं

तुम्हारे न रहने से मुझे यह राज्य शून्य जैसा प्रतीत होता है।

आचार्य कहेन, भूप ! तुहू दयानिधि। दरिद्र ब्राह्मणे दया कर निरवधि।।36

आचार्य ने कहा– राजन्! आप दयानिधि हो,

आप सदा ही इस गरीब ब्राह्मण को सम्मान देते हो।

गंगातीर पुण्यभूमि अति रम्य स्थान। ताहां वास हय स्वर्ग वासेर समान।।37

आचार्य ने कहा– राजन्! गंगातट पर शान्तिपुर अति पुण्यभूमि एवं रमणीक

स्थान है। वहाँ वास करना स्वर्ग में निवास करने के समान है।

ताहां हइते आसिवारे मने नहिंमाय। तबे जे आइलूँ चलि तोमार आज्ञाय।।38

वह स्थान छोड़ने को हृदय नहीं चाहता है, फिर भी

आपकी आज्ञा शिरोधार्य कर मैं यहाँ चला आया हूँ।

ईश्वर कृपाय पुन हैल गर्भाधान। अदृष्टेर फल जेई हय मूर्तिमान।।39

ईश्वर की कृपा से पुनः मेरी गृहिणी गर्भवती हो गयी है।

मैं समझता हूँ। मेरे किसी अदृष्ट का फल ही गर्भ रूप में मूर्तिमान हुआ है।

राजा कहे पुण्य स्थाने हैल गर्भाधान। मंगल हइवे सत्य करि अनुमान।।40

राजा ने कहा– आचार्य! यह जो गर्भाधान हुआ है, यह पुण्य स्थान में हुआ है।

अतः निश्चय ही मंगल होगा– ऐसा मेरा सत्य अनुमान है।

पूर्व शोक पासरिया ईश्वरे रे डाक। ताँहार कृपाय हैव अपूर्व बालक।।41

अपने पहले शोक को भूल कर ईश्वर का स्मरण करो।

उनकी कृपा से यह अपूर्व बालक होगा।

एई मते बहु कथा कहे दुई जन। हेनकाले आइला एक गणक ब्राह्मण।।42

इसप्रकार दोनों कथावार्ता कर रहे थे कि
उसी समय एक ज्योतिषी ब्राह्मण वहाँ आया।

गणक कहे शुनह पण्डित महाशय। देवरूपी पुत्र पाइवा नाहिक संशय।।43

उसने कहा, पण्डित महाशय! इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि
अब आपको देव–समान एक पुत्ररत्न प्राप्त होगा।

चिरजीवी हव सेई धर्मशास्त्रवेत्ता। शुद्ध धर्म प्रचारिते देखि तान सत्ता।।44

वह चिरजीवी एवं धर्मशास्त्रवेत्ता होगा एवं
शुद्ध धर्म का अद्वितीय प्रचारक होगा।

एत कहि गणक से हइला अन्तर्धान। राजा पिछे उल्लासिया ना पाईला संधान।।45

इतना कहकर वह ज्योतिषी पंडित अन्तर्धान हो गया। राजा ने हर्षित होकर
पीछे उसका पता लगवाया किन्तु कहीं कोई पता नहीं लगा।

आश्चर्य मानिया सबे कहे परस्पर। एइ जन हैव बुझि देव अवतार।।46

सब लोग आश्चर्य चकित हो गये और कहने
लगे कि यह कोई अवतारी पुरुष था।

आचार्य हइला तुष्ट दैवज्ञ वचने। घरे जाआ सब तत्व कहे लाभा स्थाने।।47

आचार्य देवज्ञ के वचनों से अत्यधिक सन्तुष्ट हुए
एवं समस्त वृत्तान्त घर आकर श्रीलाभादेवी से कहा–

लाभा कहे ईश्वरेर महिमा अपार। ताँर दया हैले नाहि रहे दुःख भार।।48

लाभा बोली– ईश्वर की महिमा अनन्त अपार है।
उसकी कृपा हो जाय तो कोई दुःख नहीं होता है।

भक्तिभावे विष्णु–पूजा करे जेई जन। सर्वत्र मंगल हय कहे साधुगण।।49

भक्तिभाव से जो विष्णु पूजा करते हैं,
उनका सर्वप्रकार से मंगल ही होता है– साधुगण कहे हैं।

ताहा शुनि आचार्य विशुद्ध ज्ञानवान। कहे प्रिये एइ सत्य वेदेर प्रमाण।।50

स्वपत्नी लाभादेवी केमुख से विशुद्ध ज्ञानवान आचार्य ने यह वचन सुनकर कहा
कि प्रिय! यह वचन सर्वथा सत्य हैं एवं वेदों द्वारा प्रमाणित हैं।

विष्णुर अर्चने हय सर्व देवार्चन। सर्व सिद्धि हय खण्डे मायार बंधन।।51

श्रीविष्णु के अर्चन से समस्त देवताओं का अर्चन स्वतः ही हो जाता है एवं
मायाबन्धन नष्ट होकर मनुष्य सर्वसिद्धि प्राप्त करता है।

तबे कुबेर भक्ति भावे नाना उपहारे। महा आडम्बरे नारायण पूजा करे।।52

इसप्रकार श्रीकुबेराचार्य विविध उपहारों
द्वारा नारायण की महोत्सव–पूर्वक पूजा करने लगे।

विष्णुर प्रसाद विप्रगणे भुन्जाइला। अंध, आतुर, अकिंचने वस्त्रदान कैला।।53

श्रीविष्णु का प्रसाद ब्राह्मणों को दिया, अंधे, दीन–दुःखियों को वस्त्र दिये।

एकदिन शुन एक अपूर्व काहिनी। रात्रि शेषे स्वप्न देखे लाभा ठाकुरानी।।54

एकदिन एक विचित्र घटना घटी, शेष रात्रि में (प्रातः) लाभादेवी ने
एक स्वप्न देखा।

निज हृत्कमले देखे हरिहर मूर्ति। ताँर अंग कान्त्ये सर्वदिग हय स्फूर्ति।।55

उसने अपने हृदय में श्रीहरिहर (श्रीविष्णु एवं शिव) की मिलितमूर्ति का दर्शन
किया। उसे उनकी अंगकांति की चारों ओर स्फूर्ति होने लगी।

हरि संकीर्त्तन करे सुमधुर स्वरे। बाहु तुलि नाचे कान्दे बाह्य नाहि स्फुरे।।56

वे बड़े मधुर–स्वर से हरिसंकीर्त्तन कर रहे थे एवं बाह्यज्ञान शून्य होकर हाथ
उठाकर नृत्य एवं क्रन्दन कर रहे थे।

हरेकृष्ण बलि तेंह करये हुंकार। ताहा शुनि आइला तथि सूर्येर कुमार।।57

वे 'हरेकृष्ण' बोलकर हुँकार कर रहे थे, उसे सुनकर वहां यमराज आये।

यमराज आसि देखे रूपेर माधुरी। हरिहर एक अंग जैछे हर गौरी।।58

यमराज ने वहां उनकी रूपमाधुरी का दर्शन किया।
हरिहर के एक अंग में जैसे शिव–पार्वती प्रतीत हो रहे थे।

कोटि सूर्य जिनि अंगकांति मनोहर। ऐछे रूप बर्णिवारे केवा शक्ति धर।।59

जिनकी अंगकान्ति कोटि सूर्यों के समान मनोहर थी।
ऐसे रूप का वर्णन करने की किसमें शक्ति है?

मुखे हरेकृष्ण अंगे पुलक उद्‌गम। अश्रुधारा बहे सदा सुरधुनी सम।।60

उनके मुख में हरेकृष्ण नाम स्फुरित हो रहा था, अंगों में पुलक हो रहा था।
गंगा धारा की तरह उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित हो रहे थे।

विशुद्ध प्रेमेते तान डगमग अंग। क्षणे नृत्य करे बाढ़े प्रेमेर तरंग।।61

विशुद्ध प्रेम से उनका अंग डोलायमान हो रहा था।
क्षण–क्षण में नृत्य में प्रेम–तरंग बढ़ती ही चली जा रही थी।

एइ अलौकिक भाव करि दरशन। अष्टांगेते प्रणमिला तपन नन्दन।।62

उनमें इस अलौकिक भाव के दर्शन करके यमराज ने साष्टांग प्रणाम किया।

बहुविध स्तव कैला ना जाय कथन। कर जोड़े कहे तबे मधुर वचन।।63

उन्होंने श्रीहरिहर की बहुत प्रकार से स्तुति करने के
पश्चात् हाथ जोड़कर मधुर–वाणी में कहा।

शुन प्रभु ए तामस कलियुग हय। इथे तुया अवतार आश्चर्य विषय।।64

हे प्रभो! यह घोर कलियुग है इसमें आपका अवतार एक आश्चर्य का विषय है।

तोमा दरशने पापी पाइवे परित्राण। मोर अधिकार तवे हइव निर्वाण।।65

कलियुग में आपके स्वरूप–दर्शन मात्र से ही पापियों का
निस्तार हो जावेगा और मेरा सारा अधिकार जाता रहेगा।

अतएव प्रभु तुहुँ हउ अप्रकट। निज दासे दया करि घुचाउ संकट।।66

अतएव हे प्रभु! आप तुरन्त अप्रकट होवें एवं दास को संकट से मुक्त करें।

शुनि प्रभु ईषत् हासिया कहे यमे। स्थिर हउ धर्मराज पड़ियाछ भ्रमे।।67

सुनकर प्रभु धीरे से हँसे और यमराज से कहने लगे–
धर्मराज! तुम भ्रमित हो गये हो, स्थिरता से विचार करो।

पापीर ये घोर दुःख ना कर संधान। पर दुःखे दुःखी हय साधु ज्ञानवान।।68

साधुजन सदा परदुःख दुःखी होते हैं। तुम भी शान्त
होकर पापियों के दुःख के विषय में चिन्ता करो।

यदि कह जीव आत्मकर्म भोग करे। कर्मबंध नाशिवारे केवा शक्ति धरे।।69

यदि तुम कहो कि जीव अपने किये कर्मों का फल भोग करता है।
कर्म बन्धन को नाश करने की शक्ति किसमें है।

मायावृत जीव निज हित नाहिं जाने। तुच्छ बाह्येन्द्रिय सुखे हित करि माने।।70

जीवमाया में आवृत होकर अपना हित नहीं जानता,
सांसारिक सुख को अपना हित करके मानता है।

रोगी जैछे कुपथ्य भुंजिया दुःख पाय। तैछे संसारासक्तेर कर्मबंध हय।।71

रोगी जैसे कुपथ्य खाकर दुःख को भोगता है,
वैसे संसारासक्त मनुष्य को भी कर्म बन्धन होता है।

विशेष कलिते जीव स्वेच्छाचार करि। घोर दुःख दावाग्नि ते जाय गड़ागड़ि।।72

विशेषतः कलियुग में जीव अपना मन–माना आचरण करते हैं
और घोर दुःखरूपी दावाग्नि में जलते हैं।

जीवेर असह्य क्लेश देखि मोर मन। धैरज न धरे शेषे करिनु एइ प्रण।।73

जीवों के इस असहनीय क्लेश को देखकर मेरा
मन व्याकुल हो उठा है, मैंने यह प्रण किया है।

कर्मबंध विनाशक एई महामंत्र। शुद्ध कृष्णप्रेम भक्ति उत्पादक यंत्र।।74

यह श्रीहरिनाम मंत्र कर्म बन्धन को नाश करने वाला है
और शुद्ध कृष्णप्रेम भक्ति को उत्पादन करने का यंत्र है।

सेई चिन्मय हरिनाम जीवे शिखाइया। पापीगणे उद्धारिमुशक्ति संचारिया।।75

चिन्मय महामंत्र हरिनाम जीवों को सिखाकर और
शक्ति संचार कर मैं पापी लोगों का उद्धार करूंगा।

तथि लागि मुञि एबे लभिनु जनम। धन्य कलियुग बलि गाइव साधुगण।।76

इसीलिए मैंने जन्म लिया है। साधुगण इस
कलियुग को धन्य–धन्य कहकर बखान करेंगे।

आर एक सुदृढ़ प्रतिज्ञा मोर हय। स्वयं भगवाने प्रकट करिमु निश्चय।।77

और भी एक सुदृढ़ प्रतिज्ञा मेरी है कि मैं निश्चित रूप से
स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण को आविर्भूत कराऊँगा।

सांगोपांग महाप्रभु हैव अवतीर्ण। शुद्ध प्रेमवन्याय देश हैवे परिपूर्ण।।78

अपने अंगों (श्रीनित्यानन्द प्रभु) तथा उपांगों (पार्षदों) सहित महाप्रभु श्रीगौरांग अवतार ग्रहण करेंगे। वे शुद्ध प्रेम की वन्या प्रवाहित कर सारे देश को प्लावित करेंगे।

इथेह ना घूचिवेक तुया अधिकार। निन्दुक पाखण्डिगण ना हैवे उद्धार।।79

हे यमराज! तुम्हारा अधिकार भी इसमें नष्ट न होगा, जो निन्दक एवं पाखण्डी लोग हैं, उनका उद्धार न होगा– उन पर तुम्हारा ही अधिकार रहेगा।

एत शुनि यमराज निज ठाञि गेला। स्वप्न भांगि लाभादेवी जागिया वसिला।।80

यह सुनकर यमराज अपने स्थान पर चला गया।
इतने में लाभादेवी का स्वप्न भंग हो गया और वह जाग उठी।

अद्भुत स्वप्न कथा पण्डिते कहिला। शुनिया आश्चर्य मने विस्मय मानिला।।81

अपने स्वप्न का अद्भुत वृत्तान्त लाभादेवी ने पण्डित जी को सुनाया।
वे सुनकर आश्चर्य चकित हो उठे।

तबे साध्वीलाभा देवीर दशमास गेला। माघी सप्तमीते प्रभु प्रकट हइला।।82

दश मास गुजरने पर साधवी लाभा के यहाँ माघ शुक्ल सप्तमी संवत् 1491 के दिन श्रीअद्वैतप्रभु का जन्म हुआ।

शुभदिने स्नानदान करे हरिध्वनि। हुलू–हुलू ध्वनि करे जतेक रमणी।।83

शुभदिन होने से सब लोग स्नान दान कर रहे थे और सर्वत्र हरिनाम ध्वनि हो रही थी। रमणीगण हुल–हुल ध्वनि कर रही थीं।

साधुर हृदये प्रगाढ़ आनन्द बाढ़िल। कि हेतु आनन्द ताहानाहिं समझिल।।84

साधु–भक्तजनों के हृदय में गाढ़ आनन्द उथल रहा था
किन्तु इस आनन्द के कारण को कोई भी नहीं जान पा रहा था।

यथा काले कुबेर ज्योतिषी आनाइला। कमलाक्ष नाम तार बाछिया राखिला।।85

यथा समय श्रीकुबेराचार्य ने ज्योतिषी को बुलवाया।
उसने शिशु का नाम कमलाक्ष रखा।

पन्चम वत्सरे प्रभुर देख चमत्कार। श्रीकृष्ण नैवेद्य विनु ना करे आहार।।86

कमलाक्ष–श्रीअद्वैतप्रभु ने पाँचवें वर्ष में यह चमत्कार दिखाना आरम्भ कर दिया कि वे कृष्ण–प्रसाद को छोड़कर और कोई भी वस्तु नहीं खाते थे।

शुभ क्षणे द्विजराज हाते खड़ि दिल। एक मासे वर्णज्ञान प्रभुर हइल।।84

शुभ क्षण में श्रीकुबेर पण्डित ने कमलाक्ष के हाथ में खड़ि दी–विद्या का आरम्भ कराया। एक मास में ही उन्हें सम्पूर्ण अक्षरों वर्णो का ज्ञान हो गया।

श्रीगौरांग श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत–प्रकाश।।88

इस प्रकार श्रीगौरांग एवं श्रीअद्वैत के चरणों की अभिलाषा करते हुए
श्रीईशान नागर श्रीअद्वैतप्रकाश का वर्णन करते हैं।

द्वितीय अध्याय

जय जय श्री चैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानंदराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो, जय हो, श्रीसीतानाथ अद्वैतप्रभु की जय हो।
समस्त भक्तों के सहित श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय हो।

श्रीलाउड़धाम कारण–रत्नाकर हय। जहाँ श्रीअद्वैत प्रभुर बाल्यलीलोदय।।02

श्रीलाउड़धाम कारण–समुद्र के समान है, जहां श्रीअद्वैत प्रभु की बाल्यलीलाएँ प्रकट हुईं

एकदिन शुन एक अपूर्व आख्यान। पुत्र कोले करि लाभा करिला शयान।।03

एकदिन की आश्चर्य कथा सुनिए। श्रीलाभादेवी पुत्र को गोदी
में लेकर सो रही थी।

रात्रिशेषे स्वप्न देखे अति चमत्कार। निज कोले प्रभु जेई सेइ शिवाधार।।04

शेष रात में उसने एक स्वप्न देखा और चमत्कृत हो उठी। जिस पुत्र को वह लेकर सोई थी, उसने देखा कि– वह अति अलौकिक रूप में है।

चतुर्भुज शंख पद्म चक्र गदाधर। शुक्ल वर्ण महाविष्णु देव अगोचर।।05

वह शंख, पद्म, चक्र, गदाधारी चतुर्भुज मंगलमय महाविष्णु हैं।
उनका शुक्लवर्ण है और देवताओं को भी उनका दर्शन दुर्लभ है।

शरच्चन्द्र प्रभामय ताँर अंगकान्ति। देखिले त्रिताप हरे लभ्य हय शान्ति।।06

पूर्ण शरद के चन्द्र के समान उनके अंगों की कान्ति है और दर्शन करते ही तीनों ताप नाश होकर शान्ति की प्राप्ति होती है।

सेई अलौकिक मूर्ति देखि लाभा सती। अष्टअंगे दण्डवत् करिया प्रणति।।07

श्रीलाभा सती उस अलौकिक मूर्ति का दर्शन कर
उन्हें आठों अंगों से प्रणाम करने लगीं।

करपुटे भक्ति भावे नाना स्तुति करे। प्रभु कहे किवा लागि स्तुति कर मोरे।।08

हाथ जोड़कर वह उनकी नाना प्रकार से स्तुति करने लगीं।
प्रभु बोले– "आप मेरी स्तुति क्यों कर रही हो?

लाभा कहे देह तुया श्रीचरणोदक। प्रभु कहे गुरु हय जननी–जनक।।09

लाभा ने कहा– आप मुझे अपना श्रीचरणामृत दीजिए।"
प्रभु ने कहा, माता–पिता तो गुरु के समान होते हैं।

लाभा कहे तुहु जगद्‌गुरुसदाशिव। घटे–घटे आछ नित्य हआ बहु जीव।।10

लाभा ने कहा–"आप भी तो सदाशिव जगद्‌गुरु हैं
और प्रत्येक शरीर में जीव रूप होकर विराजमान हैं।

सुनि जगतेर मूल केवा तव माता। स्वयं महाविष्णु तहुँ जगतेर पिता।।11

आप जगत् के मूल हैं, आपकी माता कौन हो सकती
है? आप स्वयं महाविष्णु समस्त जगत् के पिता हैं।

कोटि कोटि तीर्थ आछे तव रांगा पाय। तुया चरणामृत पाने जीव मोक्ष पाय।।12

आपके अरुण चरणों में कोटि–कोटि तीर्थ निवास करते हैं।
आपका चरण जल प्राप्तकर जीव मोक्ष प्राप्त करते हैं।

अतएव पादोदक देह प्रभु मोरे। प्रभु कहे ऐछे बात ना कह पुनर्वारे।।13

अतः हे प्रभु! अपना चरण जल मुझे प्रदान कीजिए।
प्रभु ने कहा– माता! ऐसी बात आप फिर मत कहिएगा।

कह यदि आनि दिव सर्व तीर्थगण। स्नान पान करि कर धर्म प्रवर्त्तन।।14

यदि आप चाहो तो आपको समस्त तीर्थों का जल लाकर दे सकता हूँ।
आप उसका स्नान–पान करे धर्म–प्रवर्त्तन करें।

ए हेन अद्‌भुत स्वप्न करि दरशन। जागिया वसिला लाभा स्मरिनारायण।।15

ऐसा अद्‌भुत स्वप्न देखकर लाभादेवी नारायण
नारायण स्मरण करते हुए जाग उठीं।

कहे कि आश्चर्य आजि देखिनु स्वपने। प्रभाते स्वप्न सत्य ज्योतिष प्रमाणे।।16

मन में सोचने लगी कि कैसा आश्चर्यमय स्वप्न मैंने आज देखा है। फिर प्रभात
के समय का स्वप्न तो सत्य होता है– ऐसा ज्योतिषीगण कहते हैं।

प्रभु उठि कहे माता किवा कह तुमि। लाभा कहे स्वपन एक देखियाछि आमि।।17

प्रभु ने जागकर पूछा–माता आप क्या कह रही हैं?
लाभादेवी ने कहा– आज मैंने एक आश्चर्य स्वप्न देखा है।

प्रभुकहे कि देखिला कह ना जननि। लाभाकहे किवा काज शुनि से काहिनी।।18

प्रभु ने कहा– माता! मुझे सुनाओ लाभा ने कहा,
उसे सुनने से तुम्हारा क्या प्रयोजन है?

प्रभु कहे सत्य करि वक्तह स्वपन। ना कहिले ना करिमु नर्तन कीर्तन।।19

प्रभु ने कहा– माता! आप मुझे अपना स्वप्न सत्य–सत्य सुनाओ,
वरना मैं नृत्यकीर्तन न करूँगा।

लाभा कहे वाछारे तुइ अबोध बालक। सेइ कथा शुनिले तोर कि फलदायक।।20

लाभा बोली– वत्स! तुम अभी अबोध बालक हो,
तुम्हें उस कथा को सुनाने से क्या लाभ होगा?

एत कहि अपरूप स्वप्न विवरण। आद्योपान्ते कहि कैला अश्रु विसर्जन।।21

फिर पुत्र के हठ पकड़ने पर लाभादेवी ने नेत्रों से आँसू बहाते हुए
उस अद्‌भुत स्वप्न को आद्योपान्त कह सुनाया।

प्रभु कहे माता मुइ करिनु एइपण। सर्वतीर्थ आनि हेथाय करिमु स्थापन।।22

प्रभु बोले– माता! मैं भी यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि
समस्त तीर्थों को लाकर यहाँ स्थापित करूंगा।

शुनि सिंहरिया कहे लाभा ठाकुराणी। ता हइले वाछा स्वप्न सत्य करि मानि।।23

सुनकर लाभा ठाकुराणी हंस पड़ी और कहने लगीं, वत्स!
तो मैं उस स्वप्न को सत्य करके मानूंगी।

प्रभु कहे आजि निशाय आसिव सर्वतीर्थ। कालिस्नान करि सिद्धकरिह सर्वार्थ।।24

प्रभु बोले माता! आज रात को ही सब तीर्थ यहाँ आ जायेंगे।
कल आप उनमें स्नान कर अपना मनोरथ पूरा कीजिएगा।

लाभा कहे एइ कथाके करे प्रत्यय। प्रभु कहे एइ कथा सत्य–सत्य हय।।25

लाभा बोली– तुम्हारी इस बात का कौन विश्वास करेगा?

प्रभु बोले– यह बात सत्य ही सत्य होगी।

तबे निशाकाले प्रभु करिया मनन। योगे सर्वतीर्थ गणे कैला आकर्षण।।26

तब रातको प्रभुने अपनी योगशक्ति से सब तीर्थों का आकर्षण किया।

जैछे लोहगति अयस्कान्त आकर्षणे। तैछे तीर्थगण आईला ईश्वर स्मरणे।।27

जैसे चुम्बक लौह आकर्षित करता है,

वैसे ही ईश्वर के स्मरण करने से सब तीर्थ वहां खिंचे चले आये।

मूर्तिमती श्रीयमुना गंगा आदि तीर्थ। प्रभुरे पूजिया सबे हईला कृतार्थ।।28

श्रीयमुना–गंगा आदि सब तीर्थ मूर्तिमान होकर वहां आये

और प्रभु की पूजा कर अपने को कृतार्थ माना।

तेंहो तीर्थगणे करि विधेय सरकार। श्रीयमुना पादपद्मे कैला नमस्कार।।29

प्रभु ने भी यथा–योग्य उन सबका सत्कार किया।

उन्होंने यमुना के चरण कमलों में नमस्कार किया।

तीर्थगण कहे प्रभु बोलाइला केने। प्रभु कहे एइ शैले कर अवस्थाने।।30

तीर्थों ने पूछा प्रभो! आपने हमें किसलिए बुलाया है?

प्रभु बोले–आप सब यहां ही अवस्थान करो।

तीर्थगण कहे इहाँ यदि करिवास। बहु पुण्य स्थानेर महिमा हय नाश।।31

तीर्थों ने कहा– प्रभो! यदि हम सब यहां अवस्थान

करेंगे। तो अनेक पुण्य तीर्थ स्थानों का महत्व नष्ट हो जाएगा।

प्रभु कहे मोर वाक्य न हैव अन्यथा। आसिवा वत्सरे एकदिन सबे देखा।।32

प्रभु ने कहा– मेरे वचन का पालन करना होगा।

वर्ष में केवल एक दिन ही सब यहां आवें।

तीर्थगण कहे प्रभु करह निर्णय। कौन दिन ए पर्वते हइव उदय।।33

तीर्थगण बोले– तो प्रभो! आप यह निर्णय दीजिए कि

किस दिन इस पर्वत पर हम आयें?

प्रभु कैल मधु कृष्णा त्रयोदशी योगे। सकले आसिवा पण कर मोर आगे।।34

प्रभु ने कहा– चैत्र कृष्ण त्रयोदशी के दिन सबको यहां आना होगा–

आप सब मेरे सामने वचन दें।

तीर्थगण कहे मोरा सत्य कैलूं पण। तव श्रीमुखेर आज्ञा ना हय लंघन।।35

तीर्थों ने सत्य प्रतिज्ञा की और कहा–
प्रभु आपकी आज्ञा का कभी भी उल्लंघन नहीं होगा।

तदवधि पुण्यतीर्थ हैल तार नाम। पानावगाहने सिद्ध हय मनस्काम।।36

तभी से उस पर्वत का नाम पुण्यतीर्थ पड़ गया।
उस तीर्थ में स्नान करने से सबकी कामना पूर्ण होती है।

प्रभु कहे तीर्थगण जाह शैलोपरे।। झरना रूपे रह मोर वाक्य अनुसारे।।37

प्रभु ने कहा– तीर्थगण! आप पर्वत के ऊपर चले जावो और
झरना रूप में मेरे वचनानुसार वास करो।

तीर्थगण प्रभु आज्ञा करिया स्वीकार। पर्वत उपरे जाञा करिला विहार।।38

तीर्थों ने प्रभु की आज्ञा स्वीकार कर ली और पर्वत पर
जाकर सुखपूर्वक अवस्थान करने लगे।

प्रभाते अद्वैतचन्द्र कहे जननीरे। सर्व तीर्थेर आविर्भाव हैल शैलोपरे।।39

प्रभात के समय श्रीअद्वैत प्रभु ने माता से कहा कि–
पर्वत पर समस्त तीर्था का आविर्भाव हो गया है।

लाभा कहे कैछे मुञि करिमु प्रत्यय। प्रभु कहे अत्याश्चर्यदेखिवा निश्चय।।40

माता लाभा ने कहा– मुझे इसका कैसे विश्वास हो?
प्रभु ने कहा– तुम चलकर इस महाश्चर्य को देखो।

एत बोलि जननीरे संगे करि गेला। पर्वतेर पाशे शंख घण्टा वाजाइला।।41

इतना कहकर माता को उन्होंने अपने साथ लिया और
पर्वत के पास जाकर शंख–घण्टा बजाया।

उच्चैःस्वरे हरिध्वनि करिया मात्रेते। झर–झर तीर्थजल लागिल झरिते।।42

उनकी उच्च ध्वनि को सुनते ही पर्वत से तीर्थों का जल
झर–झरकर कोलाहल करने लगा।

प्रभु कहे देख माता सदा जलझरे। शंख आदि ध्वनि कैले बहु जल पड़े।।43

प्रभु ने कहा माता! देखो, इसप्रकार सदा जल झरता रहेगा और
शंख आदि की ध्वनि करने पर अधिक जल पड़ने लगेगा।

ए देखह श्री यमुना श्यामरसामृते। मेघ सम तुया अंग हैल आच्छादिते।।44

यह देखो माता! श्रीयमुना का श्यामवर्ण जल, इससे तुम्हारा शरीर भी मेघकान्ति
के समान श्यामवर्ण का हो गया है।

उलटिए देख गंगा स्फटिक निन्दिया। पुण्यामृत जले तोंहे फेलिल डाकिया।।45

इधर देखो, गंगा का स्फटिक सदृश पुण्यजल,

जिसने तुमको स्फटिक रंग से आवृत कर दिया है।

पुन देख रक्तपीत आदि पुण्य जल। तब शिरे पड़ितेछे करि कल–कल। ।46

फिर देखो, लाल–पीला सब तीर्थों का जल,

जो आपके सिर पर कल–कल करता हुआ पड़ रहा है।

आश्चर्य देखिया लाभा नमस्कार कैला। भक्ति करि स्नानदानादिक समर्पिला। ।47

इस आश्चर्य को देखकर माता ने उन तीर्थों को नमस्कार किया।

श्रद्धापूर्वक उसमें स्नान किया और दान–भेंट अर्पण की।

तदवधि पणा तीर्थ हइल विख्यात। वारुणी योगेते स्नान बहुफलप्रद। ।48

तभी से वह पणातीर्थ प्रसिद्ध है। वारुणी पर्व पर

उसमें स्नान करने से महान फल मिलता है।

तबे कमलाक्षे श्रीकुबेर अति रंगे। पड़िवारे दिला राजकुंवरेर संगे। ।49

तददनन्तर श्रीकुबेरने अपने पुत्र कमलाक्ष को

• उत्साहपूर्वक राजकुमार के साथ पढ़ने बैठा दिया।

श्रुतिधर प्रभु पड़े कलाप व्याकरण। दृष्टिमात्र शिखे सूत्र अर्थ विवरण। ।50

कमलाक्ष सुनते ही पाठ को याद कर लेने वाले थे और कलाप व्याकरण को

पढ़ने लगे। देखते ही सूत्र, उनका अर्थ और टीकाओं को जान जाते।

तिन वत्सरेते ग्रन्थ समाप्त करिला। सबे कहे दैवविद्या कमलाक्ष पाईला। ।51

तीन वर्षों में उन्होंने उस ग्रन्थ को समाप्त कर लिया।

सब कहते कि कमलाक्ष के पास तो कोई दैविशक्ति है।

ए हेन समये शुन एक चमत्कार। कमलाक्ष सह दिव्यसिंहेर कुमार। ।52

इसी समय एक अद्भुत चमत्कारी घटना घटी, उसे सुनिए।

राजकुँवर और कमलाक्ष दोनों साथ–साथ घूम रहे थे।

शिलामयी कालिकार मण्डपेते गेला। भक्ति करि देवीर आगे प्रणाम करिला। ।53

दोनों कालीदेवी के मंदिर में गये और

राजकुमार ने श्रद्धापूर्वक उस देवी को प्रणाम किया।

प्रभुपाद देखे काली मूर्तिर माधुर्य। राजपुत्र कहे प्रणाम करह आचार्य। ।54

श्रीअद्वैत (कमलाक्ष) उस काली देवी के माधुर्य को देखते ही रहे।

राजपुत्र ने कहा– आचार्य! कालीदेवी को प्रणाम करो ना।

प्रभु ताहा नाहि शुने रहे दाड़ाइञा। राजपुत्र निन्दे ताँरे कोप प्रकाशिया। ।55

प्रभु ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया– खड़े ही रहे।

राजपुत्र क्रोधित होकर कमलाक्ष प्रभु की निन्दा करने लगा।

प्रभु रजः स्वीकारिया हुंकार करिला। राजसुत मूर्छा हई भूमिते पड़िला।।56

प्रभु ने भी क्रोधित होकर हुंकार किया। ऐसा करते

ही राजपुत्र मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

हाय हाय करि सब राजदूत धाय। शीघ्रगति दिव्यसिंह राजारे जानाय।।57

हाय–हाय करते हुए सब राज कर्मचारी

दिव्यसिंह राजा के पास दौड़ते हुए आये।

अकस्मात् शुनिया राजा सांघातिक कथा। मंत्रीवर्ग सह गेला पुत्र आछे जथा।।58

राजा उस सांघातिक समाचार को अकस्मात्

सुनकर मंत्रियों के साथ वहां पहुंचा, जहां उसका पुत्र था।

एथा प्रभु कमलाक्ष लोक व्यवहारे। पलाइया रहिला उइ पोतार माझारे।।59

इधर कमलाक्ष लौकिक रीति अनुसार विवाद के

भय से वहां से दूर जाकर झाड़ियों में छिप गये।

मृत सुत देखि राजा करि हाय हाय। कमलाक्षे चाहिते कुवेर उठि धाय।।60

अपने पुत्र को मृतक जानकर राजा हाय हाय कर शोक मनाने लगा।

कुबेराचार्य अपने पुत्र कमलाक्ष को ढूँढ़ने लगे।

बहु अन्वेषिया तबे प्रभु के पाइला। देवीर वाढ़ीते आसि उपनीत हैला।।61

बहुत ढूँढ़ने पर उन्होंने कमलाक्ष को पा लिया और

उसे देवी के मंदिर में ले आये।

राजा कहे कमलाक्ष तुमिद्विजराज। कि लागि कैला एइ सांघातिक काज।।62

राजा ने कहा– कमलाक्ष!

तुम तो ब्राह्मण हो तुमने ऐसा सांघातिक काम क्यों किया?

लज्जा पाञा प्रभु बैल इहमरे नाई। आछये मूर्च्छित हञा एखनि जीवाह।।63

लज्जित होकर कमलाक्ष प्रभु बोले– यह मरा नहीं है

मैं इसे अभी जीवित करता हूँ– यह मूर्छा में है।

एह कहि नारायणेर श्रीचरणामृते। अभिषिक्त करि जीवाइला राजसुते।।64

इतना कहकर कमलाक्ष प्रभु ने श्रीनारायण का चरणामृत मंगाया और उसका

उस राजकुँवर पर छींटा दिया। तुरंत राजकुँवर जीवित हो उठ बैठा।

श्री हरिर पदामृतेर अलौकिक शक्ति। माहात्म्य ना जाने तार ब्रह्मा उमापति।।65

श्रीनारायण के चरणजल की अलौकिक शक्ति है।

उसकी महिमा को ब्रह्मा शिवादि भी नहीं जानते।

तीर्थ स्नान दर्शनेते जेइ फलोदय। विष्णुपादोदक स्मृति मात्र ताहा पाय।।66

तीर्थस्थान दर्शन से जो फल प्राप्त होता है।

वह फल विष्णुचरणजल की स्मृति मात्रसे प्राप्त होता है।

सजीव देखिया पुत्रे राजा हर्षमने। तुषिला दरिद्रे आर द्विजे बहुधने।।67

अपने पुत्र को जीवित देखकर राजा अति प्रसन्न हुआ।

उसने दरिद्रों व विप्रों को दान दिया।

सबे कहे मंगल हइल भाल भाल। श्रीकुबेर भावे गेल महत जन्जाल।।68

सब कहने लगे– मंगल हो गया आज,

बहुत अच्छा हुआ श्रीकुबेराचार्य का जंजाल कट गया।

तबे कुबेर तर्क पन्चानन ज्ञानवान। शुभदिने पुत्रे कैला यज्ञसूत्र दान।।69

तब श्रीकुबेर ने, जो तर्कपन्चानन, अति ज्ञानवान थे।

शुभदिन देखकर उन्होंने कमलाक्ष का यज्ञोपवीत संस्कार किया।

पौगण्ड वयसे हैल द्विजाति संस्कार। प्रभुर श्री मूर्ति हैल अति चमत्कार।।70

पौगण्ड अवस्था में कमलाक्ष का द्विजाति संस्कार हुआ।

उस समय प्रभु की अति चमत्कारी छवि थी।

श्रीअद्वैत पड़े तबे साहित्याभिधान। अलंकार ज्योतिषादि कैल समाधान।।71

श्रीकमलाक्ष प्रभु तब साहित्य अभिधान को पढ़ने लगे।

अलंकार शास्त्र तथा ज्योतिष का समाधानपूर्वक अध्ययन करने लगे।

एकदिन शुन एक अद्भुत वृत्तान्त। दीपान्विता दिने हैल उत्सव एकान्त।।72

एकदिन का और अद्भुत वृत्तान्त सुनिये–दीवाली के

दिन महोत्सव मनाया जा रहा था।

देशेर सकल लोक भद्र नीच जत। देवीर वाटीले आसि हैल उपनीत।।73

उस उत्सव में देश के नीच–ऊँच सब लोग देवी के मन्दिर में उपस्थित थे।

नाना नृत्य गीत हैल पर्वव्यवहारे। प्रभु वसिलेन आसि सभार भितरे।।74

उस पर्व पर अनेक प्रकार का नृत्य–गान हो रहा था।

कमलाक्ष प्रभु आकर सबके बीच बैठ गये।

राजा कहे कमलाक्ष ए कि व्यवहार। कालिके न प्रणमिला कि भाव तोमार।।75

राजा ने कहा–कमलाक्ष! यह तुम्हारा कैसा व्यवहार?

तुमने कालीदेवी को प्रणाम तक नहीं किया– ऐसा भाव क्यों?

प्रभु बोले परंब्रह्म स्वयं भगवान्। तिहों मोर साध्यवस्तु नहे केह आन।।76

प्रभु ने कहा–स्वयं भगवान् परब्रह्म ही मेरे साध्य इष्ट हैं,

उनके अतिरिक्त और कोई वस्तु मेरा साध्य नहीं।

नानामते जेइ जाय तार विडम्बना। विज्ञजने एक इष्ट करये भावना।।77

जो नाना प्रकार के मतवादों में जाता है, वह विडम्बनामात्र है।

विज्ञजन तो एक ही इष्ट ही भावना करते हैं।

पुत्रेर कवित्व शुनि तर्क पंचानन। राजपक्ष हञा कैला विचार पत्तन।।78

तर्क पंचानन कुबेराचार्य ने पुत्र कमलाक्ष की धारणा

सुनकर राजा का पक्ष लेते हुए विचार उठाया।

अहे कमलाक्ष तुमि ना पाईला अन्त। एक ब्रह्मेर नानारूप वेदेर सिद्धान्त।।79

वे बोले– अरे कमलाक्ष! अभी तुम्हें कुछ पता नहीं है। एक ब्रह्म ही नाना रूपों में

आविर्भूत है यही सब वेदों का सिद्धान्त है।

देव देवी द्वेष सेहि महापापकर। पुजिवे देवता सबे हइया तत्पर।।80

जो देव–देवी आदिक में द्वेष करता है, वह महापाप का कारण है।

अतः सब देवता को पूजना चाहिए।

त्रेतायुगे रामचन्द्र साक्षान्नारायण। सीता उद्धारिते कैला देवीर पूजन।।81

त्रेतायुग में श्रीरामचन्द्र साक्षात् नारायण रूप से अवतीर्ण हुए थे।

उन्होंने भी सीता–उद्धार के समय देवी का पूजन किया था।

जगन्माता भगवती अति दयावती। तारे भजि मुक्ति पाय जत ज्ञानीव्रती।।82

भगवती काली जगन्माता है अति दयामयी है।

उसके भजन से ज्ञानी–व्रती सब मोक्ष प्राप्त करते हैं।

अतएव कालीमाये करह प्रणाम। ना रहिवे विपत् सिद्ध हवे मनस्काम।।83

इसलिए काली देवी को प्रणाम करो। इससे समस्त

विपत्तियों का नाश और मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

प्रभुकहे शुन पिता ना करिओ रोष। एकनिष्ठ ना हइले हय बहु दोष।।84

प्रभु कमलाक्ष ने कहा– पिताजी! सुनिए, आप रोष नहीं कीजिए–

एक निष्ठ न होना अनेक दोष हैं।

जैछे वृक्षमूले जल करिले सेचन। शाखापल्लवाद्ये हय तृप्तिर साधन।।85

वृक्ष के मूल में जैसे जलसिंचन करने पर उसकी शाखा

पल्लवादिक भी पुष्ट हो जाते हैं।

तैछे सर्व देव देवीर मूल नारायणे। पुजिले सकल पूजा हय समाधाने।।86

उसी प्रकार मूल श्रीनारायण की अर्चना से समस्त
देवी–देवताओं की पूजा का समाधान हो जाता है।

विष्णुमाया भगवती बहिरंगा बले। जाँहार मायाते जीव तत्वज्ञानभुले।।87

भगवती काली भगवान् विष्णु की बहिरंगा शक्ति है,
जिसके वशीभूत होकर जीव तत्त्वज्ञान को भूलता है।

प्राणि हिंसा यज्ञे जेइ हय उल्लासित। से देवीर उपासना ना हय उचित।।88

जिस देवी को प्राणियों की हिंसा में उल्लास–आनन्द होता है।
उस देवी की उपासना करना उचित नहीं।

तेंहो यदि जगन्माता जगत् ताँर पुत्र। सन्तान वधिते किवा आछे युक्ति शास्त्र।।89

काली भगवती यदि जगन्माता है तो जगत् उसका पुत्र है। फिर पुत्रों–जगत् के
प्राणियों की हिंसा में उसे आनन्द होना– यह किस शास्त्र की युक्ति है।

कुवेर कहे कुतर्क वादेते किंवा फल। देवीर निन्दने फल हय अमंगल।।90

कुबेराचार्य ने कहा– कमलाक्ष! कुतर्कवाद से क्या
लाभ? देवी की निंदा का फल अमंगल होता है।

जैछे राजा विचारिया पापीर शासित करे। साधुगणे सुख देय धर्म अनुसारे।।91

जैसे राजा पापी का न्यायनुसार शासन–दण्डित करता है
और साधु–पुरुषों को उनके धर्मानुसार सुख प्रदान करता है।

तैछे देवी साधकेरे मुक्तिदान करे। साधारण जीवे डुबाय माया रत्नाकरे।।92

उसीप्रकार देवी साधकों को मुक्तिदान करती है और
साधारण जीव को माया सागर में डुबाती है।

यज्ञार्थे पशुर वध सेह नहे हिंसा। मुक्त हञा स्वर्गे जाय पाइया प्रशंसा।।93

यज्ञों के लिए पशु का वध हिंसा नहीं कहलाती,
वह पशु प्रशंसित होकर स्वर्ग में चला जाता है।

प्रभु कैल अनायास सिद्धोपाय सत्त्वे। केने कष्ट पाय पितृ–मातृ उद्धारिते।।94

प्रभु ने कहा– पिताजी! अनायास जब मनोभीष्ट की प्राप्ति हो सकती है तब
माता–पिता के उद्धार के लिए ऐसा कष्ट क्यों उठाया जाये?

हेन मते पिता–पुत्रे बहुतर्क हैल। सभासह समस्त लोक विस्मय मानिल।।95

इसप्रकार पिता–पुत्र में बहुत देर तक वाद–विवाद चलता रहा।

सारी सभा के लोग बहुत आश्चर्ययुक्त हो उठे।

सर्वाराध्य महागुरु पितृदेव हन। ताँर सम्मान लागि प्रभु हैला निर्वचन।।96

पिता सर्वाराध्यगुरु के समान कहे गये हैं– यह जानकर

पिता की सम्मान–रक्षा के लिए कमलाक्ष चुप हो गये।

प्रभुकहे पिता मम अपराध क्षम। एखनि देवीरे मुञि करिमु प्रणाम।।97

कमलाक्ष ने कहा– पिताजी! मेरे अपराध को क्षमा कीजिए।

मैं अभी देवी को प्रणाम करता हूँ।

एत कहि देवीर आगे कैला नमस्कार। हेनकाले हैल एक अति चमत्कार।।98

इतना कहकर कमलाक्ष प्रभु ने देवी को प्रणाम किया।

उस समय अति चमत्कारमयी घटना हुई।

देवी अन्तर्धाने सेई प्रतिमा फटिल। ताहा देखि लोक सब विस्मित हइल।।99

देवी तो अन्तर्धान हो गयी और प्रतिमा फट गयी।

यह देखकर सब लोग अचम्भे में पड़ गये।

इहार कारण सेई प्रतिमा चेतना। निज प्रभु देखि ऐछे करिला घटना।।100

इसका कारण उस देवी प्रतिमा की चेतना थी कि

वह अपने प्रभु महाविष्णु का नमस्कार करना सहन न कर सकीं।

राजा आर मंत्रीवर्ग कुवेर आचार्य। शुद्ध हैला हठात् देखि परमाश्चर्य।।101

यह आश्चर्य देखकर राजा, मंत्रीवर्ग तथा श्रीकुबेराचार्य का मन भी शुद्ध हो गया

और मान गये कि एकनिष्ठ होना साधन की सीमा है।

तबे प्रभु कमलाक्ष हरिहररूपी। अन्तर्हित हइलेन गौरलीला जपि।।102

तब प्रभु कमलाक्ष जो हरिहर का मिलित स्वरूप हैं,

गौरलीला का स्मरण करते वहाँ वे अन्तर्धान हुये।

द्वादश वर्ष वयःक्रमे शान्तिपुरे गेला। षड़दर्शन शास्त्र क्रमे पड़िते लागिला।।103

बारहवर्ष की अवस्था तक शान्तिपुर में ही आकर

वास और षड़दर्शनों का क्रमशः अध्ययन किया।

श्रीगौरांग श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।104

श्रीगौरांग महाप्रभु तथा श्रीअद्वैतचन्द्र के चरणों की अभिलाषा करते हुए

श्रीईशाननागर श्रीअद्वैतप्रकाश का वर्णन करते हैं।

तृतीय अध्याय

जय जयश्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो, जय हो। सीतानाथ अद्वैतप्रभु की जय हो।
श्रीश्रीनित्यानन्दराम की सहित जय हो।

एकदिन प्रभु एक पत्रिका लिखिया। श्रीलाउड़धामे लोक दिया पाठाइया।।02

एकदिन श्रीकमलाक्ष प्रभु ने एक पत्रिका लिखकर शान्तिपुर के
एक व्यक्ति के हाथ लाउड़ धाम भिजवा दी।

एथा श्रीकुवेराचार्य अति दुख मने। पुत्र अदर्शने बहु कैला अन्वेषणे।।03

जब से श्रीअद्वैत प्रभु वहां से अन्तर्धान हुए, श्रीकुबेराचार्य अति दुःखी थे और
उनके दर्शन के लिए उन्हें बहुत ढुँढवाया।

खूजिया ना पाञा चक्षे वहे अश्रुधार। हा गोपाल कि करिला कहे बार-बार।।04

खोजने पर जब इनका कोई पता न मिला तो नेत्रों से
अश्रुधार प्रवाहित करते रहते और कहते हे गोपाल! यह आपने क्या किया?

तबे कृष्णकृपाय तिहों किछु सुस्थ हैला। दुःखित हइया निजगृहे चलि गेला।।05

कृष्ण कृपा से कुछ स्वस्थचित्त होकर
काली मन्दिर से वे घर लौट आये।

पुत्र अदर्शने लाभा हाहाकार करि। इति उति धाय क्षणे जाय गड़ागड़ि।।06

प्रभु को न देखकर लाभा देवी हाहाकार करती हुई
इधर-उधर भागती रहतीं और पृथ्वी पर कभी-कभी मूर्च्छित होकर गिर जातीं।

अविश्रान्त अश्रुधारा बहे दुनयने। उन्मादिनी सम असम्बन्ध प्रश्न भणे।।07

निरन्तर उसके नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित होती रहती। पागलिनी सी होकर
अनजाने-पहिचाने लोगों से पुत्र के बारे में पूछती फिरतीं।

जड़ीभाव हञा क्षणे हय मृताकार। आचार्य सान्त्वना कैला विविध प्रकार।।08

कभी अचेतन होकर मृतकप्राय हो जातीं।
आचार्य कुबेर अनेक प्रकार से उसे सान्त्वना देते रहते।

कुवेर कहे भगवाने नहि अवचिार। जार सत्त्वेर वस्तु तारे देय पुनर्वार।।09

वे कहते लाभा! देखों श्रीभगवान् के यहां अविचार या अन्याय नहीं है,
जो वस्तु जिसकी होती है उसे वे फिर दे ही देते हैं।

हरि पादपद्मे मति सेई सर्वोतम। मायिक देहे आत्मबुद्धि आत्म नराधम।।10

जिस व्यक्ति की बुद्धि उन श्रीभगवान् के चरण कमलों में रहती है, वह सर्वोत्तम
है और जिसकी मायिक देह में आत्मबुद्धि है। वह व्यक्ति अधम है।

सांसारिक सुखे आछे दुःखेर भाण्डार। जैछे सुखस्पर्श सर्प कालकूटाधार।।11

सांसारिक सुख में तो दुखों का भाण्डार भरा पड़ा है। जैसे सांप का स्पर्श अच्छा लगता है किन्तु उसमें कालकूट विष भरा होता है।

श्रीहरिभजन क्लेशे नित्यानंदेर खनि। महौषधिर शक्ति जैछे आनन्ददायिनी।।12

श्रीहरि भजन में जो क्लेश–श्रम प्रतीत होता है, वह नित्यानन्द की खान है, जैसे महौषधि में (कड़वी होते हुए भी) आनन्ददायिनी शक्ति भरी होती है।

हेनमते बहु उपदेश वाक्य शुनि। किन्चित् सुस्थिर हैला लाभाठाकुराणी।।13

इसप्रकार श्रीकुबेर का बहुत प्रकार उपदेश
सुनकर लाभा ठाकुरणी कुछ सुस्थिर हुईं।

तबे दुखे निशाकाले विष्णुगृहे गिया। अनाहारे श्रीकुवेर रहिला शुतिया।।14

दुखित होकर श्रीकुबेर रात्रिकाल में कुछ अन्न,
जल ग्रहण न कर विष्णु मन्दिर में जाकर सो गये।

प्रत्यूषे गोपाल ताँरे स्वपने कहिला। कुशली तोमार पुत्र गंगातीरे गेला।।15

प्रातःकाल श्रीगोपाल जी उन्हें स्वप्न में आकर कहने लगे–
कुबेर! तुम्हारा पुत्र गंगा के तट पर जाकर कुशलपूर्वक रह रहा है।

कमलाक्ष नर नहे भक्त अवतार। दिन कत पर तार आसिवे किंकर।।16

कमलाक्ष साधारण मनुष्य नहीं है? वह भक्त अवतार है।
कुछ दिन बाद उसका एक सेवक तुम्हारे पास आयेगा।

लाभारे कहिला द्विज स्वप्न विवरण। प्रभुर भविष्यत वाक्ये सुस्थ हैला मन।।17

श्रीकुबेर ने लाभा देवी को अपना स्वप्न सुनाया।
उनके वाक्य सुनकर वह स्वस्थ मन हो गई।

एकदिन कमलाक्षेर पत्रिका पाइला। आचार्य आर लाभा दोंहे आनन्दित हैला।।18

दूसरे दिन ही वह व्यक्ति श्रीकमलाक्ष की पत्रिका लेकर उनके पास आ पहुंचा।
पत्रिका पाकर आचार्य और लाभादेवी आनन्दित हो उठे।

कुबेर कहे एथा थाकि किवा आरफल। गंगातीरे जाऊं जाँहाँ पाउ मोक्षफल।।19

कुबेर जी ने कहा– अब हमारे यहां रहने से क्या लाभ? मैं तो गंगा किनारे जाकर रहूंगा, जहां संसार बन्धन से मुक्ति होगी।

लाभा कहे मोहर मनेर ऐछे से भाव। तांहाञि करिमु वास जावत मोरा जीव।।20

लाभादेवी ने कहा– मेरा भी मन अब यही चाहता है।
जब तक जीवन है वहां ही चलकर निवास करें।

दम्पति चलिला तबे तरि आरोहिया। शान्तिपुर धामे आइला आनन्दित हैया।।21

तब दम्पति नौका पर चढ़कर आनन्दपूर्वक
पुत्र मिलन की आस में शान्तिपुर चले आये।

पिता माता देखि प्रभु धाञा चलि आइला। भक्ति करि दोंहार चरणे प्रणमिला।।22

पिता–माता को आया देखकर पितृवत्सल श्रीकमलाक्ष प्रभु दौड़कर आये और
श्रद्धा सहित दोनों के चरणों में प्रणाम किया।

प्रभुरे धरिया दोंहे कैला आलिंगन। मस्तक चुम्बिया बैल आशीष वचन।।23

पुत्र को दोनों ने गले लगाकर आलिंगन किया और मस्तक चूमकर
सहस्त्र–सहस्त्र आशीर्वाद दिया।

लाभा कहे बाछारे ! तो बिनु मोर प्राण। जीवन्मृत जलहीन मीनेर समान।।24

लाभा ने कहा– वत्स! तुम्हारे बिना तो मेरा जीवन
जल के बिना मीन की तरह मृतक् समान हो गया।

कुबेर कहे वाछा! किवा करिला पठन। प्रभु कहे षड़दर्शन समाप्तीपक्रम।।25

कुबेरजी ने पूछा– वत्स! तुमने क्या अध्ययन कर लिया है? श्रीकमलाक्ष बोले–
पिताजी! मैंने षड़दर्शन प्रायः समाप्त कर लिये हैं।

कुबेर कहे पड़ एबे वेद चारिखान। अवश्य पाइवा ताहे ब्रह्मानुसन्धान।।26

श्रीकुबेर ने कहा– अब तुम चारों वेदों का अध्ययन करो। उससे तुम अवश्य
ब्रह्मानुसंधान–भगवत् तत्व का ज्ञान प्राप्त कर पाओगे।

प्रभु कहे पढ़िते जाइव पूर्णवाटी। वेदान्त वागीश शान्त द्विजवरेरवाटी।।27

प्रभु बोले– मैं अध्ययन करने पूर्णवाटी जाऊंगा। वहां वेदान्त वागीश श्रीशान्त
द्विजवरका निवास स्थान है। इसके लिए मुझे आज्ञा दीजिये।

आचार्य कहेन विद्या नहे वशीभूत श्रमानुसारिणी विद्या सत्युक्ति संगत।।28

श्रीआचार्य ने कहा– विद्या किसी के वशीभूत नहीं है। वह श्रमानुसारिणी है और
सत् युक्ति से प्राप्त होती है। यह सर्वगुणों की खान है।

तुरिते ताहाञि जाह लिखिओ कुशल। अबाधे करिह पाठ हईव मंगल।।29

कमलाक्ष! तुम फिर शीघ्र वहां चले जाओ और वहां जाकर अपनी कुशलता का
समाचार जरूर लिखना। निरन्तर वहां वेद अध्ययन करो–तुम्हारा मंगल होगा।

तबे प्रभु पितामातार पदे प्रणमिया। चलिला श्रीहरि स्मरि पूथि संगे लैया।।30

प्रायः कमलाक्ष ने माता–पिता के चरणों में प्रणाम किया और
श्रीहरि का स्मरण कर पुस्तक लेकर वहां से चल दिये।

पूर्णवाटीग्रामे शीघ्रगति उत्तरिला। शांतमूर्ति शान्त द्विजवरे प्रणमिला।।31

पूर्णवाटी ग्राम में आकर वे उतरे और शान्तमूर्त्ति
श्रीशान्त द्विजवर वेदवागीश को आकर प्रणाम किया।

प्रभुर सौन्दर्य देखि द्विजेर विस्मय। आशीर्वाद करि तबे लैल परिचय।।32

प्रभु के सौन्दर्य को देखकर द्विजवर विस्मित हो उठे और
आशीर्वाद कर इनका परिचय पूछा।

ताँर सह द्विजवर शास्त्र आलापिया। प्रशंसा करिला बहु हरषित हैया।।33

श्रीशान्त द्विजवर ने प्रभु से शास्त्र चर्चा की और
इनकी प्रशंसा कर बहुत आनन्दित हुए।

द्विज कहे पड़ वाछा! याहा लय मने। ताँर ठाञि प्रभु वेद कैला अध्ययने।।34

द्विजवर ने कहा– वत्स! जो तुम्हारे मन में आये
उसका अध्ययन करो। प्रभु ने उनकी सेवा करते हुए उनसे वेदों की शिक्षा ली।

मनुष्य लीलाते प्रभु श्रुतिधर हय। वर्षद्वये वेदशास्त्र पड़े समुदय।।35

मनुष्य लीला में तो कमलाक्ष प्रभु श्रुतिधर–सुनते ही सब यादकर लेने वाले थे
ही। दो वर्षों में आपने समस्त वेदों का अध्ययन कर लिया।

एक दिन शुन एक अद्भुत कथन। स्नाने गेला शान्त द्विज लञा छात्रगण।।36

एकदिन की एक अद्भुत कथा सुनिये–
श्रीशान्त द्विज अपने छात्रो को लेकर स्नान करने गये।

गंगा सह लग्न आछे बड़ एक बिल। कन्टकादि हय तांहि अगाधसलिल।।37

गंगा के साथ एक बहुत बड़ी झील जुड़ी हुई थी।
उसमें अगाध जल था और काटों से घिरी हुई थी?

तार मांझे एक पद्म देखिते सुन्दर। ताहार सद्गन्धे पूर्ण दिग दिगन्तर।।38

उसमें एक अति सुन्दर कमल खिल रहा था।
उसकी सुन्दर सौरभ से चारों दिशाएं महक रही थीं।

काल सर्पगण ताँहा करये विहार। सेई पद्म आनिवारे शकति काहार।।39

उसके आसपास काले सर्प विचरण कर रहे थे।
उस कमल को लाने की शक्ति भला किसमें थी।

वेदान्त वागीश हासि कहे छात्रगणे। केवा शक्तिधरे एइ कमल आनयने।।40

वेदान्त–वागीश ने परिहास करते हुए छात्रों से कहा–
इस कमल को लाने की शक्ति किसमें है?

पडुयागणे कहे आनिवारे साध्य नाञि। प्रभु कहे आज्ञा पाइले मुइ ना डराञि।।41

छात्रों ने कहा– गुरुदेव! इसे लाना सम्भव नहीं है। कमलाक्ष प्रभु ने कहा– गुरुदेव! यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं जरा भी नहीं डरता हूँ।

द्विजकहे कन्टक इथे आर आछे सर्प। एइ सुदुर्गमे जाइते ना करिह दर्प।।42

द्विजवर बोले– वहाँ बहुत कांटे है और फिर सांप भी।
अतः ऐसे सुदुर्गम स्थान पर जाने का साहस मत करो।

एत शुनि प्रभु मने ईषत् हासिया। पद्मे पद्मे पद दिया चलिला धाञा।।43

यह सुनकर प्रभु मन मुस्कराए और एक कमल से
दूसरे कमल पर ही पाँव रखते हुए उस कमल को लेने पहुँचे।

सेइ प्रफुल्लित पद्म करिया चयन। भक्ति करि गुरुदेवे करिला अर्पण।।44

श्रीकमलाक्ष प्रभु ने उस प्रफुल्लित कमल को जाकर
तोड़कर श्रद्धापूर्वक पूजाहेतु गुरुदेव को अर्पण किया।

भोज विद्या कहे सभे देखिया आश्चर्य। द्विज भावे धन्य मुञि इहार आचार्य।।45

सब कहने लगे– यह भोज विद्या (जादू) जानता है यह देखकर सब आश्चर्य मानने लगे। श्रीशान्त द्विज ऐसे शिष्य का अपने को आचार्य मानकर धन्य मानने लगे।

निर्जने प्रभुये कहे शान्त द्विजराज। कैछे बापू कैला एइ अलौकिककाज।।46

श्रीशान्त द्विजवर ने एकान्त में कमलाक्ष से पूछा– बेटा! तुमने यह अलौकिक काम कैसे किया? जल का भी स्पर्श न करते हुए तुम कमलों पर पांव रखकर वहां चले गये।

विद्यार प्रभावे किवा कैला दैवबले। किवा तुहु कोन देव आइला भूतले।।47

यह किसी विद्या के प्रभाव से किया या किसी देवता का बल–वरदान है तुम्हें?
या तुम ही कोई देवता हो और इस शरीर से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हो?

सत्य करि कह मुञि हङ् गुरुजन। प्रभु कहे हरिर अंश ए तिन भुवन।।48

देखो, मैं तुम्हारा गुरु हूँ, तुम सत्य–सत्य सब बात मुझे बताओ।
श्रीकमलाक्ष ने कहा– गुरुदेव! ये तीनों लोक श्रीकृष्ण के अंश हैं।

शुद्ध चित्ते जेइजन कृष्णगत हय। अष्टसिद्धि आसि तार लय पदाश्रय।।49

शुद्धचित्त से निरपराध होकर जो अनन्य भाव से श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण करता है, अष्टसिद्धियाँ आकर उस व्यक्तिका चरणाश्रय लेती हैं।

तबे शान्त वेदान्तवागीश द्विजमनि। प्रभु मुखे सुसिद्धान्त गुह्य तत्वशुनि।।50

तब श्रीशान्त वेदान्त वागीश द्विजराज प्रभु के मुख से

सुसिद्धान्त पूर्वक गुह्य तत्व को सुनकर सोचने लगे।

जीव शक्तिर साध्यायत्त नहे से व्याख्यान। प्रभुरे ईश्वर बलि कैला अनुमान।।51

जीव की शक्ति नहीं इसप्रकार की सिद्धि प्राप्त करने की। उन्होंने अनुमान कर लिया कि श्रीकमलाक्ष समस्त जगत के महाविष्णु के साक्षात् अवतार हैं।

एक दिन कमलाक्ष कहे आचार्येरे। तुष्ट हञा आज्ञाकर जाङ् निजघरे।।52

एकदिन श्रीकमलाक्ष प्रभु ने आचार्यवर से कहा– आप प्रसन्न होकर यदि आज्ञा दें तो मैं अपने घर को चला जाऊँ?

शान्त कहे तोहार नाम वेद पन्चानन। तोरे विदाय दिये हय चित्त उच्चाटन।।53

द्विजवर ने कहा– तुम्हारा नाम मैं वेद–पंचानन रखता हूँ। तुम्हारे जाने से मेरा चित्त बड़ा विचलित हो रहा है। अतः तुम मुझे छोड़कर मत जाओ।

एकान्तई यदि जाइवे एइ भिक्षाचाङ। इच्छामात्र तोरे जेन देखिवारे पाङ।।54

यदि तुम जाना ही चाहते हो तो मुझे यही भिक्षा गुरु दक्षिणा में देकर जाओ कि जब भी मेरी इच्छा हो, तभी तुम्हारे दर्शन प्राप्त करूँ।

प्रभु तबे आचार्येरे दण्डवत् कैला। आचार्य तांहारे धरि कान्दिते लागिला।।55

तब श्रीकमलाक्ष प्रभु ने आचार्य को दण्डवत् प्रणाम किया और आचार्य उसे गले लगा कर रोने लगे।

छात्रगण कान्दे आर कान्दे आचार्याणी। प्रभु सभे प्रवोधिया कहे मिष्टवाणी।।56

छात्रगण एवं आचार्य–गृहिणी भी रोने लगी।
प्रभु ने सबको मधुर वाणी कहकर आश्वस्त किया।

मोहर कारणे सबे खेद ना करिह। फिरि देखा हैवे भूलिओ ना स्नेह।।57

आप मेरे लिये खेद न करिये ? अनेक बार हम एक दूसरे से मिलेंगे। आप मेरे प्रति स्नेह न भूलियेगा।

एह कहि प्रभु हइलेन अन्तर्धान। सबे इति उति धाञा ना पाइल सन्धान।।58

इतना कहकर प्रभु वहां से अन्तर्धान हो गये। सब इधर–उधर खोजे, किन्तु उनका कुछ पता न लगा।

प्रभु आसि जननी जनक प्रणमिञा। बहु स्तुति कैला गाढ़ भक्ति प्रकाशिञा।।59

प्रभु ने शांतिपुर में आकर माता–पिता के चरणों में प्रणाम किया और उनकी श्रद्धा–भक्ति पूर्वक बहुत स्तुति की। चूंकि प्रभु मर्यादा पुरुषोत्तम हैं।

पुत्र देखि दोंहे महा आनन्दित हैला। शिरे चुम्ब दिया बहु आशीर्वाद कैला।।60

पुत्र को देखकर माता–पिता अति हर्षित हुए।

उनका सिर चूमकर अनेक आशीर्वाद दिया।

श्री गौरांग श्री अद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।61

श्रीगौरांग प्रभु तथा श्रीअद्वैतप्रभु के श्रीचरणों की आशा रखते
हुए श्रीईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश का गान करते हैं।

चतुर्थ अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्यदेव की जय हो जय हो। श्रीसीतानाथ अद्वैत प्रभु की जय हो।
श्रीजान्हवा पति श्रीनित्यानन्द प्रभु की समस्त भक्तों के सहित जय हो।

पितृ–मातृ सेवाय प्रभु नियुक्त हइला। आज्ञा अनुसारे कार्य करिते लागिला।।02

अब श्रीकमलाक्ष माता–पिता की सेवा में लग गये और
उनकी आज्ञानुसार सब काम करने लगे।

हेन मते एक वत्सर हइल अतीत। प्रभुर सेवाते दोंहे हैला आनन्दित।।03

इसप्रकार एक वर्ष व्यतीत हो गया और
दोनों इनकी प्रेममयी सेवा से सेवा से बहुत संतुष्ट हुए।

एक दिन कमलाक्षे कुबेर कहिला। पितृ–मातृ सेवा तुहुं यथेष्ट करिला।।04

एकदिन श्रीकुबेराचार्य ने श्रीकमलाक्ष से कहा–
तुमने हम माता–पिता की यथेष्ट सेवा की है।

आयु वृद्धि धन वृद्धि यशोवृद्धि हय। जेइ जन माता–पिताय भक्तिते सेवय।।05

जो व्यक्ति अपने माता–पिता की श्रद्धापूर्वक सेवा करते हैं,
उनकी आयु, धन, यश की वृद्धि होती है।

आर एक शुन वाछा निगूढ़ वृत्तान्त। नब्बइ वरष मोर हैल अतिक्रान्त।।06

हे वत्स! एक हमारी गूढ़ बात को सुनो– वह यह है कि
मेरी उम्र अब नब्बे वर्ष से भी ऊपर हो गयी है।

तुया जननीर वयः एइ परिमाण। तुरिते आसिवे एक पुष्पक विमान।।07

और तुम्हारी माता की भी प्रायः इतनी ही उम्र है।
अब शीघ्र एक पुष्पक विमान आने वाला है।

ए संसारे मो दोहार हैले अदर्शन। गदाधरेर पदे पिण्ड करिवे अर्पण।।08

हमारे इस संसार से चले जाने के बाद तुम गया जाकर
श्रीगदाधर के चरणों में हमारे लिये पिण्डदान कर आना।

कहितेइ आइल दिव्य रथ शून्यचर। ज्ञान चक्षेर दृश्य चर्मचक्षेर अगोचर।।09

इतना कहते ही एक आकाश–चारी दिव्य रथ वहां आ पहुंचा,
जो ज्ञान–नेत्रों से गोचर था, चर्म नेत्रों से वह अगोचर था।

ताहे चढ़ि गेला दोंहे वैकुण्ठभुवने। हरिध्वनि करे प्रभु गंभीर गर्ज्जने।।10

उस पर आरोहण कर श्रीकमलाक्ष के माता–पिता वैकुण्ठ धाम को चले गये।
कमलाक्ष प्रभु गंभीर गर्जना करते हुए हरिध्वनि करने लगे।

लोकाचारे श्रीअद्वैत खेद प्रकाशिला। यथाविधि क्रिया कलाप समाप्त करिला।।11

लोकाचार अनुसार श्रीअद्वैत (कमलाक्ष) ने शोक प्रकाशित किया और यथाविधि
क्रिया–कलाप को सम्पन्न करके अपना कर्त्तव्य निभाया।

तबे पितृवाक्य स्मरिया लाभापुत्र। गयाधामे गेला जाँहा हय विष्णुक्षेत्र।।12

फिर पिता के वचन को याद कर अद्वैत
गया धाम में गये जहां श्रीविष्णुभगवान का क्षेत्र है।

गदाधरेर पादपद्मे पिण्डदान कैला। दिनकत पितृकार्ये ताँहा गोङाइला।।13

वहां जाकर श्रीगदाधर के चरण कमलों में पिण्ड दान किया
और पितृकार्य में वहां अनेक दिन बिताये।

तबे प्रभु भावे एबे जामु नाभि–गया। यदि श्री पुरुषोत्तम मोरे करे दया।।14

तब श्रीअद्वैत प्रभु ने नाभि–गया जाने का विचार किया,
(यदि श्रीपुरुषोत्तम मुझ पर कृपा करें।)

तबे श्री पुरुषोत्तमे प्रभुर गमन। रेमुणाते गोपीनाथे कैला दरशन।।15

तब उन्होंने श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र–पुरी में गमन किया।
रास्ते में रेमुणा में श्रीगोपीनाथ के दर्शन किये।

श्री मूर्त्तिर माधुर्य देखि प्रेमे हैला भोर। क्षणे हाँसे कान्दे नाचे कभु देय नोड़।।16

श्रीमूर्त्ति के माधुर्य को देखकर प्रेमाविष्ट हुये। कभी हंसते,
कभी रोते और नाचने और पछाड़ खाने लगे।

वहुक्षण परे प्रभुर बाह्य स्फूर्त्ति हैला। गोपीनाथे प्रणमिया स्तवन करिला।।17

बहुत देर के पश्चात् प्रभु को बाह्य ज्ञान हुआ और
श्रीगोपीनाथ को प्रणाम कर उनकी स्तुति गान की।

तबे चलि चलि नाभि गयाते आइला। पितृपिण्ड दिया प्रभु कृतार्थ मानिला।।18

वहां से चलकर प्रभु नाभि गया में आये और पितृ–पिण्ड
दान कर अपने को कृतार्थ माना।

तबे चलि गेला श्री पुरीर अभ्यन्तरे। याहां जगन्नाथ राम सुभद्रा विहरे।।19

तब वहां से श्रीपुरी पहुँचे, जहां श्रीजगन्नाथ,
बलरामजी और सुभद्राजी विराजते हैं।

साष्टांगे प्रणमि बहुकरिला स्तवन। जगन्नाथे कृष्णमूर्त्ति हइल स्फुरण।।20

उनको श्रीअद्वैतचन्द्र ने साष्टांग प्रणाम स्तुति की।
श्रीजगन्नाथ के दर्शन करते ही इन्हें श्रीकृष्ण की स्फूर्ति हो उठी।

देखिते देखिते प्रभुर प्रेम उपजिल। हाहा प्राणनाथ बलि मूर्छित हइल।।21

दर्शन करते ही उनमें प्रेम का उदय हो उठा और
"हा हा जगन्नाथ" कहते हुए वे बेसुध हो गये।

कतक्षण श्रीअद्वैत चेतन पाईला। कृष्णधन पाइलूं बलि हुँकार कैला।।22

कुछ समय के बाद अद्वैत प्रभु को चेतना आई और
मैंने कृष्णधन प्राप्त किया ऐसा कहकर हुँकारें कीं।

उद्दण्ड करये नृत्य ना जाय कथन। क्षणे हासे क्षणे उच्च करये क्रन्दन।।23

ऐसा उद्‌दण्ड–नृत्य करने लगे कि कुछ कहा नहीं जाता।
एक क्षण में हँसते तो दूसरे क्षण में जोर से रोने लगते।

महाभावावेशे प्रभुर दिवारात्र गेल। अरुणोदयेते तार बाह्य स्फूर्ति हैल।।24

इसप्रकार महाभावावेश में प्रभु का सारा दिन व्यतीत हो गया।
अरुणोदय होने पर उन्हें सुध आयी।

तबे प्रभु तीर्थराज करि स्नान केलि। महाप्रसादान्न पात्रा हैला कुतूहली।।25

फिर प्रभु ने तीर्थराज समुद्र में स्नान–केलि की और
महाप्रसाद–अन्न को पाकर वे कौतूहल करने लगे।

क्षेत्र धामे जाहां जाहां तीर्थ देवालय। ताँहा ताँहा बुले प्रभु प्रेमपूर्ण काय।।26

पुरुषोत्तम क्षेत्र में जहां–जहां तीर्थ एवं देव मन्दिर थे,
वहां–वहां वे प्रेमाविष्ट अवस्था में भ्रमण करते रहे।

हेन मते दिन कत ताँहहि वन्चिला। तबे प्रभु सेतुबन्ध तीर्थरे चलिला।।27

इसप्रकार कुछ दिन आपने वहां बिताये।
फिर वहां से वे सेतुबन्ध तीर्थ की ओर चल दिये।

पथे बहु तीर्थक्षेत्रे करिया भ्रमण। गोदावरी स्नान करि करिला गमन।।28

मार्ग में अनेक तीर्थों में भ्रमण करके गोदावरी में स्नान करने के लिये पहुँचे।

कभु वा दक्षिणे चले कभु चले वामे। प्रेमे मातोयारा तार नाहि कोन क्रमे।।29

कभी तो आप दक्षिण दिशा में और कभी उत्तर दिशा को चल देते थे।

प्रेम मतवारे की सी गति थी उनकी। कोई क्रम नहीं था। श्रीगौरप्रेम का ऐसा आवेश था कि दिशा भी सूझ नहीं रही थी।

कत तीर्थ भ्रमे प्रभु ना जाय कथन। शिवकान्चि विष्णुकान्चि कैला दरशन।।30

कितने तीर्थों में उन्होंने भ्रमण किया, कुछ वर्णन नहीं किया जाता फिर उन्होंने शिवकान्चि तथा विष्णुकान्चि (कांजीवरम) के दर्शन किये। उनकी तीर्थ यात्रा तीर्थों को दर्शन देकर पवित्र करना ही था।

कावेरीते स्नान पापनाशने गमन। दक्षिण मथुरा आदि करिला भ्रमण।।31

पापनाशिनी कावेरी में जाकर स्नान किया।
वहां से दक्षिण मथुरा (मदुरा) आदि में जाकर भ्रमण किया।

तबे प्रभु गेला महातीर्थ सेतुबन्ध। धनुतीर्थे स्नान करि पाइला आनन्द।।32

फिर श्रीअद्वैतप्रभु महातीर्थ सेतुबन्ध गये और
धनुतीर्थ स्नान कर अतीव आनन्द प्राप्त किया।

रामेश्वर शिव देखि करिया प्रणति। भक्तिभावे पूजि कैला बहुविध स्तुति।।33

श्रीरामेश्वर शिव का दर्शन कर•उन्हें प्रणाम किया एवं
श्रद्धापूर्वक उनकी पूजा–स्तुति की।

राम इहार ईश्वर इहँ रामदास। कहितेइ हेल महा प्रेमेर उल्लास।।34

श्रीराम इनके ईश्वर हैं और ये उनके दास हैं।
यह कहते ही इन्हें बहुत उल्लास हुआ।

ऊर्द्धबाहु हञा प्रभु करये नर्त्तन। क्षणे हासे क्षणे कान्दे क्षणे अचेतन।।35

ये भुजायें ऊँची उठाकर नृत्य करने लगे। क्षण में हंसते,
दूसरे क्षण में रोते और अचेतन हो जाते।

क्षणे कहे काँहा राम मोर प्राणधन। गाल वाद्य कर वाद्य करे मने मन।।36

कभी कहने लगते– मेरे प्राणधन श्रीराम कहां हैं?
कपोल फुलाकर मन–मन में वाद्य करने लगे।

कतक्षण परे प्रभु प्रेम सम्वरिला। रामायण पाठे सेइ निशि गोङाईला।।37

अनेक समय बाद इन्होंने प्रेम का संवरण किया।
वह रात आपने श्रीरामायण का पाठ करके बितायी।

क्रमे बहुतीर्थ क्षेत्रे भ्रमण करिला। तबे मध्वाचार्य स्थाने प्रभु उत्तरिला।।38

इसप्रकार फिर अनेक तीर्थों में उन्होंने भ्रमण किया।
फिर वे श्रीमध्वाचार्य के आश्रम पर गये।

मध्वाचार्य सम्प्रदायी बहु साधुगण। ताँहा रहि करे भक्तिरस आस्वादन।।39

श्रीमध्वाचार्य सम्प्रदाय के यहां बहुत साधु विद्यमान थे। वहां आपने रहकर भक्तिरस का आस्वादन किया। साधुगण आपके दर्शन कर धन्य हो उठे।

शाण्डिल्य सूत्रे–आर श्रीनारद सूत्रे। भक्तिर व्याख्यान करे प्रेमपूर्ण चित्ते।।40

शाण्डिल्य सूत्र एवं नारदपंच सूत्र के अनुरूप
भक्ति की प्रेमपूर्ण चित से वे व्याख्या करते थे।

ताहा शुनि प्रभुर हैला प्रेम उद्दीपन। भक्तिदेवि दया कर बले घने घन।।41

उस व्याख्या को सुनकर इनमें प्रेम का उदय हुआ
और बार–बार कहने लगे– भक्ति देवि! मुझ पर कृपा करो।

अद्भुत करये नृत्य ऊर्द्धबाहु हञा। क्षणे इति उति धाय क्रन्दन करिया।।42

अपनी सुन्दर आजानुलम्बित भुजाओं को उठाकर नित्य करने लगे।
क्षण–क्षण में क्रन्दन करते हुए इधर–उधर भागने लगे।

प्रेम सिन्धुर ढेओ क्रमे बढ़िया चलिल। मूर्च्छित हइया प्रभु भूमिते पड़िल।।43

उनके हृदय कमल का प्रेमसिन्धु (प्रेम सागर) तरंगित
होने लगा और ये मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

ताहा देखि महोपाध्याय माधवेन्द्रपुरी। कहे इह भक्तिरत्नेर उत्तमाधिकारी।।44

वहां महोपाध्याय श्रीमाधवेन्द्रपुरी ने इन्हें देखकर विचार किया कि यह तो भक्तिरस के उत्तम अधिकारी हैं। जो जगत का उद्धार करेंगे।

सामान्य जीवेते ना हय शुद्धप्रेमभक्ति। चिन्मय आधारे हय नित्य तान स्थिति।।45

साधारण जीवों में शुद्ध प्रेमभक्ति का आविर्भाव नहीं होता।
चिन्मय आधार पाकर उसमें नित्य अवस्थिति होती है।

शुद्धप्रेमासव इहों करियाछे पान। अन्तर्नित्यानन्द इहाँर नाहि बाह्य ज्ञान।।46

इसने शुद्ध प्रेमामृत का पान किया है, तभी तो इसके भीतर
नित्यानन्द उमड़ रहा है, इसे बाह्य ज्ञान नहीं।

इहार शरीरे महापुरुष लक्षण। जगत तारिते बूझों हैला प्रकटन।।47

इसके शरीर में महापुरुषों के लक्षण हैं, ऐसा लगता है
ये जगत् का उद्धार करने के लिये ये प्रकटे हैं।

तबे सेइ साधुगण प्रभुरे बेड़िया। हरि हरि ध्वनि करे आनन्दित हञा।।48

तब वहां सब साधुगण इनको चारों ओर घेरकर
आनन्दपूर्वक हरि–हरि ध्वनि करने लगे।

हरिनाम महौषधि कर्णद्वारे पिया। भक्तिदेह वलि प्रभु बुलेन गर्जिया।।49

श्रीहरि नाम रसायन का कर्णपुटों द्वारा पानकर श्रीअद्वैतप्रभु गर्जना कर कहने लगे– हे मेरे प्रभु श्रीकृष्ण! "मुझे भक्ति प्रदान करो।"

प्रेम वन्याय साधु सब भासिते लागिला। प्रेमोल्लासे कत भाव प्रभु प्रकाशिला।।50

सब साधुगण प्रेम वन्या में निमग्न हो गये।
प्रभु में प्रेमोल्लास द्वारा अनेक भाव प्रकाशित होने लगे।

तबे कतक्षणे तिहों मनस्थिर कैला। भक्ति कल्पवृक्ष पुरीराजे प्रणमिला।।51

अनेक समय बाद इनका मन स्थिर हुआ और इन्होंने भक्ति कल्पतरु स्वरूप श्रीमाधवेन्द्रपुरी को प्रणाम, नमस्कार एवं स्तुति आदि किया।

माधवेन्द्र प्रेमाविष्टे ताँरे आलिंगिया। कहे किवा नाम धाम कह विचारिया।।52

श्रीपुरी जी ने भी प्रेमाविष्ट होकर इन्हें आलिंगन कर लिया
और बोले–आप अपना नाम और निवास स्थान तो बताइये।

तुहँ नित्यसिद्ध शुद्धप्रेमेर भाण्डार। तव दरशने बहु भाग्य मो सबार।।53

आप मुझे नित्य–सिद्ध शुद्ध प्रेम के भण्डार लगते हो।
आपके दर्शनोंसे हम अपना महाभाग्य मानते हैं।

प्रभु कहे कमलाक्षाचार्य मोर नाम। भागीरथीतीरे शान्तिपुरग्रामे मोर धाम।।54

श्रीअद्वैतप्रभु ने कहा–मुझे कमलाक्षाचार्य कहते हैं
और गंगा के किनारे पर बसे शान्तिपुर में मेरा घर है।

तुह भक्ति–शास्त्राचार्य परम उदास। भक्ति तत्व कहि मोरे कर निज दास।।55

आप तो भक्तिशास्त्र के आचार्य हैं और परम विरक्त हैं।
मुझे अपना दास बनाकर मुझे भक्तितत्व का उपदेश दीजिये।

शुनि पुरीराज महा आनन्दित हैला। प्रभुके आग्रह करि ताहाञि राखिला।।56

इनके वचन सुनकर श्रीपुरी गोस्वामी महा आनन्दित हुए।
आग्रहपूर्वक श्रीअद्वैतप्रभु को अपने आश्रम में रोक लिया।

श्रीमद् भागवत मध्वाचार्य–भाष्य आर। प्रभुके शुनाय पुरी करिया विस्तार।।57

श्रीमद्भागवत तथा उसका माध्वाचार्य–भाष्य श्रीपुरी
इनको विस्तारपूर्वक सुनाने लगे।

शुनि मात्र प्रभु सब कण्ठस्थ करिला। ताहा देखि साधुगण विस्मय मानिला।।58

सुनने मात्र से सब कण्ठ कर लिया। वहां वे सब
साधु इनकी ऐसी प्रतिभा देखकर विस्मित हो उठे।

एकदिन प्रभु कहे पुरीराज स्थाने। कलिकाल शक्त्ये जीवधर्म नाहिमाने।।59

एकदिन श्रीअद्वैतप्रभु ने श्रीपुरी गोस्वामी को कहा–

"प्रभो! कलिकाल के प्रभाव से जीव धर्म का आचरण नहीं कर रहे हैं।

जाँहा जाँहा जाङ ताँहा देखों म्लेछाचार। 'हरेकृष्ण' नाम नाहि शुनों एकबार।।60

जहां–जहां मैं गया हूँ वहां म्लेच्छों का सा आचरण है।

एकबार भी उनके मुख से श्रीकृष्णनाम सुनाई नहीं देता।

कैछे जीवोद्धार हैव नायाङ सन्धान। सदुपाय कहि जीवेर कर त कल्याण।।61

जीवों का उद्धार कैसे होगा, यह मैं नहीं जान पा रहा हूँ।

आप जीवों के उद्धार का सदुपाय कहकर उनका कल्याण कीजिये।

पुरी कहे कमलाक्ष तुमि दयानिधि। जगतेर हित लागि भाव निरवधि।।62

श्रीपुरीजी ने कहा– "कमलाक्ष! तुम दयानिधि हो,

जो तुम्हारे भीतर जगत् के जीवों के उद्धार की चिन्ता लग रही है।

हेन बुद्धि साधारण जीवे ना हय स्फूर्ति। ताहे प्रकटित हय जाहे ऐशी शक्ति।।63

ऐसी बुद्धि साधारण जीवों में स्फुरित नहीं होती।

यह उसमें उदित होती है जिसमें ईश्वरी शक्ति हुआ करती है।

एबे साक्षात् परब्रह्मेर आविर्भाव विने। अन्यद्वारे जीवोद्धार नाहि सुगमे।।64

अब साक्षात् परब्रह्म के आविर्भाव के बिना और

किसी के द्वारा जीवोद्धार होना सुगम नहीं है।

धर्म संस्थापन हेतु एइ कलियुगे। स्वयं भगवान् प्रकट हइवेन अग्रे।।65

श्रीपुरी गोस्वामी ने कहा– धर्म संस्थापन के लिये

इस कलियुग में आगे स्वयं भगवान् प्रकट होंगे।

अनन्त संहिता तार साक्षी श्रेष्ठतम। मध्यस्थ श्रीभागवत भारत आगम।।66

अनन्त संहिता इस बात का प्रमाण है।

एवं श्रीमद्भागवत्, महाभारत तथा आगम शास्त्र इसके साक्षी हैं।

प्रभु कहे अनन्त संहिता काँहा रय। ताहा देखिवारे मोर गाढ़ इच्छा हय।।67

श्रीअद्वैत प्रभु ने पूछा– वह अनन्त संहिता ग्रन्थ कहाँ है?

उसे देखने की मेरी गाढ़ इच्छा है।

शुनि पुरी अनन्त संहिता देखाइला। ताहा पढ़ि प्रभु महा आनन्दित हैला।।68

यह सुनकर श्रीपुरी जी ने इन्हें अनन्त संहिता दिखाई। उसे पढ़कर प्रभु महा आनन्दित हुए।

प्रभु कहे नन्दसुत षड़ैश्वर्य पूर्ण। गौररूपे नवद्वीपे हैवे अवतीर्ण।।69

प्रभु ने कहा– श्रीकृष्ण जो षड़ैश्वर्यपूर्ण हैं, वही तो
गौररूप से नवद्वीप में अवतीर्ण होंगे।

हरिनाम प्रेम दिया जगत तारिवे। मो अधमेर वांछा तबे अवश्य पुरिवे।।70

श्रीहरिनाम तथा उसके फलस्वरूप कृष्ण प्रेम को प्रदान कर वे जगत् का उद्धार
करेंगे– तभी मुझ अधम की वांछा अवश्य पूर्ण होगी।

कहितेइ हैल प्रभुर प्रेम उद्दीपन। प्रहरेक गौरनामे करे संकीर्तन।।71

इतना कहते ही श्रीअद्वैत में प्रेम उदित हुआ और
वे प्रहर समय पर्यन्त श्रीगौरनाम संकीर्तन करते रहे।

गौर मोर प्राणपति जाँहा तारे पाङ। वेदधर्म लंधि मुई ताहा चलि जाङ।।72

हे गौर! हे प्राणपति! मैं आपको जहां भी पाऊँ,
वहां मैं वेद धर्म का भी उल्लंघन करके चला जाऊँगा।

एइ पद गाञा प्रभु करेन नर्त्तन। तांर संगे भावे गाय जत साधुगण।।73

यह पदगान करते हुए प्रभु नृत्य करने लगे और
इनके साथ वहां के सब साधुगण भी नृत्य–गान करने लगे।

क्रमे शुद्ध प्रेमगंगार तरंग बाढिल। हा गौरांग बलि बहु क्रन्दन करिला।।74

शुद्ध प्रेम की गंगा वहां प्रवाहित होने लगी–
सबके सब 'हा गौरांग' कहकर अनेक क्रन्दन करने लगे।

गौर पाइनु बलि प्रभु इति उति धाय। क्षणे–क्षणे मूर्च्छा हञा धुलाय लोटाय।।75

"मैंने गौर को पा लिया है– ऐसा कहकर प्रभु इधर–उधर भागने लगे।
क्षण–क्षण में मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर कर धूलि में लोट–पोट होने लगे।

कत क्षण परे प्रभु प्रेम सम्वरिला। अनन्त संहिता ग्रन्थ लिखिया लइला।।76

कुछ देर के बाद प्रभु ने प्रेम को संवरण किया।
फिर आपने वहां रहकर "अनन्त संहिता" की प्रतिलिपि कर ली।

एक दिन श्री अद्वैत उठिया प्रभाते। पुरीराजे प्रणमिया चलिला तुरिते।।77

एकदिन श्रीअद्वैत प्रभात काल में उठे। श्रीपुरी गोस्वामी से आज्ञा ली, उन्हें प्रणाम
कर वे वहां से श्रीकृष्ण गौर का स्मरण करते हुए शीघ्र चल दिये।

पथे कत शत तीर्थ करिया भ्रमणे। दण्डकारण्येते प्रभु गेला कत दिने।।78

रास्ते में शत–शत तीर्थदर्शन करते हुए कुछ दिन बाद दण्डकारण्य क्षेत्रमें आये।

नासिकादि तीर्थ क्षेत्र करि दरशन। श्रीद्वारकाधामे तबे करिला गमन।।79

नासिक आदि तीर्थों के दर्शन करके श्रीद्वारकाधाम में आ पहुँचे।

लक्ष्मी आदि वासुदेव प्रणाम करिया। बहुविध स्तुति कैला प्रेमाविष्ट हञा।।80

वहां श्रीलक्ष्मी (रुक्मिणी) एवं श्रीवासुदेव श्रीद्वारकानाथ को प्रणाम कर प्रेमाविष्ट होकर उनकी अनेक प्रकार स्तुति, नमस्कार व वन्दन किया।

तबे गेला प्रभास पुष्करादि तीर्थे। क्रमे चलि चलि प्रभु आइला कुरुक्षेत्रे।।81

उसके बाद प्रभास क्षेत्र पुष्कर आदि तीर्थों में गये। प्रभु फिर कुरुक्षेत्र में आये।

तबे हरिद्वारे प्रभु करिला गमन। गंगास्नान करि कैला तीर्थ परिक्रम।।82

वहां से हरिद्वार गये और गंगा स्नान कर वहां के
तीर्थ स्थान पर भ्रमण, दर्शन व हरिनाम किया।

तबे गला तीर्थोत्तम श्रीबद्रिकाश्रमे। नरनारायण व्यास कैला दरशने।।83

वहां से तीर्थोत्तम श्रीबद्रिकाश्रम में आये और
श्रीनरनारायण तथा श्रीव्यासदेव के दर्शन किये।

प्रेमाविष्ट हैञा बहु करिला नर्त्तन। ताँहा नमस्करि प्रभु करिला गमन।।84

प्रेमाविष्ट होकर वहां बहुत देर तक नृत्य किया।
उनको नमस्कार कर प्रभु वहां से चल दिये।

कतदिने आइला पुण्य गोमुखीपर्वते। तबे गेला श्रीगण्डकी शालग्राम क्षेत्रे।।85

कुछ दिन में गोमुखी तीर्थ पर्वत पर आये और
वहां के श्रीशालग्राम क्षेत्र गण्डकी पर पहुँचे।

तंहि स्नान करि प्रभु करिला विश्राम। हरि नारायण नाम जपे अविश्राम।।86

वहां उन्होंने स्नानादि कर विश्राम किया।
निरन्तर श्रीहरि–नारायण नाम का जाप किया।

देखि एक शिलाचक्र सर्वसुलक्षण। भक्ति करि ताहा लैयां करिला गमन।।87

वहां एक शिलाचक्र देखा जो समस्त सुन्दर लक्षणों से युक्त था।
उसे श्रद्धापूर्वक लेकर वहां से चले।

तबे श्रीअद्वैतप्रभु आइला मिथिलाय। सीतार जन्म स्थान देखि धूलाय लोटाय।।88

वहां से श्रीअद्वैतप्रभु मिथिला में आये। श्रीसीताजी के
जन्मस्थान दर्शनकर ये वहां की रज में लोटने लगे।

प्रेमाविष्ट हञा करे नर्त्तन कीर्तन। हेन काले शुन एक अपूर्व कथन।।89

श्रीप्रभु प्रेमाविष्ट होकर नृत्य, कीर्तन करने लगे।
उसी समय इन्होंने एक अपूर्व सुमधुर कीर्तन सुना।

सुमधुर सुललित कृष्ण गुण गान। शुनि प्रभु सेइ दिके करिला पयान।।90

वह था अति मीठा सुरीला कृष्ण गुणगान सुनते ही प्रभु उसी ओर धावित हुए।

वटवृक्ष तले देखे एक द्विजराय। गन्धर्वेर सम कृष्णगुणामृत गाय।।91

वटवृक्ष के नीचे इन्होंने एक द्विजराज को देखा, जो
गन्धर्व की भांति कृष्णगुणामृत का गान कर रहा था।

आश्चर्य शुनिया कृष्णरूपेर वर्णन। प्रेमावेशे प्रभु तारे कैला आलिंगन।।92

श्रीकृष्णरूप वर्णन को सुन कर इन्हें आश्चर्य हुआ।
प्रेमाविष्ट होकर श्रीअद्वैतप्रभु ने उसे आलिंगन किया।

आलिंगन छले प्रभु दया प्रकाशिया। प्रेमदान कैला द्विजे शक्तिसंचारिया।।93

आलिंगन के बहाने इन्होंने उस पर दया प्रकाशित की और
उसमें शक्ति संचार पूर्वक उसे प्रेमदान करके धन्य किया।

स्पर्शमणि स्पर्शे जैछे लोह हय स्वर्ण। तैछे प्रभुर स्पर्शेद्विज हैला प्रेमपूर्ण।।94

पारस मणि के स्पर्श से जैसे लोहा सोना हो जाता है, उसीप्रकार प्रभु का स्पर्श
पाते ही द्विजराज प्रेम से पूर्ण होकर उन्मत्त हो उठा।

प्रभुरे ईश्वर ज्ञाने द्विज प्रणमिला। श्रीविष्णु स्मरिया प्रभु तांहारे पुछिला।।95

इन्हें ईश्वर जान कर द्विज ने इन्हें प्रणाम किया।
प्रभु ने 'श्रीविष्णु' कहकर उससे यह पूछा–

द्विजतव किवा नाम शुनिते मन हय। काहार रचित एइ गीत सुधामय।।96

हे द्विज! आपका नाम जानने की इच्छा है मेरी।
यह सुधामय गीत किसकी रचना है जो तुम गा रहे हो?

रचनार माधुर्य ऐछे नाहि शुनों आर। ताहे तव स्वरालाप अति चमत्कार।।97

इसप्रकार की रचना– माधुरी मैंने पहले कहीं नहीं सुनी है।
उस पर फिर आपका स्वरालाप सुनकर मुझे चमत्कार हो रहा है।

एहेन संगीत सुधा मोरे पियाइया। मत्तकरि एस्थाने आनिला आकर्षिया।।98

ऐसी संगीत सुधा मुझे पिलाकर आपने मतवाले की
भांति मुझे आकर्षित कर लिया है।

विप्र कहे मोर नाम द्विज विद्यापति। राजान्न भोजने मोर विषयेते मति।।99

उस द्विजराज ने कहा– मुझे विद्यापति द्विज कहते हैं।?
मैं राजा का अन्न भोजन करता हूँ, जिससे मेरी मति विषयों में लगी हुई है।

वातुलता करि मुञि रचिनु एइ गीत। सारग्राही साधु तेइ इथे प्रीत।।100

मैंने पागलपन कर इस गीत की रचना की है। आप क्योंकि सारग्राही साधु हैं, इसलिये आपको इतना अच्छा लग रहा है। आपका स्पर्श पाकर धन्य हुआ।

तोया आकर्षिते शक्ति धरे कोन जने। निजगुणे कैला मोर उद्धार साधने।।101

आपको आकर्षण करने की शक्ति भला किसमें है
अपने सद्गुणों से मेरे उद्धार का ही साधन किये।

प्रभु कहे तोमार रचित गीतामृत। जीव कोन छार कृष्ण हय आकर्षित।।102

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– तुम्हारे रचित अति मधुर गीतामृत में, जीवों की तो क्या कहें श्रीकृष्ण भी आकर्षित होकर चले आवेंगे।

भाग्ये मोर प्रति कृष्णदया प्रकाशिल। तेंइ पदकर्त्ता विद्यापतिर संग हैल।।103

मेरे भाग्य हैं कि श्रीकृष्ण ने मेरे प्रति दया प्रकाशित की है जो वही पदकर्त्ता होकर विद्यापति के साथ मिल गये हैं।

एतकहि प्रभु तारे आलिंगन करि। श्रीअयोध्या धामे चले स्मरिया श्रीहरि।।104

इतना कहने पर प्रभु ने उन्हें आलिंगन किया और श्रीहरि का स्मरण करते हुए श्रीअयोध्या धाम की ओर चल दिये।

ताँतागिया देखि श्रीरामेर जन्मस्थान। पुलकित हञा प्रभु करिला प्रणाम।।105

वहाँ जाकर आपने श्रीरामजन्म स्थान के दर्शन किये और पुलकित होकर उसे प्रणाम किया।

अद्भुत रामेर लीला करिया स्मरण। प्रेमाविष्ट हञा बहु करये क्रन्दन।।106

श्रीराम की अद्भुत लीलाओं का स्मरण का प्रेमाविष्ट हो उठे।
ये और बहुत क्रन्दन करने लगे।

क्रमे प्रेमसुधा सिन्धु तरंग बाढ़िल। रावणे बधह बलि हुहुंकार कैल।।107

क्रम–क्रम में प्रेमसुधा सागर की तरंगे बढ़ने ही लगीं– और "रावण को मैं मारूँगा" ऐसा कहकर हुंकार करने लगे। उनमें श्रीरामप्रभु का आवेश हुआ।

भावावेशे कैला रामेर लीलानुकरण। कतक्षण परे प्रभु सुस्थ कैला मन।।108

आवेश में आकर श्रीअद्वैत प्रभु श्रीरामलीला का अनुकरण करने लगे।
बहुत समय के बाद प्रभु ने अपना मन स्वस्थ किया।

तबे प्रभु सरयू गंगाय करि स्नान। रामलीलास्थान देखि करिला पयान।।109

फिर श्रीअद्वैत प्रभु ने सरयू–गंगा में स्नान किया और
रामलीला स्थलियों के दर्शन कर वहां से आगे चले।

चलि चलि आइला प्रभु वाराणसी धाम। मणिकर्णिकार घाटे कैला गंगास्नान।।110

वहाँ से आप वाराणसी पहुँचे और मणि कर्णिका घाट
पर आकर गंगा स्नान कर गंगा को धन्य किया।

आदि केशव देखि करे साष्टांग प्रणति। प्रेमावेशे कैला तारे बहुविध स्तुति।।111

आदि केशव के दर्शन कर उन्हें साष्टांग प्रणाम किया।
प्रेमाविष्ट होकर अनेक प्रकार से स्तुति की।

तबे प्रभु करि बिन्दु माधव दर्शन। प्रेमाविष्ट हञा करे नर्तन कीर्तन।।112

फिर प्रभु ने श्री बिन्दु माधव के दर्शन किये और
प्रेमावेश में अति अद्भुत नृत्यगान किया।

प्रेमेर उल्लास क्रमे बाड़िया चलिल। पुन पुन प्रणमिया स्तवन करिल।।113

प्रभु का प्रेमानन्द बढ़ता ही चला गया। बारम्बार प्रणाम कर स्तुति करने लगे।

करजोड़े कहे शुन श्री माधव हरि। तोंहार दयाय मुञि जाई बलहारि।।114

आप हाथ जोड़कर कहने लगे– हे माधव! हे श्रीकृष्ण हरि!
आपकी दया पर बलिहारी जाऊँ।

भक्तवान्छा कल्पवृक्ष तव दिव्यमूर्त्ति। इहाँ मृत जीवमात्रे देह नित्यमुक्ति।।115

आपकी दिव्य मूर्त्ति तो भक्त वांछाओं को पूर्ण करने में कल्पवृक्ष के समान है।
यहाँ मरने वाले जीव मात्र को आप नित्य मुक्ति प्रदान करते हैं।

तोमार महिमा विधि हर नाहि जाने। मो छारेर साध्य किवा आछये वर्णने।।116

आपकी महिमा ब्रह्मा–शिव नहीं जानते मुझ अधम के पक्ष में वर्णन करने का
क्या साधन है?

तवे भावावेशे गेला विश्वेश्वर स्थाने। लोक शिक्षाइते प्रभु करिला पूजने।।117

तब प्रभु भावाविष्ट होकर श्रीविश्वेश्वर के मन्दिर में गये और स्वयं शिवावतार
होकर भी केवल लोक शिक्षा के लिये इन्होंने श्रीशिव का पूजन किया।

भक्ति देह बुलि बहु करये स्तवन। ऊर्द्धबाहू हञा करेन नर्त्तन कीर्त्तन।।118

मुझे भक्ति दान दीजिये कहकर बहुत स्तुति की और
भुजाएं उठाकर नृत्य कीर्तन करने लगे।

तांहा प्रणमिया अन्नपूर्णा गृहे गेला। अन्नपूर्णा देखि बहु स्तवन करिला।।119

उन्हें प्रणाम कर फिर अन्नपूर्णा के मन्दिर गये और
उसके दर्शन कर बहुत स्तुति–नति की।

तारे नमस्करि प्रभु करये भ्रमण। बहुतीर्थे शिव आदि कैला दरशन।।120

उसे नमस्कार कर प्रभु वहाँ भ्रमण करने लगे और

अनेक शिव–तीर्थों का वहाँ दर्शन किया।

योगीन्यासी अयाचक साधुगण स्थाने। भक्तिर प्राधान्य तिंहो करेन व्याख्याने।।121

वहाँ योगी–संन्यासी एवं अयाचक साधुओं के स्थानों पर
आपने भक्ति प्रधान व्याख्यान किये।

श्रीविजयपुरी महाभागवतोत्तम। रात्रे प्रभुसह ताँर हइल मिलन।।122

श्रीविजयपुरी महाभागवत श्रेष्ठ के साथ इन्होंने
रातभर श्रीकृष्ण कथा प्रसंग कहकर बिताई।

कृष्ण कथालापे दोंहार हैल प्रेमानन्द। क्षणे हासे क्षणे कान्दे बलिया गोविन्द।।123

श्रीकृष्णकथा कहते सुनते दोनों में प्रेमानन्द उठल पड़ा। कभी हँसते, कभी रोते
श्रीगोविन्दनाम गान करके। हंसकर, नाचकर, एवं गाकर समय बिताया।

क्षणे गड़ागड़ि जाय क्षणे अचेतन। क्षणे भावावेशे दोंहे करे आलिंगन।।124

कभी पछाड़ खाते तो कभी बेसुध हो जाते, कभी भावावेश में एक–दूसरे को
आलिंगन ही करने लगते। अर्थात् भक्त मिलन का सुख सिन्धू उमड़ा।

हेन मते मंगलरजनी हैल भोर। अन्यान्य विच्छेदे दोंहार दुखेर नाहि ओर।।125

इसप्रकार वह मंगलमय रजनी बीती और दोनों
एक दूसरे के अपार विच्छेद दुख में दुखी हो गये।

तबे चलि चलि प्रभु प्रयागे आइला। केश मुण्डाइया त्रिवेणीते स्नान कैला।।126

वहाँ से श्रीअद्वैतप्रभु फिर प्रयाग पहुँचे और केश
मुण्डा कर त्रिवेणी में स्नान किया और–

भक्तिभावे ताँहा करि पितृपिण्ड दान। विधिमते कार्य सब कैला समाधान।।127

भक्तिपूर्वक वहाँ पितृगण को पिण्डदान किया।
सब कार्य विधि अनुसार वहाँ सम्पन्न किया।

वेणीमाधव देखि करे स्तुति नमस्कार। भीमेर गदा देखि प्रशंसये बारे बार।।128

श्रीवेणी माधव के दर्शन कर उनकी स्तुति की और उन्हें
नमस्कार कर भीम गदा को देखा तथा बार–बार उसकी स्तुति की।

तबे चलि गेला प्रभु मथुरा मण्डल। जाँहा स्वयं भगवानेर नित्य लीला स्थल।।129

फिर वहां से मथुरा मण्डल में आये, जहां
स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण का नित्य लीला स्थान है।

नित्यसिद्ध धाम प्राप्त्ये हैला प्रेमोद्गार। हा कृष्ण बलिया प्रभु छाड़ये हुँकार।।130

नित्य सिद्धधाम में पहुँचते ही इनमें प्रेम उदित हो उठा और 'हा कृष्ण'

कह कहकर ये निश्वास छोड़ने लगे। तब उनका भाव दर्शनीय था।

उछलिल प्रेम वन्या मथुरा भासिल। आबाल वृद्ध युवागणे ताहे डुबाइल।।131

प्रेम की वन्या में मथुरा सराबोर हो उठी और
आबाल वृद्ध एवं युवागण उसमें डूबने–उतराने लगे।

भावावेशे श्रीयमुना करि दरशन। बहु स्तुति नति कैला ना जाय कथन।।132

भावावेश में इन्होंने श्रीयमुना दर्शन किया।
अनेक प्रकार से स्तुति–की जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

पूर्वे हरि भक्त एक छिला ध्रुव नामे। कृष्ण आराधना तिंहो कैला जेइ स्थाने।।133

पूर्वकाल में जो श्रीध्रुव नाम के भगवद्भक्त हुए, उन्होंने
जहाँ (मधुवन) श्रीकृष्ण आराधना की थी, श्रीप्रभु वहाँ गये।

सेई स्थल ध्रुवघाट बलिया विख्यात। ताँहा पिण्डदाने शतगया फल प्राप्त।।134

वहाँ ध्रुवघाट प्रसिद्ध है वहाँ पिण्डदान करने से गया के पिण्डदान से सौ गुणा
अधिक फल प्राप्त होता है। श्रीवृन्दावन धाम की महिमा ही अपार है।

श्रीयमुनारस्नान करि आचार्य गोसाञि। भक्तिभावे पितृपिण्ड दिला सेइठाञि।।135

श्रीआचार्य गोस्वामी ने श्रीयमुना में स्नान कर
श्रद्धापूर्वक वहाँ पितृगण को पिण्डदान किया।

तबे श्रीकृष्ण विग्रह करि दरशन। शुद्ध प्रेम रसे तेंहो हइला मगन।।136

वहाँ श्रीकृष्णमूर्ति के दर्शन करते ही ये शुद्ध
प्रेमरस में मग्न अर्थात् अन्तर्मना हो गये।

कृष्णलीलास्थान सबकरि परिक्रमा। कि आनन्द पाइला प्रभु नाहि तार सीमा।।137

वहाँ के समस्त कृष्ण लीला स्थानों की परिक्रमा
कर प्रभु ने असीम आनन्द प्राप्त किया।

तबे चलि गेला प्रभु श्रीमद् ब्रजधामे। चिन्मय भूमि स्पर्शमात्र मोह हैला प्रेमे।।138

तब प्रभु श्रीव्रज धाम में पधारे। वहाँ की चिन्मय भूमि का
स्पर्शमात्र करते ही प्रेम में विमोहित हो गये।

यद्यपि चिन्मय भूमि मथुरादि हय। प्रेमाधिक्य व्रजे हय गोपी भावोदय।।139

यद्यपि मथुरादि की भूमि चिन्मय है, किन्तु प्रेम के आधिक्य से ब्रज में आते ही
इनमें गोपीभाव का उदय हो उठा। चूंकि ब्रज में ये राधारानी की सम्पूर्ण प्रेम
मंजरी सखी के नाम से प्रसिद्ध है।

कतक्षणे श्री अद्वैत पाईला चेतन। कोँहाँ प्राणनाथ बलि करये क्रन्दन।।140

कुछ देर तक बेसुध रहकर श्रीअद्वैत प्रभु ने चेतनता प्राप्त की और "मेरे प्राणनाथ कहाँ हैं"– ऐसा कहकर उच्च क्रन्दन करने लगे।

महाभावावेशे क्षणे इति उति धाय। ऐई चिन्मय रजबलि धूलाय लोटाय।।141

महा भावावेश में इधर–उधर घूमने लगे और "यही चिन्मय रज है" कह–कहकर धूलि में प्रेमपूर्वक लोट–पोट होने लगे।

क्षणे हासे क्षणे करे उदण्ड नर्त्तन। कभु कृष्ण बलि करे गंभीर गर्ज्जन।।142

कभी हँसने, कभी उद्दण्ड नृत्य करने लगते और कभी 'कृष्ण–कृष्ण' कहकर अति गम्भीर गर्जना किये। समस्त प्रेम भक्ति लक्षण उनमें प्रकट हो गये।

स्वेदकम्प स्तम्भ आदि धरे क्षणे क्षणे। सेई भावे गेला प्रभु गिरिगोवर्धने।।143

स्वेद, कम्प, स्तम्भ आदि प्रेम के सात्विक विकारों से विभूषित होकर श्रीअद्वैत प्रभु श्रीगिरिगोवर्धन आये।

गोवर्धन देखि प्रेम तरंग बाड़िल। ऊर्द्धबाहु हञा प्रभु नाचिते लागिल।।144

श्रीगोवर्धन को देखते ही इनमें प्रेम तरंग वर्द्धित हो उठी और यह भुजाएं ऊँची उठा कर नाचने लगे।

राधाकृष्णेर नित्य लीला स्थानादि देखिया। एक वटवृक्षतले रहिल शुतिया।।145

श्रीराधाकृष्ण की नित्य लीलाओं के स्थानादिक को देखकर एक वट वृक्ष के नीचे आकर रात को सोये।

शेष रात्रे निद्रावेशे देखये स्वपन। श्रीनन्दनन्दन आसि दिला दरशन।।146

शेष रात्रिकाल में निद्रावेश में स्वप्न में श्रीनन्दनन्दन के दर्शन प्राप्त हुए।

नवीन नीरद कांति भुवन मोहन। शिखि पिच्छ–मौलि नर सवंशी वदन।।147

नवीन मेघ की कान्ति थी उनकी, त्रिभुवन मोहन रूप था, मोर–मुकुट धारण कर नरवेश में वंशी को अधर पर धारण कर रहे थे।

पीताम्बरधारी पदे सोनार नूपुर। नवनीत कलेवर रसामृतपूर।।148

पीताम्बर धारण कर रखा था, चरणों में सोने के नूपुर थे। नवनीत सम अति कोमल शरीर रसामृत सिन्धू था। जो दर्शन मात्र से मन मोहने वाला था।

अपरूप रूप देखि महानन्द पाञा। महानृत्य करे प्रभु ऊर्ध्वबाहु हञा।।149

इस अनुपम रूप को देखकर इन्हें महा आनन्द प्राप्त हुआ और महानृत्य ही करने लगे भुजायें ऊँची उठाकर। चूंकि प्रेमोद्‌गार का लक्षण ही नृत्य है।

स्वयं कृष्णचन्द्र कहे तुमि मोर अंग। तोमार संग पाइले बड़े प्रेमेर तरंग।।150

श्रीकृष्णचन्द्र ने स्वयं कहा– अद्वैत! तुम मेरे अंग हो।

तुम्हारा संग प्राप्त करने से प्रेम तरंग वृद्धि पाती हैं।

गोपेश्वर शिव तुहूँ बड़ दयामय। जीवेर मंगल लागि तोमार उदय।।151

तुम ही परम दयामय गोपेश्वर शिव हो और

जीव के मंगल निमित्त तुम्हारा अवतार हुआ है।

लुप्त तीर्थ उद्धार आर भक्ति परचार। कृष्णनाम दिया कर जीवेर निस्तार।।152

लुप्त तीर्थों का उद्धार तथा भक्ति प्रचार करके

कृष्णनाम दान कर आप जीवों का निस्तार करो।

मोर एक दिव्य मूर्त्ति महामणिमय। मदनमोहन नाम कुन्ज मध्ये रय।।153

मेरी एक दिव्य महामणिमय मूर्त्ति, जिसका नाम है

"मदनमोहन" कुन्ज में दबी पड़ी है।

द्वादश आदित्य तीर्थे यमुनार तीरे। अल्प मृत्तिकाते आच्छादित कलेवरे।।154

यमुना के किनारे द्वादश आदित्य (टीला) तीर्थ पर

थोड़ी सी मिट्टी से वह आच्छादित हो रही है।

पूर्वे एई मूर्त्ति कुब्जा कैला सुसेवन। दस्युभये शेये मुइ हैनु संगोपन।।155

पहले काल में इस मूर्त्ति का सेवन–आराधन कुब्जा ने किया था और डाकुओं के डर से उसने मुझे सुलाकर यहाँ छिपा दिया था।

ग्राम हैते लोक आन काढ़ भालमते। सेवा प्रकाशिया कर जगतेर हिते।।156

तुम गांव से लोगों को एकत्रित कर मेरी मूर्त्ति को सावधानी से बाहर करो और उसको प्रकाशित कर जीव–जगत् का कल्याण विधान करो।

एत कहि कृष्णचन्द्र हैला अन्तर्हित। प्रभु जागि शुद्धप्रेम हइया पूर्णित।।157

इतना कहकर श्रीकृष्ण तो अन्तर्धान हो गये। ये जाग कर शुद्ध प्रेम में सराबोर हो गये।

तबे उच्च हरिनाम गाइते गाइते। ऊर्ध्वबाहु हञा चले नाचिते नाचिते।।158

उच्चस्वर मे हरिनाम गान करते–करते, भुजाएं ऊँची उठाकर नृत्य करते–करते।

ग्रामेर भितरे प्रभु कैला आगमने। साधु देखि लोक रूप आइला सेइ स्थाने।।159

ये गांव में आये। इन्हें कृष्णभक्त जानकर सब लोग इनके पास इकट्ठे हो गये।

प्रभु कहे तुमि सब चलह सत्वरे। द्वादश आदित्य तीर्थे यमुनार तीरे।।160

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– आप लोग मेरे साथ यमुना के किनारे स्थित द्वादश आदित्य तीर्थ पर चलिये।

छोट बड़ जेवा आछे चल मोर संगे। उठाइमूं कृष्णमूर्ति ललित त्रिभंगे।।161

छोटे–बड़े सब ही मेरे साथ शीघ्र चलो, वहाँ से ललित
त्रिभंग श्रीकृष्णमूर्त्ति को भूमि से बाहर निकालना है।

ताहा शुनि लोक सब अति हरषिते। कुठारी कोदाली लञा चलिला तुरिते।।162

इनके वचन सुनकर सब लोग अति प्रसन्न होकर कुठारी,
कुदालादि लेकर इनके साथ हो लिये।

बहु परिश्रमे सबे काढ़िल विग्रह। अत्याश्चर्यरूपे व्रजवासी हैला मोह।।163

अनेक परिश्रम कर सबने उस श्रीविग्रह को बाहर निकाला। ब्रजवासी लोग यह देखकर अति आश्चर्य में डूब गये। उस मनमोहन श्रीविग्रह के दर्शन कर।

तबे वटवृक्षतले झूपरि वांधिला। अभिषेक करि तंहि ठाकुर स्थापिला।।164

वहाँ वटवृक्ष के नीचे एक झोंपड़ी बनाकर श्रीविग्रह को इन्होंने स्थापन किया।

एक जन सदाचारी वैष्णव ब्राह्मणे। नियुक्त करिया प्रभु विग्रह सेवने।।165

एक सदाचारी वैष्णव ब्राह्मण को श्रीविग्रह–सेवा के लिये इन्होंने वहाँ नियुक्त कर दिया।

वृन्दावन परिक्रमाय करिला गमन। हेन काले शुन एक दैवेर घटन।।166

प्रभु श्रीवृन्दावन की परिक्रमा के लिये चले गये, उस समय एक दैवी घटना घटी, उसे सुनिये।

दुष्ट यवनेरा पाञा ठाकुरेर तत्त्व। भावे ठाकुर भांगी हिन्दुर नाशिमु महत्त्व।।167

दुष्ट यवनों को पता लगा कि श्रीठाकुर विग्रह यहाँ है, तो उन्होंने सोचा श्रीमूर्त्ति को तोड़कर हिन्दुओं के उत्कर्ष को समाप्त कर दें।

युक्ति करि म्लेछगण हइया एकत्र। अद्वैत वटेते आइला लंञा अस्त्र शस्त्र।।168

ऐसा विचार कर म्लेच्छ लोग इकट्ठे होकर अद्वैतवट के पास
अस्त्र–शस्त्र लेकर आये।

मदनमोहन दुष्ट म्लेच्छ भय पाञा। पुष्पतले लुकाइला गोपाल हइया।।169

श्रीमदनमोहन जी दुष्ट यवनों के भय से गोपालमूर्त्ति होकर एक पुष्प के नीचे छिप गये।

म्लेछगण प्रवेशिला श्रीमन्दिर द्वारे। ठाकुर न देखि गेला दुखित अन्तरे।।170

यवनों ने मन्दिर द्वार में प्रवेश किया तो देखा वहाँ सिंहासन पर ठाकुर मूर्त्ति नहीं है, बड़े दुखी हुए।

सेवाइत द्विज आइला पूजिवारे तरे। ठाकुर न देखि घरे हाहाकार करे।।171

पुजारी द्विज जब मन्दिर में सेवा करने आया तो ठाकुर को वहाँ न देखकर हाहाकार करने लगा।

तबे एक शिशु मुखे द्विज पाइला तत्त्व। म्लेच्छगण देवगृहे करिला दौरात्म।।172

तब एक बालक ने पुजारी को बताया कि देवमन्दिर में यवनों ने आकर आक्रमण किया था।

मने भावे ठाकुर लञा म्लेछगण गेला। मोर प्रति भगवान निर्दय हइला।।173

पुजारी ने जाना कि म्लेच्छ लोग ही ठाकुर को ले गये हैं। श्रीभगवान् ने मेरे प्रति दया का त्याग कर दिया और चले गये हैं।

दुखित हइया तिंहो आहार न कैला। सन्ध्याकाले श्री अद्वैतप्रभु ताँहा आइला।।174

दुखित होकर उसने कुछ भी खाया–पीया नहीं।

सन्ध्या के समय श्रीअद्वैत प्रभु जब वहाँ आये।

द्विजवर मुखे प्रभु शुनि विवरण। शून्यगृहे देखि बहु करिला रोदन।।175

तो पुजारी के मुख से सब विवरण सुना। मन्दिर को ठाकुर रहित देखकर वे बड़े दुखित होकर रोने लगे।

प्रभु कहे कृष्ण स्वयं दया करि आइला। अपराध पाञा बुझि पुन लुकाइला।।176

प्रभु कहने लगे– हाय! स्वयं श्रीकृष्ण दया कर प्रकट हुए किन्तु कुछ अपराध देख फिर कहीं छिप गये।

महादुखी हञा प्रभु जल ना खाइला। रात्रिते सेइ वृक्षमूले शुतिया रहिला।।177

मन में दुख पाकर इन्होंने कुछ भी खाया–पिया नहीं और रात को उसी वटवृक्ष के नीचे सो गये।

स्वप्ने देखा दिया स्वयं मदनमोहन। हासिञा आचार्ये कहे मधुर वचन।।178

उसी रात श्रीमदनमोहन फिर प्रभु के स्वयं स्वप्न में आये और हँसकर आचार्य के प्रति इस प्रकार मधुर वचन कहने लगे–

उठह अद्वैत मुञि म्लेछगण डरे। गोपाल हइया लुकाइल पुष्पान्तरे।।179

हे प्रिय अद्वैत! उठो, मैं म्लेच्छों के डर से गोपाल मूर्त्ति होकर पुष्प के नीचे छिप गया था।

ब्रह्माद्येर नाहि एरूप दर्शनेर शक्ति। तव भक्ति चक्षे मात्र पाइवेक स्फूर्ति।।180

मेरे उस रूप के दर्शन करने की शक्ति ब्रह्मादिक में भी नहीं है। तुम अपने भक्तिपूर्ण नेत्रों से उसका दर्शन करो। क्योंकि तुम मुझे अतिशय प्रिय हो।

फिरि पूर्व सिद्धरूपे हइमू प्रकाश। लोक सब देखि पाइव अनन्त उल्लास।।181

फिर मैं उसी पूर्व के सिद्धरूप—मदनमोहन विग्रह रूप में प्रकाशित हो जाऊँगा। सब लोग दर्शन पाकर फिर आनन्दित होंगे।

स्वप्न देखि प्रभु झाट श्रीमन्दिरे गेला। पुष्पतले विराजित गोपाल देखिला।।182

स्वप्न से जागकर प्रभु श्रीमन्दिर में गये। देखाकि श्रीगोपाल पुष्प के नीचे विराजमान हैं।

निखिल माधुर्य पूर्ण रसामृत मूर्त्ति। देखि शुद्धप्रेमे कान्दे बाह्य नहि स्फूर्ति।।183

निखिल माधुर्यपूर्ण रसामृतमूर्त्ति को देखकर शुद्ध प्रेम से श्रीअद्वैतचन्द्र रोने लगे और इन्हें बाहर की सुधि न रही।

क्षणे स्तम्भ क्षणे कम्प रोमान्चित काय। क्षणे हरि बुलि नाचे क्षणे मूर्च्छाजाय।।184

कभी स्तम्भ, कभी कम्प, कभी शरीर पुलकित, कभी हरि बोलकर नाचते और कभी मूर्च्छित होने लगते।

कत क्षणे श्री अद्वैत बाह्य प्रकाशिला। फल जल श्रीगोपाले भोग लागाइला।।185

कुछ देर के बाद प्रभु को बाह्य ज्ञान हुआ। इन्होंने श्रीगोपाल को फल—जल भोग रखा।

श्री महाप्रसाद प्रभु करिया ग्रहण। अतुल्य कृष्णेर दया करिल चिन्तन।।186

स्वयं महाप्रसाद को ग्रहण कर मन में श्रीकृष्ण की अतुलनीय दया को सोचने लगे।

प्रभाते उठिया प्रभु प्रातः स्नाने गेला। श्रीयमुनार तीरे सेइ विप्रे देखा पाइला।।187

प्रभात में उठकर प्रभु यमुना पर स्नान करने गये। वहाँ इन्हें वही पुजारी विप्र मिला।

प्रभु कहे विप्र झाट जाह श्रीमन्दिरे। ठाकुर उठाइया पूजा करह सत्वरे।।188

इन्होंने कहा— विप्र! तुम शीघ्र श्रीमन्दिर में जाओं और श्रीठाकुर को जगा—उठा कर उनकी शीघ्र ही पूजा सम्पन्न करो।

मदनगोपाल नामे करिया पूजन। निगूढ़ रहस्य शुनि नाहि प्रयोजन।।189

अद्वैत प्रभु ने कहा— अब मदनगोपाल नाम से श्रीठाकुर की पूजा करो। इसमें जो निगूढ़ रहस्य है, उससे कोई प्रयोजन नहीं।

द्विज कहे श्रीविग्रह नाहि श्रीमन्दिरे। प्रभुकहे भक्ते कृष्ण छाड़िते ना पारे।।190

पुजारी ने कहा— आचार्य! मन्दिर में श्रीविग्रह नहीं है। प्रभु ने कहा— श्रीकृष्ण भक्त को छोड़कर नहीं रह सकते।

आश्चर्य मानिया विप्र करिला गमन। ठाकुर देखिला द्वार करि उद्‌घाटन।।191

पुजारी चकित होकर मन्दिर में आया और दरवाजा
खोलते ही सामने ठाकुर को विराजमान देखा।

प्रेमाविष्ट हञा द्विज बहु स्तुति करे। मदनगोपाल नामे पूजिला ठाकुरे।।192

प्रेमाविष्ट होकर पुजारी अनेक स्तुति करने लगा। श्रीमदनगोपाल नाम से
विख्यात था अब वे मदनगोपाल नाम से अब उनकी पूजा करने लगा।

तदवधि श्रीविग्रह मदनमोहन। मदनगोपाल नामे हैला प्रकटन।।193

तब तक श्रीविग्रह मदनमोहन नाम से विख्यात था
अब वे मदनगोपाल नाम से प्रकट–प्रसिद्ध हुए।

एकदिन रात्रे मोर प्रभुर स्वप्नावेशे। मदनगोपाल कहे सुमधुर भावे।।194

एकदिन श्रीअद्वैत प्रभु को स्वप्न में श्रीमदनगोपाल
मधुर वचन में इस प्रकार कहने लगे–

अहे श्री अद्वैताचार्य शुन एक कथा। मथुरार चौबे एक आसिवेक हेथा।।195

हे अद्वैताचार्य! एक बात सुनो, यहाँ मथुरा का एक चौबे आ रहा है। उसे मेरा
श्रीविग्रह सम्भाल दो और तुम निसंशय हो जाओ।

इहाँ दुष्ट म्लेछगणेर अत्याचार हय। चौबे मोरे समर्पिया हओ निःसंशय।।196

क्योंकि यहाँ दुष्ट यवनों का फिर अत्याचार होने वाला है।
चौबे को मुझे अर्पण कर निसंशय होओ।

श्री अद्वैत कहे शुन मदनगोपाल। तुहुं मोर प्राणधन आत्माराम बल।।197

श्रीअद्वैत ने कहा– मदनगोपाल! आप तो मेरे प्राणधन एवं आत्माराम बल हो।

तोमा बिनु कैछे मुञि धरिव जीवन। जीवन विहने जैसे मीनेर पतन।।198

आपके बिना मैं कैसे जीवन धारण करूँगा?
पानी के बिना मीन कैसे जीवित रह सकती है?

इहा शुनि हासि कहे मदनगोपाल। तोर वंशभूत मुञि हङ चिरकाल।।199

श्रीमदनगोपाल ने हँसकर कहा– मैं तुम्हारे वंश में चिरकाल तक बना रहूँगा।

तो बिना ना हय मोर लीलार पुष्टिता। जांहा तुमि ताँहा मोर हय नित्यसत्ता।।200

तुम्हारे बिना मेरी लीला की भी पुष्टि नहीं होती है।
जहाँ तुम रहोगे, वहाँ मैं नित्य अवस्थित रहूँगा।

मोर एइ सिद्धमूर्त्ति करि समर्पण। दया करि कर भक्तेर अभीष्ट पूरण।।201

मेरी इस सिद्ध मूर्ति को तुम चौबे को अर्पण करो और
कृपापूर्वक भक्तों की मनोवांन्छा पूरण करो।

पूरक वृत्तान्त एक कर त स्मरणे। श्रीविशाखारूपे जाहाँ कैला निरमाणे।।202

एक पहला वृत्तान्त तुम स्मरण करो कि श्रीविशाखा जी ने जहाँ जहाँ मेरे चित्रपट (श्रीराधाविरह को शमन करने के लिये) निर्माण की थी।

सेई चित्रपट मोर अभिन्न विग्रह। सेई रूप देखि श्रीराधिका हैला मोह।।203

वे चित्रपट मेरे अभिन्न विग्रह हैं क्योंकि उन्हें देखकर श्रीराधिकाजी भी मोहित हो जाती थीं।

नित्यसिद्ध वस्तु से निकुन्जवने हय। ताँहा चल आनायासे पाइवा निश्चय।।204

वह नित्य सिद्ध वस्तु एक चित्रपट निकुन्जवन में विद्यमान है। आप वहाँ चलो और वह आपको अनायास प्राप्त होगा।

सेई चित्रपट लञा जाह निजदेशे। जीव निस्तारिते सेवाकरिया प्रकाशे।।205

उस चित्रपट को अपने देश में ले जाकर उसकी सेवा स्थापन कर जीवों का निस्तार करो।

स्वप्न देखि प्रभु हैला प्रेमेते विह्वल। ऊर्द्धबाहु हञा नाचे बलि हरि बोल।।206

स्वप्न से जाग कर प्रभु प्रेम विह्वल हो उठे और ऊर्ध्वबाहु होकर नाचने लगे 'हरि–हरि' बोल कहकर।

प्रहरेक परे प्रभु सुस्थिर हइला। हेन काले मथुरार चौबे ताँहा आइला।।207

एक प्रहर के बाद श्रीअद्वैतचन्द्र चेतन हुए कि– उसी समय मथुरा का वह चौबे भी वहां आ पहुंचा।

प्रभुरे देखिया चौबे दन्ते तृण धरि। प्रणमिया कहे तारे कर जोड़ करि।।208

श्रीअद्वैत प्रभु के दर्शन कर वह चौबा दाँतों में तृण धारण कर उन्हें प्रणाम करने लगा।

सर्वज्ञ पुरुष तुहुं देव अवतार। कुब्जा सेवित मूर्त्ति करिला उद्धार।।209

उसने हाथ जोड़कर कहा– हे आचार्य! आप सर्वज्ञ पुरुष हैं और आप महादेव के अवतार हैं। आपने कुब्जा द्वारा सेवित इस मदनमोहन को प्रकट किया।

मदनगोपाल स्वप्ने आदेशिला मोरे। मथुराते आनि मोहे स्थापह सत्वरे।।210

उसने कहा– श्रीमदनगोपाल जी ने मुझे स्वप्न में आकर यह आदेश किया है कि उस श्रीविग्रह को मैं मथुरा में लोकर शीघ्र ही स्थापन करूँ।

तेंइ मुञि आइनु प्रभु तोमार गोचरे। श्रीविग्रह समर्पिया धन्य कर मोरे।।211

इसलिये मैं आपके पास आया हूँ।

आप यह श्रीविग्रह मुझे प्रदान कर कृतार्थ करें।

ताहा शुनि चौबे प्रभु ठाकुर अर्पिया। विच्छेदे व्याकुल हञा बेड़ाय कांदिया।।212

उसके वचन सुनकर प्रभु ने उस चौबे को ठाकुर श्रीमदनगोपाल सौंप दिये। उनके विच्छेद में व्याकुल होकर आप अनेक समय तक रोते रहे।

भ्रमिते भ्रमिते श्रीनिकुन्ज वने गेला। चित्रपट पाञा प्रेम–सिन्धुते डुबिला।।213

भ्रमण करते हुए प्रभु श्रीनिकुन्ज वन में गये। वहाँ चित्रपट को प्राप्त कर प्रेम सिन्धु में निमग्न हो गये।

नित्य सिद्ध चित्रपट लइया यतने। शान्तिपुर आइला प्रभु निजनिकेतने।।214

नित्य सिद्ध चित्रपट को यत्नपूर्वक लेकर श्रीअद्वैतप्रभु शान्तिपुर अपने घररूपी मन्दिर में आ पहुँचे।

श्री चैतन्य श्री अद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।215

श्रीचैतन्य तथा श्रीअद्वैत चरणों की आशा लेकर ईशान नागर जी श्रीअद्वैत प्रकाश का वर्णन करते हैं।

पंचम अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीकृष्णचैतन्य देव की जय हो जय हो, श्रीसीतानाथ अद्वैतप्रभु की जय हो। श्रीमन्नित्यानन्दराम प्रभु की समस्त भक्तों के सहित जय हो।

एकदिन पुरीराज श्रीमन्माधवेन्द्र। शान्तिपुरे उदय हइला भक्ति–चन्द्र।।02

एकदिन श्रीमाधवेन्द्र पुरीराज रूपी भक्तिचन्द्र शान्तिपुर में उदित हुए अर्थात् पधारे।

मुखे कृष्ण रव देहे प्रेमे महाभाव। तिहँ स्वयं व्रजकल्पतरूर आविर्भाव।।03

उनके मुख से श्रीकृष्ण–ध्वनि निकल रही थी और शरीर प्रेम के महाभाव में आविष्ट था। श्रीमाधवेन्द्रपुरी ब्रजप्रेम कल्पतरु के स्वयं अवतार हैं।

परम वैराग्य पुरीर बाह्यापेक्षा नाञि। तथापि प्रभुर स्नेहे आईला ताँर ठाञि।।04

वे परम वैरागी हैं और बाहरी अपेक्षा से रहित हैं, तो भी श्री अद्वैतप्रभु के वशीभूत होकर इनके पास आये।

पुरीर दर्शने प्रभु प्रेमाविष्ट हैला। गले वस्त्र बान्धि ताँरे दण्डवत् कैला।।05

श्रीपुरी के दर्शन करते ही श्रीअद्वैतप्रभु प्रेमाविष्ट हुए और गले में वस्त्र डालकर दण्डवत् प्रणाम किया।

पुरी ताँरे आलिंगिया कुशल पुछिला। प्रभु कहे मदनगोपाल दया कैला।।06

श्रीपुरीजी ने इन्हें आलिंगनकर कुशल पूछा।

श्रीअद्वैतप्रभु बोले श्रीमदनगोपाल ने बड़ी दया की है।

पुरी कहे कृष्ण सेवार अलौकिक शक्ति। ताहे जीव पाय नित्य भागवती गति।।07

श्रीपुरी ने कहा– कृष्णसेवा की अलौकिक शक्ति है। उससे जीव नित्य भागवती गति अर्थात् भगवत्–पार्षदत्व को प्राप्त करता है।

तबे पुरी विशाखा निर्मित चित्रपट। दरशन करि हैला महा प्रेमाविष्ट।।08

तब श्रीअद्वैत ने श्रीविशाखा जी निर्मित चित्रपट के उन्हें दर्शन कराये। श्रीपुरी उसका दर्शन करते ही प्रेम में महा आविष्ट हो गये।

क्षणे हासे क्षणे कान्दे क्षणे करे नृत्य। महाभागवत पुरीर केवा जाने तत्व।।09

एक क्षण में हँसते तो दूसरे में रोने लगे। नृत्य करने लगे। महाभागवत हैं श्रीपुरी, उनकी महिमा को कौन जान सकता है?

कतक्षणे पुरीराजेर बाह्यस्फूर्त्ति हैला। तबे कृष्ण प्राप्त्येर सहज उपाय कहिला।।10

कुछ देर बाद श्रीपुरीराज को बाह्य ज्ञान हुआ।

तब वे श्रीकृष्ण की प्राप्ति का सहज उपाय बताने लगे।

पुरी कहे वाछा तुँहुं शुद्ध प्रेमवान्। श्रीराधिकार चित्रपट करह निर्माण।।11

श्रीपुरीजी ने कहा– वत्स! तुम शुद्ध प्रेमवान् हो,

इसलिये श्रीराधिकाजी का चित्रपट निर्माण करो।

राधाकृष्ण दर्शने हय गोपीभावोदय। अतएव युगल–सेवा सर्वश्रेष्ठ हय।।12

श्रीराधाकृष्ण के दर्शन से गोपीभाव का उदय होता है,

इसलिये युगलसेवा ही सर्वश्रेष्ठ है।

आर एक कथा कहि शुन मन दिया। कृष्णार्थ संसार कर विवाह करिया।।13

और एक बात कहता हूँ, मन लगाकर सुनो आप श्रीकृष्ण परिवार वृद्धि के लिये ही विवाह कर संसार में प्रवृत्त होवो।

कृष्ण कृपाय हैवे तोंहार बहुत सन्तान। जीव निस्तारिवे सभे दिया कृष्णनाम।।14

कृष्णकृपा से आपकी बहुत सन्तान होगी।

वे सब जीव–जगत् को श्रीकृष्णनाम देकर निस्तार करेंगे।

प्रभु कहे श्रीविग्रहसेवाते मंगल। अपराध हैले वंश जाय रसातल।।15

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा–श्रीविग्रह–सेवा से मंगल विधान होता है, किन्तु यदि उसकी सेवा में अपराध हो जाये तो वंश रसातल में चला जाता है।

पुरी कहे दयासिन्धु–कृष्ण तोर वश। अपराध ना लैव पुरुष चतुर्दश।।16

श्रीपुरीजी ने कहा– अद्वैत! दयासिन्धु श्रीकृष्ण तुम्हारे वशीभूत हैं। अतः वे चतुर्दश भुवननाथ आपका अपराध चौदह पीढ़ियों तक ग्रहण नहीं करेंगे।

गुरु आज्ञाय मोरप्रभु प्रेमाविष्ट मने। श्रीराधिकार चित्रपट करिला निर्माणे।।17

श्रीगुरु की आज्ञा पाकर श्रीअद्वैत प्रभु ने प्रेमाविष्ट
मन से श्रीराधिकाजी का चित्रपट निर्माण किया।

एइ दूइ सिद्ध मूर्त्ति दरशन कैले। अनायासे राधाकृष्णेर प्रेमधन मिले।।18

उन दोनों सिद्ध श्रीविग्रहों का दर्शन करने से अनायास ही
श्रीराधाकृष्ण प्रेमधन की प्राप्ति होती है।

तबे श्रीराधिका श्रीमन्मदनगोपाले। अभिषेक कैला पुरी महा कुतूहले।।19

तब श्रीपुरी महाराज ने श्रीराधिका मदनगोपाल का महा हर्षपूर्वक अभिषेक किया।

नानाविध मिष्ट अन्न भोग लागाइला। आचमनीय दिया कर्पूर ताम्बूल अर्पिला।।20

अनेक प्रकार का मिष्ठान्न भोग लगाया, आचमन कराकर ताम्बूल अर्पण किया।

अपूर्व युगलमूर्त्ति देखि लोक सब। दण्डवत करि कैल नानाविध स्तव।।21

अपूर्व युगलमूर्त्ति के दर्शन कर सब लोग दण्डवत् प्रणाम कर
नानाविध स्तवपाठ करने लगे।

महाप्रसादेर दिव्य सौरभाकर्षणे। भक्तिभावे कृष्णोच्छिष्ट पाइला सर्वजने।।22

महाप्रसाद के दिव्य सौरभ से आकृष्ट होकर सबने
भक्तिभाव पूर्वक कृष्णप्रसाद ग्रहण किया।

तबे लोक शिखाइते प्रभु सयतने। कृष्णमन्त्रराज लैल पुरीराज स्थाने।।23

तब लोक शिक्षा के लिये श्रीअद्वैत प्रभु ने यत्नपूर्वक श्रीपुरी महाराज से मन्त्रराज
श्रीकृष्णमंत्र अर्थात् अष्टादशाक्षर गोपालमन्त्र की दीक्षा ली।

दिन कत परे पुरी विदाय मागिला। बहुत आग्रह करि प्रभु निषेधिला।।24

कुछ दिन बाद श्रीपुरी ने वहाँ से जाने के लिये विदा
मांगी, किन्तु आग्रहपूर्वक श्रीअद्वैत प्रभु ने वहां रोका।

पुरी कहे जांऊ मुत्रि श्रीपुरुषोत्तमे। गोपाल आदेश कैला चन्दनाहरणे।।25

श्रीपुरी ने कहा, मुझे श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र जाना है,
क्योंकि श्रीगोपालजी ने चन्दन लाने हेतु कहा है।

प्रभु कहे केने गोपाल मागये चन्दन। ताहा शुनिवारे मोर उत्कण्ठित मन।।26

श्रीअद्वैत ने पूछा– श्रीगोपाल चन्दन क्यों मंगा रहे हैं,
यह बात सुनने को मेरी अति उत्कण्ठा है।

पुरी कहे श्रीगोपाल स्वतंत्र ईश्वर। मो अधमे दया करि हइला गोचर।।27

श्रीपुरी ने कहा श्रीगोपाल स्वतन्त्र ईश्वर हैं,
दया कर उन्होंने मुझे दर्शन दिये।

तबे श्रीगोपाल मोरे स्वपने कहिला। पुरी मोर अंगे बड़ ताप उपजिला।।28

फिर श्रीगोपाल ने मुझे स्वप्न में आकर कहा कि पुरी!
मेरे अंगों में बहुत जलन हो रही है।

मलयज चन्दन आन जाई नीलाचले। जुरावाङ सेइ गन्ध अंगे विलेपिले।।29

तुम नीलाचल जाकर चन्दन ले आओ। उसका लेप करने से
मेरे अंगों का ताप चला जायेगा।

गोपालेर दृढ़ आज्ञा लंघे कोन जने। तेंइ एई देशे आइलूं चन्दन साधने।।30

प्राण से प्यारे श्रीगोपाल की आज्ञा का कौन उल्लंघन कर सकता है? मैं
इसलिये चन्दन लाने के लिये इस देश में आया था।

कृष्णभक्ति सूर्य तोर सद्वान्छाकर्षणे। शान्तिपुर शान्तिपुरे आइलुँ तव स्थाने।।31

तुम्हारी कृष्णभक्ति सूर्य के समान है और तुम्हारी सद्वान्छा
मुझे इस शान्तिमय–स्थान शान्तिपुर में खींच लायी है।

पुरी मुखे शुनि दयार तात्पर्य। प्रेमाविष्ट हञा हुंकार करेन आचार्य।।32

श्रीपुरी के मुख से श्रीकृष्ण की दया की बात सुनकर आचार्य हुंकार कर
प्रेमाविष्ट हो उठे।

प्रभु कहे कृष्णचन्द्र बड़ दयामय। भक्तवत्सलता महाशक्तिर आश्रय।।33

उन्होंने कहा– श्रीकृष्णचन्द्र बड़े दयामय हैं और
उनकी भक्तवत्सलता महाशक्तिमय है।

भक्तेर सद्गुणगण बाड़ाय निरन्तर। भक्त्यर्थ प्रकटे नाहि कालेर विचार।।34

श्रीकृष्ण की भक्तवत्सलता भक्तों में सद्गुणों को निरन्तर वर्धित करती हैं। उस
भक्ति के आविर्भूत होने में काल–अवस्था का कोई विचार नहीं है

एत कहि प्रभुवर स्तम्भित हैला। पुरी ताँरे स्वस्थ करि विदाय मागिला।।35

इतना कहकर श्रीअद्वैत स्तम्भित हो गये। फिर पुरीजी ने
उन्हें स्वस्थ किया और विदा मांगी।

प्रभु पुरीराजे अष्ट अंगे प्रणमिला। पुरी तारे आलिंगिया आशीर्वाद कैला।।36

श्रीअद्वैतप्रभु ने श्रीपुरीजी को साष्टांग प्रणाम किया
श्रीपुरीजी ने इन्हें आलिंगन कर आशीर्वाद किया।

तबे माधवेन्द्र चले महा प्रेमावेशे। रेमुणाते गोपीनाथ याँहा परकाशे।।37

तब श्रीमाधवेन्द्र पुरीजी वहां से प्रेमाविष्ट होकर रेमुणा ग्राम में आये जहाँ श्रीगोपीनाथ विराजमान हैं।

तथि जाई गोपीनाथे करि दरशन। ऊर्ध्वबाहु हजा करे नर्तन कीर्तन।।38

वहाँ आकर श्रीप्रभु ने श्रीगोपीनाथ के दर्शन किये और भुजाएं ऊँची उठाकर नृत्य कीर्तन किया।

कतक्षणे पुरीराजेर बाह्यस्फूर्त्ति हैल। तबे अष्ट अंगे गोपीनाथे प्रणमिल।।39

बहुत देर के बाद श्रीपुरीको बाह्य ज्ञान हुआ एवं इन्होंने श्रीगोपीनाथ को साष्टांग प्रणाम किया।

नाम करे पुरी जगमोहने वसिया। हेनकाले पुछे एक द्विजवरे देखिया।।40

श्रीपुरीजी बरामदे में बैठकर नाम कर रहे थे। इन्होंने एक वृद्ध विप्र को देखा और उससे पूछा–

अहे वृद्ध ! द्विजवर ! एई श्रीविग्रह। निर्माइला कोन भाग्यवाने ताह कह।।41

हे द्विजराज! यह श्रीविग्रह किस भाग्यवान् ने निर्माण करा कर यहाँ स्थापित किया था, यह तो बताओ?

द्विज कहे शुन साधु ! पूर्वे विज्ञजने। मोरे ये कहिला ताहा कहि तव स्थाने।।42

द्विज ने कहा– हे साधो! सुनिये पहले मैंने पण्डित लोगों से पूछा था उन्होंने जो बताया, वह तुम्हें सुनाता हूँ।

त्रेतायुगे पूर्णब्रह्म राम योगीवेशे। पितृसत्ये सीतासह गेला वनवासे।।43

त्रेतायुग में पूर्णब्रह्म श्रीरामजी योगीवेश में पिता दशरथ के वचन सत्य करने के लिये श्रीसीताजी के साथ वनवासी हुए थे।

एकदिन चमरी गोवत्सगण लजा। पाले पाले वन मध्ये बेडाय चरिजा।।44

एकदिन कुछ ग्वाले गो–वत्स को लेकर वनमें जहाँ–तहाँ चरा रहे थे।

ताहा देखि रामचन्द्र ईषत् हासिला।सीतादेवी सेइ हास्येर कारण पुछिला।।45

उन्हें देखकर श्रीरामजी मन्द मुस्करा दिये। श्रीसीतादेवीजी ने उस मुस्कराने का कारण पूछा।

राम कहे ताहा शुनि नाहि प्रयोजने। सीता बले कह प्रभु धरौं श्रीचरणे।।46

श्रीरामजी ने कहा– उसे सुनने का आपको कुछ प्रयोजन नहीं, किन्तु श्रीसीताजी ने चरण पकड़ लिये और उसके कारण को बताने का आग्रह किया।

भक्तवत्सल भगवान् नित्य भक्ताधीन। भक्ते प्रेमानन्द दानकरे चिर दिन।।47

श्रीभगवान् तो नित्य भक्तवत्सल और भक्ताधीन हैं। वे भक्तों को अनादिकाल से प्रेमानन्द प्रदान करते आये हैं। यह उनका नित्य स्वभाव है।

श्रीसीता ह्लादिनीशक्ति भक्तिशिरोमणि।ताँहार प्रीति लागि कहे प्रभु रघुमणि।।48

श्रीसीताजी उनकी ह्लादिनी शक्ति भक्ति–शिरोमणि हैं।
उनकी प्रसन्नता के लिये श्रीरामजी कहने लगे–

शुनह जानकी भावी द्वापरेर शेषे। ब्रजे कृष्णरूपे लीला करिवाङ प्रकाशे।।49

हे जानकी! सुनो, भावी द्वापरयुग में मैं ब्रज में श्रीकृष्णरूप से अपनी लीला प्रकाश करूँगा।

ताँहा श्रीगोपाल नाम गोपालन धर्म। गोप–गोपीसह मोर हय नित्य कर्म।।50

वहाँ मेरा नाम गोपाल और गौपालन ही मेरा धर्म होगा गोप–गोपियों के साथ।

श्रीजानकी कहे कैछे सेई रूप हय। अवश्य देखाह मोरे तुहुँ दयामय।।51

श्रीजानकी ने पूछा– प्रभो! वहाँ आपका रूप कैसा
होगा? आप कृपामय हैं उसे मुझे अवश्य दिखाइये।

तबे साक्षात् भगवान जगतेर पति। दिव्य मणि दिया स्वयं निर्मिला श्रीमूर्त्ति।।52

तब साक्षात् श्रीरामजी जगत्पति ने इस दिव्यमूर्त्ति का
स्वयं निर्माण करके उन्हें दिखाया।

से कृष्णविग्रह देखि सीतार आश्चर्य। कहे एछे नाहि देखि रूपेर माधुर्य।।53

उस कृष्णविग्रह को देखकर श्रीसीताजी ने आश्चर्यपूर्वक उसका माधुर्य दर्शन करते हुए कहा– ऐसा रूप तो मैंने कहीं नहीं देखा।

जगच्चिन्ताकारी एई सर्व रसकूप। नव जलधर कान्ति अलौकिक रूप।।54

ये श्रीगोपीनाथ जगत् की चिन्ता–पालन करते हैं और सर्वरसों के भण्डार हैं।
नव जलधर कान्तियुक्त अलौकिक रूप है इनका।

तबे महाभक्तिभावे सीता धर्मशीला। नाना फलफूले सेई विग्रह पुजिला।।55

तब अति भक्तिपूर्वक धर्मशीला श्रीसीताजी ने नानाविध फलफूल से श्रीविग्रह का पूजन किया था।

गोपीनाथ नाम इहार सर्वलोके ख्याति। इंहारे देखिले पाय शुद्ध कृष्ण भक्ति।।56

सब लोकों में इनकी श्रीगोपीनाथ नाम से प्रसिद्धि है।
इनके दर्शनों से शुद्ध कृष्ण भक्ति प्राप्ति होती है।

संक्षेपे कहिनु एई पूर्व विवरण। जेई शुने तार हय अमीष्टपूरण।।57

मैंने संक्षेप से आपको पूर्व विवरण सुनाया है,

जो इस कथा को सुने उसका अभीष्टपूर्ण होता है।

शुनिया अपूर्व गोपीनाथ विवरण। प्रेमावेशे पुरीराज करये अर्चन। ।58

श्रीगोपीनाथ के अपूर्व विवरण को सुनकर श्रीपुरीराज
प्रेमाविष्ट होकर अर्चन करने लगे।

गोपीनाथ दया कर बले बार–बार। तान प्रेम देखि सबे हैला चमत्कार। ।59

बार–बार यह कह रहे थे कि श्रीगोपीनाथ मुझ पर दया करो।
इनके प्रेम को देखकर सबको चमत्कार हो रहा था।

तबे आरात्रिक देखि करिला प्रस्थान। वृक्षतले वसि पूरी जपे हरिनाम। ।60

तब आरती दर्शन कर श्रीपुरी वहाँ से चल दिये।
एक वृक्ष के नीचे बैठकर नाम जप करने लगे।

द्वितीय प्रहर जवे हइल सर्वरी। क्षीरभाण्ड हाते करि आइला पुजारी। ।61

दूसरे प्रहर रात को पुजारी हाथ में क्षीर का पात्र लेकर आया और–

कॉंहा माधवेन्द्र बुले डाकये सघने। पुरी कहे मुञि छार आछों एई स्थाने। ।62

जोर से पुकार कर इधर–उधर पूछने लगा कि
माधवेन्द्रपुरी कौन है? पुरी बोले–दीनहीन मैं यहाँ हूँ।

द्विज कहे तव भाग्य सिन्धु उथलिला। तुया लागि गोपीनाथ क्षीर चुरि कैला। ।63

पुजारी ने कहा– आपका तो भाग्य सिन्धु उछला है।
आपके लिये गोपीनाथ जी ने क्षीर की चोरी की है।

स्वप्ने गोपीनाथ मोरे करिला आदेशे। तेंह क्षीर लञा मुञि आइनु तोमा पाशे। ।64

स्वप्न में आकर श्रीगोपीनाथ ने मुझे कहा है कि पुरीजी को क्षीर दे आओ।
इसलिये मैं आपके पास आया हूँ। कृपया इसे ग्रहण करो।

एत बलि पुरीराजे क्षीर समर्पिला। नमस्कार करि द्विज निज गृह गेला। ।65

इतना कहकर पुजारी श्रीपुरीराज को वह खीर समर्पण कर एवं नमस्कार कर
अपने घर चला गया।

आश्चर्य अचिन्त्य कृपा कृष्ण कैला मोरे। एत कहि प्रेमे पुरी बाह्य नाहि स्फुरे। ।66

श्रीकृष्ण ने आश्चर्यमय अचिन्त्य कृपा मुझ पर की है–
ऐसा कहते हुए श्रीपुरी बेसुध हो गये।

बहु अश्रुपात करि मनः स्थिर कैला। तवे भक्तिकरे सेइ क्षीर प्रसाद पाइला। ।67

अनेक अश्रुधारा बहाने लगे। फिर मन को स्थिर किया और
श्रद्धापूर्वक दिव्य महाप्रसाद पाया।

महाप्रसाद पात्रा पुन प्रेम उपजिल। ऊर्ध्व बाहु हत्रा बहु नर्त्तन करिल। ।68

महाप्रसाद पाते ही फिर उनमें प्रेम उछल पड़ा और ऊर्ध्वबाहु होकर अनेक समय तक नृत्य किया।

सेई पुरी पदे मोर कोटि परणाम। यार भक्त्ये गोपीनाथेर क्षीरचोरा नाम। ।69

उन श्रीपुरी महाराज के चरणों में मेरा कोटि प्रणाम है, जिनकी भक्ति से प्रभावित होकर श्रीगोपीनाथ जी ने अपना नाम "क्षीरचोरा" धारण कर लिया।

तबे चलि चलि पुरी आइला नीलाचले। जगन्नाथ देखि नाचे महा कुतुहले। ।70

तब श्रीपुरी वहाँ से चलकर नीलाचल आये।
श्रीजगन्नाथ के दर्शन कर महानन्द में नाचने लगे।

दण्डवत् करि कैला बहुत स्तवन। प्रेमावेशे करे उच्च नाम संकीर्तन। ।71

उन्हें दण्डवत् प्रणाम कर बहुत स्तुति की और
प्रेमावेश में उच्च स्वर में नाम संकीर्तन करने लगे।

दिन कत ताँहा पुरी करिया विश्राम। उत्तम चन्दन लत्रा करिला प्रस्थान। ।72

कुछ दिन पुरीजी ने वहाँ विश्राम किया।
उत्तम चन्दन वहां से लेकर वापस लौटे।

पुन रेमुणाते तिंहो उदय हइला। गोपीनाथे प्रणमिया स्तव पाठ कैला। ।73

वहाँ से फिर वे रेमुणा में आये। श्रीगोपीनाथ को प्रणाम किया, अनेक स्तुति की।

रात्रे स्वप्नावेशे ताँरे श्रीगोपाल कहे। शुन शुन पुरीराज ना कर सन्देहे। ।74

रात को स्वप्न में आकर श्रीपुरीजी को श्रीगोपाल बोले–
पुरी! सुनिये, मेरी बात में कोई सन्देह न करो।

गोपीनाथे गन्ध लेप करिया विश्वास। ताहे मोर अंगताप खण्डिवे निर्यास। ।75

इस चन्दन का लेप श्रीगोपीनाथ के अंगों पर कर दीजिये। विश्वास कीजिये उससे मेरे अंगों का सब ताप पूर्णतः नष्ट हो जायेगा।

स्वप्न देखि पुरी प्रेमे हइया विह्वल। कहे के आश्चर्य आज्ञा कैला श्रीगोपाल। ।76

स्वप्न देखकर पुरी प्रेम से विह्वल हो उठे कि
कैसी आश्चर्यमय आज्ञा श्रीगोपाल ने दी है मुझे।

अचिन्त्य ईश्वरेरइच्छाके जाने तारस्थैर्य्यफ। जेइतार आज्ञा हय सेई मोरधार्य्य। ।77

ईश्वर की इच्छा अचिन्त्य है, उसकी सीमा कौन पा सकता है?
उनकी आज्ञा हो मुझे पालन करनी है।

तबे गोपीनाथे सब चन्दन अर्पिला। दिन कत पुरी ताहा विश्राम करिला। ।78

तब श्रीपुरीजी ने श्रीगोपीनाथ जी को वह सब चन्दन अर्पण कर दिया। कुछ दिन तक पुरीजी ने वहाँ निवास करके अपने हाथों से चन्दन की सेवा की।

तबे पुरी प्रेमे कभू नीलाचले जाय। प्रेमाकृष्ट हञा कभु आइसे रेमुणाय।।79

तब श्रीपुरी प्रेमवश कभी नीलाचल चले जाते और
फिर प्रेम से आकृष्ट होकर रेमुणा चले आते।

ऐछन श्रीपुरी बहु कैला यातायात। शेषे गोपीनाथ पदे हइला सिद्धिप्राप्त।।80

इस प्रकार श्रीपुरी दोनों स्थानों पर आते जाते रहे। अन्त में उन्होंने श्रीरेमुणा में श्रीगोपीनाथ के पास सिद्धि प्राप्त करके। नित्य लीला में प्रवेश किया।

पुरीराजेर गुणलीला सागरेर सम। श्रीमुखे अद्वैत प्रभु करिला वर्णन।।81

श्रीईशान कहते हैं–श्रीपुरीराज के गुण एवं लीलाएं सागर के समान अथाह हैं। जिन्हें अपने मुख से श्रीअद्वैत प्रभु ने वर्णन किया था।

मुञि छार तार एक बिन्दु नाइ छुँइनु। प्रभुर आज्ञाय सूत्र मात्र से लिखिनु।।82

मैं अति तुच्छ दीनहीन हूँ और उनकी गुण–लीला सागर का एक बिन्दु भी स्पर्श नहीं कर सका। श्रीप्रभु की आज्ञा से सूत्रमात्र का ही वर्णन किया है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।83

श्रीचैतन्य महाप्रभु एवं श्रीअद्वैत प्रभु के चरण कमलों की आशा करते हुए ईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश का वर्णन करते हैं।

षष्ठ अध्यायः

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो। श्रीसीतानाथ प्रभु की जय हो।
श्रीनित्यानन्दराम की भक्तों सहित जय हो।

एबे कहि शुनह अपूर्व विवरण। श्रीअद्वैतनाम प्रभुर हैल ये कारण।।02

अब एक अपूर्व विवरण को सुनिये– कि प्रभुका "अद्वैतनाम" क्यों पड़ा?

एक द्विज दिग्विजयी बहुदेश जिनि। शांतिपुरे उपनीत हइला आपनि।।03

एक दिग्विजयी अनेक देशों में विजय करता हुआ अपने आप शांतिपुर में आ पहुँचा।

वेद पंचानन आख्या प्रभुर शुनिञा। ताँहार निकटे गेला अति हर्ष हञा।।04

श्रीअद्वैत प्रभु की "वेद–पंचानन" उपाधि सुनकर अति आनन्दित होकर इनके पास आया।

प्रभुपाद श्री तुलसी वेदिर समीपे। योगासने वसि श्रीगोपाल मन्त्र जपे।।05

उस समय श्रीअद्वैत प्रभु श्रीतुलसी वेदी के समीप योगासन पर बैठकर श्रीगोपालमन्त्र का प्रेमपूर्वक जाप कर रहे थे। किन्तु उसी समय–

हेन काले दिग्विजयी प्रभुर आगे जाआ। तुलसी महिमा वर्णे कवित्व करिया।।06

इसी समय वह दिग्विजयी प्रभु के पास आकर श्रीतुलसी महिमा के श्लोक पढ़ने लगा।

पुष्कर प्रभास कुरुक्षेत्र आदि तीर्थ। श्री यमुना गंगा आदि पुण्यतमा जत।।07

उसने कहा– पुष्कर प्रभास, कुरुक्षेत्र आदि तीर्थ, श्रीयमुना, गंगा आदि जितने भी तीर्थ हैं।

ब्रह्मा विष्णु शिव आदि देवता सकले। वसति करये सदा तुलसीर दले।।08

ब्रह्मा, विष्णु तथा श्रीशिव आदि समस्त देवता हैं वे सब श्रीतुलसी के दिल में निवास करते हैं।

दर्शिता तुलसी देवी पाप संघमर्दिनी। स्पर्शिता तुलसीवाणी सर्वदेह पावनी।।09

श्रीतुलसी देवी का दर्शन पापसमूह को नाश करता है। स्पर्श करने से श्रीतुलसी समस्त देह को पवित्र करती है। तुलसीजी श्रीकृष्णजी प्रिया हैं।

वन्दिता तुलसीदेवी रोगवृन्दनाशिनी। स्नापिता तुलसी कृष्णभक्ति कालदशनी।।10

श्रीतुलसी की वन्दना करने से समस्त रोग नष्ट होते हैं और तुलसी को सींचने से कृष्ण–भक्ति प्राप्त होती है जो काल को भी विनष्ट कर देती है।

रोपिता तुलसीदेवी कृष्णसंग अर्पिणी। अर्पिता तुलसीकृष्णे जीवनमुक्तिदायिनी।।11

श्रीतुलसी का रोपण करने से वह श्रीकृष्ण का संग प्रदान करती है। श्रीकृष्ण को अर्पण करने से तुलसी जीवनमुक्ति देती है।

एई श्रीतुलसीपदे मोर नमस्कार। तुलसी विहीनद्रव्य विष्णु न करे आहार।।12

ऐसे श्रीतुलसी चरणों में मेरा नमस्कार है, जिसके बिना श्रीकृष्ण कोई भी द्रव्य स्वीकार ही नहीं करते।

हेन मते नाना शास्त्रेर मत उठाइया।तुलसी महिमा द्विज वर्णि विनाइया।।13

इसप्रकार अनेक शास्त्रों के प्रमाण उठाकर उस दिग्विजयी ने श्रीतुलसी की महिमा का वर्णन किया।

भागीरथी महिमा कहिते आरम्भिला। शुनि–प्रभु नयनाब्ज उन्मीलन कैला।।14

फिर उसने भागीरथी की महिमा का बखान करना आरम्भ किया। सुनते ही श्रीअद्वैत प्रभु ने अपने प्रेममय नेत्र कमल खोले।

दिग्विजयी कहे गंगारमहिमा अपार। विष्णुपदे जन्मि विष्णुपदी नाम ताँर।।15

द्विजमणि गंगा की अनेक महिमा कहने लगा। उसने कहा कि विष्णु चरणों से उत्पन्न होने से गंगा का नाम "श्रीविष्णुपदी" है।

महादेवेर जटाय जार सर्वदा विहार। ब्रह्मा जारे पुजे दिया नाना उपहार।।16

वह श्रीशिव की जटाओं में सर्वदा विहार करती है।

ब्रह्माजी अनेक उपहार देकर इसका पूजन करते हैं।

इन्द्रादि देवगणे करिया निस्तार। मन्दाकिनी हैल धरार कण्ठ मणिहार।।17

इन्द्रादि देवताओं का विस्तार करने के लिए एकधारा इसकी मन्दाकिनी रूप से स्वर्ग की कण्ठमणिरूप में शोभित हो रही है।

जह्नुमुनि ध्याने जानि गंगातत्त्वसार।आचमन छले गंगाय करिला आहार।।18

जन्नहूमुनि श्रीगंगा का तत्वसार जानकर इसे कृष्ण चरणामृत जानकर आचमन के बहाने से सारा जलरूपी अमृतमयी गंगा पी गये।

जीवेर हित लागि परे करिया विचार। गंगा दिला निज जानू करिया विदार।।19

फिर जीवों के हित विचारकर उन्होंने इसे अपने जानू से बाहर कर दिया।

गंगा विष्णुभक्तसमा धरि जलाकार। जीव उद्धारिते कैला शक्तिर संचार।।20

गंगा विष्णुभक्ता है। जलाकार धारण कर जीवों के उद्धार के लिये श्रीविष्णु ने उसमें शक्ति संचार कर दी है।

श्रीजाह्नवीमाता दया गुणेर आधार। स्नातजन मात्रेव करे त्रिताप संहार।।21

श्रीजान्हवी माता दयामुणों की आश्रय है। स्नानमात्र करने वाले के त्रितापों को नाश कर देती है।

जीव यदि पानकरे गंगा एकधार। निश्चय देह अन्ते दिया गति हय तार।।22

जीव यदि एक चुल्लू भी गंगाजल का पान करता है, अन्तसमय में निश्चय ही वह उस मानव देह को सद्गति प्रदान करती है।

हेन गंगापदे मोर शत नमस्कार। आसिलौं तोहार सह करिते विचार।।23

ऐसी श्रीगंगा के चरणों में मेरा शत्–शत् प्रणाम है।

मैं आपके पास आपके अभिमत को जानने के लिये आया हूँ।

ताहा शुनि कमलाक्ष वेद पंचानन। ईषद् हासिया कहे मधुर वचन।।24

यह सुनकर श्रीकमलाक्ष पंचानन मन्द मुस्कराकर मधुर वचन बोले–

अहे कविचूड़ामणि तुहुं बहुदर्शी। तव यश–तरुचूड़ा हैल स्वर्गस्पर्शी।।25

हे कवि चूड़ामणे! आप बहुदर्शी हैं। आपकी यश पताका स्वर्गका स्पर्श करती है।

श्रीतुलसी गंगार दिव्य महिमा शुनिया। प्रीति रसे आवर्त्तित हैल मोर हिया।।26

श्रीतुलसी श्रीगंगा की दिव्य महिमा आपसे सुनकर मेरा हृदय प्रेम से प्लावित हो गया है।

किन्तु गंगार वस्तुतत्वे हैल तुया भ्रम। द्रव ब्रह्मेकह तुमि विष्णुभक्त सम।।27

किन्तु श्रीगंगा की तत्ववस्तु के ज्ञान में आपको भ्रांति है।
द्रव्य ब्रह्म को आपने विष्णुभक्त के समान कहा।

स्वयं भगवान जीव उद्धार कारणे। द्रव हञा, गंगानाम करिला धारणे।।28

जीवों के उद्धार के लिये स्वयं भगवान् द्रवरूप में आविर्भूत हुए हैं और उन्होंने गंगा नाम धारण किया है। पुराणों में वर्णित है कि–

एकदिन नारायण–पन्चाननेर गाने। द्रव हञा छिला ताहा पुराणे बाखाने।।29

एकदिन श्रीनारायण श्रीशिव के द्वारा गान सुनकर द्रवरूप में परिणत हो गये थे।

सुर तरंगिणी गंगा साक्षात् द्रव ब्रह्म। जारनाम स्मृति मात्रे जीवेर नाहि जन्म।।30

अतः सुरतरंगिणी गंगा साक्षात् द्रव ब्रह्म है। इसका नाममात्र स्मरण करने से जीव को दुबारा जन्म नहीं लेना पड़ता।

भगवत् स्वरूपा शक्ति गंगारूप धरे। शिवमृत्युन्जय हैला गंगा धरि शिरे।।31

भगवत्स्वरूपा शक्ति ने गंगा रूप धारण किया और
उसे सिर पर धारण कर श्रीशिव ने मृत्यु को जीता।

गंगा बिनु कोन कार्य ना हय सफल। ब्रह्मा जारे पूजि पाय निजाभीष्ट फल।।32

गंगा बिना कोई कार्य सफल नहीं होता। ब्रह्माजी ने
गंगा का पूजन कर अपना मनोवान्छित फल पाया।

सर्वजले गंगा ज्ञान करि आरोपण। आपो नारायणः स्वयं कहे श्रुतिगण।।33

सब जल राशिमें गंगा जल का आरोपकर स्वयं श्रुति ने कहा है–
"आपो नारायणः स्वयं"।

एक वर्ष परे गंगाजल जीवपाय। ताहे मैले जीवमात्र श्री वैकुण्ठे जाय।।34

एक वर्ष तक रखा हुआ भी श्रीगंगाजल यदि पान किया जाये, तो भी जीवमात्र उससे वैकुण्ठ जाएगा।

गंगाय तुलसीरदल जे देय कृष्णोद्देशे। श्रीकृष्णविक्रीत हय से जनेर पाशे।।35

गंगा में श्रीकृष्णोद्देश्य से जो तुलसीदल अर्पण करता है,
श्रीकृष्ण तो उसके हाथ बिक जाते हैं।

प्रभुर सिद्धान्त शुनि भावे श्यामदास। दिग्विजयी नाम मोर हइल विनाश।।36

श्रीअद्वैतप्रभु के सुसिद्धान्त को सुनकर श्यामदास दिग्विजयी यह सोचने

लगा कि– दिग्विजयी नाम तो मेरा अब लुप्त हो गया।
सूर्य के सामने कोहरा कब तक रह सकता है।

ये हञो पुछिये ब्रह्मेश्वर निरूपण। किवा शास्त्रयुक्ते करे साकार स्थापन।।37

दिग्विजयी ने कहा, जो भी हो, इनसे ब्रह्म–ईश्वर का निरूपण तो पूछकर देखो, ये शास्त्र युक्ति से उसका किस तरह साकार निरूपण करते हैं।

एत चिन्ति कहे शुन वेद पंचानन। सर्वव्यापी ब्रह्म इहा वेदेर लिखन।।38

यह सोच दिग्विजयी ने कहा– हे वेदपंचानन! वेद कहता है, ब्रह्म सर्वव्यापक है।

अतीन्द्रिय वस्तु सेई निर्गुण निराकार। निष्क्रिय परमब्रह्मे नाहिक विकार।।39

वह अतीन्द्रिय वस्तु है, निराकार एवं निर्गुण है। परम ब्रह्म निष्क्रिय और विकारहीन है।

तारे तुहुं साकार कल्पना कैछे कर। साकार पदार्थ हय इन्द्रिय गोचर।।40

आप उसकी साकार कल्पना कैसे करते हैं? साकार वस्तु तो इन्द्रिय–गोचर होती है।

प्रभुकहे परब्रह्म नहे निराकार। श्री सच्चिदानन्दमय अनादि साकार।।41

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– परब्रह्म निराकार नहीं है। (ब्रह्म निराकार है) परब्रह्म सच्चिदानन्दमय है अनादिकाल से साकार ही है।

सर्वशक्तिमान तिंह परिपूर्णतम। सृष्ट्यादि सेई सर्वकारण–कारण।।42

वह सर्वशक्तिमान है और परिपूर्णतम तत्व है।
सृष्टि के आदि में वही सर्वकारण–कारण है।

अप्राकृत देह तांर अप्राकृतमन। अप्राकृत नेत्र ताँर अप्राकृत गुण।।43

उसका विग्रह, मन सब अप्राकृत हैं। उसके नेत्र तथा समस्त गुणभी अप्राकृत हैं।

प्राकृतिक गुणेर ताहे नाहिकसम्बन्ध। तेंञि तारे निर्गुण कहये शास्त्रवृन्द।।44

प्राकृत गुणों से परब्रह्म का कोई भी सम्बन्ध नहीं है।
इसलिये उसे शास्त्रों में निर्गुण कहा जाता है।

अतीन्द्रिय वस्तु सेइ नाहिक संशय। प्राकृत इन्द्रिय वेद्य कभु तिंहो नय।।45

ब्रह्म इन्द्रियातीत वस्तु है– इसमें कोई संशय नहीं। प्राकृत इन्द्रियों के द्वारा वह नहीं जाना जाता।

यैछे फल साकार तान रस निराकार। तैछे ब्रह्मेर अंगकान्तिर नाहिक आकार।।46

जैसे फल साकार है किन्तु उसमें जो रस भरा है वह निराकार है वैसे ही परमब्रह्म की अंगकान्ति रूप ब्रह्म का आकार नहीं है।

अप्राकृत ब्रह्म कृष्ण स्वयं भगवान्। नित्य वृन्दावने सदा तांर अवस्थान।।47

अप्राकृत परमब्रह्म स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण हैं।

वे नित्य–वृन्दावन में सदा विहार करते हैं।

नव कैशोर नित्य सर्वरसामृत मूर्ति। महाभाव अन्तरंगा शक्तिर वशवर्ती।।48

नव किशोर अवस्था है उनकी, वे अखिल रसामृत मूर्ति हैं। उनकी अन्तरंगा शक्ति महाभावस्वरूपा है, उसके वे वशीभूत रहते हैं।

अप्राकृत जीव हय कृष्ण भक्तगण। भक्तिनेत्रे ऐछे रूप करे दर्शन।।49

अप्राकृत जीव ही श्रीकृष्णभक्त होते हैं।

भक्तिनेत्रों से उस रूप का दर्शन होता है।

परम दयालु हरि भक्त तान प्राण। तेंइ भक्तजने करे शुद्ध भक्तिदान।।50

श्रीहरि परम दयालु हैं, भक्त ही उनके प्राण हैं।

वही भक्तजनों को शुद्ध भक्ति प्रदान करते हैं।

शुद्ध ज्ञान पथे कृष्ण प्राप्ति सुदुर्लभ। भक्तिपथे कृष्णप्राप्ति अतीव सुलभ।।51

केवल ज्ञान मार्ग के द्वारा श्रीकृष्ण प्राप्ति सुदुर्लभ है किन्तु भक्तिमार्ग से श्रीकृष्ण को प्राप्त करना अति सुलभ है। भक्ति वशो पुरुषः।

ऐछे बहु सुसिद्धान्त करिला आचार्य। ताहा शुनि दिग्विजयी मानिला आश्चर्य।।52

इसप्रकार श्रीअद्वैताचार्य ने अनेक सुसिद्धान्त वर्णन किये।

उन्हें सुनकर दिग्विजयी आश्चर्य मानने लगा।

एइ श्यामदास पूर्वेकाशीधामे गेला। विद्यार्थी हइया शिवेर आराधना कैला।।53

इस दिग्विजयी का नाम श्यामदास है। यह पहले काशीधाम में विद्यार्थी होकर गया था। वहाँ इसने श्रीशिव की आराधना की थी।

बहुदिन तपस्याते शिव तुष्ट हञा। रात्रि शेषे श्यामदासे कहिला हासिया।।54

अनेक दिन की तपस्या के बाद श्रीशिवजी इस पर

प्रसन्न हुए। एकदिन रात्रि के शेषकाल में शिवजी ने

इसे स्वप्न में दर्शन दिये और मुस्कराते हुए इस प्रकार बोले–

द्विज तोर तपोवृक्ष हैल फलवान। तव जिव्हाय सरस्वती कैला अधिष्ठान।।55

हे द्विज! तुम्हारी तपस्या का वृक्ष फलीभूत हुआ है।

तुम्हारी जिव्हा पर सरस्वती अधिष्ठित हो गयी है।

आमा बिने सुधीगणे हञा सत्यजयी। भूभारते नाम तोर हैवे दिग्विजयी।।56

मुझको छोड़कर सब विद्धानों पर तू सत्य–विजय प्राप्त करेगा

और भारत में तू दिग्विजयी नाम से विख्यात होकर भ्रमण करेगा।

जबे द्विज सर्वदेश जिनि शिवेर वरे। अवशेषे आइला श्रीपाटशान्तिपुरे।।57

इसके बाद दिग्विजयी श्रीशिवजी के वरदान के बल पर सर्वदेशों पर विजय प्राप्त करता आ रहा था। अन्त में भ्रमण करता हुआ – वह श्रीशान्तिपुर धाम में (श्रीकमलाक्षप्रभु की जन्मलीला भूमि) आया।

मोर प्रभुर सुसिद्धान्ते परास्त मानिया। मने भावे शिवेर वर गेला पण्त हञा।।58

ईशान नागर कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीअद्वैताचार्य के सुसिद्धान्तों को सुनकर परास्त होकर। दिग्विजयी मन में सोचने लगा कि श्रीशिव का वरदान निष्फल हो गया।

हेन काले आकाशे हइल दैववाणी। अहे द्विज शुनह विचार क्षान्त मानि।।59

इतने में आकाश में दैववाणी हुई– अरे द्विज!
अपने विचार को मिथ्या मानकर मेरी बात सुनो।

साक्षात् हरिहर एइ कमलाक्षाचार्य। तेञि इहांर श्रीअद्वैत नाम हैलधार्य।।60

ये श्रीकमलाक्षाचार्य साक्षात् हरिहर हैं। "हर एवं हरि दोनों के मिलित स्वरूप हैं। इसलिये इनका नाम श्रीअद्वैत है।"

दिग्विजयी शुनि दिव्य वाक्य अपरूप। ऊर्ध्वदिगे दृष्टि करि नाहि देखे रूप।।61

दिग्विजयी इन दिव्य अद्भुत वचनों को सुनकर ऊपर की ओर देखने लगा कि– यह वचन कौन कह रहा है। किन्तु उसे कोई भी नहीं दिखा।

द्विज भावे इहों सत्य स्वयं हरिहर। इहांर सहित तर्क महापाप कर।।62

द्विज जान गया कि निश्चय ही ये आचार्य स्वयं हरिहर हैं।
मैंने इनके साथ विचार–तर्क करके महापाप किया है।

एतभावे द्विज कहे सभक्ति अन्तरे। अहे श्रीअद्वैत प्रभु दया कर मोरे।।63

इसप्रकार विचार कर हृदय में श्रद्धा भरकर बोला–
हे श्रीअद्वैत प्रभो! आप मुझ पर दया कीजिये।

श्रीअद्वैत चन्द्रेर हैल दयार सन्चार। सिद्धमूर्ति देखाइला अति चमत्कार।।64

श्रीअद्वैतचन्द्र में भी उनके प्रति स्वाभाविक दया का संचार हो उठा। उन्होंने अपने हरिहर सिद्ध स्वरूप के उस दिग्विजयी को दर्शन कराये। दर्शन करके वह चमत्कृत हो गया।

देखि श्यामदास हैल प्रेमे कम्पवान। कान्दे हासे नाचे गाय हरेकृष्ण नाम।।65

उस स्वरूप को देखते ही श्यामदास में प्रेम का विकार कम्प–पुलक हो उठा।

कभी रोते–हँसते और श्रीकृष्णनाम का गान करते हुए वह नाचने लगा।

हासे श्रीअद्वैत देखि द्विजेर वैराग्य। कहे तुहु धन्य तोर परम सौभाग्य।।66

श्रीअद्वैतप्रभु मन्द मुस्कराते हुए उसके वैराग्य को विद्याभिमान राहित्य को देखने लगे। इन्होंने कहा– हे द्विज! तू परम धन्य है, परम सौभाग्यवान है।

ये हेतु अनन्तशक्ति युक्त हरिनाम। कहिते गाइते तोर नाहिक विश्राम।।67

क्योंकि अनन्तशक्तिशाली श्रीहरिनाम संकीर्तन तुम निरन्तर कर रहे हो।

आजि मोर सुप्रभात शुभ प्रतिक्षण। हरिनाम शुनि जुड़ाइलौं प्राणमन।।68

आज मेरे अति मंगलमय दिन चढ़ा है और इसका प्रतिक्षण शुभ है कि श्रीहरिनाम को सुनकर मैं अपने प्राण–मन को शीतल कर रहा हूँ।

कहितेइ हैला प्रभु प्रेमेते विह्वल। कहे श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द बोल।।69

इतना कहकर श्रीअद्वैत प्रेम से विह्वल हो उठे और श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द प्रभु का नाम उच्चारण करने लगे। उस समय तक श्रीचैतन्य का आविर्भाव भी नहीं हुआ था।

कतोक्षणे ताँर बाह्येन्द्रिय स्फूर्त्ति हैल। प्रभुर मनेर भाव प्रभुई बुझिल।।70

कुछ देर बाद उन्हें बाह्य ज्ञान हुआ। श्रीअद्वैत अपने मनोभावों को आप ही जानते हैं।

अलौकिक वस्तु प्रभु तांर दिया कार्य। अलौकिक विद्या अलौकिक यशोवीर्य।।71

उनकी अलौकिक महिमा और अलौकिक ही सब कार्य हैं, विद्या और अलौकिक यशवीर्य है।

एइ सब देखि शुनि करि चूड़ामणि। यत्ने प्रभुस्थाने मन्त्र लइला आपनि।।72

ये सब देखकर–सुनकर चूड़ामणि दिग्विजयी ने आग्रह करके श्रीअद्वैत से मन्त्र दीक्षा ग्रहण की।

कृष्णमन्त्र पाञा तिंहो प्रेमाविष्ट हैला। प्रभुपदे दण्डवत् करि स्तुति कैला।।73

वह श्रीकृष्णमन्त्र पाकर प्रेमाविष्ट हो उठा। श्रीअद्वैत प्रभु को दण्डवत् प्रणाम कर उनकी अनेक स्तुति करने लगा।

अहे प्रभु तोंहार महती कृपाबले। कर्मबन्ध हैते मुक्त हैनु अवहेले।।74

हे श्रीअद्वैत प्रभो! आपकी महान् कृपाशक्ति से आज मैं अनायास कर्मबन्धन से मुक्त हो गया हूँ।

तब द्विज कृष्णार्चनेर प्रणाली शुनिला।श्रीमद्भागवत पड़ि प्रेमे मग्न हैला।।75

तब प्रभु से कृष्ण अर्चन की पद्धति सुनकर एवं

उनसे श्रीमद्भागवत पढ़कर प्रेम में मग्न हो गया।

प्रभु कहे तोर नाम भागवताचार्य। श्यामदास कहे तव आज्ञा शिरोधार्य।।76

प्रभु ने कहा– आपका नाम आज से भागवताचार्य रखता हूँ। श्यामदास ने कहा, जो भी आपकी आज्ञा है, उसे सिर पर धारण करता हूँ।

दिन कत परे प्रभुर आदेश लइया। देशे गेला द्विज प्रभुपदे प्रणमिया।।77

कुछ दिनों के बाद प्रभु की अनुमति पाकर वह श्रीअद्वैत प्रभु के चरणों में प्रणाम कर अपने देश को चला गया।

एकदिन श्रीअद्वैत भक्त अवतार। मने भावे कैछे जीव हइवे उद्धार।।78

एकदिन श्रीअद्वैतप्रभु जो भक्तावतार हैं, मन में
सोचने लगे कि जीवों का उद्धार कैसे होगा?

अद्यापि ना हैला प्रकट स्वयं भगवान्। केवा जीवे प्रेमभक्ति करिवे प्रदान।।79

अभी तक तो स्वयं भगवान प्रकट हुए नहीं।
जीवों को प्रेमभक्ति कौन प्रदान करेगा।

भाविते आछेन प्रभु ए हेन कालेते। दिव्यसिंहराजा आइला श्रीलाउड़ हैते।।80

ऐसा मन में विचार कर ही रहे थे कि उसी समय
श्रीदिव्यसिंह राजा श्रीलाउड़ से वहां आ पहुँचा।

पूर्वे प्रभुर हिल्लोले तार भ्रम दूरे गेल।वैष्णव हञा सेइ राजा प्रभुस्थाने आइल।।81

पहले प्रभु के प्रताप से राजा का भ्रम दूर हो गया था और
वह राजा वैष्णव होकर प्रभु के पास आया।

ताने देखि श्रीअद्वैत कैला गात्रोत्थान। राजा कहे प्रभु मोरे कर भृत्य ज्ञान।।82

राजा को आया देखकर श्रीअद्वैत ने गात्रोत्थान किया।
राजा ने कहा– प्रभो! आप मुझे अब अपना दास ही जानिये।

एत कहि प्रभु पदे दण्डवत् हञा। दैन्यस्तुति कैला प्रभुर तत्व उघारिया।।83

यह कहकर राजा ने प्रभु के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया और प्रभु के तत्त्व को प्रकाशित करते हुए उनकी दीनतापूर्वक स्तुति की।

प्रभु कहे उठ उठ तुहुँ कृष्णदास। सेइ हैते राजार नाम हइल कृष्णदास।।84

प्रभु ने कहा– राजन्! उठिये आप तो कृष्णदास हैं।
उस दिन से राजा का नाम कृष्णदास विख्यात हुआ।

दशवत्सर भक्तिशास्त्र पड़ि कृष्णदास। कृष्ण सर्वेश्वर बलि हैल सुविश्वास।।85

कृष्णदास ने दस वर्ष प्रभु से भक्ति शास्त्रों का अध्ययन किया।

उन्हें विश्वास हो गया कि कृष्णसत चित्त और आनन्दरूप एवं सर्वेश्वर हैं।

शाक्त मन्त्र छाड़ि ग्रहण कैला विष्णु मनु। प्रभुकहे आजि तोर हैल विष्णु हनु।।86

तुमने शाक्तमन्त्र का त्याग कर विष्णुमन्त्र ग्रहण कर लिया है– आज आपका शरीर श्रीविष्णु का ही हो गया है। तुम्हारा मानव जीवन धन्य हो गया।

कृष्णदास कहे तुहुं दयार सागर। मो पाषण्डे उद्धारिला बड़ चमत्कार।।87

कृष्णदास राजा कहने लगे– आप दयासागर हैं। आपने चमत्कार पूर्वक मुझे पाखण्ड धर्म से मुक्त कर परम पूज्य वैष्णव धर्म में प्रवेश दिया है।

एवे आज्ञा कर मोरे विरलेते जाङ। कृष्णनाम जपि सदा पराण जुराङ।।88

अब आज्ञा कीजिये कि मैं निर्जन वन में जाकर रहूं और कृष्णनाम जप करता हुआ अपने प्राणों को शीतल करूँ।

एत कहि सुरधुनी तीरे उत्तरिया। कछु दिन वास कैला झुपड़ी वान्धिया।।89

इतना कहकर राजा गंगा किनारे आया और झोंपड़ी बनाकर कुछ दिन वहां निवास किया।

बहु पुष्पोद्याने सुशोभित कैला वाटी। तदवधि ग्रामेर नाम हैल फुल्लवाटी।।90

अनेक पुष्पवाटी से कुटिया को सुशोभित किया। तभी से उस स्थान का नाम 'फूलवाटी' पड़ गया।

भक्तिबले हैला तिंहो प्रभुर कृपापात्र। संस्कृते रचिला प्रभुर बाल्यलीला–सूत्र।।91

वह श्रीकृष्णदास भक्तिबल से श्रीअद्वैतप्रभु का कृपापात्र बन गया। उसने संस्कृत में श्रीअद्वैतप्रभु की बाल्यलीला के सूत्र की रचना की।

शेषावस्थाय कृष्णदास ब्रजधामे गेला। भक्तिनेत्रे कृष्णदेखि सिद्धि प्राप्त हैला।।92

शेषावस्था में कृष्णदास ब्रजधाम चला आया और भक्तिनेत्रों से श्रीकृष्ण दर्शन कर वहां ही सिद्धि प्राप्त करके–नित्यलीला में प्रवेश किया।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे आर आश। नागर ईशान कहे अद्वैत–प्रकाश।।93

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत प्रभु के चरणों की आशा करते हुए ईशान नागर श्रीअद्वैतप्रकाश का वर्णन करता हूँ।

सप्तम अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो। श्रीसीतानाथ प्रभु की जय हो। श्रीनित्यानन्द की भक्तों सहित जय हो।

एबे शुन ब्रह्म हरिदासेर विवरण। संक्षेपेते किछु मुञि करिमु वर्णन।।02

अब ब्रह्म श्रीहरिदास का वृतान्त सुनिये, जिसे मैं संक्षेप से वर्णन करूँगा।

श्रीधाम वृन्दावने कृष्णस्वयं भगवान। नरलीला कैला करि गोप अभिमान।।03

श्रीधामवृन्दावनमें श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् ने गोपअभिमान पोषणकर नरलीला की।

एकदिन गोष्ठलीलाय श्रीनन्दनन्दन। गोपाल उच्छिष्ट फल करिला भोजन।।04

एकदिन गोष्ठ–लीला में सखाओं के प्रेम के अधीन होकर श्रीनन्दनन्दन ने गोपों का झूठा फल खाया।

चतुर्मुख ब्रह्मा देखि सेइ व्यवहार। मने भावे इहों नहे विश्वमूलाधार।।05

चतुर्मुख ब्रह्माजी ने जब यह स्वभाव एवं आकृति देखी तो अनुमान किया कि ये मनुष्य हैं प्रभु नहीं।

इहार प्रकृति देखि मनुष्य आकार। ईश्वर हइले काहे हैवे भ्रष्टाचार।।06

ईश्वर होकर इनमें यह झूठा खानादि भ्रष्टाचार कैसे सम्भव हो सकता है?

एत चिन्ति ध्यानयोगे देखे दिव्य नेत्रे। वयं कृष्णचन्द्रे विराजित ब्रजक्षेत्रे।।07

ब्रह्माजी ने ध्यान योग से दिव्य नेत्रों से देखा कि
ब्रजक्षेत्र में स्वयं कृष्णचन्द्र विराजमान हैं।

पुन देखे कृष्ण करे उच्छिष्ट भोजन।भावे इहों कृष्ण नहे अन्य कोनजन।।08

फिर देखा कि वे उच्छिष्ट भोजन कर रहे हैं।
फिर सन्देह हुआ कि यह श्रीकृष्ण नहीं और कोई है।

कृष्ण मायाय मोह हञा श्रीचतुरानन। मायाते गोपाल वत्से करिला हरण।।09

ब्रह्माजी कृष्ण–माया में मोहित हो उठे और उन्होंने अपनी माया से गोपों एवं बछड़ों को चुरा लिया।

मूलनारायण ज्ञान हञा ब्रह्मार कार्य। करिला अपूर्व लीला रामेर आश्चर्य।।10

श्रीकृष्ण तो मूलनारायण हैं, जान गये कि यह करतूत ब्रह्मा की है। उन्होंने एक ऐसी अद्भुत लीला की कि श्रीबलराम भी आश्चर्य में पड़ गये।

आत्मशक्ति विस्तारिया कृष्ण बहुरूपे। गोवत्स गोपाल हैला पूर्व अनुरूपे।।11

श्रीकृष्ण ने निज शक्ति योगमाया का विस्तार कर अनेक रूप धारण कर लिये। पहले वाले समस्त गोप एवं बछड़ों के रूप में वे स्वयं आविर्भूत हो गये।

पूर्वमते लीला कैला योगी अगोचर। क्रमेते मनुष्यमानेर हैल सम्वत्सर।।12

और पहले की भांति वन लीला करने लगे जो योगीजन के लिये भी अगोचर है। इसप्रकार उन्हें मनुष्य लोक के परिमाण से एक वर्ष पूरा हो गया– बछड़ों एवं गोपों के रूप में।

इतिमध्ये ब्रह्मा आसि अपूर्व देखिला। पूर्वमत करे कृष्ण गोचारण लीला।।13

इस बीच में ब्रह्मा ने आकर अद्‌भुत नजारा देखा कि श्रीकृष्ण तो गोप बछड़ों से पूर्ववत् गोचारण–लीला कर रहे हैं।

ब्रह्मा भावे वत्स–बालक पाइल कोथाय। मुञिया राखियाछिनु आछये तथाय।।14

ब्रह्माजी सोचने लगे कि इनके पास गायें–बछड़ें कहाँ से आये– मैं तो उन्हें छिपाकर रख आया हूँ।

तबे ज्ञाननेत्रे देखे श्रीचतुरानन। वत्स–गोपालरूप कृष्ण करिला धारण।।15

तब ब्रह्मा ने ज्ञान नेत्रों से देखा कि श्रीकृष्ण ने गोप बछड़ों का रूप धारण कर रखा है।

ब्रह्मा भावे मुञिमूढ़ कृष्ण ना चिनिनु।गोवत्सादि चूरि करि पातके डुबिनु।।16

ब्रह्मा ने जान लिया कि मैं तो मूर्ख रहा, श्रीकृष्ण को न पहचान सका। गोवत्सों को चुराकर मैंने महा अपराध किया।

अपराध क्षमा कराइमु स्तव करि।एत चिन्ति आइला विधि यांहा स्वयंहरि।।17

मैं स्तुति कर उनसे अपराध क्षमा कराऊँ।

यह सोच ब्रह्मा वहाँ आये जहां श्रीकृष्ण विराजमान थे।

कृष्ण आत्मतत्व जानाइते विधातारे। अलौकिक पुरी सृष्टि कैला माया द्वारे।।18

श्रीकृष्णने आत्मतत्त्व ब्रह्माको जनाने के लिये एक अलौकिक पुरी की रचना की।

दिव्य सिंहासने वसि करिला स्मरण। ब्रह्माविष्णु पंचानन आइला अगणन।।19

उसमें एक दिव्य सिंहासन पर बैठकर स्मरण करते

वहाँ अगनित ब्रह्मा, विष्णु, एवं शिव उपस्थित हुए।

महाविष्णुर गण आइला अनन्तवदन। सभे आसि कृष्णपदे लइला स्मरण।।20

महाविष्णु के अनन्त मुख वाले पार्षद वहां आने लगे और

सब आकर श्रीकृष्ण के चरणों में नमस्कार करने लगे।

चतुर्मुखे प्रथम द्वारेते उपनीत। सेइ द्वार अष्टानन ब्रह्मा सुरक्षित।।21

चतुर्मुख ब्रह्मा ने पहले ही दरवाजे पर आकर देखा कि अष्ट मुख–ब्रह्मा उस द्वार की सुरक्षा के लिये विद्यमान हैं।

चतुर्मुखे देखि हासि कहे अष्टानन। के तुमि जाइवा कति कह विवरण।।22

अष्टानन ब्रह्मा ने चतुर्मुख ब्रह्मा को देखकर हंसकर पूछा–

आप कौन हैं और कहाँ जाना चाहते हैं?

चतुर्मुख कहे मुञि ब्रह्मा नाम धरि। गोपरूपी कृष्णे देखिवारे वान्छाकरि।।23

चतुर्मुख ने कहा– मेरा नाम ब्रह्मा है और गोपरूप
धारी श्रीकृष्ण के दर्शन करने आया हूँ।

ताहा शुनि उच्च हासि कहे अष्टानन। चतुर्मुख ब्रह्मा आछे ना शुनि कथन।।24

यह सुनकर अष्टमुख ब्रह्मा अट्टहास करके हंसे और कहने लगे– मैंने तो आज तक चतुर्मुख ब्रह्मा हैं ऐसा कभी नहीं सुना।

स्वयं नारायणेर सृष्टिर नांहि ओर। मुञि क्षुद्र ब्रह्मा ज्ञान अर्गज गेल मोर।।25

स्वयंनारायण की सृष्टि का कोई अन्त नहीं है। मुझे तो ज्ञान था कि मैं ही एक ब्रह्मा हूँ, वह अज्ञानरूपी अंहकार आज दूर हो गया।

आश्चर्य शुनिया चतुर्मुख भावे मने। अष्टमुख ब्रह्मा आछे केवा इहा जाने।।26

यह वचन अष्टमुख ब्रह्मा के सुनकर चतुर्मुख ब्रह्मा आश्चर्य में पड़ गया– आठ मुख का भी कोई ब्रह्मा है मैंने आज तक नहीं सुना।

तबे ब्रह्मा शुष्क मुखे कहे करजोड़े। कृष्णदर्शन कराइया धन्यकर मोरे।।27

तब ब्रह्माजी का मुँह सुख गया और हाथ जोड़कर बोले–
मुझे कृष्ण दर्शन कराकर कृतार्थ कीजिये।

अष्टमुख कहे मुञि हऊँ क्षुद्र ब्रह्मा। आर बहुद्वारे आछे महत् विश्वकर्मा।।28

अष्टमुख ब्रह्मा बोले– मैं एक छोटा सा ब्रह्मा हूँ। आगे अनेक द्वार हैं और बड़े–बड़े बहुमुखी ब्रह्मा आगे–आगे के द्वारों पर खड़े हैं।

द्वार छाड़ि दिते तुहुँ करिछ मिनति। कृष्ण आज्ञा बिनु काहार नाहिक शकति।।29

द्वार को छोड़कर उनके पास जाकर आप निवेदन करिये। कृष्ण आज्ञा के बिना उन तक आपको जाने देने की सामर्थ्य किसी में भी नहीं है।

जाइते कृष्णान्तःपुरे द्विजेर बाधा नाञि। आसिव सन्देशहर रह एइ ठाञि।।30

श्रीकृष्ण के अन्तःपुर में जाने में केवल ब्राह्मण को रुकावट नहीं है। आप यहाँ रहिये, अभी सन्देश देने वाला सेवक यहाँ आता होगा।

कहिते कहिते आइला अनन्त वदन। कृष्णेर महिमा सदा करये कीर्तन।।31

यह बात कह सुन रहे थे कि अनन्त–वदन श्रीशेष वहाँ आ पहुँचे जो सदा श्रीकृष्ण–महिमा का गान करते रहते हुए भी कभी नहीं थकते।

तान अलौकिक रूप देखि कमलज। दण्डवत करि लैला चरणेर रज।।32

उनके अलौकिक रूप को देखकर ब्रह्माजी ने उन्हें दण्डवत् प्रणाम कर उनके चरणों की धूलि ली।

श्रीअनन्तदेव कहे तुहुँ कोन जन। विधि कहे मुञि ब्रह्मा चतुर आनन।।33

श्रीअनन्तदेव ने पूछा– आप कौन हैं? ब्रह्म ने कहा मैं चतुर्मुख ब्रह्मा हूँ।

आमि आछौं करिते श्रीकृष्ण दरशन।मो आधीने लञा जाह करि कृपेक्षण।।34

मैं यहाँ श्रीकृष्णदर्शन करने आया हूँ। मुझे आप
कृपादृष्टि कर अपने साथ भीतर ले चलिये।

श्रीअनन्त कहे तुमि देह परिचय।चतुर्मुखे ब्रह्मार संख्या जे करिये निर्णय।।35

श्रीअनन्तदेव ने कहा– आप अपना परिचय दीजिये ताकि चतुर्मुख ब्रह्माओं में आपकी संख्या जानी जावे।

विधिभावेकिमाश्चर्य विधातार असंख्य। मुञिक्षुद्र करिते चाङकृष्णतत्त्वेर संख्या।।36

ब्रह्मा सोचने लगे– कैसा आश्चर्य है कि मुझसे ब्रह्मा भी असंख्य हैं। मैं क्षुद्र फिर श्रीकृष्णतत्त्व को जानने की कैसे इच्छा कर रहा हूँ?

एवे किवा परिचये पाङ परित्राण। भाविते भाविते ब्रह्मा हैला हत ज्ञान।।37

अब किस परिचय से मैं अपनी रक्षा करूँ?
यह सोचते–सोचते, ब्रह्मा बेसुध हो गये।

कृष्ण–कृपाबले ब्रह्मा पाइया चेतन। कहे सनतकुमारादि मोर पुत्रगण।।38

श्रीकृष्णकृपा शक्ति से ब्रह्मा को चेतना आयी और बोले– सनत्कुमारादि चारों मेरे पुत्र हैं और मैं उनका पिता हूँ।

श्रीअनन्त कहे भाल चिनिनु विशेष। श्रीगोलोक देखि आछौं शुद्ध योगीवेश।।39

श्रीअनन्त देव ने कहा– ठीक, अब मैं आपको अच्छी तरह जान गया। गोलोक मैं उन सनत्कुमारों को मैंने शुद्धयोगीवेश में देखा था।

चतुर्मुख भावे मुञि महा भाग्यवान। कोटि पुण्ये लभ्य हैल एहेन सन्तान।।40

चतुर्मुख ब्रह्मा ने सोचा– मैं महाभाग्यवान हूँ
जो कोटि पुण्यों से मुझे ऐसी सन्तान प्राप्त हुई है।

जैछे सागर हैते हैल सुधांशु उत्पन्न। तैछे आमा हैते ऋषिगण अवतीर्ण।।41

जैसे समुद्र से अमृत एवं मनु की उत्पत्ति हुई थी,
उसीप्रकार मुझसे सनत्कुमारादि प्रकट हुये हैं।

कृष्णदासेर अचिन्त्य शक्तिर प्रभावे। मृत्युसम लज्जा हैते मुक्त हैनु एबे।।42

उन श्रीकृष्णदासों के अचिन्त्य प्रभाव से मृत्यु के समान लज्जा से मैं मुक्त हुआ–परिचय न मिलने से मैं तो लज्जा से मरा ही जा रहा था।

तबे दुइ कर जुड़ि कहे चतुर्मुख। कृपा करि देखाह दुर्लभ चन्द्रमुख।।43

तब ब्रह्माने दोनों हाथ जोड़कर कहा– कृपाकर आप मुझे

उन सुदुर्लभ कृष्णचन्द्रमुख का दर्शन कराइये।

श्रीअनन्तकहे श्रीमुखेर आज्ञा विने। कार साध्य आछे जाइव कृष्णलीला स्थाने।।44

श्रीअनन्तदेव ने कहा– उनके श्रीमुख की आज्ञा बिना उनकी लीला स्थली में जाने की किसकी शक्ति है?

एत कहि तेंहो जात्रा श्रीगोविन्द पाशे। कहे सनत्कुमार पिता आछे द्वार देशे।।45

इतना कहकर वे श्रीगोविन्द के पास अन्दर चले गये और उनसे कहा– हे प्रभो! आपके दर्शन के लिये सनत् कुमार के पिता ब्रह्मा द्वार पर खड़े हुए हैं।

श्रीगोविन्द कहेन आनह तारे हेथा। एइ क्षुद्र ब्रह्माण्डे सेई हय धाता।।46

श्रीकृष्ण बोले–उसे भीतर ले आओ। इस क्षुद्र ब्रह्माण्ड की वही सृष्टि करता है।

श्रीअनन्त भावे कृष्णदासेर पिता धन्य।साधुपुत्र प्रभावे विरन्चि हैला मान्य।।47

श्रीअनन्त देव ने सोचा कृष्णदास सनत्कुमारादि का पिता
धन्य है। भक्तपुत्रों के प्रभाव से आज यह ब्रह्मा आदर पा सका है।

तबे श्रीअनन्त पुन झाट ताँहा आईला। द्वितीय द्वारेते ब्रह्माय संगे करि गेला।।48

फिर श्रीअनन्त श्रीब्रह्माके पास आये और
ब्रह्माको साथ लेकर दूसरे द्वार पर आये।

ताहे द्वारी हय ब्रह्मा षोड़श आनन। देखि चतुर्मुख कहे एई कोन जन?।।49

उस द्वार पर सोलहमुख ब्रह्मा द्वारपाल के रूप में खड़ा था।
वह इस चतुर्मुख ब्रह्मा को देखकर बोला– यह कौन है?

संकर्षण कहे इहों हय एक ब्रह्मा। महाभागवत कृष्णेर द्वारी विश्वकर्मा।।50

श्रीसंकर्षण ने कहा यह भी एक ब्रह्मा है।
श्रीकृष्ण का महान् भक्त और सृष्टिकर्त्ता है।

एइ मत आछे आर द्वार शत शत। क्रमे बहुमुखी ब्रह्मा द्वारिते नियुक्त।।51

इसप्रकार वहां सैकड़ों द्वार थे और क्रमशः बढ़ते हुए मुखों वाले ब्रह्मा उन पर द्वारपाल के रूप में विराजमान थे।

मूल श्रीनारायणेर सृष्टिर नाहि पार। मो हते प्रधान कत ताँर परिकर।।52

श्रीकृष्ण की सृष्टि का पार नहीं है– ब्रह्मा सोचने लगे,
मुझसे कितने बड़े–बड़े ब्रह्मा इनके परिकर हैं।

कहिते शुनिते बहु द्वार उत्तरिला। गोविन्द चिन्मयी सभाय उपनीत हैला।।53

इस प्रकार कहते सुनते अनेक द्वारों से निकलकर
श्रीगोविन्द की चिन्मय सभा में आ पहुँचे।

सभा मध्ये देखे ब्रह्मा शिव अगणन। कत विघ्नराज विष्णु महा विष्णुगण।।54

सभा में उन्होंने अगणित ब्रह्मा शिव, गणेश तथा विष्णु, महाविष्णुओं को देखा।

देवर्षि गन्धर्व कत शत षड़ानन। शतार्बुद इन्द्र आर श्रीअनन्तगण।।55

कितने–कितने गन्धर्व तथा स्वामी कार्तिकेय वहां मौजूद थे तथा
शतार्बुद–असंख्य इन्द्र और श्रीशेष भगवान् भी वहां उपस्थित थे।

कोटि कोटि चन्द्र सूर्य के करे गणन। मूर्तिमान वेदवृन्द करये स्तवन।।56

कोटि–कोटि चन्द्र सूर्य थे, कौन गिनती कर सकता है।
मूर्तिमान वेद श्रीकृष्ण की स्तुति कर रहे थे।

अलौकिक कृष्णतेज अति चमत्कार।कोटि–कोटि सूर्यप्रभा करये धिक्कार।।57

अलौकिक एवं अति चमत्कारी तेज था श्रीकृष्ण का, जो
कोटि सूर्यों के तेज को धिक्कार करने वाला था।

नवीन नीरद वर्ण पद्म सूर्याकार। कृष्णतेजे लक्ष्यनाहि हय कृष्णाकार।।58

नवीन नीलवर्ण का सूर्याकार एक कमल था, जो कृष्ण तेज से देखा नहीं जा
रहा था, कृष्णाकार ही दीख रहा था।

कोटि कोटि महा मरकत मणिशैल। समुदित नहे कृष्णतेज समतुल।।59

कोटि–कोटि महा मरकत मणि पर्वत भी उदित होकर
श्रीकृष्ण तेज के समान नहीं हो सकते थे।

परमाह्लादनी शक्ति कृष्णनाम पाशे। अलौकिक तेज ताँर त्रिलोक प्रकाशे।।60

परम ह्लादिनी शक्ति श्रीमती राधारानी श्रीकृष्ण के वाम पार्श्व में अलौकिक तेज
से त्रिलोकों को प्रकाशित करते हुए विराजमान थीं।

शत कोटि स्वर्णपद्म चन्द्रतेज हैते।उज्ज्वल राधांग तेजे कृष्ण मन माते।।61

शत कोटि स्वर्णकमल एवं चन्द्रों के तेज से भी उज्जवल थे। श्रीराधाजी के
दिव्य श्रीअंग, जो श्रीकृष्ण के मन को मतवाला करने वाले थे।

कत शत नव गोरोचना शैल द्युति। धिक्कार करिया शोभे राधा अंग भाति।।62

शत्–शत् नवगोरोचना पर्वतों की द्युति को निन्दित करते हुए
श्रीराधा अंग–कान्ति प्रसारित हो रही थी।

ललितादि सखिगण चौदिगेते घेरा। दुंहो प्रेम आस्वादये हञा सेवापरा।।63

उनके चारों ओर श्रीललितादि सखीवृन्द विद्यमान थीं। श्रीराधा एवं श्रीकृष्ण–
दोनों के प्रेम का वे आस्वादन कर रही थीं सेवा करते हुए।

सभा देखि कम्पित हइया चतुर्वक्त्र। राधाकृष्ण नाहि देखे दिव्य तेज मात्र।।64

ऐसी सभा को देख कर ब्रह्माजी तो कांपने लगे। इनको केवल दिव्य तेज ही दिखाई दिया। श्रीराधाकृष्ण को वे नहीं देख पाये।

श्रीअनन्ते स्तव करि कहे पितामह। काँहा श्रीगोविन्द मोरे दर्शन कराह।।65

ब्रह्माजी श्रीअनन्तदेव की स्तुति कर कहने लगे–
श्रीकृष्ण कहाँ हैं? उनके दर्शन तो मुझे कराओ।

शेष कहे हैला कृष्ण दर्शने वंचित। गोवत्स चौर्यापराध नहे अंकिन्वित।।66

श्रीअनन्तदेव ने कहा– तुमने गोवत्सों को चुराकर महान अपराध किया है, इसीलिये श्रीकृष्णदर्शन से तुम वंचित हुए हो।

शुनि विधि महा अपराध स्वीकारिया। कृष्णे बहु स्तुति कैला अश्रुमुख हञा।।67

ब्रह्माजी ने अपने अपराध को स्वीकार कर श्रीकृष्ण की अनेक स्तुति की और रोने लगे।

भक्तिप्रिय श्रीमाधव दयार सागर। तुष्ट हैला शुनि ब्रह्मस्तुति बहुतर।।68

श्रीकृष्ण तो भक्तिप्रिय और करुणा के सागर हैं।
ब्रह्मा की स्तुति–प्रार्थना सुनकर वे प्रसन्न हो गये।

तबे ब्रह्माय देखाइया निज नित्य मूर्त्ति। कहे गो–हरण पाप तोहे हैल स्फूर्ति।।69

फिर उन्होंने श्रीब्रह्मा को अपनी नित्य श्रीमूर्ति का दर्शन कराया और कहा ब्रह्मा! तुममें गोवत्स हरण के पाप की स्फूर्त्ति हुई है।

कलियुगे यवनत्व हइवे तोहार। श्रीकृष्णचैतन्य देखि पाइवा निस्तार।।70

कलियुग में तुम जाकर यवन होवोगे और वहां मेरे ही स्वरूप श्रीकृष्णचैतन्य की शरण पाकर तुम्हारा निस्तार होगा।

कृष्णरूप देखि ब्रह्मा चमत्कार हैला। आज्ञा शुनि प्रेमानन्दसागरे डुबिला।।71

श्रीकृष्ण के दर्शन पाकर ब्रह्मा चमत्कृत हो उठा और प्रभु वचन सुनकर प्रेमानन्द सागर में निमग्न हुआ।

राधा–श्याम शत अष्ट अंगे प्रणमिया। निज धामे गेला विधिकृष्ण आज्ञा पाञा।।72

श्रीश्रीराधाकृष्ण को उन्होंने शत–शत अष्टांग प्रणाम किये और उनकी आज्ञा पाकर अपने धाम चले गये।

तबे कलियुगागत देखि पद्मयोनि। अवनीते अवतीर्ण हइला आपनि।।73

तब कलियुग को आया देखकर श्रीब्रह्मा पृथ्वी पर अपने आप श्रीहरिदास के रूप में अवतीर्ण हुए।

त्रयोदश शत द्विसप्तति शकमिते। प्रकट हइला ब्रह्मा बूड़न ग्रामेते।।74

1372 शकाब्द (1450 सन्) में बूड़न ग्राम में ब्रह्मा ने पृथ्वी पर जन्म लिया।

केह कहे हरिदासे प्रहलादावतार। प्रभु कहे दोंहे मिलि हय एकाकार।।75

कोई कहते हैं श्रीहरिदास श्रीप्रहलादजी के अवतार हैं। श्रीअद्वैत प्रभु कहते थे– श्रीब्रह्मा तथा श्रीप्रहलाद दोनों मिलकर एकाकार होकर श्रीहरिदास के रूप में आविर्भूत हुए।

जीव निस्तारिते मुख्य तान परकाश। खियाति यवन मात्र नहे तदाभास।।76

जीवों का निस्तार करने का ही मुख्य उद्देश्य उनके अवतार का था। यवन नाम से उनकी प्रसिद्धि मात्र थी, किन्तु यवनता का आभास भी उनमें न था।

यवन पालित विभु दुग्ध मात्र खाय।दिने दिने वृद्धि हय कोटि इन्दु प्राय।।77

यवनों द्वारा पालित हुए किन्तु वहां केवल दूध मात्र ही पीते थे उनका अन्नादि और कुछ ग्रहण न करते थे। कोटि इन्दु के समान इनका तेज दिनों–दिन वृद्धि पाने लगा। अर्थात् चन्द्रकला की तरह बढ़े।

ब्रह्म हरिदास लोके जातिस्मर हय। पूरण संस्कारे सदा हरिनाम लय।।78

लोगों में यह ब्रह्म–हरिदास जाति से याद किये जाने लगे।
पूर्व संस्कारवश ये सदा हरिनाम ग्रहण करते रहते थे।

पन्चमवत्सरे शिशु गृहत्याग कैला। बहुस्थान भ्रमिया श्रीशांतिपुरे आइला।।79

पांचवे वर्ष में (वस्तुतः 18 वर्ष की आयु में) इन्होंने घर का त्याग कर दिया।
अनेक स्थानों पर भ्रमण करते हुए यह शांतिपुर आये।

श्रीअद्वैत स्थाने आसि हैला उदय। आजानुलम्बित बाहु तेजःपुन्ज काय।।80

वहाँ श्रीअद्वैत के पास आये। इनकी भुजाएं जानु
पर्यन्त लम्बी थीं। महान तेजपूर्ण शरीर था।

श्रीअद्वैत प्रभु हय सर्वज्ञान खनि। देखि सेइ नराकृति विधातारे चिनि।।81

श्रीअद्वैत प्रभु तो सर्व ज्ञानपूर्ण हैं। हरिदास को नराकृति में
देखकर जान गये कि यह ब्रह्मा हैं।

नरलीला अनुसारे कहे हरिदासे। तुमि कोन जाति इहा आइला किवा आशे।।82

नरलीलानुसार श्रीअद्वैत प्रभु ने श्रीहरिदास से पूछा–आपकी क्या जाति है? यहां कैसे आये हैं क्या चाहते हैं? अतः मैं आपकी क्या सेवा करूँ।

ब्रह्म हरिदास कहे मुञि म्लेच्छाधम। आसि आछों तुया पद करिते दर्शन।।83

ब्रह्म–हरिदास ने कहा, मैं एक अधम म्लेच्छ हूँ,
आपके चरण दर्शन के लिये यहाँ आया हूँ।

प्रभु कहे इहा रहि करह विश्राम। धर्मशास्त्र पढ़ सिद्ध हैव मनस्काम।।84

श्रीअद्वैतप्रभु बोले तुम यहाँ सुख से रहो। धर्मशास्त्रों का
अध्ययन करो जिससे सभी मनोरथ पूर्ण होंगे।

हरिदास कहे भाग्ये दयासिन्धु पाइनु। इहार हिल्लोले मन प्राण जुड़ाइमु।।85

श्रीहरिदास ने कहा– मैंने भाग्यवश आप जैसे दयासिन्धु को प्राप्त किया है और
इसकी तरंगों से मेरे मन प्राण शीतल हो गये हैं।

तबे हरिदास प्रभु अद्वैतेर स्थाने। व्याकारण साहित्यादि पढ़िला यतने।।86

तब हरिदास श्रीअद्वैत प्रभु से व्याकरण साहित्यादि
यत्नपूर्वक पढ़ते और आनन्द पाने लगे।

क्रमे दर्शनादि पड़ि हइल व्युत्पत्ति। श्रीमद्भागवत पड़ि पाइला शुद्ध भक्ति।।87

दर्शनादि पढ़कर प्रगाढ़ पाण्डित्य आ गया श्रीभागवत
का अध्ययन करते ही शुद्ध भक्ति प्राप्ति हो गई।

श्रुतिधर हरिदासेर महिमा अपार। श्लोक अर्थ कैल तार कण्ठ मणिहार।।88

ये श्रुतिधर थे एकबार सुनने से इन्हें सब पाठ याद हो जाता था। श्लोक की
व्याख्या सुनते ही वह श्लोक मानों इनका कण्ठहार बन जाता था।

एक दिन हरिदास विरले वसिया। प्रभु स्थाने कहे भक्ति विनय करिया।।89

एकदिन श्रीहरिदास निर्जन में बैठकर श्रीअद्वैत प्रभु
से भक्तिपूर्वक विनय करके कहने लगे–

जानिलाङ तुहु साक्षात् ईश्वरावतार। तोया बिनु अधमतारण केवा आर।।90

प्रभो! मैंने जान लिया है कि आप साक्षात् महा ईश्वर के (महाविष्णु एवं शंकरजी
के मिलित) अवतार हैं। आपके समान अधमों का तारक और कौन है?

श्रीअद्वैत चन्द्र तार दैन्य उक्ति शुनि। कहे शुन वत्स धर्मशास्त्र सिद्ध वाणी।।91

श्रीअद्वैत प्रभु ने इनकी दैन्योक्ति सुनकर कहा– वत्स!
सुनो धर्मशास्त्र की यह सिद्ध वाणी है।

केवा छोट केवा बड़ स्थैर्य्य नाहि जानि। साधु आचरण जार तारे श्रेष्ठ मानि।।92

कौन छोटा है? कौन बड़ा है? यह नहीं कहा जा सकता। जिसका साधु आचरण
है– भक्तिपूर्वक आचरण है, वही श्रेष्ठ है। यही मेरा मन्तव्य है।

अष्टविध भक्ति यदि म्लेच्छे उपजय। सेइ जाति लोग हञा द्विजादेश हय।।93

अष्टविधि भक्ति यदि किसी म्लेच्छ में आविर्भूत होती है।
वह म्लेच्छ होते हुए भी ब्राह्मण समान पूज्य है।

जेइ कृष्ण भजे सेइ हय सर्वोत्तम। कृष्ण बहिर्मुख जेइ सेइ नराधम।।94

जो श्रीकृष्ण भजन करता है वही सर्वश्रेष्ठ है।
जो कृष्ण बहिर्मुख है। वही नराधम है।

गोपी भाव बिनु ना पाय श्रीकृष्णचरण। सेई भावे पाय प्रेम अमूल्य रतन।।95

गोपीभाव के बिना श्रीकृष्णचरणों की प्राप्ति नहीं हो सकती। गोपीभाव से अमूल्य रत्न प्रेम की प्राप्ति होती है। जो कि महाप्रभु की देन है।

हरिदास कहे अविचिन्त्य गोपीभाव। कोटिजन्मेर पुण्ये जीवे ना हय आविर्भाव।।96

हरिदास बोले– प्रभो! गोपीभाव अविचिन्त्य है। कोटि जन्म के पुण्यों से भी जीव में वह उदित नहीं होता।

सहज उपाय प्रभु कह प्रकाशिया। कैछे कृष्ण–प्राप्ति हय मायापार हञा।।97

अतः आप उसकी प्राप्ति का सहज उपाय बतलाइये।
माया रहित होकर श्रीकृष्ण की प्राप्ति कैसे हो?

प्रभु कहे तोर किछु नाहि अगोचर। तथापि करिला मोरे आचार्य स्वीकार।।98

प्रभु ने कहा, हरिदास! तुमसे कुछ छिपा नहीं है, तथापि तुमने मुझे आचार्य गुरु रूप में स्वीकार किया है इसलिये तुमसे गूढ़ रहस्य कहता हूँ।

धर्म प्रवर्त्तन हेतु हय हरिनाम। नाम ब्रह्म प्रचारिया जीवे कर त्राण।।99

धर्म प्रवर्त्तन के लिये तुम हरिनाम–दीक्षा ग्रहण करो और हरिनाम का प्रचार कर जीवों का उद्धार करो।

जैछे भगवानेरशक्ति अनन्त चिन्मय। तैछे नाम ब्रह्मेर शक्ति नित्य सिद्ध हय।।100

जैसे श्रीभगवान् की शक्ति अनन्त है, चिन्मय है,
उसी प्रकार नाम ब्रह्म की शक्ति भी नित्य सिद्ध है।

नामाभासे जीव मात्रेर त्रिताप ना रय। नाम उच्चारणे माया बन्धन खण्डय।।101

नामाभास से ही जीवमात्र का त्रिताप दूर हो जाता है।
नामोच्चारण से माया बन्धन टूट जाता है।

नामचिन्तामणि कृष्ण स्वयं भगवान्। ब्रह्माण्डे सद्वस्तु नाहि नामेर समान।।102

नाम चिन्तामणि स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण है। ब्रह्माण्ड में नाम समान
सद्वस्तु–सिद्धवस्तु और कोई नहीं है।

नामे निष्ठा हैले हय प्रेम उद्दीपन। अविश्रान्त नाम जपे पाय प्रेमधन।।103

नाम में निष्ठा होने पर प्रेम उदित हो उठता है।
अविश्रांत नाम जप से प्रेमधन की प्राप्ति होती है।

प्रेम कल्पवृक्षेर फल स्वयं भगवान। वृक्ष स्थायी हैले फल हय विद्यमान।।104

प्रेमरूपी कल्पवृक्ष का फल है स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण।
वृक्ष के स्थायी होने पर उसमें फल लगता है।

नामी हैते नाम बड़ कृष्ण उक्ति हय। सर्व अपराध नाम ग्रहणे खण्डय।।105

श्रीकृष्ण कहे हैं कि मुझसे से भी अधिक मेरे नाम की महिमा अधिक है।
नामग्रहण करने से निःसंशय समस्त अपराध विनष्ट हो जाते हैं।

अतएव नाम ब्रह्म ग्रहण उत्तम। नाम रुचि हैले हय अभीष्ट पूरण।।106

इसलिये नाम ब्रह्म का ग्रहण करना ही सर्वोत्तम है।
श्रीहरिनाम में रुचि होने पर अभीष्ट पूर्त्ति होती है।

श्रीवैष्णव–गुरु उपदेश नाहि जार। कोटि युगे कृष्ण सिद्धि नाहि हय तार।।107

श्रीवैष्णव–गुरु का उपदेश जिसने ग्रहण नहीं किया है,
कोटियुग में भी उसे श्रीकृष्ण प्राप्ति नहीं होती।

श्रीवैष्णवधर्म हय सर्व धर्म–सार। तार मध्ये निराश्रयीर महिमा अपार।।108

सर्व धर्मों का सार श्रीवैष्णवधर्म है, उसमें भी जो अन्य
निरपेक्ष साधु हैं उनकी महिमा अपार है।

भिक्षुक आश्रमे सर्वत्यागेर लक्षण। डोर कोपीनादि धरिवेक द्विजगण।।109

भिक्षुक–संन्यास आश्रम में सर्वत्याग का लक्षण प्रधान है। द्विजगण–ब्राह्मण को
चाहिये कि वह डोर–कौपीनादि पहने।

आने यदि हय ऐछे वैराग्येर उदय।ताहे यदि भाग्ये कृष्णभक्ति उपजय।।110

अन्य जाति के व्यक्ति में ऐसा सर्वत्याग लक्षणमय वैराग्य उत्पन्न हो और यदि
सौभाग्यवश उसमें कृष्णभक्ति का आविर्भाव हो–

तवे सेह करिवेक तदनुकरण। अयत्नता वेश मध्ये ताहार गणन।।111

तो उसे उसी भक्ति का अनुसरण करना चाहिये।
उसकी गिनती अयत्न से प्राप्त वेशाश्रम में होती है।

ए हेन विशुद्ध चिह्न जे जन धरिवे। राधाकृष्ण पद सेई अवश्य पाइवे।।112

ऐसा विशुद्ध लक्षण भक्तिपरक वेश जो धारण करता है,
उसे श्रीश्रीराधाकृष्ण अवश्य ही प्राप्त होते हैं।

एत कहि तार मस्तकादि मुण्डाइया। तिलक तुलसी माला दिला पराइया।।113

इतना कहकर प्रभु ने श्रीहरिदास का सिर मुण्डन करा कर तिलक–तुलसी
कण्ठी उसे धारण करा दी।

कटिते कौपीन डोर दिलेन बांधिया। हरिनाम दिला प्रभु शक्ति सन्चारिया।।114

कटि में कौपीन डोर बांध दी और उसे शक्ति संचार करते हुए श्रीहरिनाम मंत्र प्रदान कर दिया।

गंगार गहवरे पाञा नाम चिन्तामणि। प्रेमेते मातिला श्रीवैष्णव चूड़ामणि।।115

गंगा–आंचल में नाम चिन्तामणि को प्राप्त कर श्रीवैष्णव चूड़ामणि श्रीहरिदास प्रेमोन्मत्त हो उठे।

संज्ञा पाञा अष्ट अंगे दण्डवत् कैला। कृष्ण प्राप्ति–अस्तु बलि प्रभुवर दिला।।116

चेतना पाने पर श्रीहरिदासजी ने अद्वैत प्रभु को अष्टांग प्रणाम किया। प्रभु ने "तुम्हें कृष्ण की प्राप्ति हो"– ऐसा वरदान दिया।

प्रभु कहे तोर नाम ब्रह्म–हरिदास। हरिदास कहे मुञि हङ तव दास।।117

प्रभु ने कहा– तेरा नाम ब्रह्म हरिदास है।

श्रीहरिदास ने कहा– मैं तो आपका चरण दास हूँ।

तबे तिहों दैन्य वेश करिया धारण। तिनलक्ष नाम जपेर करिला नियम।।118

तब श्रीहरिदास ने दैन्यपूर्वक वैष्णव वेश धारणकर

तीनलाख नाम जप करने का नित्य नियम ले लिया।

नाम समापिया करे धर्मेर प्रचार। अलौकिक कार्य ताँर लोके चमत्कार।।119

वे नाम स्मरण करते हुए वैष्णव धर्म का प्रचार करने लगे। उनका कार्य अलौकिक था, जिसे देखकर लोग चमत्कृत हो उठते थे।

एक दिन शुन एक आश्चर्य कथन। ब्रह्म–हरिदास करे नाम संकीर्तन।।120

एकदिन की एक आश्चर्यमय बात सुनिये।

ब्रह्म–हरिदास नाम संकीर्तन कर रहे थे कि–

हेन काले आसि एक तर्क चूड़ामणि। कहे एइ बेटा बाउल हैल अनुमानि।।121

वहाँ एक तर्क चूड़ामणि आ पहुँचा और मन में कहने लगा कि– यह बेटा पागल हो गया है।

ताहा शुनि कहे सुपण्डित कृष्णदास। नाम प्रेमोन्मत्त इहाँर नाहि दुखाभास।।122

उसकी यह बात सुनकर पण्डित कृष्णदास ने जो पास बैठे थे, कहा– यह नाम प्रेम में उन्मत्त हैं, इन्हें सुख–दुख की प्रतीति मात्र भी नहीं है।

सच्चिन्मयी सरस्वती इहाँर जिव्हाय। अविश्राम हरिनाम स्मरण कराय।।123

सत्‌चिन्मय सरस्वती इनकी जिव्हा पर निरन्तर

इन्हें श्रीहरिनाम का स्मरण कराती रहती है।

इंहार ह्रदये सर्वशास्त्र अधिष्ठान। गुरु आज्ञा क्रमे ब्रह्म–हरिदास नाम।।124

इनके ह्रदय में सर्वशास्त्र विराजमान है।

गुरु आज्ञा से इनको ब्रह्म–हरिदास नाम प्राप्त हुआ है।

हेनकाले हरिदासेर नाम पूर्ण हैल। सगर्वेते चूड़ामणि तारे प्रश्न कैल।।125

श्रीहरिदास जी की नाम संख्या पूर्ण हो गयी।

तब तक चूड़ामणि ने गर्वपूर्वक इनसे कुछ प्रश्न पूछे।

ब्रह्मेर साकार आर निराकार कय।इत्थे सत्य अनादि कारण केवा हय।।126

"ब्रह्म साकार है या निराकार? इनमें वस्तुतः में अनादि सर्वकारण कौन है?

सृष्टि काहे करे सेई ब्रह्म परात्पर। सेई सृष्टि हय आवार बहुत प्रकार।।127

वह ब्रह्म परात्पर सृष्टि की कामना क्यों करता है? वह सृष्टि भी अनेक प्रकार की है।

सुख दुख तारतम्य जीवे देखि काहे। ईश्वरेर कर्तृत्व हेतु दोष व्यापे ताहे।।128

जीवों में दुखः–सुख का तारतम्य क्यों दीखता है? जब सब जीवों के कारण ईश्वर हैं तो जीवों में दुख–सुख का तारतम्य होने से ईश्वर में विषमता–दोष आता है।

शुनि हरिदास दैन्य कहे मिष्टवाणी। कहिवारे चाङ किछु मुञि क्षुद्र प्राणी।।129

यह सुनकर दैन्यपूर्वक श्रीहरिदास ने मधुर वाणी में कहा–

मैं क्षुद्र प्राणी कुछ उत्तर देना चाहता हूँ।

कृष्णदास पण्डित जीउ रहु मध्यवर्ती। दया करि शुनह भूसुर चक्रवर्ती।।130

यह कृष्णदास पण्डित आपके और मेरे बीच मध्यस्थ हैं।

हे ब्राह्मण– चूड़ामणि! आप दया कर सुनिये–

सच्चित आनन्द ब्रह्म अनादि ईश्वर। नित्यसिद्ध साकार तिहों शास्त्रे परचार।।131

श्रीभगवान् सच्चिदानन्द घन अनादि ईश्वर और ब्रह्म हैं।

शास्त्र इन्हें नित्यसिद्ध साकार निरूपण करते हैं।

तान अंगकान्ति सर्वव्यापी निराकार। जैछे एक सूर्य तेज व्यापी चराचर।।132

उनकी अंग कान्ति वह सर्वव्यापी ब्रह्म और निराकार है।

जैसे एक ही सूर्य का तेज चराचर में व्याप्त है।

पर ब्रह्मेर नित्यरूप ज्ञानी नाहि जाने। तेञि तदंग कान्तिरे ब्रह्म बलि माने।।133

परब्रह्म के नित्य साकार–सविशेष रूप को ज्ञानीजन नहीं जानते वे उनकी अंगकान्ति को ही ब्रह्म मानते।

भाग्ये भक्तगणे देखे नित्यसिद्धमूर्त्ति। शुद्ध भक्तिवेद्यसेरूप आने नाहि स्फूर्त्ति।।134

भाग्यवश भक्तगण ही परब्रह्म की नित्य सिद्ध मूर्ति का दर्शन करते हैं।

जैछे सर्वशक्तिमान ब्रह्म नित्य हय।सृष्टिर नित्यत्व तैछे सर्वशास्त्रे कय।।135

वे रूप एकमात्र शुद्ध भक्ति से ही अनुभूत होती है।

ज्ञान–योगादि से कभी भी उसकी स्फूर्ति नहीं होती।

प्रकटाप्रकट तार कालेते घटय। ईश्वरेर नियम इहा नित्यसिद्ध हय।।136

जैसे सर्वशक्तिमान ब्रह्म नित्यवस्तु है, उसी प्रकार सृष्टि भी नित्य है– यह बात सब शास्त्र प्रतिपादन करते हैं।

महाप्रलयान्ते जैसे सृष्टिर पतन। संक्षेपे ताहार सूत्र करि विज्ञापन।।137

महाप्रलय में जैसे सर्वसृष्टि का अप्रकटन होता है,

उसके विषय में भी सूक्ष्मरूप से कहता हूँ।

नित्यानन्द आस्वादन करे श्रीचैतन्य। सर्व कारणेर कारण सेइ अग्रगण।।138

श्रीचैतन्य–श्रीकृष्ण नित्य आनन्द का आस्वादन करते हैं।

वही सर्वकारण कारण एवं आदि हैं।

तान आलोचना मात्र माया पाञा ज्ञान। सृष्टि करे बहुविध वेदेते प्रमाण।।139

उनकी इच्छाशक्ति को पाकर माया शक्ति प्राप्त कर अनेक प्रकार की सृष्टि रचना करती है– इस सिद्धान्त का प्रमाण वेद है।

स्वतन्त्र अविद्या करे स्वेच्छायत कार्य।सेई हेतु निर्विकार ब्रह्म वेदे धार्य।।140

अविद्या स्वतन्त्र होकर अपनी इच्छा से कार्य करती है,

इसलिये वेदों में ब्रह्म को निर्विकार कहा है।

मायावृत जीव आत्मकर्म अनुसारे। नाना योनि भ्रमि सुखदुख भोग करे।।141

माया से आवृत्त होकर अपने कृष्णदास स्वरूप को

भूलकर जीव अपने संस्कारवश कार्य करता है। उसके फलस्वरूप नाना योनियों में भ्रमण करता हुआ दुख–सुख को भोगता रहता है।

इत्थे परब्रह्म ना हय विषमता दोष। विचारिया देख सत्य ना करिओ रोष।।142

इससे परब्रह्म में विषमता दोष नहीं आता। हे विप्र!

आप सिद्धान्त पर विचार कीजिये, रोष मत कीजिये।

ए सब सिद्धान्त शुनि द्विज चमत्कार। श्रीअद्वैत आइला ताँहा कोटिसूर्याकार।।143

इन सिद्धान्तों को सुनकर तर्क चूड़ामणि चमत्कृत हो उठे। इतने में वहाँ श्रीअद्वैत आचार्य आ गये। कोटि सूर्यों के समान तेज था उनका।

तेजः पुन्ज कलेवर देखि द्विजवर। प्रभु के प्रणाम कैला करि जोड़ कर।।144

उस महा तेजपुन्ज श्रीमूर्ति को दर्शनकर चूड़ामणि ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

प्रभु कहे काहे दैन्य कर महाशय। द्विज कहे प्रभु तव पाइनु परिचय।।145

प्रभु ने कहा– महाशय! आप इतनी दीनता क्यों कर रहे हैं?
द्विज ने कहा– प्रभो! मैंने आज ही आपका परिचय पाया है।

प्रभु कहे मुञि दीन नाहि किछु शक्ति। द्विज कहे तुहुँ पापहन्ता विश्वपति।।146

प्रभु ने कहा– मैं तो दीन हूँ, कुछ शक्ति नहीं है मुझमें। द्विज ने कहा–हे प्रभो! आप ही विश्वपति हैं, और केवल दर्शन मात्र से सबके पाप हरने वाले हैं।

दयामृत सिन्धु प्रभुर दया उपजिल। शक्ति सन्चारिया तारे कृष्ण मन्त्र दिल।।147

दयामृतसिन्धु श्रीअद्वैतचन्द्र में दया उत्पन्न हो आयी और उस द्विजवर में शक्ति संचार कर उसे कृष्णमन्त्र की दीक्षा देकर उसे धन्य किया।

अष्ट अंगे प्रणमिला श्रीयदुनन्दन। प्रभु कहे लभ्य हञो कृष्ण प्रेमधन।।148

वह यदुनन्दन द्विज था उन्होंने प्रभु को अष्टांग प्रणाम किया।
प्रभु ने भी उन्हें कृष्ण प्रेमधन का वरदान दिया।

श्रीयदुनन्दनाचार्य प्रभुर एक शाखा। तर्कचूड़ामणि आख्या सर्वस्थाने व्याख्या।।149

वे श्रीयदुनन्दनाचार्य प्रभु श्रीअद्वैत की ही एक शाखा है और
तर्क चूड़ामणि नाम से वह सर्वत्र प्रसिद्ध हैं।

संगीते गन्धर्व सम जार अधिकार। प्रभुर कृपाय पाइला भक्ति तत्वसार।।150

वे संगीत विद्या में गन्धर्वसम अधिकार रखते थे और अद्वैतचन्द्र से भक्ति तत्वसार को प्राप्त कर लिया।

ब्रह्महरिदास स्वामीर अलौकिक शक्ति। हरिनाम जपि पाइला शुद्धप्रेम भक्ति।।151

ब्रह्म–हरिदास की अलौकिक शक्ति है उन्होंने हरिनाम जपकर शुद्ध प्रेम भक्ति की प्राप्ति की।

प्रतिदिन तिन लक्ष हरिनाम करे। मनने जिह्वाय जपे आर उच्चस्वरे।।152

प्रतिदिन श्रीहरिदास तीन लाख नाम ग्रहण करते। मन से, जिह्वा से तथा उच्चस्वर से।

तबे श्रीमहाप्रसाद करिला ग्रहण। प्रभु मुखे कृष्णतत्त्व करे आस्वादन।।153

बाद में ही वे महाप्रसाद ग्रहण करते थे और अद्वैत प्रभु
के श्रीमुख से कृष्णतत्व का आस्वादन करते थे।

हरिदासेर सदाचारे सदा स्मृति जार। अवश्य कृष्णभजने मति हय तार।।154

जिस व्यक्ति को श्रीहरिदास के आचरण की स्मृति बनी
रहेगी। उनकी ही कृपा से उसकी अवश्य श्रीकृष्ण भजन में मति रहेगी।

ब्रह्म हरिदास ठाकुर दयार भाण्डार। ताँहार चरणे मोर कोटि नमस्कार।।155

ये ब्रह्म हरिदास ठाकुर दया के भाण्डार हैं।
इनके श्रीचरणों में मेरा कोटि नमस्कार है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।156

श्रीचैतन्य तथा श्रीअद्वैत के चरणों की आशा करते हुए
ईशाननागर श्रीअद्वैतप्रकाश का वर्णन करते हैं।

अष्टमोऽध्यायः

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्यदेव की जय हो। श्रीसीतानाथ की जय हो।
श्रीनित्यानन्दप्रभु की समस्तभक्तों के सहित जय हो।

एक दिन श्रीअद्वैत भक्तवृन्द लञा। गंगास्नान करि करे नियमित क्रिया।।02

एकदिन श्रीअद्वैताचार्य ने भक्तों को साथ लेकर
गंगा स्नान किया और वहाँ नित्य नियम किया।

हेन काले नौका योगे नृसिंह भादुड़ी। सेइ घाट आइला दुइ कन्या संगे करि।।03

उसी समय श्रीनृसिंह भादुड़ी नौका से वहाँ आ पहुँचे।
वहां उनके साथ उनकी दो कन्याएं भी थीं।

नौका मध्ये छिला सीतासती रूपवती। प्रभुर सौन्दर्य देखि हञा इष्टमति।।04

नौका में श्रीमती सीता रूपवती थीं। श्रीअद्वैत का सौन्दर्य देखकर उनमें उसे
अपने स्वामी की बुद्धि उदित हो उठी।

मने भावे ऐछे रूप जीवे ना हय स्फूर्त्ति।जाम्बुनद स्वर्णकांति जिनिया श्रीमूर्त्ति।।05

मन में सोचने लगी, ऐसा रूप प्राकृत जीव में तो स्फुरित नहीं होता। जाम्बुनद
के स्वर्ण की कान्ति को इनकी श्रीमूर्त्ति पराजित कर रही है।

आजानुलम्बित बाहुर अग्र पद्माकार। अंगुलि विराजे चम्पक कलिका आकार।।06

आजानु पर्यन्त इनकी भुजाएं और हाथ कमल के समान हैं।
अंगुलियाँ चम्पक कलि के आकार की हैं।

सुकमल सम श्रीचरण सुकोमल। देखि मोर फुल्ल हैल हृदय कमल।।07

श्रीचरण इनके सुन्दर कमल के समान अति कोमल हैं।

इन्हें देखकर मेरा हृदय प्रफुल्लित हो उठा है।

एइ महापुरुषे संपिनु देह प्राण। इहारे ना पाङ यदि छाड़िमु पराण।।08

इस महापुरुष को मैंने देह–प्राण समर्पण कर दिया,

यदि इन्हें मैं प्राप्त न कर सकी तो प्राण छोड़ दूँगी।

एत भावि निक्षेपिया नयन चकोर। पान कैला प्रभुर श्रीमुखचन्द्राकार।।09

यह सोचकर नेत्र चकोरों को निक्षेपकर प्रभु के

श्रीमुखचन्द्र की रूप माधुरी का उसने पान किया।

सीतार प्रकाशरूपा श्रीश्रीठाकुराणी।रूपे लक्ष्मीसमा साध्वी सीतार भगिनी।।10

श्रीसीता की प्रकाशरूपा श्रीठाकुराणी भी साथ भी, जिसका रूप लक्ष्मी के समान था। वह साध्वी श्रीसीता की बहन थी।

प्रभुररूप देखि तिंहो आनन्द अन्तरे। कहे दीदी रूपेर हार देखगंगा तीरे।।11

श्रीअद्वैत प्रभु के रूप को देखकर उसके मन में भी आनन्द हुआ। वह कहने लगी– दीदी! गंगा के किनारे पर अपार रूप–सौन्दर्य की हाट तो देखो।

जैछे कोटि पूर्णचन्द्र धरि स्वर्णवर्ण। एकत्रे भूतले आसि हैला अवतीर्ण।।12

जैसे कोटि पूर्णचन्द्र स्वर्ण वर्ण धारण कर

एक साथ पृथ्वी पर आकर अवतीर्ण हो गये हों।

अंगेर सद्गन्ध किवा अलौकिक हय। कोटि प्रफुल्लित पद्मगन्धे कैला जय।।13

देखो तो, अंगों की कैसी अलौकिक सौरभ आ रही है। कोटि प्रफुल्लित कमलों की सुगंध को भी वह पराजित कर रही है।

अतुल्य उज्ज्वल सुश्रीवदन मण्डल। दृष्टिमात्र मन प्राण करये शीतल।।14

श्रीमुख अतुलनीय उज्जवलता धारण कर रहा है।

देखने मात्र से ही मन–प्राणों को शीतल कर रहा है।

ए हेन पुरुष जेइ नारीर हय पति। धन्य तार नारीजन्म सेइ भाग्यवती।।15

ऐसा महापुरुष जिस नारी का स्वामी होगा,

उस नारी का जन्म धन्य है और वही भाग्यवती है।

तवे श्रीमान नृसिंह भादुड़ी द्विजमणि। प्रभुरे देखिया आपनारे धन्य मानि।।16

तब श्रीनृसिंह भादुड़ी द्विजमणि श्रीअद्वैत प्रभु के दर्शन कर

अपने को धन्य मानने लगे।

यथाविधि कैला ताँरे दैन्य सम्भाषण। द्विज देखि प्रभु कहे नमो नारायण।।17

यथाविधि उसने दीनतापूर्वक प्रभु से सम्भाषण किया।

श्रीनृसिंह को देखकर प्रभु ने भी नमो नारायण कहा।

मृदुभाषे श्रीअद्वैत पुछे परिचय। भादुड़ी वरेण्य कहे करिया विनय।।18

श्रीअद्वैत प्रभु ने मधुर वचनों से उनका परिचय पूछा। श्रीभादुड़ी विनयपूर्वक कहने लगे।

नारायणपुर ग्रामे मोहर बसति। भादुड़ी उपाधि मोर श्रीनृसिंह ख्याति।।19

मैं नारायणपुर में रहता हूँ। मेरा नाम श्रीनृसिंह प्रसिद्ध है–
और भादुड़ी मेरी उपाधि है।

लोकमुखे शुनि तुया अलौकिक गुणे। हेथा आइनु तव सिद्धमूर्त्ति दरशने।।20

लोगों के मुख से आपके अलौकिक गुणों को सुनकर
आपकी श्रीसिद्ध मूर्ति के दर्शन करने यहाँ आया हूँ।

बहु दिनेर साध छिल तोहारे देखिते। आजि वान्छा पूर्ण हैल अनेक भाग्येते।।21

अनेक दिन से आपके दर्शनों की अभिलाषा थी।
अनेक भाग्यों से वह मेरी वान्छापूर्ण हुई है।

प्रभु कहे मुञि दीन कि मोर शकति। धन्य कर मोर गृहे करिया अतिथि।।22

श्रीअद्वैत प्रभु बोले– मैं तो दीन हूँ, मुझमें कौन सी शक्ति है?
आप मेरे घर चलो और आतिथ्य स्वीकार कर मुझे धन्य कीजिये।

श्रीनृसिंहकहे तुहुँ साक्षात् सदाशिव। तुया आज्ञा लंघिते पारे कोन जीव।।23

श्रीनृसिंह ने कहा– 'आप तो साक्षात् सदाशिव हैं'
आपकी आज्ञा का कौन उल्लंघन कर सकता है?

एत कहि भादुड़ी दुइ कन्या संगे करि।आनन्दित मने गेला अद्वैतेर बाड़ी।।24

इतना कहकर भादुड़ी जी अपनी दोनों कन्याओं को
साथ लेकर आनन्दपूर्वक श्रीअद्वैत के घर चले आये।

प्रभु ताने यथाविधि सत्कार करिला।भाग्ये प्रभुर चतुर्भुज भादुड़ी देखिला।।25

श्रीप्रभु ने उनका यथोचत सत्कार किया। उस समय सुभाग्यवश भादुड़ी ने श्रीअद्वैत प्रभु को चतुर्भुज रूप में देखा।

मने भावे आजि मोर जनम सफल। आजि मोर उपजिल कोटि पुण्येर फल।।26

मन में सोचने लगा, आज मेरा जन्म सफल हुआ।
मेरे कोटि पुण्यों का फल आज उदित हुआ है।

जा शुनियाछिनु ताहा देखिनु प्रत्यक्ष। कन्यार उपयुक्तपात्र एइ हय लक्ष।।27

जो कुछ मैंने सुना था, उसे आज प्रत्यक्ष देख रहा हूँ।

ऐसा दीखता है कन्या के उपयुक्त यही वर है।

जैछे दुइ जतू ज्वाले हय एक काय। तैछे मिथुनेर मने हैल प्रेमोदय।।28

जैसे दो बत्तियां जलकर एक–शरीर हो जाती हैं,

वैसे दोनों के मन में प्रेमोदय हो उठा।

संपूर्ण सुसिद्ध हय मन अभिलाष। यदि हरि करे मोरे दया परकाश।।29

मेरे मन की सब अभिलाषापूर्ण हो जाये। यदि श्रीकृष्ण मुझ पर दया करें।

तबे सर्व अन्तर्यामी श्रीअद्वैत चन्द्र। दिव्यशक्ति द्वारे स्वयं हइला राजेन्द्र।।30

तब तो सर्वान्तर्यामी श्रीअद्वैत चन्द्र दिव्य शक्ति के द्वारा स्वयं राजा बन गये।

अट्टालिकामय हैल अद्वैतेर बाड़ी। नाना पुण्य सुशोभिता जैछे इन्द्रपुरी।।31

उनका घर एक अट्टालिका–महल के समान हो गया, अनेक प्रकार के पुष्पों से सुशोभित होकर इन्द्रपुरी की भांति सज गया।

शान्तिपुर धाम दिव्य सद्गन्धे मोहिला। रत्नसिंहासने प्रभु अद्वैत वसिला।।32

सारा शांतिपुर धाम दिव्य सुगन्धि से महक उठा।

रत्नसिंहासन पर श्रीअद्वैत विराजमान हो गये।

जाम्बुनद हेन निन्दि प्रभुर कलेवर। बहु चन्द्र कान्ति जिनि रूप मनोहर।।33

जाम्बुनद सोने के समान श्रीअद्वैत के अंगों की कान्ति चमक उठी। कोटि चन्द्रों को पराजित करने वाला आपका रूप सबके मन को मोहित करने लगे।

शिरे मणिकमुकुट करेते केयूर। कर्णेते कुण्डल शोभे श्रीपदे नुपूर।।34

सिर पर मणि मुकुट, बाहों में बाजूबन्द तथा कानों में

कुण्डल और चरणों में नूपुर शोभा दे रहे थे।

शुक्ल पट्टाम्बर दुई परिधानोत्तरी। अंगे विलेपन अगर चन्दन कस्तूरी।।35

श्रीअद्वैत प्रभु ने नीचे–ऊपर दो रेशमी वस्त्र धारण कर रखे थे। उनके श्रीअंगों पर अगर चन्दन कस्तूरी का लेप सुशोभित हो रहा था।

शुक्ल माल्ये कण्ठ वक्षः अपूर्व शोभिला। चतुर्दिगे दास दासीगण दाण्डाइला।।36

शुक्ल माला–हारों से कण्ठ एवं वक्षःस्थल अपूर्व सुशोभित था और उनके चारों ओर दास–दासीगण सेवा के लिये उपस्थित थे।

गात्र मित्रगण प्रभुर निकटे वसिला। श्रीयदुनन्दनाचार्य मुच्छद्दि हइला।।37

जाति के लोग एवं मित्र प्रभु के पास बैठे हुए थे।

श्रीयदुनन्दनाचार्य सेठ जी बन रहे थे।

मुनसि हइला भेल पण्डित कृष्णदास। मन्त्री पदे रहिला श्रीब्रह्म हरिदास।।38

पंडित कृष्णदास मुन्शी का कार्य सम्भाल रहे थे।
श्रीब्रह्म हरिदास जी मन्त्री पर नियुक्त थे।

मध्यस्थ घटक श्रीमान् श्यामदासाचार्य। जाहार कौशले एइ विवाह हैल धार्य।।39

श्रीमान श्यामदासाचार्य बीच के संयोजक थे
जिनके कौशल से यह विवाह निर्धारित हुआ था।

सभा देखि श्रीनृसिंह विस्मय मानिला। हेनकाले श्रीवास पण्डित ताँहा आइला।।40

इस सभा को देखकर श्रीनृसिंह विस्मित हो उठे। इतने में श्रीवास पण्डित वहां आ पहुँचे।

नारदावतार गौर लीलार सहाय। अन्तर्यामी शक्ति जाँर कृष्णेर कृपाय।।41

श्रीवास पण्डित श्रीनारद के अवतार हैं और गौरलीलाके सहायक हैं। उनमें कृष्णकृपा से अन्तर्यामी होने की शक्ति विद्यमान है।

द्विज शुद्ध भक्तिदाता सदा कृष्णावेश। नवद्वीपे आविर्भाव दयालु विशेष।।42

श्रीवास पण्डित शुद्ध भक्ति के दाता श्रीनारदजी के अवतार हैं एवं सदा श्रीकृष्ण प्रेम में आविष्ट रहते हैं। परम दयालु हैं, वे नवद्वीप में अवतीर्ण हुए थे।

सदा हरि विनु मुखे नाञि अन्य बोल। प्रभु ताने देख झाट उठि दिला कोल।।43

ये सदा 'हरि–हरि' बोलते रहते हैं। इसके बिना और कुछ नहीं बोलते हैं।
श्रीअद्वैत इनको आया देखकर झट उठ खड़े हुए और इन्हें आलिंगन किया।

श्रीवास प्रभुरे करि युक्त सम्भाषण। सभाते वसिया कहे शुन सर्वजन।।44

श्रीवास ने प्रभु के साथ यथोचित कथनोपकथन किया।
श्रीवास सभा में बैठकर बोले– आपसब मेरी बात सुनिये।

एइ श्रीअद्वैत हरि अभिन्नांग हय। जीवनिस्तारिते हैला धराते उदय।।45

ये श्रीअद्वैत प्रभु श्रीहरि के अभिन्न रूप हैं। जीवों का निस्तार करने के लिय पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं।

इहाँर महिमा मुञि क्षुद्र किवा जानि। किन्चित् महत्व जाने स्वयं पद्मयोनि।।46

मैं क्षुद्र जीव इनकी महिमा को क्या जानूं?
इनके किन्चित महत्व को स्वयं ब्रह्मा ही जानते हैं।

एइ जे श्रीनृसिंह भादुड़ी महोदय। क्षीरोद हिमालय मिलि हइला उदय।।47

ये जो श्रीनृसिंह भादुड़ी महोदय हैं, ये क्षीरसागर तथा
हिमालय पर्वत का संयुक्त अवतार हैं।

साधु सत्यवादी इहुँ सात्त्विकाग्रगण्य। धर्मशास्त्रे विशारद कुलीनेर मान्य।।48

ये सत्यवादी और सात्त्विक–साधु–पुरुषों में अग्रगण्य धर्मशास्त्र विशारद, कुलीन पुरुषों के माननीय हैं।

सीतानामे कन्या इहाँर पौर्णमासी सेइ। व्रजे कृष्णलीला घटाय योगमाया जेइ।।49

श्रीनृसिंह भादुड़ी की जो यह सीता नाम की कन्या है, यह पौर्णमासी है, जो ब्रज में श्रीकृष्णलीला को सम्पन्न करती है, योगमाया है यह।

अयोनिसम्भवा सीता नाहि जाने लोके।नृसिंह पाइला बहु पुण्यफल पाके।।50

यह श्रीसीता अयोनि–सम्भवा अर्थात् प्राकृत जन्मरहित है। इस बात को लोग नहीं जानते हैं। श्रीनृसिंह ने इसे बड़े पुण्य फल से प्राप्त किया है।

संक्षेपेते कहि सीतादेवीर प्रकाश। जाहार श्रवणे सर्व पाप हय नाश।।51

मैं सीतादेवी के प्रकट होने का चरित्र संक्षेप से कहता हूँ, जिसके श्रवण करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और श्रीकृष्ण प्रेम की प्राप्ति होती है।

नारायणपुरे वास नृसिंह भादुड़ी। कुलीन ब्राह्मण सदा पर उपकारी।।52

श्रीनृसिंह भादुड़ी नारायणपुर में वास करते हैं।
ये कुलीन ब्राह्मण तथा सदा परोपकार करने वाले हैं।

प्रत्यह करये नारायण देवार्चन। स्वयं करे श्रीतुलसी कुसुम चयन।।53

ये प्रतिदिन श्रीनारायण देव का अर्चन करते हैं और स्वयं
ही अपने हाथ से तुलसी–पुष्प चयन करते है।

सेई ग्रामेर सन्निधाने एक देवखाते। बहुतर पद्मपुष्प विकशिल तथे।।54

उस ग्राम के पास एक बावड़ी है, जिसमें अनेक कमलपुष्प विकसित होते हैं।

सद्गन्धे आमोद हैल नगराभ्यन्तरे। घ्राण पाञा श्रीनृसिंह आनन्द अन्तरे।।55

उनकी सौगन्ध से सारा नगर भीतर से आनन्दित रहता है।
उसका सौरभ पाकर श्रीनृसिंह मन में अति आनन्दित होते हैं।

भावे एइ सुरभि वायु बिल हइते आइला। अनुमानि बहु पद्म बिलेते फुटिला।।56

श्रीनृसिंह ने जान लिया कि यह सौरभ इस बावड़ी से आ रहा है और इसी में ही अनेक कमल विकसित हो रहे हैं– ऐसा उन्होंने अनुमान किया।

पद्मपुष्पे जेइ करे नारायणार्चन। देहान्ते सेइ करये श्रीवैकुण्ठे गमन।।57

कमल पुष्पों से श्रीनारायण की जो पूजा करता है,
देहावसान के बाद वह श्रीवैकुण्ठ जाता है।

तबे शुद्धाचारी श्रीनृसिंह जाञा विले।वाछिया वाछिया बहु पद्मपुष्प होले।।58

तब यह सोचकर शुद्धाचारी श्रीनृसिंह ने उस बावड़ी में प्रवेश किया

और धीरे–धीरे देखकर अनेक कमलपुष्प चयन किये।

तुलितेइ देखे एक शतदल पद्मे। पद्ममध्ये कन्या एक पद्मतार सद्म।।59

उन पुष्पों में इन्होंने एक शतदल कमल देखा और–उसमें एक कन्या को देखा।

अंगुष्ठ प्रमाण कन्या रूपे सौदामिनी। राधामाधवेर नित्यलीला सहायिनी।।60

उस कन्या का परिमाण अंगूठे के बराबर था, रूप विद्युत् के समाना था
जो श्रीराधा–माधव की नित्य–लीला की सहायिका हैं।

कन्या देखि भावे इंहो बुझि श्रीकमला। अंगकांति सूर्य प्रभा हैते समुज्ज्वला।।61

कन्या को देखकर इन्होंने अनुमान किया कि वह तो श्रीकमला–लक्ष्मी है।
इसकी अंगकान्ति सूर्य से भी अति उज्जवल है।

चतुर्भुजा पद्मगण श्रीअंगे शोमय। चन्द्रगण हइयाछे नखेते उदय।।62

चार भुजाऐं हैं इसकी और अंगों में कमल–भूषण शोभित हो रहे हैं।
नखों में तो इसके चन्द्रगण उदित हो रहे हैं।

ए हेन अपूर्व रूप प्रभु देखि ताइ। पद्म सह कन्या रत्न लञा ग्रहे जाइ।।63

ऐसा अपूर्व रूप तो मैंने कभी नहीं देखा। इस कन्यारत्न को
पद्म के साथ मैं घर ले चलता हूँ।

तबे सेइ महत् पद्म करि उत्तोलन। क्रोड़े करि वेगे घरे करिला गमन।।64

तब इन्होंने उस विशाल कमल को तोड़ लिया और क्रोड़
में लेकर शीघ्र अपने घर चले आये।

ईश्वरेच्छाय सेइ दिन नृसिंह महिला। श्रीरूपा श्रीनाम्नि एक कन्या प्रसविला।।65

ईश्वर–इच्छा से उसी दिन श्रीनृसिंह की स्त्री ने श्रीरूपा
नाम की एक कन्या को जन्म दिया था।

सूति गृहे भार्येर भादुड़ी हृष्ट मने। पद्म मध्ये कन्या देखाइला संगोपने।।66

ये सूतिका घर में स्त्री के पास आनन्दपूर्वक उस कन्या को ले गये और
छिपाकर कमल में उस कन्या को उसे दिखाया।

नृसिंह महिलार नाम नारसिंही हय। साध्वी पुण्यवती लक्ष्मी मेनका निश्चय।।67

श्रीनृसिंह की स्त्री का नाम नारसिंही है जो पुण्यवती साध्वी है, लक्ष्मी–मेनका के
समान उनके गुण है।

अपरूप कन्या देखि विस्मय मानिला।नृसिंहे मधुर वाक्ये कहिते लागिला।।68

उस अनुपम कन्या को देखकर वह विस्मित हो उठी और
पति को इसप्रकार मधुर वचन कहने लगी–

अहे प्रभु एइ कन्या अंगुष्ठ प्रमाण। रूपे करियाछे आलो अरुण समान।।69

हे पतिदेव! यह कन्या है तो अंगुष्ठ के बराबर, किन्तु अपनी रूप कान्ति से इसने सूर्य के समान उजाला करके हमारे घर को आलोकित कर दिया है।

माया करि आसियाछे बुझि महामाया। कन्याभावे रहे यदि तबे जानिदया।।70

लगता है महामाया इस बहाने से यहाँ अवतीर्ण हुई हैं।
यदि यह कन्याभाव से हमारे पास रहे तो इसकी बड़ी दया समझो।

परस्पर दम्पति एइ रूपे आलापिते। देवी जातशिशु समा हैला आचम्बिते।।71

इसप्रकार दम्पति बातचीत कर ही रहे थे कि अचानक
वह कन्या नवजात कन्या सम हो गई।

लोके सुविख्यात हइल यमज दुहिता। देखिते आइल कत ग्रामेर वनिता।।72

लोगों में ऐसी प्रसिद्धि हुई कि श्रीनृसिंह की नारी ने एक साथ दो यमज कन्याओं को जन्म दिया है। ग्राम की सब रमणियां उनको देखने आईं।

सभे कहे दुई कन्या लक्ष्मीर समान। सीता बड़ श्रीकनिष्ठ कैल अनुमान।।73

सब कहने लगीं दोनों कन्याएं ही लक्ष्मी के समान हैं। सीता तो बड़ी हैं और श्रीछोटी हैं– ऐसा वे अनुमान करने लगीं।

श्रीसीतार लीला जत के वर्णिते पारे। पन्चवर्षे पदव्रजे गेला गंगा पारे।।74

श्रीसीता की अनन्त लीलाएं हैं उसको कौन वर्णन कर सकता है? वे पांच वर्ष की ही थी कि यह पांव से चलकर गंगा पार चली गई।

संन्यासी रे शिखाइला विविध प्रकारे। सेइ कथा कहिमू संक्षेपे सूत्राकारे।।75

इसने संन्यासी को अनेक प्रकार की शिक्षा दी।
उस कथा को अति संक्षेप रूप से सूत्राकार में मैं कहूँगा।

एकदिन तेजस्वी संन्यासी एक आईला। नृसिंह भादुड़ी घरे अतिथि हइला।।76

एकदिन एक तेजस्वी संन्यासी श्रीनृसिंह–
भादुड़ी जी के घर अतिथि बनकर आया।

बहुतरलोक आइला संन्यासी देखिते। श्रीसह श्रीसीता आइला संन्यासीशोधिते।।77

अनेक लोग उस संन्यासी को देखने आये।
श्री के साथ सीता भी उन संन्यासी पर कृपा करने आई।

सभे भक्तिभावे न्यासीरे प्रणमिल। सीता श्रीरे देखि संन्यासीरे भ्रम हैल।।78

सबने उस संन्यासी को श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया। श्रीसीता और श्री को देखते ही संन्यासी को भ्रम पैदा हुआ।

अणिमादि सिद्धितार हैल अप्रकाश। दोंहे स्तव करे तेंहो दन्ते करि घास।।79

उस संन्यासी में जो अणिमादि सिद्धियाँ थीं– जिनसे वह महा तेजस्वी दीख रहा था, वे सब अन्तर्हित हो गयी। वह दांतों में तृण रखकर इन दोनों कन्याओं की स्तुति करने लगा।

सीताकहे मो दोहारे काहे स्तुति कर। तुमिह तेजस्वी न्यासी बहु शक्तिधर।।80

सीता ने कहा– आप हम दोनों की स्तुति क्यों कर रहे हैं?
आप भी तो शक्तिधारी तेजस्वी संन्यासी हैं।

न्यासी कहे मा तोर परमा लक्ष्मीरूपा। कैछे मुक्ति पाय कह विष्णु अनुरूपा।।81

संन्यासी ने कहा– मां! आप दोनों परम लक्ष्मीस्वरूपा हैं।
आप कहो मुझे विष्णु की सारूप्य मुक्ति कैसे प्राप्त होगी?

तत्त्व उघाड़िया मोर भ्रांति कर दूर। जगते महिमा दोंहार रहिवे प्रचुर।।82

इस तत्व को प्रकाशित कर आप मेरे भ्रम को दूर कीजिये।
इससे आपकी प्रचुर महिमा जगत् में विद्यमान रहेगी।

साक्षात् दया रूपा सीता कहे हास्यकरि। भक्तिदेवीर दासी मुक्ति, भक्ति सर्वेश्वरी।।83

साक्षात् दया स्वरूपिणी सीता ने मुस्करा कर कहा–
भक्तिदेवी की दासी है मुक्ति। भक्ति सर्वेश्वरी है।

पन्चविधा मुक्ति यदि पाय कोन जन। तत्रापि ना पाय नित्यहरि चरण।।84

कोई व्यक्ति पाँच प्रकार की मुक्ति तो प्राप्त कर सकता है किन्तु नित्य श्रीहरिचरण सेवा का अधिकार कोई सहज में प्राप्त नहीं कर सकता।

मुक्तिर स्वभाव मुक्त्ये दिया अभिमान। संसारे पाठाय पुन दिया तुच्छ ज्ञान।।85

मुक्ति का स्वभाव है कि मुक्त पुरुष में अहं ब्रह्मास्मि अभिमान उत्पन्न कर देती है और तुच्छ ज्ञान देकर उस मुक्त पुरुष को भी पुनः संसार में भेज देती है।

भक्तिदेवीर अलौकिक महिमा अपार। जारे दया करे तार जन्मनाहि आर।।86

भक्ति देवी की अलौकिक अपार महिमा है। जिस पर वह दया करती है, उसका संसारमें जन्म नहीं होता।

भक्तिद्वारे शुद्ध भक्त पाञा प्रेमानन्द। कृष्णपद पाय तुच्छ हय ब्रह्मानन्द।।87

शुद्ध भक्त भक्ति की कृपा से प्रेमानन्द प्राप्तकर
श्रीकृष्णचरण कमल प्राप्त करते हैं और उन्हें ब्रह्मानन्द तुच्छ लगने लगता है।

तबे श्रीहासिया कहे शुन न्यासीवर। विष्णु सारूप्यमुक्ति अति घृणा कर।।88

तब हंसकर श्रीदेवी ने कहा– हे संन्यासी जी! सुनिये,

विष्णु की सारूप्य मुक्ति तो अति निन्दित है।

मधुपान भाल किवा लभ्य मधु हैले। कृष्णापेक्षा कृष्णफलेर प्रेमानन्द मिले।।89

मधुपान करना श्रेष्ठ है या मधु बन जाना श्रेष्ठ है?

श्रीकृष्ण कृपा से भक्त को प्रेमानन्द प्राप्ति होती है।

हेनमते दोंहे भक्तितत्त्व प्रकाशिला। शुनिया संन्यासी शुद्ध वैष्णव हइला।।90

इसप्रकार दोनों ने –श्रीसीता देवी तथा श्रीदेवी ने भक्ति का तत्व प्रकाशित किया। उसे सुनकर संन्यासी का मन निर्मल हो गया और वह वैष्णव–कृष्णभक्त बन गया।

तबे सुन श्रीसीतार दिव्य एक लीला। जाहे पदव्रजे दोंहे गंगा पारे गेला।।91

श्रीसीतादेवी तथा श्रीदेवी की एक और दिव्यलीला सुनिये–

जैसे दोनों पांव–पांव गंगा पार चली गयीं।

एकदिन गंगा पारे हैले देवार्चन। नृत्य गीत हैल आर नाम संकीर्तन।।92

एकदिन गंगा के पार देवार्चन और नृत्यगान और हरिनाम संकीर्तन हो रहा था।

बहु लोक मिलि तहिं महोत्सव कैला। दुइ कन्या संगे लञा भादुड़ी चलिला।।93

भादुड़ी जी भी अपनी इन कन्याओं को लेकर

उस उत्सव को देखने के लिये चल पड़े।

गंगा तीरे जाञा देखे प्रचण्ड वातास। गंगार तरंग देखि हइल तरास।।94

जब गंगा किनारे पहुँचे तो देखा वहाँ प्रचण्ड हवा चली।

गंगा की तरंगों को देख वे भयभीत हो उठे।

भृत्यस्थाने दुइ कन्या राखि द्विजराय।गंगापारे गेला चड़ि वृहती नौकाय।।95

श्रीभादुड़ी जी दोनों कन्याओं को अपने सेवक के पास छोड़

स्वयं एक बड़ी नैया में बैठकर गंगा पार चले गये।

ताहा देखि श्रीसीता श्रीदिव्य शक्तिद्वारे। पदव्रजे दोंहे उत्तरिला गंगापारे।।96

यह देखकर श्रीएवं सीता दोनों दिव्य शक्ति द्वारा

गंगा में पैदल चलकर पार चली गयीं।

दुइ कन्यार दिव्य लीला नृसिंह देखिया। झाट कोले लैला दोंहें अत्याश्चर्य हञा।।97

दोनों कन्याओं की यह दिव्य लीला देखकर श्रीनृसिंह ने आश्चर्यान्वित होकर दोनों कन्याओं को गोद में उठा लिया और अपार स्नेह प्रेम किया।

श्रीसीतार चरित देखि पाषण्ड बर्ब्बरे। सगर्वेते पदव्रजे चले गंगा पारे।।98

श्री एवं सीता को गंगा पर पैदल चलते देखकर पाखण्डी बर्ब्बर

लोग भी गर्व में आकर गंगा पर पैदल चलकर पार उतरने लगे।

अगाध जलेते जात्रा हाबुडूबू करे। ताहादेखि सर्वलोके हासे उच्च स्वरे।।99

अगाध जल में जाते ही वे डुबकियाँ भरने लगे और डूबने लगे। उन्हें देखकर सब लोग जोर से हंसे।

श्रीसीता श्रीऐछे वाल्यलीला कैला कत। लिखिते नारिनु मुञि तार बिन्दुमात्र।।100

श्री तथा सीता ने बालकपन में ही न जाने ऐसी कितनी लीलाएं कीं। एक बिन्दु मात्र उनका यहाँ उल्लेख किया है।

श्रीअद्वैत कहे किछु असम्भव नहे। कृष्णदास दासीर अविचिन्त्य शक्ति हय।।101

श्रीअद्वैत ने कहा– ऐसा करना असम्भव नहीं है,

कृष्णदास एवं दासियों में अचिन्त्य शक्ति रहती है।

अष्टसिद्धि पाय तारा कटाक्ष मात्रेते। एक एक भक्तेर शक्तिब्रह्माण्ड शोधिते।।102

श्रीकृष्ण–कृपाकटाक्ष से उन्हें अष्ट सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। एक–एक भक्त में ब्रह्माण्ड का उद्धार करने की शक्ति रहती है।

हेन मते प्रभु–भक्तेर महत्व वर्णिला। सदैन्ये श्रीवासद्विज प्रभुरे कहिला।।103

इसप्रकार श्रीअद्वैत प्रभु ने भक्तों की महिमा वर्णन की।

दीनतापूर्वक श्रीवास पण्डित अद्वैतप्रभु से बोले–

तुहुँ कृष्णभक्त अवतार चिन्तामणि। तोंहे विराजित कृष्णभक्ति तत्त्व खनि।।104

आप भी तो कृष्ण भक्तावतार हैं, चिन्तामणिरूप हैं,

आपमें सभी कृष्णभक्ति तत्व समूह विद्यमान हैं।

श्रीभगवद्भक्ततत्व तुमि मात्र जान। तुमिह ईश्वर गोपेश्वर सर्व ज्ञान।।105

श्रीभगवद् भक्त तत्व को एकमात्र आप ही जानते हैं।

आप ही गोपश्वर ईश्वर हैं, सब ज्ञान आपको है।

एइ सीतादेवी हय तव योगमाया। सीतार एक आत्मा श्री भिन्न मात्रकाया।।106

यह सीता देवी आपकी ही योगमाया है।

सीता और श्री एक आत्मा हैं दो शरीर मात्र हैं।

एई दुइ कन्या तुहुँ कर परिणय। ताहाते भाण्डार तव हइवे अक्षय।।107

इन दोनों कन्याओं से आप विवाह कर लीजिये।

इससे आपका भण्डार अक्षय हो जायेगा।

श्रीकृष्ण वैष्णव सेवार हैव अनुकूल। जीव निस्तारिते तुया रहिवेक कुल।।108

श्रीकृष्ण एवं वैष्णव सेवा अनुकूलता हो जायेगी एवं

जीवों का निस्तार करने के लिये आपका कुल विद्यमान रहेगा।

इंगिते विवाह प्रभुपाद स्वीकारिला। विधिमते भादुड़ी दुई कन्या दान कैला।।109

श्रीअद्वैत प्रभु ने मस्तक झुकाकर विवाह को स्वीकारकर लिया। तब श्रीभादुड़ी ने विधिवत् दोनों कन्याएं श्रीअद्वैत को समर्पण कर दीं।

विवाहोपलक्षे राधा मदनगोपाले। भोग दिला नानाविध मिष्ट अन्न फले।।110

विवाहोपलक्ष्य में प्रभु ने श्रीराधामदन गोपाल जी को अनेक प्रकार का मिष्ठान फलों का भोग लगाया।

सेई प्रसाद स्त्री–पुरुषे विवर्त्तिया दिला। महाप्रसाद पाञा हर्षे समेचलि गेला।।111

उस प्रसाद को नर–नारियों में बांट दिया। महाप्रसाद प्राप्त कर सब वहां से विदा हो गये।

सीताठाकुराणी आर श्रीठाकुराणी। दोंहार प्रणये एक आत्मा करि मानि।।112

श्रीसीता ठाकुराणी तथा श्रीठाकुराणी– दोनों को एक आत्मा मानकर श्रीअद्वैत प्रभु ने ग्रहण किया।

श्रीभगवत् सेवाय पति सुश्रुषणे। ताहा दोंहार गाढ़निष्ठ बाढ़े दिने दिने।।113

इन दोनों की श्रीभगवत् सेवा में तथा पतिदेव कीसेवा में प्रतिदिन गाढ़ से गाढ़तर निष्ठा बढ़ने लगी।

एक दिन श्रीसीता मातार स्वप्नावेशे। पुरीराज आसि कहे सुमधुर भाषे।।114

एकदिन स्वप्न में आकर श्रीमाधवेन्द्रपरुी ने मधुर वचनों में माँ सीतादेवी से कहा–

शुन सीतादेवी मोर नाम माधवेन्द्र। मोर स्थाने मन्त्र लैला श्रीअद्वैतचन्द्र।।115

हे सीतादेवि! सुनो, मेरा नाम माधवेन्द्र है। श्रीअद्वैत प्रभु ने मुझसे ही मन्त्र दीक्षा ली थी।

जेई नित्य सिद्ध कृष्णमन्त्र दिनु तारे।सेई कृष्णकर्षी मन्त्रराज दिमुं तोरे।।116

जो नित्यसिद्ध कृष्णमन्त्र मैंने उनको दिया था, वही श्रीकृष्ण को आकर्षण करने वाला मंत्रराज तुम्हें भी प्रदान करता हूँ।

अदीक्षितेर पक्व अन्न कृष्ण नाहि खाय। स्वेच्छाचारे दिले महा अपराध हय।।117

अदीक्षित व्यक्ति का पकाया हुआ अन्न श्रीकृष्ण कभी नहीं खाते, यदि कोई उन्हें स्वेच्छाचार से– अदीक्षित होकर अन्न देता है तो महा अपराध होता है।

सीताकहे बहु भाग्ये तोमा पाइनु देखा। देहात्मा शोधनकर दिया मन्त्र दीक्षा।।118

सीतादेवी ने कहा– महाभाग्यों से आपके दर्शन हुए

मन्त्रदीक्षा देकर मेरे देह आत्मा का शोधन कीजिये।

तबे पुरी सीतारे कृष्ण मन्त्र दिला। देखिते देखिते पुन अन्तर्हित हैला।।119

तब श्रीपुरी जी ने सीतादेवी को मंत्रदीक्षा दी।

देखते–देखते श्रीपुरी जी अन्तर्धान हो गये।

जागि सीतामाता कहे किवा चमत्कारे। स्वप्नावेशे पुरीराज मन्त्र दिला मोरे।।120

जागकर सीतादेवी सोचने लगी, यह कैसा चमत्कार!

स्वप्नावेश में श्रीपुरीराज ने कृपा करके मुझे मंत्र–दीक्षा दी।

आचार्ये कहिला सीता सर्वविवरण। तिंहो कहे भाग्ये तुया खण्डिला बन्धन।।121

श्रीसीतादेवी ने सारी बात श्रीअद्वैत प्रभु को सुनाई। उन्होंने कहा भाग्य से तुम्हारा भवबन्धन नष्ट कर दिया उन्होंने। वे बड़े दयालु हैं।

प्रभु सेई मन्त्र पुन विधि अनुसारे। शुभ क्षणे समर्पिला स्वभार्या सीतारे।।122

प्रभु ने उसी मंत्र को फिर विधि अनुसार

शुभ समय में अपनी पत्नी सीतादेवी को प्रदान किया।

कहिनु निगूढ़ तत्वेर किन्चित आभास। दयाकरि माता जाहा करिला प्रकाश।।123

मैंने कुछ निगूढ़ तत्व का आभास यहां वर्णन किया है,

माता ने स्वयं दयाकर मेरे आगे प्रकाशित किया।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।124

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैतचन्द्र के चरणों की अभिलाषा करते हुए–

श्रीईशान नागर श्रीअद्वैतप्रकाश वर्णन करते हैं।

नवमोऽध्यायः

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्यदेव की जय हो। श्रीसीतानाथ प्रभु की जय हो।

भक्तों के साथ श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय हो।

एक दिन ठाकुर श्रीब्रह्म हरिदास। सदैन्ये प्रभुरे कहे मन अभिलाष।।02

एकदिन ठाकुर श्रीब्रह्म हरिदास ने दीनतापूर्वक

श्रीअद्वैत प्रभु से अपने मन की अभिलाषा प्रकट की।

अहे प्रभु आज्ञा देह जाङ विरलेते। अविश्रान्त हरिनामामृत आस्वादिते।।03

उन्होंने कहा– प्रभो! आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं अविश्रान्त श्रीहरिनामामृत आस्वादन करने के लिये एकान्त निर्जन स्थान पर जाकर रहूँ।

प्रभुकहे तो विच्छेदे मोर बुक फाटे। निषेधिते ना पारि भजनेर विघ्न घटे।।04

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– ठाकुर! तुम्हारे बिना तो मेरा हृदय फटता है और निषेध भी नहीं कर सकता क्योंकि तुम्हारे भजन में विघ्न घटित होगा।

हरिदास प्रभु पदे दण्डवत् कैला। प्रेमावेशे प्रभु तारे गाढ़ आलिंगिला।।05

श्रीहरिदास ने अद्वैत प्रभु के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया–
प्रेमावेश में प्रभु ने उन्हें गाढ़ आलिंगन किया।

हरिदास कहे मुञि अस्पृश्य पामर। मोर अंग छुँई केने अपराधी कर।।06

श्रीहरिदास ने कहा– मैं तो अस्पृश्य नीच हूँ,
आप मेरे शरीर का स्पर्श कर क्यों मुझे अपराधी बनाते हैं।

प्रभु कहे नाहि बुझि सुजाति दुर्जाति। जेई कृष्ण भजे सेई श्रीवैष्णव जाति।।07

प्रभु बोले– मैं सुजाति, दुर्जाति कुछ नहीं जानता।
जो श्रीकृष्ण भजन करता है वह वैष्णव जाति है।

उत्तमाधम वाच्य हय कर्म अनुसारे। जेई कृष्ण भजे सर्वोत्तम कहि तारे।।08

उत्तमता और नीचता तो कर्म के अनुसार कही जाती है।
जो श्रीकृष्ण को भजता है, मैं उसे ही सर्वोत्तम कहता और मानता हूँ।

तुहु शुद्ध भागवत गणेर उत्तम। तव स्पर्शे जीव हय भक्तिबीजोद्गम।।09

तुम तो शुद्ध भागवतों में उत्तम हो, तुम्हारे स्पर्श से
जीवों में भक्ति बीज का उद्गम होता है।

हरिदास कहे प्रभु सकलि सम्भवे। तुया सुनिर्मल कृपा यदि हय जीवे।।10

श्रीहरिदास ने कहा– प्रभो! सब कुछ सम्भव है,
यदि जीव पर आपकी निर्मल कृपा दृष्टि हो जाये।

एत कहि करजोड़े प्रभु आज्ञा लञा। फुलिया ग्रामेते गेला हरि स्मरिया।।11

इतना कहकर श्रीहरिदास ने हाथ जोड़कर प्रभु से आज्ञा ली और फुलिया ग्राम की ओर हरि का स्मरण करते हुए चल दिये।

सेई नगरवासी जत ब्राह्मणेर गण। हरिदासे देखि सभार द्रव हैल मन।।12

फुलिया ग्राम में ब्राह्मणों का वास था। श्रीहरिदास को
देखकर सबका मन आनन्द से द्रवित हो उठा।

तहिं रामदास नामे सुविज्ञ ब्राह्मण। धर्मशास्त्रवेत्ता सदा धर्म परायण।।13

वहाँ एक रामदास नाम का विद्वान ब्राह्मण रहता था। जो
धर्मशास्त्रों का जानकार था। वह सदा धर्म का आचरण करता था।

हरिदासे देखि तार भक्ति उपजिल।दैन्य करि मिष्ट भाषे कहिते लागिल।।14

श्रीहरिदास को देखकर उसमें भक्ति का उदय हो आया।
दीनतापूर्वक वह मधुर वचन कहने लगा–

साधु तुया आगमने मोरा हैनु धन्य।ना जानि ग्रामेर कत छिल पूर्व पुण्य।।15

"आप परमभक्त हैं। आपके यहां आने से हम सब धन्य हो गये हैं, न जाने इस ग्राम के कितने पूर्व पुण्यों का फल उदित हुआ है।

साधु समागमे गृह महापूत हय। इहाँ वास करो प्रभु हइया सदय।।16

भगवद्भक्त के आने से घर पवित्र हो जाता है।
अतः आप दया कर यहाँ ही वास कीजिये।

ब्रह्म हरिदास कहे ओहे द्विजवर। वेदोक्ति ब्राह्मण मात्रे विष्णु कलेवर।।17

श्रीहदिास ने कहा– हे द्विजवर! वेद कहता है कि–
ब्राह्मण मात्र विष्णु का कलेवर होता है।

मुञि नीच जाति हङ नहे स्पर्श योग्य। तुया संग पाइनु मोर एइ महाभाग्य।।18

मैं नीच जाति हूँ, स्पर्श करने के योग्य नहीं हूँ।
आपका संग मुझे प्राप्त हुआ यही मेरा महाभाग्य है।

रामदास कहे साधु काहे कर दैन्य। ईश्वरानुरागीजनेर जाति नहे गण्य।।19

रामदास ने कहा– भक्तवर! इतनी दीनता क्यों कर रहे हो। ईश्वरानुरागी की जाति नहीं गिनी जाती।

जैछे स्पर्श मणिर स्पर्शे लोह हय स्वर्ण।ईश्वरोपासने श्रेष्ठ तैछे सर्व वर्ण।।20

जैसे कैसा भी लोहा क्यों न हो पारस मणि का स्पर्श पाते ही सोना बन जाता है, उसी प्रकार जिस वर्ण–जाति का व्यक्ति क्यों न हो, ईश्वर उपासना करने से वह भी श्रेष्ठ होता है।

मनुष्येर प्रशंसा किवा प्रशंसा तार धर्मे। उच्च नीच वाच्य हय निज कृत कर्मे।।21

मनुष्य की प्रशंसा हो अथवा उसके धर्म की प्रशंसा हो, अच्छे कर्मों से ही उसे उत्तम कहा जाता है और नीच कर्मों से वह निकृष्ट कहलाता है।

संसार वासना त्यागी ईश्वरानुरागी। सेई सर्व जीवे श्रेष्ठ हय मुक्तिभागी।।22

जिसने संसार की वासना का त्याग कर ईश्वर से अनुराग किया है, वही जीवों में सर्वश्रेष्ठ है और मुक्ति का अधिकारी होता है।

हरिदास कहे तुहुँ साधु सनातन। सर्वजीवे साधुरूपे करह दर्शन।।23

श्रीहरिदासजी ने कहा– आप प्राचीन सन्त हैं,
इसलिये सब जीवों को साधुरूप में देखते हैं।

ज्ञानयोगे ईश्वरोपासना जेई करे।मुक्तिमात्र प्राप्ति ज्ञानेर शक्ति अनुसारे।।24

ज्ञानयोग से जो ईश्वर की उपासना करता है,
ज्ञान की शक्ति अनुसार उसे मुक्ति मात्र प्राप्त होती है।

सचतुर साधु मुक्तिवान्छा नाहि करे। नित्य मुक्तिना पाय जीव ज्ञानयोग झरे।।25

जो सुचतुर भक्त हैं वे मुक्ति की वान्छा नहीं करते, क्योंकि जो लोग ज्ञानयोग में लगे रहते हैं, वे शाश्वत मुक्ति को प्राप्त नहीं कर पाते।

द्विज कहे ज्ञान बिनु आछे किवा आर। जाहे प्राप्ति हय परब्रह्म सारोत्सार।।26

रामदास ने पूछा– "तो ज्ञान को छोड़कर और भी कोई साधन है क्या? जिससे सर्वसार परब्रह्म की प्राप्ति होती हो?

ब्रह्म हरिदास कहे भक्तियोग सार। ताहे लभ्य हय नित्य ब्रह्म सर्वेश्वर।।27

श्रीहरिदास ने कहा– भक्तियोग ही सार है,
उससे सर्वेश्वर नित्य परब्रह्म की प्राप्ति होती है।

भक्ति स्वभावे हय दास्य अभिमान। दास्ये हरि नित्यसिद्ध तनु करे दान।।28

भक्ति का स्वभाव है कि वह साधक में दास अभिमान उत्पन्न कर देती है। श्रीहरिदास को नित्य सिद्ध शरीर ही प्रदान कर देते हैं।

नित्य ब्रह्म वस्तु हय स्वयं भगवान। सच्चित् आनन्दमय सर्वशक्तिमान।।29

नित्य आनन्दमय वस्तु हैं स्वयं भगवान् जोसच्चिदानन्दमय हैं। सर्वशक्तिमान हैं।

हरिनाम हय शुद्ध भक्तिर कारण। अविश्रान्त जपे पाय नित्य प्रेमधन।।30

उस शुद्ध भक्ति का एकमात्र हेतु है श्रीहरिनाम। जो अविश्रान्त अर्थात् निरन्तर श्रीहरिनाम का जाप करता है उसे नित्य–विशुद्ध प्रेमधन की प्राप्ति होती है।

क्रमे प्रेमगाढ़ हैले गोपीभाव पाय। श्रीमाधुर्यरसे राधाकृष्ण प्राप्ति हय।।31

क्रमशः प्रेम गाढ़ता को प्राप्त करने पर गोपीभाव की प्राप्ति होती है, फिर उसमें राधाकृष्ण के माधुर्य रस मधुकरण की सेवा प्राप्त होती है।

शुनि द्विज हञा रोमान्चित कलेवर। कहे मोरे दयाकरि करह संस्कार।।32

यह सुनकर रामदास द्विज का शरीर पुलकित हो
उठा और कहने लगाकि कृपाकर मुझे दीक्षा दीजिये।

ताहा शुनि हरिदास प्रेमपूर्ण हञा।हरिनाम दिला द्विजे शक्ति सन्चारिया।।33

उसके वचन सुनकर श्रीहरिदास ने प्रेमपूरित होकर उस ब्राह्मण में शक्ति का संचार करते हुए श्रीहरिनाम की उसे दीक्षा दी।

महावस्तु पाञा द्विजेर झरे दुनयन। हरिदासे प्रणमिया करिला स्तवन।।34

महावस्तु श्रीहरिनाम को पाकर द्विज रामदास के दोनों नेत्रों से प्रेमाश्रुधारा बहने लगी। वह श्रीहरिदासजी को बार–बार प्रणाम कर। उनकी स्तुति गान करने लगा।

क्रमे साधु संगे द्विजेर वैष्णवता हैल। हृदिक्षेत्रे भक्ति कल्पलता उपजिल।।35

क्रमशः भक्तसंग से द्विज में वैष्णवता आ गई और
हृदय क्षेत्र में भक्तिलता उत्पन्न हो आयी।

द्विजेर साहाये एक झुपरी बान्धिया। ब्रह्म हरिदास रहे आनन्दित हञा।।36

उस रामदास की सहायता से एक झोंपड़ी बनाकर
ब्रह्म हरिदास जी वहां आनन्दपूर्वक रहने लगे।

हरिनामामृत सदा करे आस्वादन। तान भक्त हैला जत ग्रामवासीजन।।37

वे सदा श्रीहरिनामामृत का आस्वादन करते रहते।
ग्रामवासी सब उनके भक्त–अनुयायी बन गये।

एकदिने हरिदासेर मने चिन्ता हैल। एकस्थाने बहुदिन वास नहि भाल।।38

एकदिन श्रीहरिदासजी के मन में विचार आया कि
बहुत दिन तक एक स्थान पर रहना उचित नहीं है।

आलाप संसर्गे हय मायार सम्बन्ध। क्रमे संसार आसक्तिते जीवहय अंध।।39

क्योंकि सबके साथ मेल–जोल हो जाने से माया का सम्बन्ध होने लगता है फिर
क्रमशः संसार में आसक्त होकर जीव मायान्ध हो जाता है।

उदासीनेर धर्म ताहे ना हय रक्षण। अतएव जनसंग त्याग सर्वोत्तम।।40

एक स्थान पर रहने से उदासीन विरक्त के धर्म की रक्षा नहीं
हो सकती। इसलिये लोगों का संग त्याग करना ही सर्वोत्तम है।

एत भावि रात्रिशेषे गृह त्याग कैला। हरिनाम गाइ तिहों वेनापोले गेला।।41

यह सोच अन्तिम रात में उस झोंपड़ी को त्याग दिया और
श्रीहरिनाम गाते हुए बेनापोल गांव में जा पहुँचे।

तथि महारण्य मध्ये करे संकीर्तन। ग्रामेर लोक आसि ताँरे करये पूजन।।42

वहां महा जंगल में रहकर संकीर्तन करते रहते।
ग्राम के लोग आकर इनकी सेवा पूजा करते।

जेई महाभाग्यवन्ते कृष्ण कृपा हय। ताँरे देखि जीवमात्रेर भक्ति उपजय।।43

जिस भाग्यवान पर कृष्णकृपा होती है,
उसके दर्शन करने से जीव मात्र में भक्ति उदित हो आती है।

ब्रह्महरिदासेर अंगे देखि तेजोराशि। क्रमे तान भक्त हैला जत ग्रामवासी।।44

ब्रह्म हरिदास का शरीर अति तेजोमय था। धीरे–धीरे सब ग्रामवासी उनके भक्त बन गये।

सेई वेनापोलेर वने ग्राम्यभक्तगण। कुटीर वान्धिया दिला करिया यतन।।45

ग्रामवासियों ने वेनापोल जंगल में यत्नपूर्वक एक कुटिया इनके लिये बना दी।

तांहा रहि साधु करे तुलसी सेवन। एक मासे कोटि नाम करये ग्रहण।।46

वहां रहकर वे तुलसी–सेवा करते और एक मास में एक कोटिनाम ग्रहण करते।

वैष्णव द्विजेर गृहे करे मुष्टिभिक्षा। दयार स्वभाव जीवे नीति देय शिक्षा।।47

वैष्णव ब्राह्मणों के घर जाकर एक मुट्ठी भिक्षा कर लाते।
दयालु स्वभाव होने से जीवों को नीतिधर्म की शिक्षा देते थे।

एकदिन वेश्या एक रूपे विद्या धरी। हरिदास पाशे आइला वेशभूषा करि।।48

एकदिन एक वेश्या जिसका सौन्दर्य विद्याधरी के समान था
वह सजकर श्रीहरिदास के पास आयी।

कुटीर द्वारेते वसि अंगभंगी करे। हरिदास मिष्टवाक्ये पुछिला ताहारे।।49

कुटिया के द्वार पर बैठकर अंग–भंगी दिखाने लगी।
श्रीहरिदासजी ने बड़े मधुर वचनों से उससे पूछा–

सन्ध्याकाले आईला इहाँ किवा प्रयोजन। वेश्या कहे तोंहे देखि मुग्ध हैल मन।।50

तुम संन्ध्या समय यहाँ किस प्रयोजन से आयी?
वेश्या बोली– "आपको देखकर मेरा मन मोहित है।

अपरूप रूप तोंहार नवीन यौवन। सुख भोग कर छाड़ि नाम संकीर्तन।।51

आपका कैसा अनुपम रूप, नवीन यौवन।
आप छोड़ो नाम संकीर्तन को और मेरे साथ सुख भोग करो।

शुनि हरिदास कहे सहास्य वदने। इहाँ हैते आजि तुहुँ करह प्रस्थाने।।52

उसके वचन सुनकर ये मुस्करा कर बोले– आज तुम यहां से चली जाओ।

जे जन तुलसी कण्ठी ना करे धारण।जेइ नाहि करे भाले तिलक रचन।।53

जो व्यक्ति तुलसी कण्ठी गले में धारण नहीं करते,
जो मस्तक पर तिलक रचना नहीं करते।

जार मुखे कृष्णनाम ना हय स्फुरण। सेइ सभ जन हय पाषण्डी अधम।।54

जिनकी जिह्वा पर श्रीकृष्णनाम स्फुरित नहीं होता–
ऐसे सब व्यक्ति पाखण्डी और नीच हैं।

निर्यास जानि त तारा कृष्ण बहिर्मुख। कभु साधु नांहि देखे ता सभार मुख।।55

निश्चय ही उन्हें कृष्ण–बहिर्मुख जानना चाहिये।
उन लोगों का मुख साधु कभी नहीं देखता।

ऐछे सद्‌वेश करि यदि कर आगमन। तबे कृष्ण तोर वान्छा करिव पूरण।।56

ऐसा सद्‌वेश करके– तुलसी कण्ठी, तिलक धारण कर एवं श्रीकृष्ण नाम जपते हुए यदि तुम मेरे पास आओ, तो श्रीकृष्ण तुम्हारे मन की वान्छा पूर्ण करेंगे।

एत कहि साधु करे नाम संकीर्तन। तबे वेश्या निज घरे करिला गमन।।57

इतना कहकर श्रीहरिदास नाम संकीर्तन करने लगे। वेश्या अपने घर लौट गयी।

पर दिन गले दिया तुलसीर माला। गोपीचन्दन दिया भाले तिलक रचिला।।58

दूसरे दिन गले में तुलसी–कण्ठी धारण कर तथा
मस्तक पर गोपी चन्दन की तिलक रचना की।

अंगे हरिनामलिखि वैष्णवी साजिला। तबे सन्ध्याकाले हरिदास स्थाने आइला।।59

अंगों पर हरिनाम अंकितकर वैष्णवी का वेश सजा लिया।
संन्ध्या समय श्रीहरिदास के पास आ पहुँची।

वृन्दा नमस्करि वसि कुटीर दुयारे। छले वेश्या हरि हरि कहे उच्च स्वरे।।60

उसने आकर तुलसी को नमस्कार किया और कुटिया के दरवाजे पर बैठ गयी।
कपटपूर्वक वह वेश्या "कृष्ण–कृष्ण" भी उच्चारण करने लगी।

साधु संगेर अलौकिक अपार शक्ति हय। छले सद्‌वेश धरि जीव जीवन्मुक्ति पाय।।61

साधु संग की तो अलौकिक अपार शक्ति है। कपटपूर्वक भी साधुवेश करने से जीव जीवन्मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

जैछे चन्दनेर संग पाइले वृक्षमय। गन्ध प्रवेशिले सारे चन्दनत्व पाय।।62

जैसे चन्दन के संग से और वृक्षों में चन्दन की सुगन्धि
प्रवेश करने से सब वृक्ष चन्दन बन जाते हैं।

अविश्रान्त हरिनाम वेश्या मुखे शुनि। प्रेमानन्दे प्रशंसे वैष्णव चूड़ामणि।।63

वेश्या के मुख से अविश्रान्त श्रीहरिनाम सुनकर वैष्णव चूड़ामणि श्रीहरिदास प्रेम आनन्द में भरकर उसकी प्रशंसा करने लगे।

प्रतिष्ठा शुनिया वेश्या कहे हरिदासे।प्रभु मोरे कृपाकर आइनु जेई आशे।।64

अपनी प्रशंसा सुनकर वेश्या श्रीहरिदास के प्रति कहने लगी– प्रभो! मुझ पर आप कृपा करो जिस आशा को लेकर आपके पास मैं आयी हूँ।

शुनि हरिदास कहे आसियाछ भाल। वदन भरिया एकबार हरि हरि बल।।65

श्रीहरिदास ने कहा– भले आयी हो तुम, एक बार मुख भरकर हरि हरि बोलो।

एह कहि करे तिंहो नाम संकीर्तन। गाइते शुनिते वेश्या फिरि गेल मन। ।66

इतना कहकर ये श्रीनाम संकीर्तन करने लगे।

उसे सुनकर वेश्या का मन पलट गया।

सत्संग हिल्लोले तार हइल चैतन्य।वेश्यावृत्ति पाप भोग मध्ये कैल गण्य। ।67

सत्संग की आनन्द तरंगों में उसे चेतना आ गयी और वेश्यावृत्ति को पाप भोग में गणना करने लगी।

हरिदासे प्रणमिया कहे जोड़ करे। तुहुँ चुम्बक महामणि आकर्षिला मोरे। ।68

श्रीहरिदास को प्रणाम कर हाथ जोड़ कर वह कहने लगी–

आप तो चुम्बक मणि के समान हैं मुझे आपने यहाँ आकर्षित किया है।

तुहुँ प्रभु गुरु दयामय कल्पवृक्ष। मोक्ष फल देह मोरे हइया स्वपक्ष। ।69

आप प्रभो! दयामय गुरु कल्पवृक्ष के समान हैं।

कृपाकर मेरे अनुकूल होकर मुझे मोक्षफल दीजिये।

वेश्यार धर्मानुराग निष्ठ वाक्यशुनि। प्रेमरसाविष्ट हआ साधु शिरोमणि। ।70

वेश्या के इस प्रकार धर्मानुराग निष्ठापूर्ण वचन सुनकर

साधु शिरोमणि श्रीहरिदास प्रेमाविष्ट हो उठे।

प्रायश्चित रूपे हार माथा मुण्डाइया। हरिनाम दिला कर्णे शक्ति सन्चारिया। ।71

श्रीहरिदासजी की कृपा पाकर उसने प्रायश्चित रूप में अपना मस्तक मुण्डित कराया और शक्ति संचार करते हुए उसके कान में श्रीहरिनाम की दीक्षा दी।

हरिनाम प्राप्त्ये तार प्रेमांकुर हैल। हरिदास तार नाम कृष्णदासी थुइल। ।72

श्रीहरिनाम प्राप्त कर उसमें प्रेमांकुर उदित हो उठा।

श्रीहरिदास ने उसका नाम रखा श्रीकृष्णदासी।

साधु कहे इहाँ रहि कर हरिनाम। कृष्णकृपा बले सिद्ध हैव मनस्काम। ।73

इन्होंने कहा– देखो! तुम यहाँ रहकर श्रीहरिनाम करो।

श्रीकृष्ण कृपा शक्ति से तुम्हारी मनोकामना संसार बन्धनसे मुक्ति हो जायेगी।

नाम ब्रह्मे परब्रह्म हय तुल्य शक्ति। नामे कृष्ण प्राप्ति नामाभासे हय मुक्ति। ।74

नाम ब्रह्म तथा परब्रह्म की समान शक्ति है। श्रीनाम से

कृष्ण प्राप्ति व नामाभास से मुक्ति प्राप्त होती है।

एत कहि हरिदास गेला अन्यस्थाने। कृष्णदासी कृष्णनाम जपे निशिदिने। ।75

इतना कहकर श्रीहरिदास जी वहाँ से चलकर अन्य स्थान पर गये।

कृष्णदासी निशिदिन श्रीकृष्णनाम जपने लगी।

अत्याश्चर्य साधु कृपार अविचिन्त्य बले। विषवृक्ष धरे अलौकिकामृत फले।।76

साधु कृपा के आश्चर्यमय अचिन्त्य बल से विषवृक्ष भी
अलौकिक अमृतफल धारण करता है।

एबे शुन हरिदासेर अपूर्व विलास। जैछे बहु यवने करिला कृष्णदास।।77

अब श्रीहरिदास का एक और अपूर्व करुणा विलास सुनिये, जिससे उन्होंने अनेक यवनों को कृष्णदास अर्थात् परम वैष्णव बना दिया।

फुलिया ग्रामवासी जत वैष्णवेरगण। हरिदासे देखि हैला आनन्दमगन।।78

फुलिया ग्रामवासी जितने वैष्णव थे, श्रीहरिदास के दर्शनकर अति आनन्दित हुए।

सभे मिलि करे सदा नाम संकीर्तन। पाषण्डीर हृदे हय शेल आरोपण।।79

सब मिलकर सदा श्रीनाम संकीर्तन करने लगे,
किन्तु पाखण्डियों के हृदयों में तो बरछी–सी चुभने लगी।

हरिदासेर तत्त्वजानि यवनेर पति। महाक्रोधे कहे निज दासगण प्रति।।80

श्रीहरिदास की महिमा वृद्धि को देखकर यवन राजा ने
क्रोध में भरकर अपने सेवकों से कहा–

फुलियाते हरिदास नामे एकजन। हिन्दुयानि कार्य करे हइया यवन।।81

फुलिया गांव में हरिदास नाम का एक व्यक्ति यवन होकर हिन्दु (सनातन) धर्म का प्रचार कर रहा है।

आखेर खाइल लोके हैल उपहास। क्रमशः यवन धर्म हइवे विनाश।।82

चुप रहने पर मेरा उपहास होगा और क्रमशः यवन धर्म का विनाश हो जायेगा।

अतएव धरि आनि कर त शासन।आज्ञा पाञा धाञा चले दुष्ट दासगण।।83

इसलिये उसे पकड़ कर ले आओ उसका शासन करना होगा। यवन राजा की आज्ञा पाकर दुष्ट कर्मचारी श्रीहरिदास के पास दौड़े आये।

तबे हरिदासे धरि निग्रह करिञा। दरवारे आनिलेन हाते दड़ि दिञा।।84

उन्होंने जबरदस्ती धमका कर हाथों में बेड़ी डालदी और दरबार में इन्हें ले गये।

हरिदासे देखि कहे यवनेर पति। काहे हिन्दुयानि कर हञा उत्तम जाति।।85

श्रीहरिदास को देखकर यवनराज ने कहा– तू उत्तम
जाति(यवन) हो हिन्दुओं का आचरण क्यों करता है?

स्वधर्म छाड़िया जेइ करे महायोग। देहान्ते निश्चय तार हइवे दोजोख।।86

अपने यवन धर्म को छोड़कर जो महायोग किसी दूसरे धर्म का आचरण करता

है तो मरने के बाद उसे निश्चित दोजख (नरक) में जाना पड़ता है।

यदि भेस्त प्राप्ति वान्छा थाके तोर मने। कलमा पड़िया कर पापेर दमने।।87

यदि तुम्हारे मन में स्वर्ग जाने की इच्छा है तो कुरान का कलमा पढ़ो और अपने पापों का प्रायश्चित करो।

शुनि हरिदास कहे सुगम्भीर स्वरे। युक्तिमूलक जेइ शास्त्र श्रेष्ठ कहि तारे।।88

श्रीहरिदास ने उसके वचन सुनकर गम्भीर स्वर में कहाजो शास्त्र युक्ति संगत है, उसे श्रेष्ठ कहता हूँ।

युक्ति युक्त शास्त्र अनुगामी जेइ हय। सर्व वर्णे सेई श्रेष्ठ शास्त्रे इहा कय।।89

युक्ति युक्त शास्त्र का जो अनुगमन करे, वह सब
जातियों में श्रेष्ठ होता है– ऐसा शास्त्र कहता है।

यवनेर शास्त्र हय युक्ति विरुद्धाभास। सेई शास्त्रचरी यवनरूपेते प्रकाश।।90

यवनों के शास्त्र (कुरान) में युक्ति विरोधाभास है, उस शास्त्र का अनुगमन करने वाले यवनरूप में प्रकाशित हुए हैं।

ताहार प्रमाण देख गो हय माता–पिता। सेइ गो हिंसार करणयुक्ति विरोधिता।।91

इस बात का प्रमाण देखिये– गाय सबकी माता–पिता तुल्य है, क्योंकि वह दूध पिलाकर सबका पालन–पोषण करती है। उस गाय की हिंसा करना युक्ति–विरोधी एवं महापाप है।

तन्मांसे भक्षण हय पितु मांस सम। सेइ गो वधिते जारशास्त्रेर नियम।।92

गाय–मांस का भक्षण करना माता–पिता के मांस खाने के समान है। गाय की हिंसा करने की विधि यवन शास्त्र में है।

सेइ भ्रष्टाचारि गणेर जन्मवृद्धि पाय। निज कर्मफले नाना योनिते बेड़ाय।।93

ऐसे भ्रष्टाचारी लोगों की जन्म वृद्धि होती है और
अपने कर्मानुसार अनेक योनियों में भटकते रहते हैं।

सर्वस्वरूप परब्रह्म अनादि विग्रह। षड़ैश्वर्यपूर्ण शुद्ध सत्वमय देह।।94

परब्रह्म सर्वस्वरूप भगवान श्रीकृष्ण अनादि श्रीविग्रह हैं और षड़ैश्वर्यपूर्ण शुद्ध सत्वमय है।

जे शास्त्रे ताँहारे कहे निराकार निरीह। तेन शास्त्र पठने बाढ़ये माया मोह।।95

जिस शास्त्र में उस ब्रह्म को निराकार और निरीह कहा गया है, उस शास्त्र को पढ़ने से माया–मोह की ही वृद्धि होती है।

वस्तुतत्वे ईश्वरे जीवेते नाहि भेद। अग्निर सत्ता जैछे सर्व दीपेते अभेद।।96

वस्तुतत्व में तो ईश्वर और जीव में भेद नहीं है, जैसे
सब दीपकों में अग्नि की सत्ता एक समान होती है।

तथापि मूल अग्निर जैछे हय प्रधान्यता। तैछे सर्वेश्वर हरि सकलेर धाता।।97

तथापि जैसे मूल अग्नि की प्रधानता है, उसी प्रकार
सर्वेश्वर श्रीकृष्ण ही हम सबके आदिकारण हैं।

हरिके भजिले जीवेर माया लोप हय। सेइ लोभे मुञि कैला हरिपदाश्रय।।98

श्रीहरि का भजन करने से जीव की माया नष्ट होती है। उसी लोभ से मैंने
श्रीहरि का पदाश्रय ग्रहण किया है। श्रीहरि ही प्रीति के योग्य हैं।

साधु मुखे शुनि युक्ति संगत प्रमाण। सभे पीर बलि ताने कैला अनुमान।।99

श्रीहरिदास के मुख से युक्ति संगत प्रामाणिक बात
सुनकर सबने जाना कि उसकी बात अकाट्य है।

हेन काले साधु कैला ऐश्वर्य प्रकाश। ताहा देखि म्लेच्छगण पाइला तरास।।100

इसी समय श्रीहरिदास ने ऐश्वर्य प्रकट किया।
जिसे देखकर सब म्लेच्छगण भयभीत हो उठे।

दन्ते तृण धरि कहे यवनेर पति। अहे साधु कृपा कर मो अधम प्रति।।101

तब दाँतों में तृण धारण कर यवन राजा ने कहा–
हे साधु महाशय! मुझ अधम पर आप कृपा कीजिये।

मुञि मूर्ख दुराचार ना चिनिया तोरे। करियाछों अपराध क्षमह आमारे।।102

मैं मूर्ख दुराचारी हूँ। आपको पहचान न पाया।
मैंने आपके प्रति अपराध किया है। आप मुझे क्षमा करें।

तुया पदे रहु मोर कोटि नमस्कार। निजगुणे कर एवे मो छारे उद्धार।।103

आपके श्रीचरणों में मेरा कोटि प्रणाम है। अपने गुण से मुझ अधम का उद्धार
कीजिये।

शुनि हरिदासेर मने दया उपजिल। कृष्णे मति हऊ बलि आशीर्वाद कैल।।104

यवन राजा के वचन सुनकर श्रीहरिदास के मन में दया आ गयी और बोले–
मेरा यही आशीर्वाद है कि श्रीकृष्ण में तुम्हारी मति हो।

ऊद्‌र्ध्वबाहु हञा कहे बोल हरि हरि। कर्मबन्ध छिण्डि लभ्य हैव भक्ति तरि।।105

वह यवनपति भुजाएं ऊँची उठाकर हरि–हरि बोलने लगा।
उसका कर्म–बन्धन टूट गया और उसे भक्ति की प्राप्ति हो गयी।

एत शुनि सभार मने भक्ति उपजिल। हरि हरि बलि सबे नाचिते लागिल।।106

यह सुनकर वहाँ सब यवनों में भी भक्ति उदित हो उठी।
सब हरि–हरि बोलकर नाचने लगे।

ऐछे हरिदास करि यवन उद्धार। तांहा हैते चलि आइला कुलिया नगर।।107

इसप्रकार श्रीहरिदास यवनों का उद्धार कर। वहाँ से कुलिया नगर में चले आये।

ब्रह्म हरिदासेर महिमार नाहि पार। देवगण नाहि जाने मुञि कोन छार।।108

श्रीहरिदास की महिमा का कोई पार नहीं है। उनकी अपार महिमा देवतागण भी नहीं जान पाते हैं, तो मैं ईशानदास दीन क्या जान सकता हूँ?

याँर संग गुणे गोसाञि रघुनाथ दास। भक्तिबीज पाई हैल चैतन्य विश्वास।।109

जिनके संग व गुणों में मुग्ध होकर गोस्वामी श्रीरघुनाथ दास ने
भक्ति का बीज प्राप्त कर श्रीचैतन्य में निष्ठा प्राप्त की।

याँर कृपाबले सर्प जीवन्मुक्ति पाय। तिंहो यवन उद्धारिवे इथे कि विस्मय।।110

जिनके कृपाबल से सर्प भी जीवन्मुक्त हो गया, उन्होंने यवनों का उद्धार किया,
तो यह उनके लिये कौन सी बड़ी बात हो गयी।

एबे कहि संक्षेपे सेइ सर्पोद्धार तत्त्व। याहा शुनि स्फूर्ति पाय वैष्णव माहात्म्य।।111

अब मैं संक्षेप से उस सर्पोद्धार की कथा कहता हूँ।
जिसको सुनकर वैष्णव महिमा का ज्ञान होता है।

गोफाय बसि हरिनाम करे हरिदास। शुनि ग्रामेर लोक सभ आइला ताँर पाश।112

एक गुफा में रहकर श्रीहरिदास श्रीहरिनाम करते हैं।
यह सुनकर ग्रामवासी उनके दर्शन को वहाँ आते हैं।

साधुर प्रेम नामे रुचि देखि सर्वजन। तान सह करे नित्य नामसंकीर्तन।।113

इनका श्रीनाम में प्रेम, रुचि देखकर सब लोग मिलकर इनके साथ नाम संकीर्तन करने लगे।

हेनकाले एक काल सर्प दीर्घतम। शिरे दिव्यमणि ज्वले दिनमणि सम।।114

इसी समय एक बहुत बड़ा लम्बा–चौड़ा काला साँप,
जिसके सिर पर सूर्य की भांति मणि चमक रही थी।

हरिदास आगे तिंहो कैला अवस्थान। कुण्डली करिया बसे शुने हरिनाम।115

श्रीहरिदास के आगे आकर बैठ गया। कुण्डली मारकर इनसे श्रीहरिनाम सुनने लगा।

ताहा देखि सब हञा भये कम्पमान। कहे साधुवर आजि हाराइवे प्राण।।116

उसे देखकर सब भयभीत होकर काँपने लगे और बोले–

साधुवर के आज प्राण नहीं बचेंगे।

तबे साधु निर्भये सेइ सर्प कण्ठे धरि। हरिनाम दिला तारे स्वशक्ति सन्चारि।।117

तब इन्होंने निर्भय होकर उस सांप को गले से पकड़ कर उसके कान में श्रीहरिनाम दान कर अपनी शक्ति सहित संचार कर दिया।

करतालि दिया तेंहो हरिनाम गाय। ताहा शुनि सर्प प्रेमे नाचिया बेड़ाय।।118

ये साँप के सामने ताली बजाकर श्रीहरिनाम गान करने लगे। उसे सुनकर साँप भी नाचने लगा।

अविश्रान्त अश्रुधारा बहे दुनयने। पुन पुन शिर नेउयाय वैष्णव चरणे।।119

अविश्रान्त अश्रुधारा साँप के नेत्रों से बहने लगी वह बार–बार श्रीहरिदास चरणों में मस्तक झुकाने लगा।

वैष्णवेर पदरज करिया धारण। आर हरिनाम ब्रह्म करिया श्रवण।।120

वैष्णवों की चरणधूलि मस्तक पर धारण कर और ब्रह्म हरिनाम का श्रवण करते हुये–

देखिते देखिते सर्प सिद्धदेह पाञा। दिव्य वृन्दावने गेला चतुर्भुज हञा।।121

सबके देखते–देखते वह साँप सिद्ध देह–पार्षदरूप धारण कर चतुर्भुज होकर दिव्य वृन्दावन धाम गया।

लोक सब देखि सेइ अचिन्त्य महत्त्व। वैष्णव हइया हरिनामे हैला रत।।122

सब लोग इनके अचिन्त्य महत्व को देखकर वैष्णव बन गये और श्रीहरिनाम में निमग्न रहने लगे।

दिन कत परे साधुर उत्कण्ठा हइल। श्रीपाट शान्तिपुरे आसि उदय हइल।।123

कुछ दिनोंके बाद श्रीहरिदासके मनमें श्रीपाट शांतिपुर जानेकी इच्छा जाग उठी।

श्रीअद्वैत प्रभु देखि प्रिय हरिदासे। आइस बाप बलि प्रेमानन्दे–रसे भासे।124

श्रीअद्वैत प्रभु प्रिय हरिदास को आया देखकर प्रेमानन्द में विभोर हो उठे और बोले– आओ मेरे अति प्रिय सोना बेटा! तुम आ गये।

श्रीपाद प्रभुरे देखि ब्रह्म हरिदास। अष्ट अंगे प्रणमिया कहे दैन्यभाष।।125

ब्रह्म हरिदास ने श्रीअद्वैत प्रभु को देखते ही अति प्रीति पूर्वक दीनता सहित अष्टांग प्रणाम किया।

प्रभु तारे आलिंगिया कहे मिष्टवाणी। दैन्य छाड़ तोहे मुञि प्राण सम मानि।।126

श्रीप्रभु ने इन्हें आलिंगन किया और मधुर वाणी में बोले– हरिदास! तुम अब दीनता छोड़ो, मैं तो तुम्हें अपने प्राणों के समान प्रिय मानता हूँ।

दोंहे इष्ट आलापने प्रेमे मग्न हैला। हरि बलि बाहु तुलि नाचिते लागिला।।127

दोनों इसप्रकार प्रिय कृष्ण कथा आलाप करते हुए प्रेम–विभोर हो उठे एवं भुजाएं उठाकर नाचने लगे।

हेन मते निति निति महोत्सव बाढ़े। कुलीन ब्राह्मणगण कहे परस्परे।।128

इसप्रकार नित नवीन महोत्सव मनाने लगे। कुलीन ब्राह्मण गण श्रीअद्वैत का (यवन) हरिदास के साथ इतना प्रेम देखकर परस्पर कहने लगे–

हरिदासेर संग यदि ना छाड़े आचार्य। समाजेते सेइ सत्य हइवेक वर्ज्ज्य।।129

यदि अद्वैताचार्य हरिदास का संग त्याग नहीं करते तो सचमुच समाज से इनको बहिष्कृत करना होगा।

आचार्य ताहाते नाहि मनोयोग कैला। प्रभुरे पाषण्डिगण वर्ज्जन करिला।।130

श्रीअद्वैताचार्य ने कभी उन लोगों की बात पर ध्यान नहीं दिया, जिससे उन दुर्भागी पाखंडियों ने इन्हें बहुत निन्दा करके बहिष्कार किया।

प्रभु कहे भाल भाल असत्संग गेल। आमाते श्रीभगवान् दया प्रकाशिल।।131

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– बहुत अच्छा हुआ जो इन ब्राह्मणों का संग जो असत्संग था, छूट गया। श्रीभगवान् ने मुझ पर बहुत कृपा की है।

एकदिन शुनह अपूर्व विवरण। शान्तिपुरे धनी एक कुलीन ब्राह्मण।।132

एकदिन की अपूर्व घटना शान्तिपुर में एक धनवान कुलीन ब्राह्मण रहता था।

तार घरे एक शुभ क्रियार निमन्त्रणे। शताधिक विप्र आइला अति हृष्टमने।।133

उसके घर में एक शुभ अनुष्ठान था। उसके निमन्त्रित करने पर सौ से अधिक ब्राह्मण आनन्दपूर्वक एकत्रित हुए।

सम्मान पाइया समे बसिला आसने। हेनकाले न्यासी एक आइला सेइ स्थाने।134

सम्मान पाकर सब अपने आसन पर बैठे। इतने में एक तेजस्वी संन्यासी वहाँ आ पहुँचा।

प्रभाकर सम तान तेजस्विनी मूर्त्ति। ताँर अंग कान्त्ये सर्वदिग् पाय स्फूर्ति।।135

उसका सूर्य के समान तेज था। उसकी अंग कान्ति से सब दिशाएँ प्रकाशित हो उठीं।

वृक्षमूले बसि तिंहो ना कहये बात। लोक सम आसि ताने करे प्रणिपात।136

वह एक वृक्ष के नीचे बैठ गया और मुँह से कुछ न बोला। सब लोग आकर उसको प्रणाम करने लगे।

अन्ध मूक आदि जत साधुस्थाने आइला। ताँर पादपद्मरज सर्वांगे माखिला।।137

अन्धे, गूंगे जो भी व्यक्ति उस संन्यासी की चरण रज लेकर अपने अंगों पर लगाते।

साधु पद रेणु स्पर्शे व्याधि दूरे गेला। महानन्दे तारा सभे नाचिते लागिला।।138

उसके स्पर्श मात्र से उनकी सब व्याधि दूर हो जाती।
वे महाआनन्दित होकर नाचने लगे।

अन्धगणे पाइला चक्षु पंगु पाइला पद। वोवाइते कहये कथा घूचिल आपद।।139

अन्धों को नेत्र मिल गये, लंगड़ों को पांव लग गये और
गूंगे बोलने लगे। सबकी व्याधि नष्ट हो गयी।

आश्चर्य देखिया जत कुलीन ब्राह्मण। पण्डिताभिमानी आर पाषण्डीर गण।।140

वहाँ जितने कुलीन ब्राह्मण उपस्थित तथा पण्डिताभिमानी और पाखण्डी थे– इस आश्चर्य को देखकर विस्मित हो उठे।

सभे आसि साधुपदे करये प्रणति। गले वस्त्र बान्धि करे बहुविध स्तुति।।141

वे सब उठ–उठ कर संन्यासी साधु के चरणों में भी प्रणाम करन लगे। गले में वस्त्र डाल–डाल कर उसकी अनेक प्रकार से स्तुति करने लगे।

साधुर सेवार लागि करे बहु दैन्य। साधु कहे नाहि खाङ् विष्णु प्रसाद भिन्न।।142

उसकी सेवा के लिये बहुत विनती करने लगे। उसने कहा– मुझे
विष्णु–प्रसाद के बिना और कुछ नहीं चाहिये मै वही खाता हूँ।

विष्णुर प्रसाद हय परम पवित्र। विष्णुर अनिवेद्य द्रव्य यैछे मल मूत्र।।143

विष्णुप्रसाद परम पवित्र है परन्तु जो विष्णु को भोग नहीं लगाया हो, वह व्यंजन मल–मूल के समान है।

देवलोक पितृलोक आदि साधुजन। विष्णुर नैवेद्य विनु ना करे ग्रहण।।144

देवलोक, पितृ लोक तथा साधुजन विष्णु–प्रसाद के बिना कोई वस्तु ग्रहण नहीं करते हैं।

एइ नित्य श्रुतिवाक्य करिले हेलन। घोर नरकेते तार अवश्य पतन।।145

इस नित्य श्रुति वचन का उल्लंघन करने से मनुष्य का घोर नरक में अवश्य पतन होता है।

कर्मकर्त्ता कहे मोर गृहे नारायण। ताहान प्रसाद तोंहे करों समर्पण।।146

शुभानुष्ठान करने वाले धनी ब्राह्मण ने कहा– मेरे घर में श्रीनारायण विराजमान हैं, उनका प्रसाद मैं आपको लाकर देता हूँ।

तथास्तु बुलिया साधु स्वीकार करिला। ब्राह्मण समाजे तबे तारे बसाइला।।147

तथास्तु कहकर साधु ने वह बात स्वीकार करली।
ब्राह्मण समाज में उस ब्राह्मण ने उसे बैठा दिया।

नक्षत्र मण्डली मध्ये यैछे सुधाकर। ब्राह्मण मण्डली माझे तैछे साधुवर।।148

जैसे नक्षत्रों में चन्द्रमा शोभित होता है, वैसे
ब्राह्मण मण्डली में उस साधु की शोभा होने लगी।

साधुरे यतन करि अन्न समर्पिला। पिछे द्विजगणे अन्न पारश करिला।।149

यत्नपूर्वक उसे अन्न समर्पण किया गया, फिर दूसरे ब्राह्मणों को अन्न–प्रसाद परोसा गया।

ब्राह्मण भोजन जबे हैल समाधान। हेनकाले प्रभु तथि करिला पयान।।150

जब सब ब्राह्मण भोजन कर चुके, तब वहां भक्तवान्छा कल्पतरू श्रीअद्वैत प्रभु आ पहुँचे।

अन्तर्यामी श्रीअद्वैत जगतेर गुरु। शुद्ध भकतेर हय वान्छा कल्पतरु।।151

श्रीअद्वैत प्रभु तो जगद्गुरु एवं अन्तर्यामी हैं।
शुद्ध भक्तों के लिये तो वान्छा कल्पतरु के समान ही हैं।

ब्राह्मण समाजे देखि ब्रह्म हरिदासे। ईषत् हासिया प्रभु कहे मृदुभाषे।।152

उन्होंने ब्राह्मणं समाज में बैठे उस संन्यासी को देखा– तो जान गये यह तो ब्रह्म हरिदास है। मन्द मुस्कराकर मधुर वाणी में बोले–

प्रिय हरिदास किवा भाव प्रकाशिला। बहुत ब्राह्मणगणेर जातिनाश कैला।153

प्रिय हरिदास! यह कैसी लीला प्रकाशित कर दी? अनेक ब्राह्मणों की जाति भ्रष्ट कर दी।

हरिदास कहे प्रभु मोर इच्छा नहे। वसियाछों द्विजवर्गेर विशेष आग्रहे।।154

श्रीहरिदास ने कहा– प्रभो! मेरी तो इच्छा न थी, मैं इस ब्राह्मण समुदाय के विशेष आग्रह से ही इनमें यहाँ आकर बैठा हूँ।

एत कहि तुरिते करिया आचमन। प्रभुरे प्रणमि बहु करिला स्तवन।।155

इतना कहकर उन्होंने शीघ्र आचमन किया और
श्रीअद्वैत प्रभु को प्रणामकर उनकी बहुत स्तुति की।

ताहा देखि द्विजगणे हैल चमत्कार। कहये आचार्य साक्षात् विष्णु अवतार।।156

यह सब देखकर ब्राह्मणों को बहुत चमत्कार हुआ और कहने लगे–
ये श्रीअद्वैतचन्द्र तो साक्षात् महाविष्णु अवतार एवं हमारे पूज्यनिय गुरूदेव हैं।

यार संगदोषे इहाँय करिलाङ् वर्जन। सेई हरिदासेर हय अलौकिक गुण।।157

जिस हरिदास के संग के कारण हमने श्रीअद्वैत का बहिष्कार किया। उस हरिदास में अलौकिक गुण हैं।

हरिभक्त जनेर विशुद्ध कलेवर। ताहे जातिबुद्धि हय महापापकर।।158

श्रीहरिभक्तों का शुद्ध कलेवर होता है। उसमें जाति बुद्धि करना महापाप है। हरि भजे सो हरि कौ होय।

श्रीअद्वैत–पदे मोरा कैलों अपराध। शिक्षाइला भक्तद्वारे करिया प्रसाद।।159

हमने श्रीअद्वैतप्रभु के प्रति महान् अपराध किया है, और भक्त हरिदास के माध्यम से हमें शिक्षा दी है।

एत कहि द्विजगण जुड़ि दुइ कर। गले वस्त्र बांधि आइला आचार्य गोचर।।160

इतना कहकर सब ब्राह्मण हाथ जोड़कर गले में वस्त्र डाल–डालकर श्रीअद्वैत प्रभु के निकट आये।

तबे दया करि प्रभु देखाय स्वरूप। महाविष्णु सदाशिव दुई एक रूप।।161

तब दया करके श्रीअद्वैत प्रभु ने अपना स्वरूप दिखाया, जिसमें महाविष्णु तथा सदाशिव दोनों एक रूप में मिलित थे। श्रीअद्वैत प्रभु हैं करूणावतार।

रूप देखि द्विजगणेर हैल भावोद्‌गम। अश्रु कम्प पुलक धरे कदम्बेर सम।।162

उस दिव्य स्वरूप को देखकर ब्राह्मणों में भाव उदित हो उठा। उनमें कम्प अश्रु और कदम्ब वृक्ष के समान पुलकावली हो उठी सबको प्रेम प्राप्त हुआ।

कहे तुया पदे प्रभु लइनु शरण। अपराध क्षमि माथे देह श्रीचरण।।163

सब कहने लगे– प्रभो! हमने आपके चरणों की शरण ली है। हमारे अपराधों को क्षमाकर अपने चरण हमारे मस्तकों पर धारण कीजिये।

अष्टांगे प्रणति तबे करिला स्तवन। प्रभुर पादोदक पान कैला सर्वजन।।164

अष्टांग प्रणाम करते हुए सब श्रीअद्वैत की स्तुति करने लगे– सबने प्रभु का चरण जल पान किया।

प्रभुकहे द्विजगण ना करिह भय। हरि नामेर अविचिन्त्य महाशक्ति हय।।165

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– हे द्विजगण! आप भय मत करो, श्रीहरिनाम में अचिन्त्य महाशक्ति है।

सेई नाम ब्रह्म जप कर संकीर्तन। अनायासे हैव सभार अभीष्ट पूरण।।166

उस श्रीनाम ब्रह्म का आप सदा जप एवं संकीर्तन करो। अनायास सबके मनोभीष्ट पूर्ण होंगे।

एत कहि श्रीअद्वैत निज गृहे गेला। महाभाग्ये द्विजगण वैष्णव हइला।।167

इतना कहकर श्रीअद्वैत प्रभु अपने घर चले गये।
सब द्विजगण महाभाग्यों से वैष्णव बन गये।

श्रीवैष्णव पादेर हय अनन्त महिमा। मुञि छार नाहि जानों तार बिन्दु कणा।।168

श्रीवैष्णव चरणों की अनन्त महिमा है, मैं तो अति दीन
उनकी महिमा का एक बिन्दु भी नहीं जानता।

भाग्योदये म्लेच्छ यदि कृष्ण भक्ति पाय। ब्राह्मणत्व लभे सेइ वेदे इहा गाय।।169

म्लेच्छों के भाग्य भी जाग जाते हैं यदि वे श्रीकृष्णभक्ति प्राप्त करते हैं। वे भी
ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लेते हैं। ब्राह्मणों के समान पूज्य बन जाते हैं।

जैछे कोन रसयोगे कास्य स्वर्ण हय। तैछे भक्तियोगे शुद्धसत्त्व उपजय।।170

जैसे रस–पारे के योग से कांसा भी सोना हो जाता है,
वैसे भक्तियोग से शुद्ध सत्व का उदय हो जाना।

कदर्य स्वभाव द्विजगणेर आछिल। वैष्णव प्रभावे ताहा विशुद्ध हइल।।171

उन ब्राह्मणों में मात्सर्य स्वभाव था, वह वैष्णवता के
प्रभाव से मिट गया और उनके मन निर्मल हो गये।

अज्ञे जानाइते प्रभु वैष्णव महत्त्व। द्विज थुइञा हरिदासे दिला श्राद्धपात्र।172

श्रीअद्वैत प्रभु ने अज्ञानियों को वैष्णव महत्व जनाने के लिये।
ब्राह्मण को छोड़कर श्रीहरिदास को श्राद्ध–अन्न खिलाया।

हरिदास जोड़करे प्रभुरे कहिला। ब्राह्मण ना दिया काहे मोरे पात्र दिला।173

श्रीहरिदास ने हाथ जोड़कर अद्वैतप्रभु से कहा– प्रभो!
ब्राह्मण को श्राद्ध पात्र न देकर मुझे क्यों प्रदान कर रहे हैं?

प्रभु कहे श्रीवैष्णवेर अलौकिक बल। तुमि खाइले हय कोटि ब्रह्मभूज्येर फल।।174

प्रभु ने कहा– "श्रीवैष्णवों का अलौकिक बल है। आपको खिलाने से कोटि
ब्राह्मणों को भोजन कराने के समान फल होगा।

हरिदास कहे तुहुँ श्रीवैष्णवाचार्य। तव आज्ञा हय धर्म शास्त्ररूपे धार्य।।175

श्रीहरिदास ने कहा– आप तो वैष्णवाचार्य हैं,
आपकी आज्ञा तो धर्मशास्त्र के वचनों के समान पालनीय है।

श्रीवैष्णवाचार्य नाम शुनि प्रभुवर। प्रेमाविष्ट हञा उच्च करये हुंकार।।176

श्रीवैष्णवाचार्य अपना नाम सुनकर श्रीअद्वैतचन्द्र
प्रेमाविष्ट होकर जोर से हुँकार करने लगे।

हरिदास संगे तान बाड़िल उल्लास। सदा करे हरिनाम कीर्तन विलास।।177

श्रीहरिदास के साथ उनका आनन्द और भी बढ़ गया।
सदा श्रीहरिनाम संकीर्तन आनन्द मनाते रहते।

एकदिन हरिदास कहे प्रभुस्थाने। नित्य धर्म नष्ट करे दुष्ट म्लेच्छगणे।।178

एकदिन श्रीहरिदास से श्रीअद्वैतप्रभु बोले यवनगण नित्यधर्म को नष्ट कर रहे हैं।

देवता प्रतिमा भांगि करे खण्ड खण्ड। देव पूजार द्रव्य सब करे भण्ड भण्ड।।179

देवताओं की मूर्तियों को तोड़कर टुकड़े–टुकड़े कर रहे हैं।
देवपूजा सामग्री को झूठा भ्रष्ट कर देते हैं।

श्रीमद्भागवत आदि धर्मशास्त्रगणे। बल करि पोड़ाइया फेलाय आगुने।।180

श्रीमद्भागवतादि धर्मशास्त्र ग्रन्थों को बलपूर्वक खींचकर अग्निमें जला डालते हैं।

ब्राह्मणेर शंख घण्टा काड़ि लञा जाय। अंगेर तिलक मुद्रा बले चाटि खाय।।181

ब्राह्मणों के शंख घंटा निकालकर ले जाते अंगों पर लगे–
तिलक को जबरदस्ती जीभ से चाटते हैं।

श्रीतुलसी वृक्षे मूते कुकुरेर सम। देवगृहे मलत्याग करे बलिया पागल।।182

श्रीतुलसी वृक्ष पर कुत्तों की तरह खड़े होकर पेशाब कर देते हैं और हिन्दुओं को पागल कहकर देव मन्दिरों में मल–त्याग कर आते हैं।

हेनमते कत शत दुष्ट व्यवहारे। अवहेले सर्व धर्म कर्म नष्ट करे।।183

ऐसे कितने सैकड़ों पापाचरण करते हैं मुसलमान लोग।
वे अवहेलना कर सब धर्म नष्ट कर रहे हैं।

कृष्णेर प्रतिज्ञा दृढ़ आछे शास्त्रे जानि। जेइ जेइ काले हय सत्यधर्मेर ग्लानि।184

शास्त्रों से जाना जाता है कि श्रीकृष्ण की प्रतिज्ञा है कि–
जब जब सत्य–धर्म का नाश होता है।

जेइ काले हय अधर्मेर प्रादुर्भाव। सेइ सेइ काले कृष्ण हय आविर्भाव।।185

और अधर्म की वृद्धि होती है, उस– उस समय श्रीकृष्ण का आविर्भाव होता है।

एवे सेई काल आसि हैल उपस्थित। इथे काहे कृष्णचन्द्र ना हइला उदित।।186

अब वह समय आ पहुँचा है किन्तु अब श्रीकृष्णचन्द्र अवतार क्यों नहीं लेते?

कि मते हइवे प्रभु धर्मेर रक्षण। ताहा भावि सदा मोर उत्कण्ठित मन।।187

प्रभो! धर्म की रक्षा कैसे होगी? इसे सोचकर मेरा मन अति व्याकुल रहता है।

प्रभु कहे एइ कलिकाल व्यवहार। कृष्णेर प्रकट बिनु नाहि प्रतिकार।।188

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– यह कलिकाल की करतूत है। श्रीकृष्ण के प्रकट होने के अलावा और कोई उपाय नहीं रक्षा का।

कृष्ण प्रकटिया नाम करों सुविस्तार। अनायासे उद्धारिमु सकल संसार।।189

श्रीकृष्णचन्द्र को प्रकटित कराकर श्रीनाम का प्रचार करूँगा,
उससे अनायास संसार का उद्धार करूँगा।

एत कहि हुंकार करये घने घन। हरिदास प्रेमावेशे करये नर्तन।।190

इतना कहकर श्रीअद्वैतचन्द्र उच्च स्वर में बार–बार हुँकार करने लगे एवं यह दर्शन कर श्रीहरिदास प्रेमावेश में नृत्य करने लगे।

यद्यपि अद्वैतचन्द्र सर्वतत्त्व जाने। तथापि प्रतिज्ञा कैला लौकिक विधाने।।191

यद्यपि श्रीअद्वैतचन्द्र सब तत्व–लीला रहस्य जानते हैं तो भी
लौकिक रीति अनुसार प्रतिज्ञा करके ऐसा कहने लगे।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे यार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।192

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत चरणों की आशा करते हुए
श्रीईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश का वर्णन करते हैं।

दशम अध्याय

जय जय श्रीगौरांग जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीगौरांग की जय हो। श्रीसीतानाथ अद्वैतप्रभु की जय हो।
श्रीनित्यानन्दराम की भक्तों सहित जय हो।

एकदिन श्रीअद्वैत गंगास्नान करि। हुंकार करये धन बलि हरि हरि।।02

एकदिन श्रीअद्वैत गंगास्नान करके बारम्बार "हरि–हरि" बोल हुँकार करने लगे।

मने भावे कबे उदय हइवे गौरांग। देह प्राण जुड़ाइवाङ पाञा तार संग।।03

वे मन में सोच रहे थे कि कब श्रीगौरांग अवतीर्ण होंगे? उनके दर्शन एवं संग को प्राप्त कर देह और प्राण कब शीतल होंगे?

तबे गाढ़ निष्ठाय पुष्प तुलसीर दल। कृष्ण पादोद्देशे दिला आर गंगाजल।।04

तब गाढ़ निष्ठापूर्वक पुष्प, तुलसीदल तथा
गंगाजल श्रीकृष्ण चरणों में अर्पण करने लगे।

आचार्य हुंकारे कृष्णेर उत्कण्ठित मन। एक पुष्पांजलि इच्छाय कैला आकर्षण।।05

श्रीअद्वैत के हुँकार से श्रीकृष्ण का मन भी उत्कण्ठित हो उठा।
एक ही पुष्पांजलि अर्पण करते ही–

पुष्पांजलि उड़ाइते देखि सीतानाथ। कृष्ण कृपा मानि धाञा चले तार साथ।।06

श्रीसीतानाथ ने देखा मानों कृष्णकृपा उसके साथ गंगा में धावित हो रही है।

हरिनाम स्मरि हरिदास पिछे धाय। पुष्पान्जलि उपनीत हैल नदीयाय।।07

श्रीहरिदास श्रीहरिनाम स्मरण करते हुए उसके पीछे
दौड़ने लगे। वह पुष्पांजलि नदिया में आ पहुँची।

प्रभुकहे शुन आरे प्रिय हरिदास। एइ ग्रामे कृष्णचन्द्र हइव प्रकाश।।08

श्रीअद्वैतबोले अरे प्रिय हरिदास सुन! इस ग्राम में ही श्रीकृष्णचन्द्र अवतीर्ण होंगे।

श्रीअनन्त संहिताये जेइ सिद्ध वाक्य। ताहार सत्यता आजि हइल प्रत्यक्ष।।09

श्रीअनन्त संहिता में जिस सिद्ध वचन का उल्लेख है।
वह आज प्रत्यक्ष रूप से सत्य होता दिखता है।

हेनकाले जगन्नाथ मिश्रेर गृहिणी। श्रीयशोदारूपा नाम शची ठाकुराणी।।10

इसीसमय श्रीजगन्नाथमिश्र की गृहिणी शची ठाकुरानी जो यशोदा स्वरूपिणी हैं।

गंगास्नाने आइला तिहों छिला गर्भवती। सेई पुष्पांजलि तान अंगे हैला स्थिति।11

गंगास्नान करने पहुँची। वह गर्भवती थीं। उस पुष्पांजलि ने आकर उनके अंगों
में अवस्थान किया।

शची भावे आजु किवा अमंगल हैल। ठेलितेह पुष्प आसि अंगेते उठिल।।12

शची सोचने लगीं आज यह कैसी अमंगल घटना घटी है? मैं बार–बार इन
पुष्पों को दूर हटाती हूँ किन्तु फिर फिर ये मेरे अंगों पर उठते आते हैं।

तबे शची झट स्नान करि तटे आइला। प्रभु भावावेशे कृष्णमातारे चिनिला।।13

शची स्नानकर झट किनारे पर निकल आई। श्रीअद्वैतप्रभु ने भावावेश में उन्हें
कृष्णमाता के रूप में पहचानकर प्रसन्नता को प्राप्त किया।

गर्भलक्षण देखि तान प्रभु मने भावे। एइ गर्भे कृष्णचन्द्रेर प्रकट सम्भवे।।14

उनमें गर्भ–लक्षण देखकर श्रीअद्वैतचन्द्र सोचने लगे कि– इसी गर्भ से ही श्रीकृ
ष्ण के अवतीर्ण होने की सम्भावना है, जो जगत् का उद्धार करने आयेंगे।

तार परीक्षार्थ गर्भे दन्डवत् कैला। साधारण गर्भ हेतु गर्भपात हैल।।15

इस बात की परीक्षा करने के लिये प्रभु ने माता शची को प्रणाम किया।
साधारण गर्भ होने से वह गर्भपात हो गया।

सुदुःखिता हञा शची गर्भ परिहरि। निज घरे गेला झाट गंगा स्नान करि।16

माता शची ने अति दुखित हो गर्भरहित होकर गंगा में स्नान किया और शीघ्र
ही अपने घर चली गयीं।

गृहिणीरे म्लान देखि कहे मिश्रराय। काहे आजि सकातरा देखिगो तोमाय।17

गृहिणी को उदास देखकर मिश्र जगन्नाथ ने कहा– आज तुम कैसे अति कातर
दिख रही हो।

शची कहे काँहा हैते वृद्ध ब्राह्मण आइला। दण्डवत् मात्रे मोर गर्भपात कैला।।18

शची ने कहा– न जाने एक वृद्ध ब्राह्मण कहाँ से आया और
मुझे दण्डवत प्रणाम करते ही हाय! मेरा गर्भपात हो गया।

जगन्नाथ कहये निमित्त मात्र नर। वस्तुतः सकल कार्येर कारण ईश्वर।।19

जगन्नाथ ने कहा– मनुष्य तो निमित्त मात्र बन जाता है।
वास्तव में सब कार्यों के मूल कारण तो श्रीभगवान् ही हैं।

शोक छाड़ि नारायणे करह स्मरण। याँहा हैते हय सर्व विघ्नेर दमन।।20

तुम अब सब शोक त्यागकर श्रीनारायण का स्मरण
करो, जिससे समस्त विघ्नों का नाश होता है।

हेथा श्री श्रीअद्वैताचार्य मने विचारिया। नवद्वीपे टोल कैला गौरांग लागिया।।21

इधर श्रीअद्वैत प्रभु ने मन में विचार कर नवद्वीप में
श्रीगौरांग के दर्शन हित विद्यालय आरम्भ किया।

सेई नदीयाय जत पंडित सज्जन। प्रभुरे प्रधान बलि करिला गमन।।22

नदिया में जितने सज्जन–पण्डित थे। वे श्रीअद्वैतचन्द्र को
अपने में प्रधान मानके उनके पास जाकर शास्त्र चर्चा करने लगे।

पंडित श्रीवास ठाकुर नारदावतार। प्रभु संगे हैल तान आनन्द अपार।।23

श्रीनारद अवतार पण्डित श्रीवास थे। उनके साथ श्रीअद्वैत प्रभु का अति
आनन्दमय मिलन हुआ।

दिने प्रभु छात्र पढ़ाय गीता भागवत। कभु वेद स्मृति पढ़ाय छात्रेर इच्छामत।।24

दिन में प्रभु छात्रों को श्रीगीताभागवत पढ़ाते थे। वे सर्ववेत्ता थे।
कभी छात्रों की इच्छानुसार वेदस्मृति आदि भी पढ़ाया करते।

रात्रे हरिदास संगे करिया मिलन। उच्च स्वरे करे हरिर नाम संकीर्तन।।25

रात को श्रीहरिदास के साथ मिलकर उच्च स्वर से श्रीहरिनाम संकीर्तन से प्रभु
को आह्वान करते।

श्रीअद्वैत प्रभुर देखि अलौकिक कार्य। ताँर स्थाने मन्त्र लैला विष्णुदासाचार्य।।26

श्रीअद्वैत प्रभु का यह अलौकिक कार्य देखकर– विष्णुदासाचार्य ने इनसे
दीक्षाग्रहण कर ली।

श्रीमद्भागवत तिहों पड़े प्रभु–स्थाने। अनेक वैष्णव आइला से पाठ श्रवणे।27

वे श्रीअद्वैत प्रभु से श्रीमद्भागवत पढ़ने लगे। उस पाठ को सुनने के लिये वहां
अनेक वैष्णव एकत्रित होने लगे। वैष्णव मन मोहन थे श्रीआचार्यप्रभु।

नन्दनी प्रभृति श्रीमान् वासुदेव दत्त। प्रभु स्थाने मन्त्र लञा हइला कृतार्थ।28

श्रीनन्दनी श्रीमान वासुदेवदत्त आदि ने प्रभु के पास
आकर मन्त्रदीक्षा ग्रहण की और कृतार्थ हो गये।

बहु शिष्य लञा प्रभु करे कृष्णालाप। कभु प्रेमोन्मत्त हञा करये प्रलाप।।29

अनेक शिष्यों में बैठकर श्रीअद्वैत श्रीकृष्णकथा कहते और
कभी–कभी प्रेमाविष्ट होकर प्रलाप करने लगते।

जगन्नाथ मिश्र पत्नी शचीर गर्भ–गण। अद्वैतेर प्रणामे क्रमे हइल पतन।।30

श्रीजगन्नाथ मिश्र की पत्नी शची के अनेक गर्भ इसप्रकार श्रीअद्वैतचन्द्र के द्वारा
उन्हें प्रणाम करने पर क्रमशः पात हो गये।

क्रमे अष्टम गर्भपाते सुदुःखित हञा। शची जगन्नाथमिश्रे कहये कान्दिया।31

इसप्रकार क्रम से आठवें गर्भपात होने पर शची बहुत
दुखी हो उठी और रोकर श्रीमिश्र से कहने लगी–

सर्वनाश हैल अद्वैतेर परणामे। कि मते रहिव वंश करह विधाने।।32

इस अद्वैत आचार्य के प्रणाम करने से हमारा तो सर्वनाश हुआ जा रहा है।
हमारे वंश की वृद्धि कैसे होगी, इस विषय में कुछ उपाय कीजिये।

ताहा शुनि शास्त्र शुद्ध मिश्र द्विजवर। व्यग्र हञा आइला याँहा अद्वैत ईश्वर।।33

यह सुनकर शास्त्र पारंगत मिश्र जगन्नाथ कुछ चिन्तित होकर श्रीअद्वैत प्रभु के
पास आ गये।

प्रभुके प्रणाम करि नाना स्तव कैला। प्रभु आशीष करिया मिश्रे बसाइला।।34

प्रभु को प्रणाम कर मिश्र ने उनकी बहुत स्तुति की।
प्रभु ने आशीर्वाद देकर श्रीमिश्र को बैठाया।

प्रभु कहे कि लागिया आइले मोर पाशे। मिश्रवर जोड़ करे कहे मृदु भाषे।35

और पूछा कि आप मेरे पास किसलिये पधारे हैं?
मिश्र ने हाथ जोड़कर मधुरवाणी में कहा–

तुया श्रीचरणे मुञि लइनु शरण। अपराध थाके यदि करह मार्जन।।36

मैंने आपके चरणोंकी शरण ली है, यदि कोई अपराध
हमसे बन गया है तो उसे क्षमा मार्जन कीजिये।

दया करि प्रभु मोरे देह एइ भिक्षा। मो हेन अभागेर हय जैछे वंश रक्षा।।37

आप दयाकर मुझे यही भिक्षा दीजिये कि जिससे मुझ अभागे की वंश वृद्धि हो।

प्रभु कहे एवे तुँहु याह निज घरे। ये हय विधान मुञि कहिमु तोहारे।।38

श्रीअद्वैतगोसांई ने कहा– इस समय आप अपने घर जाइये,
इसका जो उपाय होगा उसे फिर बताऊँगा।

प्रभु आज्ञा पाञा मिश्र निज घरे गेला। प्रभुर आश्वास वाक्य शचीरे कहिला।।39

प्रभु आज्ञा पाकर मिश्र अपने घर लौट आये और
शची को श्रीअद्वैत के आश्वस्त वचन सुनाये।

पर दिन मोर प्रभु प्रातः कृत्य सारि। जगन्नाथ मिश्र गृहे गेला त्वरा करि।40

दूसरे दिन मेरे श्रीअद्वैत प्रभु प्रातः कृत्य समाप्त कर
शीघ्रता से श्रीजगन्नाथ मिश्र के घर पहुँचे।

प्रभुर आगमन देखि मिश्र द्विजवर। दन्ते तृण करि गेला ताहान गोचर।।41

प्रभु को आया देखकर मिश्र दाँतों में तृण धारण कर उनके सामने आकर
उपस्थित हुए।

दण्डवत् करि दिला वसिते आसन। पाद्य अर्घ्य दिया ताने करिला पूजन।।42

प्रभु को श्रीमिश्र ने दण्डवत् प्रणाम किया और
बैठने को आसन दिया, पाद्य–अर्घ्य देकर प्रभुकी पूजा की।

तबे शचीदेवी आसि करिला प्रणति। प्रभु कहे वाछा तुमि हउ पुत्रवती।।43

तब शची ने आकर प्रभुको प्रणाम किया। प्रभुने कहा– बेटी! तुम पुत्रवती होओ।

शुनि महानन्दे कहे मिश्र द्विजराज। जाहे तुया वाक्य रहे कर सेई काज।।44

सुनकर मिश्र जगन्नाथ महानन्दित हुए और बोले–जैसे आपके वचन सत्य हों,
वही उपाय अब आप करके हमारी मनोवान्छा पूर्ण करिये।

प्रभु कहे एक मन्त्र पाइनु स्वपने। भक्तिकरि सेई मन्त्र लह दुहुजने।।45

प्रभु ने कहा– मैंने एक मन्त्र स्वप्न में प्राप्त किया है।
आप दोनों स्त्री–पुरुष उस मन्त्र को ग्रहण करो।

सर्व अमंगल तबे अवश्य खण्डिवे। परम पण्डित दिव्य तनय लभिवे।।46

उससे आपका समस्त अमंगल निश्चय ही नष्ट हो जायगा।
आपको परम पण्डित दिव्य पुत्र प्राप्त होगा।

आज्ञा शुनि आइला दोंहे करिया सिनाने। तबे प्रभु यथाविधि पूजि नारायणे।।47

आज्ञा पाकर दोनों स्नान कर प्रभु के निकट आये।
तब प्रभु ने यथाविधि श्रीनारायण का पूजन कर–

दोंहाकारे मन्त्र दिला श्रीअद्वैतचन्द्र। चतुराक्षर श्रीगौर–गोपाल महामन्त्र।।48

दोनों को मन्त्र दिया। वह महामन्त्र था–

सर्वसिद्धिदायक चतुराक्षर श्रीगौर–गोपाल मन्त्र।

मन्त्र पाञा दोंहाकार हैल भावोद्‌गम। प्रभुरे प्रणमि करे सदैन्य स्तवन।।49

मन्त्र प्राप्त करते ही दोनों में प्रेमोदय हो उठा।

दोनों ने प्रभु को प्रणाम किया और दीनतापूर्वक स्तुति की।

"कृष्णे मतिरस्तु" बलि प्रभुवर दिला। भोजन करिया तबे निजस्थाने गेला।।50

प्रभु ने "कृष्ण में आपकी मति हो"– ऐसा कहकर आशर्वाद दिया। तब भोजन–प्रसाद पाकर श्रीअद्वैतप्रभु अपने निवास स्थान पर लौट आये।

दिनकत परे शचीर हैल गर्भाधान। ताहे प्रकटिला विश्वरूप गुणधाम।।51

कुछ दिनों के बाद श्रीशची को गर्भाधान हुआ।

समय पर गुणधाम श्रीविश्वरूप का जन्म हुआ।

महासंकर्षण बलि प्रभु याँरे कय। ताहान महिमा चतुर्मुख ना जानय।।52

श्रीअद्वैत प्रभु श्रीविश्वरूप को महासंकर्षण कहते थे।

उनकी महिमा को ब्रह्मा भी नहीं जान सकते।

आजन्म वैराग्य तान लोके चमत्कार। आचार्येर संगे कैला धर्मेर प्रचार।।53

वे आजन्म संसार से विरक्त थे। यह देखकर लोगों को चमत्कार होता था। वे अद्वैताचार्य के साथ मिलकर धर्म का प्रचार करते रहते थे।

एवे कहि महाप्रभु चैतन्यावतीर्ण। याहा श्रवण मात्रे जीव हय महाधन्य।।54

अब श्रीमहाप्रभु चैतन्यचन्द्र के अवतार का विवरण कहते हैं–

जिसे सुनने मात्रसे जीव धन्य हो जाता है।

श्रीअद्वैतचन्द्र निति कृष्ण पूजान्तरे। आइस गौर हरि बलि करये हुंकारे।।55

श्रीकृष्णपूजा के बाद नित्य "गौर हरि आओ"– ऐसा कहकर

श्रीअद्वैत हुँकार करते और "हरि–हरि" बोलते हुए रोते रहते थे।

अद्वैतेर हुंकार कृष्णाकर्षि महामन्त्र। ताहे कृष्णेर मन चन्चल हइल एकान्त।।56

श्रीअद्वैत हुंकार क्या था? श्रीकृष्णाकर्षण के लिये महामन्त्र ही था।

उससे श्रीकृष्ण का मन अवतरित होने के लिये महाचंचल रहने लगा।

पूर्ण सत्व स्वीकारिया नदीया नगरे। अवतीर्ण हैला कृष्ण सदय अन्तरे।।57

पूर्ण सत्वता को स्वीकार कर नदिया नगर में

श्रीकृष्ण करुणाकर श्रीगौरांग रूप में अवतीर्ण हुए।

शचीगर्भे दुग्धार्णवे गौरचन्द्रोदय। बुझिला आचार्य शचीर श्रीअंग छटाय।।58

श्रीशची गर्भरूप क्षीरसागर से श्रीगौरचन्द्र का उदय हुआ है

शचीमाता की कान्ति को देखकर ही श्रीआचार्य यह जान गये।

एकदिन प्रभु बसि गंगार गहरे। तुलसी चन्दन पुष्पे कृष्णे पूजा करे।।59

एकदिन प्रभु गंगा के किनारे बैठकर तुलसी–चन्दन
पुष्पादि देकर श्रीकृष्ण की पूजा करने लगे।

गंगाते कृष्णेर मूर्ति आरोप करिया। तिन पुष्पांजलि गंगाय दिला आसाइया।।60

गंगामें ही श्रीकृष्णमूर्ति की धारणकर तीन पुष्पाजलियां उन्होंने गंगामें अर्पित कीं।

कृष्णेच्छाय पुष्पांजलि जाय द्रुतगति। पूर्वमते शचीदेवीर अंगे कैला स्थिति।61

श्रीकृष्णेच्छा से वे पुष्पांजलियां द्रुतगति से पहले की भांति श्रीशची देवी के अंगों
में ही जाकर लगीं। वह उस समय गंगा स्नान कर रही थीं।

देखि चमकिया शची भावे दुःख मने। पुन के फूल पाठाइला करिया गेयाने।।62

देखकर शची देवी तो दुखित होकर चमक उठीं। यह जानकर कि फिर किसी
ने मेरा अमंगल करने के लिये ये पुष्प छोड़े हैं।

तबे झाट तुलसी कुसुम ठेलि फेलि। तीरे ऊठे रामनारायण हरि बुलि।।63

उसने झट उन पुष्प–तुलसी को दूर हटा दिया और
किनारे पर निकलकर 'रामनारायणहरि' बोलने लगीं।

ताहा देखि हैल प्रभुर दिव्य प्रेमोद्‌गार। गौरहरि बलि घन छाड़ये हुंकार।।64

उसे देखकर प्रभु को दिव्य प्रेमावेश हो उठा।
"गौर हरि" बोलकर उच्च स्वर में हुंकार करने लगे।

श्रीशची मातारे तबे प्रभु सीतानाथ। प्रदक्षिण करि गर्भे कैला दन्डवत्।।65

तब अद्वैत प्रभु ने श्रीशची माता को प्रदक्षिण की और
दण्डवत प्रणाम की गर्भ को लक्ष्य कर।

शची कहे रह रह आचार्य ठाकुर। इथे मोर अपराध हइल प्रचुर।।66

शची कहने लगी– हे आचार्य ठाकुर! रहने दीजिये,
रहने दीजिये। मेरा प्रचुर अपराध हो रहा है।

पूर्वे प्रणमिया गर्भगण विनाशिला। कह प्रभु पुन काहे शिष्ये प्रणमिला।।67

पहले तो आपके प्रणाम करने से मेरे अनेक गर्भ नष्ट हो गये। अब मैं आपकी
शिष्या हूँ मुझे प्रणाम कर फिर क्यों अपराधी बना रहे हो।

एत कहि शची ताने दण्डवत् कैला। आशीष करिया प्रभु शचीरे कहिला।।68

इतना कहकर शची ने प्रभु को फिर प्रणाम किया।
प्रभु ने आशीर्वाद देकर शची से कहा–

आर भय नाञि मा गो ए सत्य वचन। एइ गर्भे कृष्ण सम हइव नन्दन। ।69

हे माता! अब कोई भय नहीं है, इसे सत्य मानिये।

इस गर्भसे श्रीकृष्ण के समान आपको पुत्र होगा।

ताहा शुनि महानन्दे शची घरे गेला। प्रभु प्रेमोन्मत्त हञा हरिध्वनि कैला। ।70

यह सुनकर शची महानन्दित होकर घर चली आयी

और प्रभु प्रेमोन्मत्त होकर श्रीहरि ध्वनि करने लगे।

तबे शचीदेवीर पूर्ण हैल दश मास। तथापि श्रीकृष्णचन्द्रेर नहिल प्रकाश। ।71

तब शचीदेवीके दस मास तो पूरे हो गये, किन्तु श्रीकृष्णचन्द्र आविर्भूत नहीं हुए।

क्रमेते द्वादश मास अतीत हइल। जगन्नाथ मिश्र आदि महात्रास पाइल। ।72

क्रम से बारह मास गुजर गये। अब तो मिश्र जगन्नाथ

आदि बहुत दुखित और भयभीत हुए।

शचीर जनक नीलाम्बर चक्रवर्ती। ज्योतिष शास्त्रेते तिहों साक्षात् गर्गमूर्ति ।73

शची के पिता श्रीनीलाम्बर चक्रवर्ती ज्योतिष शास्त्र ज्ञान में साक्षात् गर्ग मुनि के समान थे।

गणना करिया तिहों कहे सभा माझे। एइ गर्भे एक महापुरुष विराजे। ।74

उन्होंने गणना कर सबके बीच कहा– "इस गर्भ में एक दैवीय महापुरुष है"

त्रयोदश मासे सेई सर्व शुभक्षण। इहार प्रकटे जीवेर हैव सुमंगल। ।75

तेरहवें मास में सब शुभ–क्षणों में वह प्रकट होगा।

उसके प्रकट होने से समस्त जीवोंका सुमंगल होगा।

ताहा शुनि सर्वजन आनन्दे भासिल। स्फटिकेर स्तम्भे नृसिंहाविर्भाव जैछे ।76

उनके वचन सुनकर सब लोग बहुत आनन्दित हुए, जैसे स्फटिक मणि खम्भ से श्रीनृसिंह के आविर्भूत होने पर सब देवतागण आनन्दित हुए थे।

स्वयं भगवाने नाहि मायार सम्बन्ध। यिहों प्रेम रत्नाकर श्रीसच्चिदानन्द। ।77

स्वयं भगवान् का माया से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

वे प्रेमरत्नाकार हैं एवं सच्चिदानन्द स्वरूप हैं।

याहाँ तान वासस्थान तांहा वृन्दावन। जीव निस्तारिते तनु करे प्रकटन। ।78

जहां वे अवस्थान करते हैं, वही वृन्दावन है।

जीवों के निस्तार के लिये वे अवतीर्ण होते हैं।

ताँर माता पिता आदि बान्धव चिन्मय। धामादि चिन्मय सबे सदानन्दमय। ।79

उनके पिता–माता आदि बांधव सब चिन्मय हैं

और धामादि भी चिन्मय और सदा आनन्दमय हैं।

जीवधर्मे हय तान भार दुखाभास। कृष्ण प्रकट करणे सभार प्रकाश।।80

जीव धर्म से लौकिक लीला में उनमें भी दुखाभास दिखता है।
श्रीकृष्ण के प्रकट होने के कारण सब भक्त भी अवतार लेकर
उनके साथ सहयोगिता की शिक्षा देते हैं।

तिन वान्छा मने करि श्रीनन्दनन्दन। श्रीराधार भाव कान्ति करिया ग्रहण।।81

तीन वान्छाओं को मन में धारण कर श्रीनन्दनन्दन श्रीराधा की भाव–कान्ति को ग्रहण करके स्वयं गौररूप में नदिया में अवतीर्ण हुए। उनकी तीन वान्छा इस प्रकार हैं।

1. श्रीराधा प्रेम की महिमा कैसी है?
2. उस राधा प्रेम के द्वारा मेरे नाम–गुण–रूप का माधुर्य कैसा अनुभव होता है? तथा
3. उस मेरे माधुर्य के आस्वादन से श्रीराधा कैसा आनन्द प्राप्त करती है?

स्वयं गौररूपे नदीयाय अवतीर्ण। शुद्ध प्रेम वितरिया विश्व कैला धन्य।।82

इन तीन वान्छाओं की पूर्ति के लिये श्रीब्रजेन्द्रनन्दन कृष्ण गौरांग रूप में प्रकट हुए। शुद्ध प्रेम भक्ति का वितरण कर उन्होंने समस्त विश्व को धन्यकर दिया।

चौद्दशत सात शकेर फाल्गुनी पूर्णिमा। सेई दिने राहु आसि ग्रसिल चन्द्रमा।।83

1407 शकाब्द (सन् 1484) की फाल्गुनी पूर्णिमा थी।
उसी दिन राहू ने आकर चन्द्रमा को ग्रस लिया।

सिंह राशि सिंह लग्ने सर्व शुभ योगे। पृथ्वी पुलकित हैला कृष्ण अनुरागे।84

सिंह राशि एवं सिंह लग्न था जो सब प्रकार शुभ योग था। उस समय समस्त पृथ्वी कृष्णागमन से पुलकित और कृत्य–कृत्य हो उठी।

संध्याय चिन्मय हरिनाम बलाइञा। श्रीकृष्ण प्रकट हैला गौरांग हइञा।।85

सन्ध्या के समय जब श्रीहरिनाम गूंज रहा था और दशों दिशाओं में आनन्द की लहर छा रही थीं। तब श्रीकृष्ण भगवान गौरांग रूप में प्रकट हुए।

एके कृष्णेर दोलोत्सव जगते आनन्द। ताहे चन्द्रग्रहणे हइल महानन्द।।86

एक तो उस दिन श्रीकृष्ण का फूल दोलोत्सव था फिर चन्द्रग्रहण होने से महानन्द छा रहा था और गौरांग अवतार के कारण जगद्‌वासी आनन्दित हुए।

केह करे दान ध्यान हञा शुद्धाचारी। केह नाचे केह गाय बलि हरि हरि।87

कोई तो शुद्धाचरण पूर्वक ध्यानमग्न था और दान दे रहा था।

कोई हरि–हरि बोलकर नाच गा रहा था।

महाप्रभुर आविर्भावे प्रभु नित्यानन्द। राढ़े रहि प्रेमे गर्जे यैछे मेघवृन्द।।88

महाप्रभु के आविर्भाव के समय श्रीनित्यानन्द प्रभु जो बलरामजी के अवतार राढ़ ग्राम में मेघों की तरह आनन्द में गर्जना करने लगे।

श्रीगौरांगेर अंग आभा स्वर्णइन्दु तुल। पीतवर्ण ज्योत्स्नाय सूतिगृह कैला आलो।।89

श्रीगौरांग के शरीर की कांति सुवर्णके (चन्द्र के) समान थी।
उनकी सुवर्ण कांति से सारा सूतिका घर जगमगा रहा था।

आजानुलम्बित भुज कमल लोचन। सेई रूपेर लव मुञि वर्णिते अक्षम।।90

आजानु पर्यन्त श्रीगौर की लम्बी भुजाएं कमल नेत्र, जिसके अलौकिक दिव्य स्वरूप का लवमात्र भी वर्णन करने में मैं असमर्थ हूँ।

अलौकिक रूप देखि शची मोह हैला। जगन्नाथ विष्णुबुद्ध्ये स्तव आरम्भिला।।91

बालक के अलौकिक रूप सौन्दर्य को देखकर माता शची मोहित हो उठी एवं जगन्नाथ मिश्र तो उन्हें विष्णु जानकर उसकी स्तुति करने लगे।

ताहा देखि गौरचन्द्र माया विस्तारिल। ताहे दोंहाकार पुत्रबुद्धि उपजिल।।92

यह देखकर श्रीगौरचन्द्र ने माया का विस्तार किया।
जिससे दोनों की श्रीगौरचन्द्र में पुत्रबुद्धि हो गयी।

कृष्ण आविर्भावे जीवेर हइल आनन्द। प्रेमानन्दे डूबिला श्रीभागवत वृन्द।।93

श्रीकृष्ण के आविर्भूत होने पर जीवों को महा आनन्द हुआ
और भक्तवृन्द प्रेमानन्द में सराबोर हो उठे।

श्रीअद्वैत जानि कृष्ण चैतन्यावतीर्ण। हुंकार छाड़ये आपनारे मानि धन्य।।94

श्रीअद्वैतचन्द्र जान गये कि श्रीकृष्ण चैतन्यरूप में अवतीर्ण हुए हैं।
वे अपने को धन्य–धन्य मानकर उच्च स्वर में हुंकार करने लगे।

हरिदास आदि करे नाम संकीर्तन। केह नाचे प्रेमे केहे हैला अचेतन।।95

श्रीहरिदास नाम संकीतन करने लगे।
कोई तो प्रेम में नाचने लगा। कोई तो बेसुध हो गया।

श्रीगौरांग जन्म मात्रे महायोगी प्राय। नयन मुदिया रैल दुग्ध नाहि खाय।।96

श्रीगौरांग जन्मते ही महायोगी की भांति नेत्र बन्द करके
रहे आये और मां का दूध तक भी नहीं पिया।

ताहा देखि शचीदेवी कान्दिते लागिला। जगन्नाथमिश्र आदि महादुखी हइला।।97

यह देखकर शची माता तो रोने लगीं। श्रीजगन्नाथ मिश्रादि

सब बान्धव भी महादुखी हो उठे।

हेनकाले मोर प्रभु आचार्य गोसाञि। निजप्रभु देखिवारे आइला सेई ठाञि।98

इतने में मेरे प्रभु श्रीअद्वैताचार्य जी वहां अपने इष्टदेव के दर्शन करने के लिये आ पहुँचे।

प्रभुरे देखिया मिश्र दण्डवत् कैला। शोकेर कारण प्रभु ताहाने पूछिला।।99

श्रीअद्वैतप्रभु को आया देखकर श्रीमिश्र ने दण्डवत् प्रणाम किया।
प्रभु ने उनसे दुख का कारण पूछा।

मिश्र कहे प्रभुवर तुहुँ सर्व जान। पुत्रधन देखाइया पुन कैला आन।।100

मिश्रजी ने कहा– प्रभो! आप तो सर्वज्ञ हैं। आपकी कृपा ने पुत्रधन दिखाया किन्तु न तो यह बालक आँख खोलता है और न माँ का दूध ही पी रहा है।

प्रभु कहे मिश्रवर खेद ना करिह। भाल हैव शिशु सत्य ना कर सन्देह।।101

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– मिश्र! कुछ दुख मत करना। निश्चय यह बालक स्वस्थ हो जायेगा, इसमें जरा भी सन्देह नहीं है बस जन्मोत्सव का आनन्द करो।

एत कहि प्रभु सूतिगृहान्तिके गेला। प्रभुपद धरि शची कान्दिते लागिला।102

इतना कहकर श्रीअद्वैत प्रभु सूतिका गृह में चले गये।
शची उनके श्रीचरण पकड़ कर रोने लगी।

आचार्य कहेन मा गो ना कर क्रन्दन। दूरे जाउ भाल हैव तोमार नन्दन।103

आचार्य ने कहा– शची! तुम मत रोओ, थोड़ा दूर जाओ और तुम्हारा शिशु स्वस्थ ही है।

गुरू आज्ञाय शची माता किछु दूरे गेला। प्रभु महाप्रभु स्थाने उपनीत हैला।।104

गुरु आज्ञा पाकर शचीमाँ वहाँ से कुछ दूर चली गयी
और श्रीअद्वैतप्रभु श्रीगौरांगसुन्दर के पास आये।

प्रेमे डगमग अंग अद्वैत देखिया। गौररूपी श्रीगोविन्द उठिला हासिया।।105

उनके दर्शनकर श्रीअद्वैत के समस्त अंग डगमगाने लगे।
उन्हें देख गौररूपी श्रीगोविन्द मुस्कराने लगे।

स्वयं रूपे अवतीर्ण कृष्णे निरखिया। आचार्य विशुद्ध प्रेमे रहिला डुबिया।।106

स्वयंरूप में श्रीकृष्ण को अवतरित देखकर आचार्य शुद्ध प्रेम सागर में डूब गये।

कथोक्षणे श्रीअद्वैतेर बाह्य स्फूर्ति हैल। दण्डवत् करि कर–पुटे निवेदिल।।107

कुछ क्षणों के बाद श्रीअद्वैत को बाहर की सुधि आयी।
दण्डवत् एवं हाथ जोड़कर निवेदन किये–

अहे विभु आजि द्वि पंचाश वर्ष हैल। तुया लागि धराधामे ए दास आइल।।108

हे विभु! आज मुझे इस पृथ्वी पर आये बावन (52) वर्ष
हो गये हैं और मैं दास आपकी प्रतीक्षा में।

कलुष दर तिमिर पूरित संसार। ऐछन नेहारि भेल भयेर संचार।।109

सारे संसार को घोरतम पाप–तिमिर में डूबा देखकर मेरे मन में अति भय हो
रहा था प्रभु।

तेञि भय भंजन तोमारि दरशने। उत्कंठित हञा छाड़ि निज निकेतने।।110

आप भय–भंजन हैं, दर्शनों की उत्कण्ठा में
मैं अपने स्थान शांतिपुर को भी छोड़कर यहाँ रह रहा हूँ।

देशे देशे तोमा चाहि चाहि बेड़ाइनु। मोहेर करम दोषे देखा ना पाइनु।।111

देश–विदेश में आपको ढूँढ़ता फिरा हूँ। अपने
कर्म दोष से आपके दर्शन कहीं नहीं पा सका हूँ।

एतदिने मोर मनेर अभीष्ट पूरिल। गोकुल चाँद नवद्वीपे उदय हइल।।112

इतने दिनों पीछे आपने मेरे मनोरथ को पूर्ण किया है।
आप गोकुलचन्द्र अब नवद्वीप में प्रकट हुए हैं।

गौर कहे मुञि भक्त–वश्य चिरदिन। मोर प्रकटाप्रकट भक्तेर अधीन।।113

श्रीगौर बोले– अद्वैत! मैं तो सदा–सदा से भक्तपराधीन हूँ। मुझे प्रकट–अप्रकट
करना भक्तों के हाथ में है। मैं स्वतंत्र नहीं हूँ।

श्रीअद्वैत कहे यदि आइला भुवने। कैछे दुग्ध नाहि खाउ कह मोर स्थाने।।114

श्रीअद्वैत ने पूछा– प्रभो! अब जगत में आप प्रकट हुए हैं
तो दूध क्यों नहीं पी रहे हो? मुझे बताओ।

महाप्रभु कहेन शुनह पंचानन। अनुरागे माति विधि हैला विस्मरण।।115

श्रीमहाप्रभु ने कहा– हे पंचानन! सुनो अनुराग में
उन्मत्त होकर आपको भी विधि–विधान भूल रहा है।

मन्त्र प्रदानेर अग्रे हरिनाम दिवे। कर्ण शुद्धि हय सिद्ध नामेर प्रभावे।।116

मन्त्र प्रदान से पहले हरिनाम दीजिये माता को।
उस स्वभाव सिद्ध नाम के प्रभाव से कर्ण शुद्धि होती है।

अशुद्ध कर्णेते यदि महामन्त्र लय। असम्पूर्ण दीक्षा सेइ जानिह निश्चय।।117

अशुद्ध कानों में यदि महामन्त्र दीक्षा कोई लेता देता है,
तो दीक्षा अधूरी रहती है– इस बात को निश्चय कर जानो।

माता दीक्षा हैला ना शुनिला हरिनाम। तेञि तान दुग्ध मुञि नाहि कैलों पान।118

आपने माता शची को मन्त्र दीक्षा तो दी, किन्तु हरिनाम
नहीं सुनाया इसलिये मैंने उसका दूध पान नहीं किया।

प्रभु कहे कह हरि नामेर विधान। महाप्रभु कहे नित्य सिद्ध षोल नाम।।119

श्रीअद्वैत ने कहा– प्रभो! श्रीहरिनाम का विधान आप मुझे बताइये। श्रीमहाप्रभु ने कहा– यह सोलह नाममय मंत्र नित्य सिद्ध है– जो सभी अवस्थाओं में बोला जा सकता है।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।120

हरे अर्थात् श्रीकृष्ण की आनन्ददायिनी शक्ति श्रीराधिकाजी एवं श्रीसर्वाकर्षक
श्रीकृष्ण को प्रीतिपूर्वक आह्वान करना। उनकी प्रेममयी सेवा प्राप्ति के लिए।

यद्यपि आचार्य एइ बोल नाम ज्ञात। गौर मुखच्युत हैला प्रेमोन्मत्त।।121

यद्यपि श्रीअद्वैताचार्य इस सोलह नाम महामंत्र को जानते थे।
तो भी श्रीगौरांग के श्रीमुख से निःसृत इसे सुनकर वे प्रेमानन्द में मगन हो गये।

तबे प्रभु भाग्य मानि गौरे लञा कोले। धीरि धीरि चलि गेला निम्बतरु तले।।122

तब श्रीअद्वैत ने भाग्य मानकर श्रीगौर को गोदी में उठा लिया
और धीरे–धीरे नीम के वृक्ष के नीचे उन्हें ले गये।

ताँहा गौरे शोयाइया बोले हरि हरि। गौर पदस्पर्शे सेई वृक्ष गेल तरि।।123

77वहाँ श्रीगौर को सुलाकर आप 'हरि–हरि' बोलने लगे।
श्रीगौरचरणों का स्पर्श पाकर वृक्ष का भी उद्धार हो गया।

शचीरे बोलाञा प्रभु हरिनाम दिला। पूर्वदत्त मन्त्र पुन स्मृति कराइला।।124

शची को बुलाकर श्रीअद्वैत ने 'हरिनाम' सुनाया। पहले जो प्रदान किया उस
मन्त्र को पुनः स्मरण कराकर शास्त्रविधि को मर्यादा दी।

तबे प्रभु गौरे आनि शचीरे कोले दिला। महाप्रभु मातृ–दुग्धामृत पान कैला।।125

तब प्रभु ने श्रीगौर को शची की गोद में दिया,
तब श्रीगौर माता का दुग्धामृत पान करने लगे।

ताहा देखि शचीमाता आनन्दे डूबिला। मिश्र आदि सभे हर्षे हरिध्वनि कैला।।126

यह देखकर शचीमाता आनन्दमग्न हो गयी और
मिश्रादि सब लोग आनन्द में हरि–हरि कहने लगे।

द्विज द्विजपत्नीगण आशीर्वाद कैल। प्रभु कहे इहार नाम निमाञि रहिल।127

ब्राह्मण एवं ब्राह्मणों की नारियां श्रीगौर को आशीर्वाद करने लगीं।

श्रीअद्वैतप्रभु ने कहा– बालक का नाम "निमाई" होगा।

तबे हरि बलि हुंकार छाड़ि सीतानाथ। सभे कहे एइ बुड़ा स्वयं वैद्यनाथ।।128

तब हरि बोल कर श्रीसीतानाथ प्रेमपूर्वक हुंकार करने लगे।
सब लोग कहने लगे– यह महाशय तो स्वयं बैद्यनाथ है।

प्रभु कहे मिछा मोरे प्रशंसह केने। एइ शिशु भाल हैला निम्ब वृक्ष गुणे।।129

दीनता के शिरोमणि श्रीअद्वैतप्रभु कहने लगे– मेरी झूठी प्रशंसा आप क्यों कर रहे हैं? यह बालक नीमवृक्ष के प्रभाव से स्वस्थ हो गया है।

निम्ब वृक्षेर जात गुण के कहिते पारे। याहार छायाते जीवेर सर्वव्याधि हरे।।130

नीम वृक्ष के सब गुणों को कौन वर्णन कर सकता है,
जिसकी छाया से ही जीवों के सब रोग नष्ट हो जाते हैं।

याहार गन्धेते पलाय डाकिनी शाकिनी। यार मूले विराजित देव चक्रपाणि।।131

नीम की सुगन्ध से डाकिनी–शाकिनी–पिशाचिनी दूर भाग जाती हैं।
इसके मूल में श्रीचक्रपाणि देव विराजते हैं।

एत कहि सीतानाथ लञा भक्तगण। निशि गोङाइला करि नाम संकीर्तन।।132

इतना कहकर श्रीसीतानाथ प्रभु ने भक्तों के साथ
नाम संकीर्तन करते हुए वहाँ सारी रात बितायी।

एइ लीला देखे भाग्ये भागवतोत्तम। देखिवारे वान्छा यार सेई धन्यतम।।133

यह लीला भाग्यों से उत्तम भक्त वृन्द देख पाते हैं।
जो इसे देखने का अभिलाषी अति धन्य है।

एई लीलांकुरे कृष्ण कृपा चक्षुद्वारे। कोटि जन्मेर पुण्ये इहा देखिते ना पारे।।134

इस लीलांकुर को कृष्णकृपा–प्राप्त नेत्रों द्वारा ही देखा जा सकता है।
कोटि–कोटि जन्मों के पुण्यों–सत्कर्मों–यज्ञ–जप–दान–तपस्यादि से भी इस लीला को देखने में कोई समर्थ नहीं है।

नित्यसिद्धा पौर्णमासी साक्षात् योगमाया। भक्तिरूपा सीतादेवी अद्वैतेर जाया।।135

नित्यसिद्धा पौर्णमासी जो साक्षात् योगमाया है, वही भक्तिरूपा सीतादेवी के रूप में श्रीअद्वैत प्रभु की पत्नि हैं। वे भी करूणामयी हैं।

दोलोत्सव दिने तिंहो देखि उपरागे। कृष्णलीला चिन्ता करे गाढ़ अनुरागे।।136

फूल दोलोत्सव के दिन पौर्णमासी योगमाया श्रीसीतादेवी शांतिपुर में
ही अनुपम कृष्ण लीला का गाढ़ अनुराग सहित चिन्तन कर रही थी।

मने प्रत्यक्ष देखे कृष्ण नवद्वीपे। प्रकटिला निज अंग ढाकि राधारूपे।।137

मन–मन में श्रीकृष्ण को नवद्वीप में वह प्रत्यक्ष देखने लगी और यह उन्होंने देखा कि श्रीराधा रूप–कांति से अंगों को ढ़ककर श्रीकृष्ण नवद्वीप में प्रकटे हैं।

अपूर्व निरखि सीता प्रेमेते डूबिला। शक्ति विस्तारिया झाट नवद्वीपे आइला।।138

यह अपूर्व रूप देखकर सीतारानी प्रेम में डूब गयीं और
अपनी शक्ति का विस्तार कर नवद्वीप पधारीं।

श्रीगौरांगदेखि जीवन सार्थक मानिला। धान्य दुर्वा दियागौरे आशीर्वाद कैला।।139

श्रीगौरांग के दर्शनकर उसने अपना जीवन सार्थक माना। धान्य–दूर्वादि देकर उसने श्रीगौर को आशीर्वाद किया। सीता देवी गौर प्रेममयी हैं। गौर को आशीर्वाद देने का उनका अधिकार है।

श्रीचैतन्येर आविर्भाव नदीया नगरे। शुनि बहुलोक आइला देखिवारे तरे।।140

श्रीचैतन्यचन्द्र के आविर्भाव को नदिया में हुआ है।
यह सुनकर बहुत लोग उनके दर्शन करने वहाँ आये।

गौर अंगे देखि महापुरुषेर चिन्ह। जेइ त ईश्वर माने सेइ हय धन्य।।141

श्रीगौर के शरीर में महापुरुषों के लक्षण देखकर–
उन्हें ईश्वर मानने लगे और अपने को धन्य कहने लगे।

श्री शचीनन्दन हय अयस्कान्त सम। चतुर्दिगेर भक्त–लोह कैला आकर्षण।।142

श्रीशचीनन्दन चुम्बक मणिवत् थे और चारों दिशाओं के
लोहे रूपी भक्तों को अपनी ओर आकर्षण किये।

सभे नाम–संकीर्तन करे कुतूहले। गौरेर नामकरण हैल यथा काले।।143

सब आनन्द में आकर नाम–संकीर्तन करते।
यथा समय श्रीगौर का नामकरण संस्कार हुआ।

विश्वम्भर नाम राखे द्विज नीलाम्बर। गर्ग सम ज्योतिषे याँहार अधिकार।144

द्विज नीलाम्बर ने नाम रखा– "विश्वम्भर"।।
श्रीनीलाम्बर का ज्योतिष पर गर्ग मुनि की भांति अधिकार था।

जगन्नाथ पुत्रेर देखि गौरवर्ण अंग। वात्सल्य राखिला नाम श्रीगौर गौरांग।।145

श्रीजगन्नाथ–तनय के गौरवर्ण अंग देख वात्सल्यवश गौर नाम गौरांग रखा।

शचीदेवी शुद्ध स्नेहे आपन अर्भके। कभु गोराचाँद कभु गोरा बलि डाके।146

शचीदेवी शुद्ध स्नेहवश अपने शिशु को कभी गोराचाँद कभी गोरा कहकर बुलाती थीं।

एक अपरूप कथा शुन सर्वजन। अलौकिक लीला करे श्रीशचीनन्दन।।147

एक और अनोखी बात सुनिये– श्रीशचीनन्दन सदा लोकातीत लीला करते थे।

बाल्य स्वभावेते जबे करये क्रन्दन। हरिनाम शुनि हय सहास्य वदन।।148

बाल्य स्वभाव से जब वे रोते तो किसी और उपाय से
चुप न होते, केवल हरिनाम सुनकर हँसने लगते।

ताहा देखि नदीयार कत नर नारी। कान्दाइया शान्त करे बलि हरि हरि।।149

यह जानकर नदिया की रमणियां उन्हें जान बूझकर रुलाती
और फिर हरि–हरि बोलकर चुप करातीं।

रोदनेर छले हरि नाम लउयाइला। गोरार निगूढ़ तत्त्व भक्ते बूझिला।।150

रोने के बहाने सबको हरिनाम ग्रहण कराते थे–
श्रीगौरांग के इस निगूढ़ तत्व को भक्त समझ गये।

अपूर्व स्वभाव गौरेर देखि सभ नारी। आनन्दे राखिला ताँर नाम गौरहरि।151

श्रीगौरांगका यह अपूर्व स्वभाव देखकर सबने इनका नाम रख दिया "गौर हरि"।

प्रेमानन्दे मत्त हञा शुद्ध भक्तवृन्द। महाप्रभुर नाम राखे श्री गौरगोविन्द।।152

शुद्ध भक्तवृन्द ने प्रेमानन्द में उन्मत्त होकर महाप्रभु का नाम रखा–
"श्रीगौरगोविन्द"।

यथाकाले मिश्र गौरेर अन्नाशन कैला। विष्णुर प्रसाद सर्वजने भुन्जाइला।153

यथा समय श्रीजगन्नाथ मिश्र ने पुत्र का अन्नाशन
संस्कार किया। सबको विष्णु प्रसाद खिलाया।

श्रीगौरांगेर बाल्यलीला अमृतेर सिन्धु। मुञि छार छुँइते नारिनु तार बिन्दु।।154

श्रीगौरांग की बाल्यलीला अमृत का सागर है।
मैं दीन उसका एक बिन्दु भी स्पर्श नहीं कर पाया हूँ।

गौरेर वयस यवे पाँच वत्सर हैल। शुभक्षणे मिश्र तान हाते खड़ि दिल।।155

जब गौरांग पाँच वर्ष के हुये, तब मिश्र जी ने शुभ दिन
इनके हाथ में खड़िया देकर विद्यारम्भ करायी।

लोके श्रुतिधर बड़ गौरांग श्रीमान्। अल्प कालेते ताँर हैल वर्ण ज्ञान।।156

श्रीमान् गौरांग तो लोगों में श्रुतिधर थे सुनते ही याद कर लेने वाले थे। थोड़े
ही समय में उन्हें सब वर्णों का (क.ख. आदि का) ज्ञान हो गया।

तबे मिश्र गंगादास पण्डितेर स्थाने। पढ़िते दिलेन गौरे करिया यतने।।157

तब मिश्र ने इन्हें पण्डित गंगादास की पाठशाला में पढ़ने के लिये अति
यत्नपूर्वक बैठाया।

दुई वर्षे गोरा व्याकरण समापिला। देखि पण्डितेर चित्त चमत्कार हैला।।158

दो वर्षों में ही श्रीगौर ने व्याकरण समाप्त कर लिया–

इस अपूर्व गुण को देखकर पण्डित गंगादास भी चमत्कृत हो उठे।

काले ताने भारती दिलेन यज्ञसूत्र। शास्त्र मते मिश्रराज दिला विष्णुमन्त्र।159

यथा समय श्रीकेशवभारती ने इन्हें यज्ञोपवीत धराया।

शास्त्रमतानुसार मिश्रराज ने इन्हें विष्णु मन्त्र की दीक्षा दी।

क्षुद्र मुञि अपार गौरलीलार किवा जानि। तारसूत्र लिखि येइ प्रभु मुखे शुनि।160

मैं अति क्षुद्र हूँ, गौरलीला अपार सिन्धु है, मैं उसे कैसे जान सकता हूँ। मैंने जो श्रीअद्वैत प्रभु के मुख से सुनी उसे सूत्ररूप में गान किया।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।161

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के चरणों की आशा रखते हुए।

मैं ईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश का वर्णन करता हूँ।

एकादश अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो, जय हो। श्रीसीतानाथ अद्वैत प्रभु की जय हो। श्रीमन्नित्यानन्द राम की समस्त भक्तों के सहित जय हो।

श्रीअद्वैत कल्प–वृक्षेर मुख्य शाखागण। संक्षेपे कहिमु ता सभार विवरण।।02

श्रीअद्वैतचन्द्र रूप कल्पवृक्ष की मुख्य शाखाओं का संक्षेप से वर्णन करता हूँ।

शुभक्षणे सीतामातार गर्भाधान हैल। शुनि सर्व भक्तमने आनन्द बाढ़िल।।03

शुभक्षण में श्रीसीतामाता ने गर्भ धारण किया। यह बात सुनकर सब भक्तों को आनन्द हुआ।

चौद्दशत चौद्द शकेर वैशाखी पूर्णिमा। देव पर्व मध्ये बड़ याहार महिमा।।04

1414 शकाब्द 1492 सन् वैशाख की पूर्णिमा के

दिन जिसकी समस्त देवताओं में महान महिमा है।

सेइ दिन सीतादेवी पुत्र प्रसविला। शिशुर अपूर्व रूपे सकले मोहिला।।05

श्रीसीतादेवी ने एक पुत्र प्रसव किया। शिशु के अपूर्व रूप को देखकर सब मोहित हो उठे।

सभे कहे एछे रूप नाहि देखि आर। बुझि कोन देव आसि हैला अवतार।।06

सब कहने लगे ऐसा रूप तो पहले कहीं नहीं देखा है।

जान पड़ता है किसी देवता ने अवतार लिया है।

ज्योतिर्विद आसि कहे करिया गणन। ब्रजधामेर गोपी एक लभिला जनम।07

शास्त्र वेत्ताओं ने गणना कर बताया कि ब्रजधाम की
एक गोपी ने ही इस बालक रूप में जन्म लिया है।

पुरुष आकृति हैला लोक शिखाइते। अकौमार वैराग्य हैव जानिह निश्चिते।।08

लोगों को शिक्षा देने के लिये उसने पुरुष आकृति धारण की है। यह बालक
कुमार अवस्था से ही वैराग्य युक्त होगा। यह बात निश्चित है।

इहा शुनि भक्त वृन्द प्रेमाविष्ट हैला। सभे मिलि नाम–संकीर्तन आरम्भिला।।09

यह बात सुनकर सब भक्तगण प्रेमाविष्ट हो उठे।
सबने मिलकर नाम संकीर्तन आरम्भ किया।

केह नाचे केह कान्दे प्रेमेर स्वभावे। हुंकार करये प्रभु हरिबोल रवे।।10

प्रेम में भरकर कोई नाचने लगा तो कोई रोने लगा।
श्रीअद्वैतप्रभु 'हरिबोल' की ध्वनि में हुँकार करने लगे।

अद्वैतेर हुंकार जैछे मेघ गरजन। गौरांग जानिला प्रिय भक्त प्रकटन।।11

श्रीअद्वैत प्रभु की हुँकार, मानों मेघ गर्जना कर रहा हो।
श्रीगौरांग जाने कि प्रिय भक्त प्रकट हुआ है।

तबे प्रभु पुत्रेर नाम–करण कारण। यथाकाले आमन्त्रिला याजक ब्राह्मण।।12

तब श्रीअद्वैत ने पुत्र के नामकरण के लिये बहुत
ब्राह्मण–याचकादिक को निमंत्रण दिया।

पुरोहित आसि कहे करिया गणन। एइ आचार्येर पुत्र नहे साधारण।।13

पुरोहितने आकर गणनाकर कहा– आचार्य का यह पुत्र साधारण बालक नहीं है।

कृष्ण इहार मन प्राण कृष्णेई आनन्द। अतएव नाम राखिलूँ श्रीअच्युतानन्द।।14

श्रीकृष्ण ही इसके मन–प्राण हैं और श्रीकृष्ण में ही यह आनन्द प्राप्त करने
वाला होगा। इसलिये इसका नाम श्रीअच्युतानन्द रखता हूँ।

नाम शुनि भक्तगण करे हरिध्वनि। हर्षे हुलुध्वनि करे जतेक रमणी।।15

नाम सुनकर भक्तों ने हरि ध्वनि की। जितनी रमणियां
वहां थीं वे सब हुलु–हुलु ध्वनि करने लगीं।

श्रीअच्युतेर कृष्ण–प्रेम ब्रजगोपी समे। श्रीअच्युता सखी तारे कहे साधुगणे।16

श्रीअच्युत का कृष्ण प्रेम ब्रजगोपियों की भांति था।
साधुगण इन्हें श्री अच्युता सखी भी कहते थे।

किछुदिन अन्ते प्रभु देखि शुभक्षण। समारोहे अच्युतेर कैला अन्नाशन।।17

कुछ दिन के बाद श्रीअद्वैत प्रभु ने शुभ दिन देखकर
अच्युत का अन्नाशन–महोत्सव मनाया।

मदनगोपालेर आगे भोग लागाइला। पुत्र मुखे अन्न दिते महोत्सव कैला।।18

श्रीमदन गोपालजी को भोग लगा कर पुत्र के मुख में
वह प्रसादी अन्न देकर उत्सव किया।

ब्राह्मण वैष्णव आदि पाञा परसाद। वस्त्र कौड़ि पाञा पुत्रे कैला आशीर्वाद।।19

वैष्णव–ब्राह्मण आदि ने प्रसाद पाया और
वस्त्र–दक्षिणा प्राप्त कर बालक को आशीर्वाद किया।

क्रमे श्रीअच्युत पाँच वत्सरेर हैला। शुभक्षणे प्रभु तार हाते खड़ि दिला।।20

क्रमसे श्रीअच्युत पांच वर्ष का हो गया, तब शुभ दिन
देखकर प्रभु ने उसके हाथ में खड़िया देकर विद्यारम्भ करायी।

जेइ दिने श्रीअच्युत विद्यारम्भ कैला। सेइ दिने मोर माता शान्तिपुरे आइला।।21

जिस दिन श्रीअच्युत ने विद्यारम्भ की, उस दिन मेरी
(ईशाननागर) माता मुझे लेकर शांतिपुर पहुँची।

श्रीअद्वैत पदे आसि लइला शरण। पन्चम वत्सर मोर वयस तखन।।22

मेरी मां ने श्रीअद्वैत के चरणों में आकर प्रणाम किया।
उस समय मैं पाँच वर्ष का था।

प्रभु दया करि माये दिला कृष्णमन्त्र। मोरे हरिनाम दिञा करिला पवित्र।।23

श्रीअद्वैतप्रभु ने कृपापूर्वक मेरी माता को कृष्णमन्त्र दिया
और मुझे भी श्रीहरिनाम देकर पवित्र किया।

मोरे पाञा सीतादेवी स्नेह प्रकाशिला। आपन तनय सम पोषण करिला।।24

मुझे देखकर सीतादेवी ने बहुत स्नेह दिखाया और
अपने पुत्र की भांति मेरा भी पोषण किया।

श्रीगुरुर आज्ञावहा छिला मोर माता। किछु किछु मोर मने पड़े सेइ कथा।25

मेरी माता श्रीगुरू की आज्ञा पालन करने वाली थी। मुझे यह बात भी कुछ कुछ
याद है।

प्रभु कहे ईशानेर माता पुण्यवती। परकाले हैव इहार वैकुण्ठे वसति।।26

श्रीप्रभु ने कहा था– "ईशान की माता पुण्यवती है।
यह अन्त में वैकुण्ठ में जाकर वास करेगी।

तबे शुन आर एक अपूर्व आख्यान। जैछे हैल सीतामातार द्वितीय सन्तान।27

अब एक और अपूर्व आख्यान सुनिये, जैसे श्रीसीतामाता को दूसरी सन्तान उत्पन्न हुई।

चौद्द शत अष्टादश शक अवशेषे। मधु–मासे कृष्णा त्रयोदशी निशि शेषे।28

1418 शकाब्द (1496 सन्) के अन्त में
मधुमास कृष्ण त्रयोदशी के दिन रात्रि के शेष काल में–

प्रसविला सीतादेवी अपूर्व कुमार। अलौकिक रूप जैछे देव अवतार।।29

श्रीसीतादेवी ने एक अपूर्व बालक को जन्म दिया।
उसका अलौकिक रूप था जैसे देव–अवतार हो।

हेन काले शुन एक दैवेर घटन। श्रीश्रीठाकुराणीर एक हैल नन्दन।।30

उस समय एक दैव घटना घटी, सुनिये– श्रीश्रीठाकुरणी
(श्रीअद्वैत की दूसरी पत्नी) को भी एक पुत्र पैदा हुआ।

जन्ममात्र बालकेर हइल मरण। ताहा देखि श्रीजननी करये रोदन।।31

उस बालक का जन्म होते ही उसकी मृत्यु हो गयी।
यह देखकर श्रीठाकुराणी रोने लगी।

सीतामाता कान्दि कहे अद्वैतेर स्थाने। भगिनीर दुःख मोर नाहि सहे प्राणे।32

सीतादेवी ने रोते हुए श्रीअद्वैतचन्द्र के प्रति कहा–
मुझसे बहन का यह दुःख नहीं देखा जाता।

यदि वा हइल एक पुत्र एतदिन। विधि वाम हञा ताहा कैला संगोपन।।33

क्योंकि इतने दिनों पीछे उसे एक पुत्र हुआ, वह भी
विधाता विपरीत हो गया और उसका मरण हो गया।

तोमार पाइले आज्ञा मोर मने धरे। मोर एइ पुत्र समर्पिमु भगिनीरे।।34

आपकी आज्ञा यदि हो तो मन करता है कि
मैं अपना यह पुत्र अपनी बहन को समर्पण कर दूँ।

प्रभु कहे भाल भाल ये इच्छा तोमार। श्रीर दुःख साधयिते एइ युक्ति सार।।35

श्रीअद्वैत ने कहा– ठीक है, जो तुम्हारी इच्छा हो करो।
श्री का दुःख मिटाने की यही युक्ति संगत है।

तबे सीता कहे अश्रु करिया मार्जन। ना कान्द ना कान्द भग्नि स्थिर कर मन।36

तब सीतादेवी ने आँसुओं को पोंछा और कहा– बहन!
तुम रोओ नहीं, मन को स्थिर करो।

मोर एइ पुत्र समर्पिलुँ सत्य तोरे। एइ पुत्र तोर बलि घुषिब संसारे।।37

मैंने यह पुत्र तुम्हें सौंप दिया यह सत्य जानो–
संसार में यह तुम्हारा पुत्र होकर विख्यात होगा।

एत कहि सेइ पुत्र श्रीर कोले दिला। शोक छाड़ि श्रीमा पुत्रे स्तन पियाइला।।38

इतना कहकर सीतादेवी ने अपने पुत्र को श्रीठाकुरणी की गोदी में दे दिया।
श्री ने शोक संवरण कर उसे अपना स्तन पान कराया।

ए सभ रहस्य कथा अन्ये नाहि जाने। जानये आमार माता आर तिन जने।।39

यह सब गुप्त कथा और कोई नहीं जानता है।
इसे मेरी माता और अन्य तीन व्यक्ति ही जानते हैं।

पद्मनाभ चक्रवर्ती प्रभुर कृपापात्र। प्रभुर कृपाय तेंहो जाने सब तत्त्व।।40

पद्मनाभ चक्रवर्ती श्रीलोकनाथ गोस्वामी के पिता
प्रभु के कृपापात्र थे, वे भी जानते थे यह सब रहस्य।

तबे प्रातःकाले आसि दैवज्ञ ब्राह्मण। मृदु मृदु भाषे कहे करिया गणन।।41

सवेरा होते ही ज्योतिषी ब्राह्मण आये और
मन्द–मन्द मधुर भाषा में गणना करने लगे।

एइ ये अद्वैतचन्द्रेर द्वितीय नन्दन। कृष्ण भक्ति रक्षार्थ इहार प्रकटन।।42

उन्होंने कहा– यह जो दूसरा पुत्र है श्रीअद्वैत ठाकुर का,
कृष्ण–भक्ति की रक्षा के लिये प्रकट हुआ है।

देवलोक रक्षार्थ येञि देव सेनापति। सेञि षड़ानन एबे अद्वैत सन्तति।।43

देवलोक में रक्षार्थ जो देवताओं का सेनापति वही षड़ानन–स्वामी कार्तिकेय
श्रीअद्वैतचन्द्र के पुत्र रूप में उत्पन्न हुए हैं।

इहा शुनि भक्तगण आनन्दे मातिल। हरि हरि बुलि सभे नाचिते लागिल।।44

यह सुन भक्तगण आनन्द में उन्मत्त हो उठे। 'हरि–हरि' बोल सब नाचने लगे।

तबे यथाकाले प्रभु आनि पुरोहित। नामकरण कराइला हञा हरषित।।45

तब श्रीअद्वैत यथा समय पुरोहित को बुला लाये
और सहर्ष उसका नामकरण कराया।

ज्योतिर्विद पुरोहित कहये गणिञा। इहों सुपण्डित हैव सकले जिनिञा।।46

ज्योतिषियों ने कहा– यह बड़ा सुपण्डित होगा और सबको विजय करेगा।

कृष्ण वैष्णव सेवाय रत हइव उदास। अतएव इहार नाम थुइलुँ कृष्णदास।47

श्रीकृष्ण–वैष्णव सेवा में लगा रहेगा। संसार से उदासीन रहेगा।
इसलिये इसका नाम मैं 'कृष्णदास' रखता हूँ।

ताहा शुनि भक्तगणेर आनन्द बाड़िल। हरि संकीर्तनानन्दे दिन गोङाइल।48

यह सुन भक्तोंको बहुत आनन्द हुआ और सारा दिन हरिकीर्तनमें व्यतीत किया।

किछुदिन परे प्रभु देखि शुभलक्षण। श्रीकृष्णदासेर कैला शुभ अन्नाशन।।49

कुछ समय पीछे प्रभु ने शुभदिन देखकर कृष्णदास का शुभ अन्नाशन कराया।

श्रीमदनगोपाले अग्रे भोग लागाइला। महाप्रसाद दिया पुत्रेर अन्नाशन कैला।।50

पहले श्रीमदनगोपालको भोग लगाया फिर प्रसाद देकर पुत्रका अन्नाशन कराया।

भक्ति करि ब्राह्मण वैष्णवे भुन्जाइला। अन्ध अकिंचने बहु अन्नदान कैला।51

श्रद्धापूर्वक ब्राह्मण–वैष्णवों को भोजन कराया। अन्धे–अकिंचनों को बहुत अन्नदान किया।

वस्त्र कौड़ि दान करि सभे सम्भाषिला। आशीष करिया तारा यथा स्थाने गेला।52

वस्त्र–धन देकर सबका सम्मान किया और
वे आशीर्वाद देकर अपने–अपने स्थानों को चले गये।

तबे श्रीअद्वैत शुभ समयानुसारे। विद्यारम्भ कराइला श्रीकृष्णदासेरे।।53

तब शुभ समयानुसार श्रीअद्वैत प्रभु ने श्रीकृष्णदास की विद्या आरम्भ करायी।

आर एक अपूर्व कथा शुन सर्वजन। जैछे प्रकट हैला प्रभुर तृतीय नन्दन।54

एक अपूर्व शुभ संवादरूपी कथा आप सब सुनिये–
श्रीअद्वैतप्रभु के यहां तीसरे सुपुत्र का जन्म हुआ।

चौद्द शत बाइश शकेर कार्तिकेते। सीता प्रसविला पुत्र शुक्ल द्वादशीते।55

1422 शकाब्द (1500 सन्) कार्तिक मास में
शुक्ला द्वादशी के दिन श्रीसीतादेवीने सुपुत्र को जन्म दिया।

जन्म मात्र बालकेर देख चमत्कार। नयन मुदिया रैल जैछे मृताकार।।56

जन्म मात्र से उस बालक का चमत्कार देखिये।
वह नेत्र बन्द करके रहा आया जैसे मृतक हो।

ताहा देखि मोर प्रभु गौर हरि बलि। हुंकार छाड़ये जैछे सिंह महाबली।।57

उसे देखकर मेरे प्रभु श्रीअद्वैत गौर हरि बोलकर महा बली सिंह की भांति हुंकार करने लगे।

गौरहरि नाम शिशुर कर्णेते पशिल। प्रेम अश्रु विमोचिया नयन मेलिल।।58

'गौरहरि' नाम उस शिशु के कानों में प्रविष्ट होते ही उसके दोनों नेत्रों से अश्रुधारा निकलने लगी और उसने अपने नन्हें प्यारे से नयन खोले।

देखि सभे प्रेमानन्दे देय हरिध्वनि। हुलुध्वनि करे यत कुलेर कामिनी।।59

सबने प्रेमानन्द में भरकर हरिध्वनि की। सब कुल रमणियों ने हुलु ध्वनि की।

हेनकाले ज्योतिषी ब्राह्मण ताँहा आइला। जात बालकेर तत्त्व गणिया कहिला।।60

उसी समय एक ज्योतिषी ब्राह्मण वहां आया और

बालक की जन्मपत्री की गणना कर कहने लगा।

एइ अद्वैतचन्द्रेर तृतीय सन्तान। स्वयं श्रीगणेश इहों हैला अधिष्ठान।।61

श्रीअद्वैतचन्द्र की यह तीसरी सन्तान थी इसमें स्वयं श्रीगणेश जी अधिष्ठित हैं।

पृथ्वी–विघ्न विनाशिते कैला आगमन। इहार दर्शने जीव पाइव भक्ति–धन।।62

जो पृथ्वी के समस्त विघ्नों को शान्त करने के लिये अवतरित हुआ है। इसके दर्शन मात्र से जीव भक्तिधन प्राप्त करेंगे।

ताहा शुनि भक्तवृन्देर आनन्द बाढ़िल। हरिसंकीर्तन करि दिन गोङाइल।।63

यह सुन भक्तों का आनन्द उछला और सारा दिन हरि संकीर्तन करते बिताया।

तबे पुरोहिते आनि निमन्त्रिया। पुत्रेर नामकरण कराइला ताँरे दिया।।64

फिर पुरोहित को बुलाकर उसका नामकरण कराया।

द्विज कहे हैव इहों श्रीकृष्णेर दास। अतएव नाम थुइलुँ श्रीगोपालदास।।65

ब्राह्मण ने कहा, यह श्रीकृष्ण दास होगा।

इसलिये इसका नाम रखते हैं श्रीगोपालदास।

एबे शुन गोपालेर अमानुषी वृत्ति। याहार श्रवणे जीव पाय कृष्ण भक्ति।।66

अब आप श्रीगोपाल की लोकातीत कथा सुनिये,

जिसे सुनने से जीव को कृष्णभक्ति प्राप्त होती है।

भक्तगण जबे करे नाम–संकीर्तन। दुग्धपान छाड़ि गोपाल करये श्रवण।।67

भक्तगण जब हरिनाम करते तो श्रीगोपाल दुग्धपान छोड़कर उसे सुनने लगता।

अश्रुपात करे आर हासे खल खल। चक्षु घुराय पुन पुन जैछे मातोयाल।।68

उसकी आंखों से अनवरत अश्रुधारा बहने लगती और

पागलों की भांति नेत्रों को चारों ओर फिराने लगता।

संकीर्तन विरामे से भाव दूरे जाय। उच्चस्वरे कान्दि शेषे मातृ दुग्ध खाय।69

संकीर्तन बन्द होते ही उसका यह भाव लुप्त हो जाता

एवं जोर से रोने लगता माता के दुग्धपान के निमित्त प्रयास करता।

नित्य कृष्णदासेर एइ स्वाभाविकी हय। विज्ञेर गोचर इह अज्ञे ना जानय।।70

कृष्णदास की यही अवस्था नित्य होती,

विज्ञ तो जान जाते किन्तु मूर्ख न जान पाते।

प्रभुर एइ तिन कोङरेर जन्माख्याने। सूत्रमात्र कहिलाङ जीवेर कल्याणे।।71

प्रभु के तीनों पुत्रों की जन्म कथा जीवों के कल्याण के निमित्त मैंने सूत्ररूप में वर्णन की है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पाद जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।72

श्रीचैतन्य महाप्रभु एवं श्रीअद्वैतचन्द्र के श्रीचरणों की सेवा की आशापूर्वक ईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश का वर्णन करते हैं।

द्वादशोऽध्यायः

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो, जय हो, श्रीसीतानाथ अद्वैतप्रभु की जय हो।
श्रीनित्यानन्द राम की समस्त भक्तगण के सहित जय हो।

एकदिन श्रीअद्वैत वेद पन्चानन। पड़ाइछे छात्रगणे वेद दरशन।।02

एकदिन वेद पंचानन श्रीअद्वैतचन्द्र छात्रों को वेद–दर्शन पढ़ा रहे थे।

हेनकाले श्रीगौरांग गदाधर सने। पड़िवार तरे आइला आचार्येर स्थाने।।03

उसी समय श्रीगौरांग श्रीगदाधर के साथ आचार्य प्रभु के घर पढ़ने आये।

गौर गदाधरे देखि प्रभु भावावेशे। आइस आइस कहे आर खल खल हासे।।04

श्रीगौर–गदाधर को देखकर श्रीआचार्य भावावेश में
कहकहा मारकर हँसते हुए बोले–आओ–आओ।

तदाभासे गौर गदाधर समुझिला। लोक शिखाइते आचार्येर प्रणमिला।।05

उनके आभास को श्रीगौर गदाधर समझ गये और
लोक शिक्षाहित दोनों ने श्रीअद्वैत को प्रणाम किया।

आचार्य गोसाञि दोंहे कैला आलिंगन। तबे एकस्थाने बसिलेन तिनजन।।06

श्रीआचार्य ने दोनों को आलिंगन किया फिर तीनों जने एक स्थान पर बैठ गये।

श्रीअद्वैत गौरचन्द्र पुछे मृदुभाषे। काँहा हैते आइला निमाञि कह सविशेषे।07

श्रीअद्वैत ने गौरचन्द्र से मधुर वाणी में पूछा– निमाई!
कहाँ से आ रहे हो आप, विस्तार से कहो।

बहुदिन तोमा संगे हइल साक्षात्। एतदिन कि पड़िला कह सेहि बात।।08

अनेक दिन के बाद आपसे मिलना हुआ है।
इतने दिनों में आपने क्या पढ़ा– सब बात कहिये।

गौरकहे शुन गुरु वेद पन्चानन। विद्यानगर हैते आइमु तोमार सदन।।09

श्रीगौरांग बोले– हे गुरु वेद–पंचानन! सुनिये

इससमय विद्यानगरसे आपके घर मन्दिर आ रहा हूँ।

आन शास्त्र देखिवारे मन नाहि भाय। वेदार्थ शुनिते मुञि आइलुँ हेथाय।।10

कोई और शास्त्र देखने को मन नहीं चाहता है,

आपसे वेदार्थ सुनने के लिये यहाँ आया हूँ।

एत कहि महाप्रभु ईषत् हासिला। मन बुझि गदाधर कहिते लागिला।।11

इतना कहकर महाप्रभु मन्द मुस्करा दिये।

प्रभु के मन की बात समझ कर श्रीगदाधर बोले।

गदाधर कहे शुन वेदपन्चानन। आद्य हैते कहि गौरेर पाठ विवरण।।12

हे वेद–पंचानन! सुनिये, मैं आपको आरम्भ से

लेकर अब तक बताता हूँ कि श्रीगौर ने क्या पाठ पढ़ा है।

प्रथमे श्रीगंगादास पण्डितेर स्थाने। दुई वर्षे व्याकरण कैला समापने।।13

पहले तो इन्होंने श्रीगंगादास पण्डित के टोल में बैठकर दो वर्ष में व्याकरण समाप्त किया।

दुइवर्षे पड़िला साहित्य अलंकार। तबे गेला श्रीमान विष्णुमिश्रेर गोचर।।14

फिर दो वर्ष तक साहित्य–अलंकार पढ़ा है। उसके बाद ये श्रीमान विष्णु मिश्र के पास गये।

ताँहा दुइवर्षे स्मृति ज्योतिष पड़िला। सुदर्शन पण्डितेर स्थाने तबे गेला।।15

वहाँ इन्होंने दो वर्ष तक स्मृति एवं ज्योतिष शास्त्र पढ़ा है।

वहां से ये श्रीसुदर्शन पण्डित के पास गये।

ताँर काछे षड़दर्शन पड़िला दुइवर्षे। तबे गेला वासुदेव सार्वभौम पाशे।।16

उनसे दो वर्ष में षड्दर्शनों का अध्ययन किया।

वहाँ से ये श्रीवासुदेव सार्वभौम के पास गये।

ताँर स्थाने तर्कशास्त्र पड़िला द्विवत्सरे। एबे तुया पाशे आइला वेद पड़िवारे।।17

उनसे दो वर्ष में तर्कशास्त्र पढ़ा। अब ये आपके पास वेद पढ़ने आये हैं।

शुनि आचार्येर बाड़े अनन्त उल्लास। कहे श्रुतिधर शक्ति इहाँते प्रकाश।।18

यह सुनकर श्रीआचार्य को बहुत आनन्द हुआ। वे कहने लगे– इनमें श्रुतिधर शक्ति (सुनते ही याद कर लेने) की शक्ति का प्रकाश है।

स्तव शुनि महाप्रभु नतशिर हैला। हेन काले एक छात्र ताने प्रश्न कैला।।19

अपनी प्रशंसा सुन प्रभु ने अपना सिर झुका लिया। इतने में एक छात्र ने पूछा–

कह निमाञि परब्रह्मास्तित्व कैछे जानि। गौर कहे ब्रह्माण्डेर प्रत्यक्षे अनुमानि।।20

हे निमाई! कहो तो परब्रह्म का अस्तित्व आप कैसे जानते–मानते हैं? श्रीगौर ने कहा– उसका अस्तित्व ब्रह्माण्ड में प्रत्यक्ष अनुभूत होता है।

छात्र कहे स्वभावसिद्धे ब्रह्माण्डे आछय। गौर कहे अनित्येर नित्यत्व कैछे हय।।21

छात्र ने कहा– ब्रह्माण्ड में उसका अस्तित्व स्वभाव सिद्ध है। श्रीगौर बोले–ब्रह्माण्ड तो अनित्य है, अनित्य वस्तु में नित्यवस्तु–परब्रह्म का अस्तितत्व कैसे रह सकता है?

छात्र कहे परमाणुगणेर नित्यत्व। गौर कहे जड़ेर कभु ना हय कर्त्तव्य।।22

छात्र ने कहा– परमाणुओं का तो नित्यत्व है।

श्रीगौर ने कहा– परमाणु जड़ है, जड़ वस्तु में कार्यशीलता नहीं रहती।

आरे त पांचेर हय कर्त्तत्व कल्पना। एक ईश्वर चिदानन्द कहे मुनिजना।।23

और भी पांच तत्वों में कर्तृव्य की कल्पना कई लोग करते हैं।

किन्तु मुनिजन कहते हैं– एकमात्र ईश्वर ही चिदानन्द वस्तु है।

कारण बिने ना सम्भवे कार्येर उत्पत्ति। सेइ कर्त्ता सुनिश्चित याहे सर्वशक्ति।।24

कारण के बिना तो कोई कार्य हो नहीं सकता। अतः कर्त्ता सुनिश्चित रूप से वही हो सकता है, जिसमें सब शक्ति हो।

हेनमते बहुतर्क नाहि तार लेखा। हेन काले कृष्णदास ताँहा दिला देखा।।25

इसप्रकार अनेक तर्क होने लगा। उसी समय कृष्णदास वहां आ पहुंचा।

पंचम वत्सरेर शिशु अद्वैत–कुमार। मृदु–मृदु हासि कहे सिद्धान्तेर सार।।26

यह कृष्णदास श्रीअद्वैत प्रभु का पुत्र है, जो अभी पांच वर्ष का था।

यह मधुर–मधुर हंसते हुए सिद्धान्त–सार कहने लगा।

अहे छात्र आगे भक्ति चक्षु किनि लह। एखनि देखिवा आगे ईश्वर विग्रह।27

वह बोला– अरे छात्र! पहले तू भक्ति–नेत्र खरीद ला, फिर तुम अपने आगे ही (गौर हरि रूपी) ईश्वर–विग्रह को देख पायेगा।

साक्षाते थाकिते वस्तु चिनिते ना पार। तोमार अज्ञता देखि दुख पाइनु बड़।।28

सामने रहते हुए भी वस्तु को तुम नहीं पहिचान सकते।

तुम्हारी इस अज्ञता को देखकर मुझे बहुत दुख हो रहा है।

भाल बलि मोर प्रभु छाड़ये हुँकार। कृष्णदासे कोले करि नाचे बहुतर।।29

"ठीक कहा है– "ऐसा कहकर श्रीअद्वैत प्रभु प्रेमवश हुँकार करने लगे और कृष्णदास को गोदी में उठाकर बहुत नाचने लगे।

तबे महाप्रभु कृष्णदासे कोले कैला। आनन्दे ताहार नाम कृष्णमिश्र थुइला।30

तब महाप्रभु ने भी कृष्णदास को गोदी में उठा लिया
और आनन्दित होकर उसका नाम कृष्णमिश्र रखा।

तबे गौर वेद पड़े परम यतने। आचार्य पड़ाय ताँरे अति सावधाने।।31

श्रीगौरांग वहाँ रहकर यत्नपूर्वक वेद पढ़ने लगे और
आचार्य भी बड़ी सावधानता से उन्हें पढ़ाने लगे।

एकदिन शुन एक अपूर्व आख्यान। जगन्माता सीता याँर गौरगत प्राण।।32

एकदिन की एक अपूर्व बात सुनिये–जगन्माता सीता देवी, जो गौरगत प्राण थी।

गौरांगेर प्रिय वस्तु नाम चाँपाकला। गौर भुंजाइते तेहों लुकाञा राखिला।।33

चाँपाकला को उसने श्रीगौर को खिलाने के लिए
छिपाकर रख दिया श्रीगौर को वह बहुत प्रिय था।

माता गंगास्नाने गेला शून्य घर पाञा। कृष्णमिश्र फिरे खाद्य वस्तु अन्वेशिया।।34

माता जब गंगा स्नान करने गई और घर में कोई और
न था तो कृष्ण मिश्र घर में कुछ स्वादु वस्तु खाने को ढूँढ़ने लगे।

चाहिते चाहिते पक्व रम्भाफल पाइला। नित्यकृष्णभक्त शिशु मने विचारिला।।35

देखते–देखते उसने उस पक्के चांपाकेला को देखा।
वह नित्य कृष्णभक्त था मन में विचार करने लगा–

गौरे भुंजाइते कला मायेर आछे साध। मुञि यदि पाउ तबे हैव अपराध।।36

माता ने यह केला श्रीगौर को खिलाने के लिए रखा है,
यदि इसे मैं खा लेता हूँ तो अपराध बन जायेगा।

पुन भावे निवेदिया करिमु भक्षण। गौरांग प्रसाद हैले नाहिक दूषण।।37

फिर सोचा, इसे भाव से (मानसी भाव से) निवेदन करके
खा लेता हूँ। गौरांग प्रसाद हो जाने से कोई दोष न होगा।

आगे प्रणव महामन्त्र करि उच्चारण। गौराय नमः बलि कैला निवेदन।।38

उसने पहले प्रणव (ऊँ) महामन्त्र उच्चारण किया और
फिर गौराय नमः कह उस केला को भोग लगाया।

महाप्रसाद ज्ञाने कला शिरे छुँयाइया। भोजन करिला शिशु आनन्दित हञा।।39

उस केला को महाप्रसाद जानकर उसने मस्तक से लगाया और आनन्दपूर्वक
खा लिया।

गंगास्नान करि सीता माता आसि घरे। गौरे समर्पिते रम्भा भाविले अन्तरे।।40

सीता माता गंगा स्नान कर घर में वापस लौटी और

मन में श्रीगौरको वह केला देने का विचार किया।

यँहा राखिछिला रम्भा ताहा ना पाइला। पुत्रगणे खाइल भावि दुःखित हइला।।41

जहां उसने केला रखा था, वहां उसने उसे नहीं पाया और यह सोच कर कि मेरे पुत्रों ने उसे खा लिया दिखता है, मन में बहुत दुःखी हुई।

आगे श्रीअच्युतानन्दे डाकि जिज्ञासिला। गौरार्थ राखिलु रम्भा केवा ताहा खाइला।।42

पहले उसने श्रीअच्युतानन्द को बुलाकर पूछा— मैंने यहां एक केला गौर को खिलाने के लिये रखा था, तुमने खाया है क्या?

श्रीअच्युत कहे माता तुहुँ सर्वज्ञाता। मोर व्यवहार जान मोर मन कथा।।43

श्रीअच्युत ने कहा—माता! आप तो सब जानती हैं, गौर के व्यवहार के सम्बन्ध में मेरे मन की बात।

बाल्य चापल्य गौर—सेवार दुग्ध खाइनु। तोमार ताड़ने ताहा हैते शिक्षा पाइनु।।44

बालकपन में चंचलता के कारण गौर—सेवा के लिए रखा दूध मैंने पी लिया था और आपने मुझे मारा था, उस दिन से ही मैंने शिक्षा पा ली है।

किवा कहों अच्युत महिमा मुञि छार। श्रीकृष्ण चैतन्य सह अभेदात्मा यार।45

ईशाननागर कहते हैं— मैं तुच्छ जीव श्रीअच्युत की महिमा क्या कह सकता हूँ, जिसकी श्रीकृष्ण चैतन्य के साथ अभेदता है।

गौरावेशे तिंहों गौरेर सेवार दुग्ध खाइला। ताहे अच्युतेर माता चापट मारिला।।46

गौरावेश में ही उन्होंने गौर—सेवा का दूध पी लिया था, उस पर माता ने श्रीअच्युत को चपेट मारी थी।

सेई चावड़ेर चिह्न गौर अंगे लागे। ताहा देखि चमत्कार हैल सब लोके।।47

अब तक उस चपेट का निशान गौर की गालपर विद्यमान था, उसको देखकर लोगों को आश्चर्य हुआ।

भगवानेर नित्य सिद्ध भक्त आर भक्ति। एइ दुइ वस्तुर हय अविचिन्त्य शक्ति।48

भगवान् के नित्य सिद्ध भक्तोंकी और भक्ति की अचिन्त्य शक्ति हुआ करती है।

चिन्मयी भकति आर चिन्मय भक्तगण। कृष्ण सह अभेदात्मा शास्त्रेर लिखन।।49

भक्ति चिन्मय है और भक्त भी चिन्मय हैं। शास्त्र का उल्लेख है कि वे दोनों श्रीकृष्ण के साथ अभेदात्मा हैं।

तबे सीता कृष्णदास मिश्रे बोलाञिला। तारे पुछे गौर सेवार रम्भा के खाइला।।50

फिर सीतामाता ने कृष्णदास को बुलाया और पूछा— क्यों रे! गौर—सेवा का केला किसने खा लिया है?

कृष्णमिश्र कहेन माता ताहे कि दूषण। गौरे निवेदिया मुञि करिनु भक्षण।।51

कृष्णमिश्र ने कहा– माता! उसमें क्या दोष हो गया?
मैंने गौर को निवेदित करके वह केला खा लिया है।

ताहा शुनि सीतामाता ईषद हासिया। यष्ठि हाते शिशुर पिछे चलिला धाइया।।52

यह सुनकर सीता माता मन्द मुस्कायी और
एक लाठी लेकर कृष्णमिश्र के पीछे भागने लगी।

भये कृष्णमिश्र गेला अद्वैत गोचर। सीतारे पश्चाते देखि कहे प्रभुवर।।53

डरकर कृष्णमिश्र भागकर श्रीअद्वैत प्रभु के पास आ गये।
सीता को पीछे आया देखकर श्रीअद्वैत बोले–

ना मारिह मुञि आगे शुनि विवरण। सीता श्रान्त दिला शुनि प्रभुर वारण।54

"मत मारो इसे" पहले मुझे सारी बात सुनाओ। प्रभु के रोकने पर सीता देवी रुक गयीं।

प्रभु कहे कृष्णमिश्र कि दोष करिला। कृष्णमिश्र मृदुस्वरे ताँहारे कहिला।।55

श्रीअद्वैत ने पूछा– कृष्णमिश्र ने क्या कसूर किया है?
कृष्णमिश्र ही मधुर वाणी में अपनी बात कहने लगे।

गौरे भुन्जाइते केला राखिला जननी। गौरे निवेदिया खाइनु दोष नाहि जानि।।56

माता ने गौर को खिलाने के लिए केला रखा था, मैंने उसे गौर को भोग लगाकर खा लिया है– इसमें क्या दोष है मेरा? मैं नहीं जानता।

प्रभु कहे किवा मन्त्रे कैला निवेदन। शिशु कहे सप्रणव गौराय नमः।।57

प्रभु ने पूछा– किस मन्त्र द्वारा तुमने केला भोग लगाया था?
कृष्णदास ने बताया– "ॐ गौराय नमः" यह मन्त्र पढ़कर।

प्रभु कहे गौराय स्थले कृष्णाय कहा युक्त। शिशु कहे गौराते कृष्णनाम भुक्त।।58

प्रभु ने कहा– "गौराय' की जगह पर 'कृष्णाय' कहते तो युक्त था।
कृष्णदास ने कहा– "गौराय में कृष्णनाम अन्तर्भुक्त है।

आश्चर्य मानिला प्रभु ताहान वचने। प्रेमाविष्ट हञा चुम्बे शिशुर वदने।।59

श्रीअद्वैत उसके वचन सुनकर आश्चर्य मानने लगे–
प्रेमाविष्ट होकर उस बालक का मुंह चूमने लगे।

पुत्रेर सिद्धान्त शुनि सीतार विस्मय। मने भावे धन्य धन्य आमार तनय।।60

पुत्र के सिद्धान्त को सुनकर सीता माता भी हैरान रह गयीं
और मन में सोचने लगीं–धन्य है मेरा पुत्र।

तबे भोजनार्थे सभे करिला आह्वान। गौर कहे मोहर भोजन समाधान।।61

थोड़ी देर बाद माता ने सबको भोजन करने के लिए बुलाया,
गौर बोले मेरा तो भोजन समाधान हो चुका।

प्रभु कहे तुहुँ कति आहार करिला। गौर कहे निद्राय केवा कला खाञ्याइला।।62

श्रीअद्वैत ने पूछा– क्या तुमने कुछ खा–पी लिया है? श्रीगौर बोले– नींद में न जाने किसी ने मुझको कुछ केले खिला दिये हैं।

एत कहि तिहों एक छाड़िला उद्‌गार। रम्भार गन्ध पाञा सभे हैला चमत्कार।।63

इतना कहकर श्रीगौर ने एक डकार लिया तो उसमें
केला की सुगन्ध सबको आई, सब चमत्कृत हो उठे।

श्रीअद्वैत भावे कृष्ण भक्ताधीन हय। कृष्णमिश्र–दत्त कला भुन्जिला निश्चय।।64

श्रीअद्वैत ने विचारा– श्रीकृष्ण भक्ताधीन हैं, इन्होंने
कृष्णमिश्र द्वारा दिया हुआ केला निश्चित खाया है।

मुञि महाभाग्यवान यार आर हेन पुत्र। इहार चरित्रे जगत् हइब पवित्र।।65

मैं यहां भाग्यवान हूँ जिसको ऐसा पुत्र प्राप्त हुआ है। इसके चरित्रों से जगत् पवित्र होगा।

भावितेइ हैला प्रभु प्रेमार्द्र हृदय। अविश्रान्त अश्रुधारा दुइ नेत्रे बय।।66

यह सोचते ही प्रभु का हृदय प्रेम से द्रवित हो गया
और उनके नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी।

सेई तत्व शुनि सीता प्रेमे हञा भोर। मने भावे मोर पुत्रेर भाग्ये नाञि ओर।।67

उस तत्व को सुनकर सीतादेवी प्रेम में विभोर होकर कहने लगी–
मेरे पुत्र के समान और कोई भाग्यवान इस संसार में पुत्र नहीं है।

मुञि रत्नगर्भा भाग्यवती सुनिश्चय। यार गर्भे शुद्ध कृष्ण भक्तेर उदय।।68

मैं भी निश्चय ही भाग्यवती रत्नगर्भा (रत्नों को जन्म देने वाली हूँ) जिसके गर्भ से शुद्धभक्त जन्म हुआ।

तबे एकदिन एक ब्राह्मण–कुमार। आसि आचार्येर पदे कैला नमस्कार।।69

एकदिन एक ब्राह्मण कुमार ने आकर
श्रीअद्वैतचन्द्र के श्रीचरणों में नमस्कार किया।

श्रीअद्वैत कहे तुमि काहार नन्दन। किवा लागि आइला हेथा कह विवरण।70

श्रीअद्वैतचन्द्र ने पूछा– तुम किसके पुत्र हो? यहां कैसे तुम्हारा आना हुआ है?

द्विजसुत कहे मुञि तव दास सुत। लोकनाथ नाम मोर चक्रवर्ती ख्यात।।71

ब्राह्मणकुमार ने कहा– मैं आपके एक दास का
पुत्र नाम लोकनाथ है, चक्रवर्ती नाम से भी प्रसिद्ध हूँ।

पद्मनाभ चक्रवर्तीर हञो मुञि पुत्र।यशोरिया ख्याति याँर तव कृपा पात्र।।72

मैं पद्मनाभ चक्रवर्ती का पुत्र हूँ, जिसकी 'यशोरिया'
नाम से ख्याति है और वह आपका कृपापात्र है।

चिनिनु बलिया प्रभु तारे आलिंगिला। लोकनाथ कहे मोरे पवित्र करिला।।73

'पहचाना' कहकर श्रीअद्वैतचन्द्र ने उसे आलिंगन किया।
लोकनाथ ने कहा मुझे पावन कर दिया है।

प्रभु कहे घरेर कुशल आगे कह। लोकनाथ कहे तुया यैछे अनुग्रह।।74

अद्वैत प्रभु ने कहा, घर की कुशल कहो। लोकनाथ ने कहा–
आपके अनुग्रह से सब कुशल हैं।

प्रभु कहे काहे एका आइला एत दूरे। लोकनाथ कहे आइनु पढ़िवार तरे।।75

प्रभु ने पूछा– तुम अकेले इतनी दूर कैसे चले आये?
लोकनाथ ने कहा– आपसे पढ़ने के लिये आया हूँ।

प्रभु कहे भाल भाल रह एइ स्थाने। ताहाञि पड़ह तोर याहा लय मने।।76

प्रभु ने कहा, ठीक है सुन्दर है तुम यहाँ रहो। जो तुम्हारी इच्छा हो मुझसे पढ़ो।

लोकनाथ कहे मोर पितार सम्मत। श्रीमद्भागवत पड़ों कृष्णलीलामृत।।77

लोकनाथ ने कहा, मेरे पिताजी का विचार है, मैं श्रीकृष्णलीलामृतमयी
श्रीमद्भागवत का आपसे अध्ययन करके कृतार्थ होऊँ।

श्रीअद्वैत कहे तव पिता भक्तियुत। भागवत रस पाने सदा उनमत्त।।78

श्रीअद्वैतप्रभु ने कहा– तुम्हारे पिता परम भक्त हैं,
वे श्रीभागवत रस पान में सदा उन्मत्त रहते हैं।

तबे श्रीमान् गदाधर पण्डितेर साथ। सटीक श्रीभागवत पड़े लोकनाथ।।79

तब श्रीगदाधर के साथ–साथ लोकनाथ भी टीका सहित श्रीभागवत पढ़ने लगे।

ता दोंहार पाठ शुनि शुनि गौरचन्द्र। श्लोकार्थ कण्ठस्थ कैला पाञा महानन्द।।80

उन दोनों के पाठ को सुन–सुनकर श्रीगौरचन्द्र ने
श्लोकों को कण्ठस्थकर महाआनन्द प्राप्त किया।

एकदिन सीतानाथ विचारिया मने। गोपालेर अन्नाशन कैला शुभक्षणे।।81

एकदिन सीतानाथ श्रीअद्वैतचन्द्र ने शुभदिन विचार कर
अपने पुत्र गोपालदास का अन्नप्राशन मनाया।

सेई दिने शुभ एक अपरूप लीला। विधिमते शिशुर आगे नाना द्रव्य थुँइला।।82

उसदिन की एक लीला सुनिये। श्रीअद्वैतप्रभु ने
विधि अनुसार अनेक व्यंजन बालक के सामने रखे।

श्रीगोपाल दास ताहा किछु ना छुँइला। श्रीगौरांगेर पादपद्म परशन कैला।।83

गोपालदास ने उनमें से कुछ भी न छुआ।
केवल श्रीगौरांग के चरण कमल का स्पर्श कर लिया।

देखि मोर प्रभु प्रेमे हञा मातोयारा। कहे एइ शिशु हैव धार्मिकेर चूड़ा।।84

यह देखकर मेरे प्रभु श्रीअद्वैतचन्द्र तो प्रेम में मतवाले हो बोले,
यह मेरा पुत्र तो धार्मिक– शिरोमणि होगा।

विप्रपद विष्णुपद समतुल हय। विप्रपदे सर्व तीर्थगण विराजय।।85

ब्राह्मणचरण तथा विष्णुचरण समान होते हैं।
ब्राह्मण के चरणों में सब तीर्थ विराजमान रहते हैं।

हेन मते प्रभुपाद बहु व्याख्या कैला। प्रकारे गौरांग वस्तुतत्त्व उघारिला।।86

इसप्रकार श्रीअद्वैत प्रभु ने उससमय अनेक व्याख्या की।
विविधप्रकार से गौरांगतत्व को प्रकाशित किया।

ताहा शुनि भक्तवृन्देर आनन्द बाड़िल। सभे मिलि नाम संकीर्तन आरम्भिल।।87

उसे सुनकर भक्तों को बहुत आनन्द हुआ।
सबने मिलकर नाम संकीर्तन आरम्भ किया।

श्रीअद्वैत नाचे आर नाचे हरिदास। श्रीअच्युतानन्द नाचे आर कृष्णदास।।88

श्रीअद्वैतप्रभु एवं श्रीहरिदास नाचने लगे।
श्रीअच्युतानन्द तथा श्रीकृष्णदास भी नाच उठे।

कृष्णमिश्रेर नृत्य देखि महाप्रभुर हास। गौर नाचाइला भक्ते करिया प्रयास।।89

श्रीकृष्णदास भी जब नाचने लगा तो महाप्रभु को हंसी आने लगी।
श्रीगौरांग ने भक्तों का हाथ पकड़ प्रयास करके नचाया।

हेन मते दिन दिन बाढ़ये आनन्द। प्रतिदिन महोत्सव करे भक्तवृन्द।।90

इसप्रकार दिन–प्रतिदिन आनन्द बढ़ने लगा।
प्रतिदिन ही भक्तवृन्द महोत्सव मनाने लगे।

क्रमे गौरेर एकवर्ष हैल अतिक्रम। ताहा वेद भागवत हइल पठन।।91

इसप्रकार श्रीगौर को एक वर्ष निकल गया और
इन्होंने वेद तथा श्रीभागवत का अध्ययन पूरा किया।

ता देखि आश्चर्य माने पण्डितेर गण। आचार्य कहये गौरेर अलौकिक गुण।।92

यह देखकर वहां के पण्डित लोग आश्चर्य मानने लगे।
श्रीआचार्य भी कहने लगे– गौर में तो अलौकिक गुण है।

गदाधर पण्डितेर अचिन्त्य महिमा। चतुर्मुखे तान गुण दिते नारे सीमा।।93

गदाधर पण्डित की भी अचिन्त्य महिमा है, ब्रह्मा भी
इनकी गुण महिमा का पार नहीं पा सकते।

भागवते हैल ताँर अपूर्व व्युत्पत्ति। जाँरे प्रभु कहे कृष्णेर अन्तरंगा शक्ति।।94

उनकी श्रीभागवत में तो अपूर्व गम्य थी, जिसे
श्रीअद्वैतचन्द्र श्रीकृष्ण की अन्तरंगा–शक्ति कहते थे।

श्रीगौरांग संगेर गुण अति चमत्कार। लोकनाथेर हैल भागवते अधिकार।।95

श्रीगौरांग के संग–गुण का अति चमत्कार फल यह हुआ
लोकनाथ का श्रीभागवत में अधिकार हो गया।

सर्वदा प्रेमाश्रु झरे श्लोकार्थ सुनिते। सभे कहे कृष्ण कृपा कैल लोकनाथे।96

श्लोकार्थ सुनते ही सदा उनके प्रेमाश्रु बहने लगते।
सब कहते लोकनाथ पर श्रीकृष्ण ने कृपा की है।

एक दिन लोकनाथ कहे आचार्येरे। कृष्णप्राप्ति कैछे हैव कह प्रभु मोरे।।97

एकदिन लोकनाथ ने श्रीअद्वैताचार्य से कहा–
हे प्रभो! कृष्ण–प्राप्ति कैसे होगी? यह मुझे बताइये।

प्रभु कहे कृष्णमन्त्र करह ग्रहण। अचिराते करे जेइ कृष्ण आकर्षण।।98

प्रभु ने कहा– श्रीकृष्णमंत्र का आश्रय जाप करो।
वह शीघ्र ही श्रीकृष्ण को आकर्षण करने वाला है।

ताहा शुनि लोकनाथ आनन्दित हैला। गंगागर्भे मोर प्रभु स्थाने मन्त्र लैला।।99

यह सुनकर श्रीलोकनाथ आनन्दित हो गंगा किनारे
जाकर श्रीअद्वैत प्रभु से श्रीकृष्ण मंत्र की दीक्षा ली।

श्रीवैष्णव मन्त्रराजेर अविचिन्त्य शक्ति। ग्रहण मात्रेते पाइला शुद्ध प्रेमभक्ति।।100

श्रीवैष्णव मन्त्रराज–हरेकृष्ण महामन्त्र की अविचिन्त्य शक्ति ऐसी है कि लोकनाथ
ने उसके ग्रहण करते ही शुद्ध–प्रेमा भक्ति की प्राप्ति कर ली।

तबे लोकनाथ श्रीअद्वैत पदे धरि। प्रेमावेशे कान्दे बहु दैन्य स्तव करि।।101

तब लोकनाथ श्रीअद्वैत के चरण पकड़कर प्रेमावेश में रोने लगे
और अति दीनतापूर्वक स्तुति करने लगे।

प्रभु कहे ना कान्दह मन स्थिर कर। अचिराते राधाकृष्ण प्राप्ति तोरे हैव।।102

श्रीअद्वैत प्रभु ने कहा– लोकनाथ! रो मत मन को
स्थिर रख, तुम्हें श्रीराधाकृष्णकी प्राप्ति होगी।

एत कहि प्रभु धरि लोकनाथेर कर। उपनीत हैला महाप्रभुर गोचर।।103

इतना कहकर प्रभु ने लोकनाथ का हाथ पकड़ा और
उसे श्रीमहाप्रभु के सामने लाकर उपस्थित किया।

प्रभु कहे अहे निमाञि कर अवधान। लोकनाथे शिक्षाइवा तत्त्वानुसन्धान।।104

श्रीअद्वैतचन्द्र ने कहा– हे प्यारे निमाई! इस लोकनाथ को परतत्त्व श्रीकृष्ण के
अनुसन्धान की शिक्षा दो। जिससे कृष्ण–प्राप्ति हो।

एत कहि प्रिय शिष्ये गौरे समर्पिला। श्रीगौरांग लोकनाथे आत्मसात कैला।।105

यह कह श्रीअद्वैतप्रभु ने प्रियशिष्य श्रीगौर के समर्पित कर दिया। श्रीगौरने
लोकनाथ को अपना लिया।

तबे एकदिन गोरा कहे आचार्येरे। विदाय हैते चाङ घरे जाइवारे।।106

तब एक दिन श्रीगौर ने श्रीआचार्य से कहा– प्रभो!
मैं घर जाना चाहता हूँ, आप मुझे जानेकी आज्ञा दें।

प्रभु कहे तोरे विदाय दिते प्राण फाटे। स्वतन्त्रता हय तोर प्रकटाप्रकटे।।107

श्रीअद्वैत ने कहा– तुम्हें विदा करने में तो मेरे प्राण फटते हैं। किन्तु आप तो
प्रकट अथवा अप्रकट हर अवस्था–लीला में परम स्वतन्त्र हैं।

एत कहि प्रभु प्रेमसागरे डुबिला। प्रेम सम्वरिया तबे सभारे कहिला।।108

इतना कहकर श्रीअद्वैतप्रभु प्रेमसागर में डूब गये।
फिर प्रेम का संवरण कर वे सबसे कहने लगे।

एत निमाञि सर्वशास्त्रे अति विचक्षणे। विद्यासागर उपाधि मुञि करिलुँ स्थापने109

यह निमाई समस्त शास्त्रों में अति प्रतिभाशाली हैं,
मैं इसे "विद्यासागर" की उपाधि प्रदान करता हूँ।

ताहा शुनि सभे कैला जय जय ध्वनि। छात्र कहे विद्यासागर देह प्राण चिनि।110

यह वचन सुनकर सबने जय–जय ध्वनि की। छात्रों ने कहा–
हम विद्यासागर निमाई को देह प्राणों के समान प्रिय मानते हैं।

महाप्रभु यथाविधि सभे सम्मानिला। दोंहे संगे करि तबे गृहेरे चलिला।।111

श्रीमहाप्रभु ने यथायोग्य सबका सम्मान किया और
लोकनाथ को साथ लेकर दोनों घर को चल दिये।

श्रीगौरांग यात्रार कथा कि कहिमु आर। सपरिवारे ते प्रभुर बहे अश्रुधार।112

श्रीगौरांग की यात्रा का विवरण मैं और क्या कहूँ?

श्रीअद्वैत प्रभु सपरिवार गौरप्रेम में रोने लगे।

हेथा नवद्वीपे शचीमाता गोरा बिने। वत्सहारा गाभीसम इति उतिभ्रमे।।113

इधर नवद्वीप में श्रीगौर के बिना शची माता बछड़ा–खोयी

हुई गैया के समान व्याकुल होकर इधर–उधर घूमती रहती थी।

हेन काले गौरचन्द्र स्वगृहे आइला। देखि शची शून्य देहे पराण पाइला।114

श्रीगौरचन्द्र घर आ पहुँचे। उन्हें देखकर मृत देह में

प्राणों के समान शची में जीवन का संचार हो गया।

गौरांग मातार पद कैला नमस्कार। शची तान गलाधरि कान्दे अनिवार।।115

श्रीगौर ने माता के चरणों में प्रणाम किया।

शची उन्हें गलकण्ठ कर निरन्तर रोने लगीं।

गोराचाँद कहे माता ना कान्द ना कान्द। क्षुधा पाइयाछे मोर झाट गिया रांध।116

श्रीगौरचन्द्र ने कहा– माँ! रो मत, रो मत।

देख मुझे भूख लग रही है– शीघ्र ही रसोई तैयार करो।

शुनिया तुरिते शची रांधीवारे गेला। भक्त संगे गौर गंगास्नान करि आइला।।117

यह सुनकर शची रसोई बनाने झट चली गयी और

इधर भक्तों के साथ महाप्रभु गंगास्नान करके आये।

विष्णुपूजा करि अन्न भोग लागाइला। तबे भक्तसंगे हर्षे भोजन करिला।118

प्रभु ने विष्णु पूजन किया और अन्न भोग लगाया।

फिर भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक भोजन किया।

अपराह्ण महाप्रभु नगर भ्रमिला। बड़ बड़ पण्डितेरे तर्के हाराइला।।119

दोपहर पीछे महाप्रभु नगर–भ्रमण के लिए निकल पड़े।

आपने फिर तो बड़े–बड़े पण्डितों को तर्क में परास्त कर दिया।

सभे कहे निमाञि पण्डित–शिरोमणि। ऐछे विद्यासागर आर काँहा नाहि शुनि।120

सब कहने लगे–निमाई पण्डित तो पण्डित–शिरोमणि है–

ऐसा विद्यासागर और कहीं नहीं सुना–देखा है।

क्रमे गौरेर विद्या–यश–सूर्य उज्ज्वलिल। सेइ नवद्वीपे तान विवाह हइल।।121

इसप्रकार श्रीगौर का विद्या–यश रूप सूर्य उज्जवल हो उठा।

फिर नवद्वीप में ही उनका विवाह हुआ।

राजर्षि भीष्मक रूप वल्लभाचार्य। कुले शीले मान्य गण्य द्विजगण आर्य।।122

राजर्षि भीष्मक की भांति वहां श्रीवल्लभाचार्य रहते थे,
जो कुल–शील में ब्राह्मणों में गण्यमान थे।

तार कन्या परमाह्लादिनी लक्ष्मी सती। सर्व सद्गुण सम्पूर्णा अति रूपवती।।123

उनकी कन्या थी परम आह्लादिनी लक्ष्मी देवी।
समस्त सद्गुण उसमें पूर्णरूप से थे और वह अति रूपवती थी।

श्रीरुक्मिणी बलि मोर प्रभु जारे कय। श्रीगौरसुन्दर ताने कैला परिणय।।124

मेरे प्रभुअद्वैत उसे श्रीरुक्मिणी कहा करते थे। गौरसुन्दर ने उससे विवाह किया।

तबे गोरा टोल करि पढ़ाइला छात्र। जेई छात्रेर जेइ वान्छा पड़े सेई शास्त्र।।125

तब श्रीगौरचन्द्र वहां अपना विद्यालय खोलकर छात्र पढ़ाने लगे। जो छात्र जिस शास्त्र को पढ़ने की इच्छा करता कल्पतरू श्रीमहाप्रभु उसे वही पढ़ाते।

श्रीअच्युतानन्द आइला अद्वैत–कोङर। बुद्ध्ये बृहस्पति शास्त्रे अति पटुतर।।126

वहां श्रीअद्वैत के पुत्र श्रीअच्युत भी आये जो बुद्धि में
बृहस्पति के समान थे और सब शास्त्रों में प्रवीण थे।

तारे पाञा महाप्रभुर आनन्द अपार। व्याकरण पढ़ाइला आर अलंकार।।127

उससे मिलकर महाप्रभु को अपार आनन्द हुआ।
महाप्रभु उसे व्याकरण और अलंकार पढ़ाने लगे।

एक दिन श्रीअच्युत कहे गौरचन्द्रे। मुखेर उपमा भालि कैछे हय चन्द्रे।।128

एकदिन श्रीअच्युत ने श्रीगौरचन्द्र से कहा– मुख की उपमा चन्द्र से दी जाती है– यह कैसे संगत है?

मृगांके कलंक रहु देखि विद्यमान। अनुज्जवल रौप्य वर्ण सेह अप्रधान।।129

चन्द्र में मृगांक कलंक तो स्पष्ट दिखता ही है। फिर चांदी का कलंक सहित वर्ण कोई प्रधान वर्ण नहीं है। अतः मुख की उपमा चन्द्र से क्यों दी जाती है?

ताहा शुनि निमाइ विद्यासागर आनन्दे। स्नेह प्रशंसि कहे श्रीअच्युतानन्दे।130

यह सुनकर श्रीनिमाई विद्यासागर अति आनन्दित हुए एवं स्नेहपूर्वक प्रशंसा
करते हुए श्रीअच्युतानन्द से कहने लगे–

आह्लादेर अंशे हय मुखेर उपमा। कोन वस्तुर सर्व अंशे ना हय तुलना।131

अच्युत! चन्द्र के साथ मुख की उपमा केवल आह्लाद– अंश में दी जाती है।
किसी वस्तु की सर्वांश में उपमा नहीं घटा करती है।

शुनि श्रीअच्युत कहे बुझिलुं एखन। आर एक कथा मोर हैल उद्दीपन।।132

श्रीअच्युत ने कहा– अब मैं समझ गया हूँ,
किन्तु एक बात और मेरे मन में उठी है।

मदनगोपाल कृष्ण स्वयं भगवान। ताहारे कहिमु मुञि काहार समान।।133

श्रीमदनगोपाल (घर में सेवित–विग्रह) स्वयं भगवान्
श्रीकृष्ण हैं, उनको मैं किसके समान कहूँ?

तांहार उपमा दिते किछु नाहि पाङ। कहिये उपमा मोर संशय घुचाओ।134

मुझे तो उनकी उपमा के लिये कुछ नहीं दीखता है,
उनकी क्या उपमा है? मुझे बताकर संशय मिटाईये।

बालकेर कथा शुनि श्रीशचीनन्दन। विस्मय अन्तरे कहे शुन प्रियतम।।135

शिशु अच्युतानन्द की बात सुनकर श्रीशचीनन्दन को
मन में बहुत आश्चर्य हुआ। वे बोले– हे प्रियतम!

श्रीसच्चिदानन्द कृष्ण सर्वशक्तिपूर्ण। तेंहो उपमान वस्तु तान उपमा शून्य।।136

सुनो, श्रीकृष्ण सच्चिदानन्द स्वरूप हैं, सर्वशक्तिमान हैं,
उनकी उपमा और क्या हो सकती है, वे उपमारहित–अनुपम हैं।

जैछे आन रसेर उपमान सुधा हय। सुधार उपमा कति संसारे आछय।।137

जैसे और और रसों को तो सुधा या अमृत की उपमा दे दी जाती है,
किन्तु सुधा की उपमा इस जगत में कोई नहीं कही जा सकती।

शुनि श्रीअच्युत कहे तुहु सर्वज्ञात। सुधा हइते स्वादाधिक्य हरिनामामृत।।138

यह सुनकर श्रीअच्युत ने कहा, हे सर्वज्ञ! महाप्रभु सुनिये! अमृत से तो
सर्वतोभावेन हरिनामामृत का रसास्वादन अधिक मधुर है, जो आपको ज्ञात है।

श्रीगौरांग कहे कैछे करों सुविश्वास। श्रीअच्युत कहे वस्तु शक्तिते प्रकाश।।139

श्रीगौरांग ने कहा– मैं तुम्हारी बात का विश्वास कैसे करूँ? श्रीअच्युत ने कहा–
वस्तु की पहिचान उसकी शक्ति से हुआ करती है।

सुधापायी देवे नामामृत करि पान। परम कृतार्थ शास्त्रेते प्रमाण।।140

सुधापान करने वाले देवतावृन्द जब श्रीहरिनामामृत का आस्वादन पाते हैं तो वे
अपने को परम कृतार्थ मानते हैं, इसका प्रमाण तो शास्त्रों में विद्यमान है।

शुनि महाप्रभु गूढ़ प्रेमे आर्द्र हञा। अच्युतेर शिरे चुम्बे निज कोले लञा।141

यह वचन सुनकर श्रीमहाप्रभु गूढ़ प्रेम में द्रवित हो उठे और श्रीअच्युत का
मस्तक चूमकर उसे गोद में उठाया और बहुत स्नेह किया।

भक्त संगे श्रीचैतन्येर लीला गुह्यतम। तार सूत्र वर्णि तैछे नाहि मोर क्षम।।142

इसप्रकार भक्तों के साथ श्रीचैतन्य गुह्यतम लीलाएं करते हैं। मैं तो उन सबको वर्णन करने में असमर्थ हूँ, केवल सूत्रमात्र ही कह रहा हूँ।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।143

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत प्रभु के चरणों की सेवा अभिलाषा करते हुए श्रीईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश का वर्णन करते हैं।

त्रयोदश अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो। श्रीसीतानाथ प्रभु की जय हो।
श्रीनित्यानन्द राम की समस्त भक्तों सहित जय हो।

एबे शुन कहि एक अपूर्व आख्यान। नवद्वीपे आइला ईश्वरपुरी सर्वज्ञान।।02

अब एक अपूर्व कथा कहता हूँ, उसे सुनिए।
श्रीईश्वरपुरी सर्वज्ञानपूर्ण थे, वे नवद्वीप में आये।

श्रीउज्ज्वल रसरूप प्रभु जारे कय। जांहार दर्शने प्रेमभक्ति उपजय।।03

श्रीअद्वैतचन्द्र जिन्हें श्रीउज्ज्वल रूप कहते थे।
जिनके दर्शनमात्र से ही प्रेमभक्ति उपजती थी।

परम वैष्णव पुरी विरक्त उदास। आद्ये उत्तरिला प्रभु अद्वैतेर वास।।04

श्रीपुरी परम विरक्त एवं परम वैष्णव थे। वे पहले पहले श्रीअद्वैत के घर आये।

तेजस्वी संन्यासी बड़ देखि सीतानाथ। नमो नारायण बलि कैला दण्डवत्।05

श्रीसीतानाथने बड़े तेजस्वी संन्यासी को देख नमोनारायण कहकर प्रणाम किया।

श्रीअद्वैते देखि पुरी मने कैला धार्य्य। इंहो बुझि कृष्ण प्रकटेर मूलाचार्य।।06

श्रीपुरी ने श्रीअद्वैत को देखकर मन में समझ लिया कि–
ये श्रीकृष्णावतार कराने वाले मूल आचार्य हैं।

श्रीमाधवेन्द्र शिष्य श्रीईश्वरपुरी। परिचय पाञा प्रभुर झरे प्रेमवारि।।07

श्रीईश्वरपुरी श्रीमाधवेन्द्रपुरी के शिष्य हैं– ऐसा परिचय पाकर श्रीअद्वैत के नेत्रों से शप–शप जलधारा बहने लगी।

तबे दोहार कृष्ण कथा तरंग बाढ़िल। क्रमे दोंहे प्रेमामृत–सागरे डूबिल।।08

तब दोनों में कृष्णकथा की तरंगें उठने लगीं और
दोनों प्रेमामृत सागर में सराबोर हो गये।

क्षणे कान्दे क्षणे हासे क्षणे मूर्च्छा जाय। कभु बलि सिंहमय गम्भीर गर्जय।09

कभी रोते, कभी हंसते और कभी मूर्च्छित हो जाते।

कभी उठकर शेर की तरह गर्जना करने लगते।

कथोक्षणे दोहारकार बाह्य स्फूर्ति हैल। सीतानाथ पुरीराजे भिक्षा कराइल।10

कुछ समय के पश्चात् दोनों को चेतना हुई।

तब श्रीसीतानाथ ने श्रीपुरी महाराज को भिक्षा करायी।

तबे पुरी नवद्वीपे करये भ्रमण। शुभक्षणे श्रीगौरांग पाइला दरशन।।11

श्रीपुरीजी नवद्वीप में भ्रमण करने लगे। एकदिन शुभ समय उन्होंने श्रीगौर के दर्शन किये।

गौरचन्द्रेर अंग कान्ति कोटि सूर्यसम। देखि पुरीर हैल महाभावेर उद्‌गम।12

श्रीगौरचन्द्र की अंगकांति कोटि सूर्यों के समान थी।

श्रीपुरीजी में तो महाभाव का आविर्भाव हो उठा।

पुरी भावे इहों सत्य स्वयं–भगवान। गौररूपे नवद्वीपे हैला अधिष्ठान।।13

श्रीपुरी मन में कहने लगे– यह तो निश्चित स्वयं भगवान हैं और श्रीगौररूप से अब नवद्वीप में जगत के उद्धार हेतू अवतरित हुए हैं।

ज्योतिर्मय पुरीराज देखि विश्वम्भर। भावे इहों महाभागवत न्यासीवर।।14

श्रीगौरचन्द्र ने भी ज्योतिर्मय श्रीपुरीराज को देखकर

जान लिया कि कोई महाभागवत श्रेष्ठ संन्यासी है।

आशु गिया गौर ताने कैला परणाम। पुरी कहे सिद्ध हैव तोर मनस्काम।।15

श्रीगौरचन्द्र ने झट आगे बढ़कर श्रीपुरी को प्रणाम किया।

श्रीपुरी ने कहा तुम्हारा मनोभीष्ट पूर्ण हो।

दोंहार प्रसंगे दोंहार हैल परिचय। दोंहे शास्त्रालाप करि आनन्दे भासय।।16

कथोपकथन में दोनों को एक दूसरे का परिचय मिला। दोनों शास्त्र चर्चा कर अति आनन्द प्राप्त करके अतिशय धन्य मानने लगे।

तबे गौर पुरीराजे आग्रह करिया। भिक्षा कराइला तारे नाना द्रव्य दिया।।17

तब श्रीगौर ने आग्रह पूर्वक श्रीपुरीराज को अपने

घर ले जाकर अनेक व्यंजन अर्पण कर भिक्षा करायी।

दिन कत पुरी ताँहा विश्राम करिला। गौर प्रकाशेर गौण देखि तीर्थे गेला।18

अनेक दिन श्रीपुरी नवद्वीप मे रहे आये। श्रीमहाप्रभु के गौण प्रकाश को देखकर अर्थात् स्वयं भगवत्ता के मुख्य प्रकाश को इन्होंने छिपा रखा है यह जानकर वे तीर्थ यात्रा को चल दिये।

एक दिन श्रीगौरांग कहे शची पाशे। शिष्यगण लञा मागो जाङ पूर्वदेशे।।19

एकदिन श्रीगौर ने माता शची से कहा– माँ!
मैं शिष्यों को साथ लेकर पूर्वी बंगाल जाना चाहता हूँ।

फिरि आसिवाङ झाट प्रवास करिया। मो विषय चिन्ता ना करह दुखी हञा।।20

मैं यात्रा कर शीघ्र ही लौट आऊँगा।
आप मेरे लिये दुखी होकर कोई चिन्ता न करना।

घरे वसि कर मा गो कृष्ण आराधना। प्रेमानन्दे रहिले ना घटिवे यन्त्रणा।।21

माँ! घर में रहकर श्रीकृष्ण–आराधना करते रहना,
इस प्रेमानन्द में रहकर आपको कोई दुःख न रहेगा।

एत कहि शची पदे कैला नमस्कारे। माता आशीर्वाद कैला व्यथित अन्तरे।22

श्रीगौर ने माता शची के चरणों प्रणाम किया
और माता ने मन में दुखी होते हुए भी आशीर्वाद दिया।

तबे गौरचन्द्र पूर्व दिगेर चलय। पद्मनाभेर घरे जाञा हइला उदय।।23

तब श्रीगौरचन्द्र पूर्व देश की ओर रवाना हुए
और पद्मनाभ के घर जाकर उपस्थित हुए।

महाप्रभुर संगी लोकनाथ चक्रवर्ती। पितारे पुकारि कहे हञो अग्रवर्त्ति।।24

महाप्रभु के संगी श्रीलोकनाथ चक्रवर्ती ने अपने पिता को आवाज दी कि शीघ्र इधर आओ और महाप्रभु का स्वागत करो। अहो भाग्य हमारे घर प्रभु पधारें।

पद्मनाभ चक्रवर्ती परम पवित्र। जेहों श्रीअद्वैतचन्द्रेर हन कृपापात्र।।25

श्रीपद्मनाभ चक्रवर्ती परम पवित्र हृदय थे,जो श्रीअद्वैतचन्द्र के परम कृपापात्र थे।

नवद्वीपे कृष्ण गौररूपी स्वप्रकाश। प्रभुर कृपाबले तिहों जाने तदाभास।।26

नवद्वीप में श्रीकृष्ण गौररूप से स्वप्रकाशित हुए हैं–
श्रीपद्मनाभ श्रीअद्वैतप्रभु की कृपा से इस बात को जानते थे।

पूर्वेञि जानिला तिहों भावेर आवेशे। गौररूपी स्वयं कृष्ण आइला मोरवासे।27

इन्होंने भावावेश में पहले ही जान लिया था कि गौररूप स्वयं कृष्ण मेरे घर आ रहे हैं।

आगुलिया आइला द्विज वस्त्र बान्धि गले। गौरांगे देखिया तिंहो चिने अवहेले।।28

श्रीपद्मनाभ गले में वस्त्र डालकर श्रीगौरहरि को आगे लेने आये एवं श्रीगौरचन्द्र को देखते ही सहज में इन्हें वृन्दावनबिहारी श्रीकृष्ण रूप में पहचान गये।

दण्डवत हञा पड़े महाप्रभुर आगे। विष्णु विष्णु बलि गौर जाय अन्य दिगे।।29

वे श्रीमहाप्रभु के चरणों में दण्डवत् पड़ गये।

श्रीगौर "विष्णु–विष्णु" कहते हुए सामने से हट गये।

पद्मनाभ कहे गौर ना भाण्डिह मोरे।तोर गूढ़ तत्व स्थिति भक्तेर अन्तरे।।30

श्रीपद्मनाभ बोले– हे गौर! मेरे प्रभु!! मेरी वन्चना मत करिये। आपकी गूढ़ तत्व जानकारी भक्तों के हृदय में सदा अवस्थान करती है।

तुमिह साक्षात् कृष्ण सर्व रसपूर्ण। जीव निस्तारिते स्वयं हैला अवतीर्ण।।31

आप ही सर्व रसपूर्ण साक्षात् श्रीकृष्ण हैं,
जीव निस्तार के लिए आप स्वयं अवतीर्ण हुए हैं।

एत कहि दिव्यासन करिला प्रदान। विष्णु स्मरि गौर ताहे कैला अधिष्ठान।।32

इतना कहकर श्रीपद्मनाभ ने श्रीगौरहरि को दिव्य आसन प्रदान किया। श्रीविष्णु विष्णु कह श्रीगौर ने उसे स्वीकार किया।

पद्मनाभ तारे सत्कार कैला विधिमत। महाप्रभु तथि वास कैला दिन कत।।33

श्रीपद्मनाभ ने विधिवत् इनका सत्कार किया।
महाप्रभु प्रसन्न होकर वहां कुछ दिन निवास किये।

निमाञि पण्डित आइला हैल महाध्वनि। पण्डितेरगण आइला आर जत ज्ञानी।।34

सर्वत्र यह बात फैल गयी कि यहां श्रीनिमाई पण्डित शिरोमणि आये हैं जितने भी वहां ज्ञानवान पण्डितगण थे महाप्रभु के पास आये और उनके श्रीचरणों में शरणागत हुए।

देखिते आइला शत शत धन्य मानी। आबाल वृद्ध युवा आर जतेक रमणी।।35

सैकड़ों भाग्यवान, बालक, वृद्ध, युवा एवं अनेक
नारीगण श्रीमहाप्रभु के दर्शन करने आने लगे।

महा कोलाहल हैला गौर देखिवारे। युक्ति करि गोरा उठे अट्टालिकोपरे।36

श्रीगौरहरि के दर्शन के लिए सर्वत्र महा कोलाहल सा मच गया। श्रीगौरचन्द्र भी एक ऊँची अट्टालिका पर बैठकर कृपापूर्वक सबको दर्शन दिये।

अति समुज्ज्वल हेम कान्ति गौर रूप। आजानुलम्बित बाहु रसामृत–कूप।।37

अत्यन्त समुज्ज्वल स्वर्णकान्तियुक्त गौररूप था आपका, भुजाएं जानुओं तक लम्बी थीं। रसामृत सिन्धु श्रीविग्रह देखकर सभी तृप्त हो उठे।

चंचल नयन मुख पद्म प्रफुल्लित। वाम भुजे अच्युतेर कण्ठ आलिंगत।।38

नेत्र चंचल थे, मुख कमल की भांति प्रफुल्लित था, अपनी
बायीं भुजा श्रीअच्युत के कण्ठ में धारण करके खड़े हुए थे।

अपूर्व रूप गंगामृते सभे स्नान कैला।केह भाग्ये ताहा गिया उन्मत्त हैला।।39

अपूर्वरूप के गंगामृत में सबने स्नान किया कोई भाग्यवान
तो श्रीगौर के दर्शनकर उन्मत्त हो उठा।

केह बहु अश्रुपात कैला प्रेमावेशे। केह ऊर्द्धबाहु हञा नाचये हरिषे।।40

कोई प्रेमाविष्ट होकर अश्रु बहाने लगा। कोई भुजाएं
ऊँची उठाकर आनन्द में नाचने भी लगा।

रात्रे महासभा कैला मिलि विज्ञजन। चतुर्दिके द्वीप ज्वले जेछे मणिगण।।41

विद्वानों ने रात के समय एक महासभा का आयोजन किया। महाप्रभु के सम्मान
के लिए चारों ओर दीपमालिका मणियों की भांति जलायी गयी।

शिष्यगण लञा गौर सभाते आइला। देखि सभे सम्भ्रमे गात्रोत्थान कैला।।42

शिष्यों को साथ लेकर श्रीगौरचन्द्र उस सभा में पधारे।
महाप्रभु को देखकर सब आदर प्रदर्शन के लिए खड़े हो गये।

सभा मांझे गौरचन्द्र वैसे चन्द्रसम। तांने घेरि वैसे सुधी जैछे तारागण।।43

सभा में चन्द्र के समान गौरचन्द्र विराज गये। चारों ओर तारागण के समान सब
विद्वान उनको घेरकर बैठ गये। अति सुन्दर दृश्य था।

ताहे एक सुधी विप्र तर्क–चूड़ामणि। शास्त्रे सुनिपुण पण्डितेर शिरोमणि।।44

उनमें एक तर्क चूड़ामणि बुद्धिमान ब्राह्मण था, जो
शास्त्र में निपुण और सब पण्डितों में शिरोमणि था।

तर्क शास्त्रेर प्रश्न एक कैला उत्थापन। शुनि मात्र श्रीगौरांग करिला खण्डन।।45

उसने तर्कशास्त्र का एक प्रश्न उठाया।
सुनते ही श्रीगौरांग ने उसका खण्डन कर दिया।

सेइ द्विज पुनः पुनः करये स्थापन। अवहेले महाप्रभु करये खण्डन।।46

वह ब्राह्मण बार–बार प्रश्न करता,
और महाप्रभु सहज में ही उसका खण्डन कर देते थे।

पूर्वपक्ष उड़ि गेल स्थापिते नारिला। तबे पण्डितेरगण परास्त मानिला।।47

वह अपने पूर्वपक्ष को स्थापन न कर सका, जाने कहां उड़ गया उसका प्रश्न?
तब वहां के सब पण्डितों ने अपनी हार मान ली।

सभे कहे निमाञि विद्यासागरेर नाम। शुनि छिलूँ दैवी विद्या हैल सप्रमाण।48

सब कहने लगे– विद्यासागर श्रीनिमाई का नाम तो सुना था, आज हमने साक्षात्
देखा कि इनमें तो दैवीय–विद्या है। सत्य ही ये सरस्वतीपति हैं।

एकदिन विष्णु भक्त एक द्विजवर। कर जोड़े कहे महाप्रभुर गोचर।।49

एकदिन एक विष्णुभक्त विप्र श्रीमहाप्रभु के
सामने हाथ जोड़कर इसप्रकार कहने लगा–

कलि घोर पापाच्छन्न निरखि संसार। कह कैछे जीवगण हइव निस्तार।।50

प्रभो! इस सारे संसार को घोर कलि ने पापों में
लपेट रखा है, कहिये, जीवों का निस्तार कैसे होगा?

शुनि महाप्रभु कहे हरिनाम सार। श्रवण ग्रहणे जीव हइव उद्धार।।51

श्रीमहाप्रभु ने उसके वचन सुनकर कहा– कलि में श्रीहरिनाम ही सार है। इसके
श्रवण, उच्चारण मात्र से ही जीवों का उद्धार होगा।

हरिनाम बिने जीवेर नात्रि अन्यगति। नामे सर्वपाप खण्डे पाय शुद्धभक्ति।।52

कलि में हरिनाम को छोड़कर जीवों के लिए और कोई गति नहीं है। श्रीहरिनाम
से सब पाप निवृत्त होते हैं और शुद्ध भक्ति की प्राप्ति होती है।

ताहा शुनि द्विजवरेर हैल प्रेमोल्लास। हरि बलि नाचे कान्दे नाहि बाह्याभास।।53

महाप्रभु के वचन सुनकर उस विप्र को प्रेमानन्द की प्राप्ति हुई और वह
'हरि–हरि' बोलकर नाचने रोने लगा– उसे बाहर की सुध–बुध न रही।

ताहा देखि हासे जत पाषण्डीर गण। महा सुखी हैल कृष्ण वैष्णवेर मन।।54

उसे देख जो पाखण्डी लोग थे, हंसने लगे। जो वैष्णव थे, वे बहुत सुखी हुए।

पद्मनाभ चक्रवर्तीर अति भाग्योदय। जाँर घरे श्रीचैतन्येर हइल विजय।।55

श्रीपद्मनाभ चक्रवर्ती का तो महाभाग्य उदित हो उठा।
क्योंकि उसके घर में श्रीचैतन्य महाप्रभु निवास कर रहे थे।

तबे गौर क्रमे आइला पद्मावती तीरे। पद्मा देखि गोरा कहे आनन्द अन्तरे।।56

उसके बाद श्रीगौर पद्मावती नदी तीर पर आये।
पद्मा को देखकर श्रीगौरहरि को मन में अति आनन्द हुआ।

एइ पद्मावती लक्ष्मीर द्वितीय शरीर। इथे स्नाने पाप क्षय हइवेक स्थिर।।57

वे बोले– यह पद्मावती श्रीलक्ष्मी का दूसरा शरीर है।
इसमें स्नान करने से निश्चय ही पाप नष्ट हो जाते हैं।

तबे सेइ पुण्य पद्मावती नदी तीरे। रम्य स्थाने रहि गोरा आनन्दे विहरे।।58

तब उस पुण्य तीर्थ पद्मावती के किनारे से रमणीक स्थानों में श्रीगौरहरि पर
आनन्दपूर्वक विचरने लगे।

गौरांगे सद्गंध चतुर्दिके विस्तारिल। परस्परे साधुगण कहिते लागिल।।59

श्रीगौरांग के गुणों की पावन सद्गंधरूपी गंगा चारों ओर बहने लगी

और भक्तगण सर्वत्र परस्पर इसप्रकार कहने लगे–

गंगार पूर्व तटे नवद्वीप सुधी स्थल। ताँहा हइते आइला एक पण्डित प्रबल।।60

गंगा के पूर्व तट पर जो नवद्वीप सुन्दर स्थान है,
वहां से एक पण्डित प्रवर यहां आये हुए हैं।

विद्यासागर उपाधिक निमाञिपण्डित। विद्यासागर नामे टीका जांहार रचित।।61

उनका नाम तो श्रीनिमाई पण्डित है, उपाधि है उनकी विद्यासागर। उन्होंने विद्यासागर नामक टीका भी (श्रीभागवत पर) लिखी है।

शब्द शुनि बहु विज्ञमता तथि आइला। गौरांग दर्शनालापे पवित्र हइला।।62

यह सुनकर अनेक विद्वान इनके पास आये।
श्रीगौर के दर्शन तथा इनसे कथनोपकथन कर पवित्र हुए।

अध्यापकगण आइला नाना द्रव्य लञा। आनन्दित हैला गौर सह आलापिञा।।63

अनेक अध्यापक भी अनेक धन भेंट लेकर श्रीगौरचन्द्र के पास आये और उनसे बातचीत कर अति आनन्दित हुए।

शास्त्रज्ञ बहुत छात्र आइला पढ़िवारे। तान स्थाने अल्प पड़ि उपाधिक धरे।।64

शास्त्रज्ञ छात्र भी अनेक इनके पास पढ़ने के लिए
आये। थोड़ा सा अध्ययन कर वे उपाधि प्राप्त किये।

हेथा श्रीगौरांग–विच्छेद भुजंग दंशने। नवद्वीपे लक्ष्मी देवी हैला अन्तर्धाने।65

इधर नवद्वीप में श्रीगौर के विच्छेदरूपी सर्प ने
श्रीलक्ष्मीदेवी को डसा जिससे वे अन्तर्धान हो गईं।

किछु दिन परे श्रीमान शचीर नन्दन। निजधामे जाइवारे करिला मनन।।66

कुछ दिन के बाद भक्त–विरह से दुखी महाप्रभु
श्रीशचीनन्दन ने अपने घर लौटने का विचार किया।

हेन काले एक धार्मिक प्रवर। स्वप्न देखि आइला महाप्रभुर गोचर।।67

इसी समय एक महा धर्मात्मा व्यक्ति स्वप्न देखने
के कारण श्रीमहाप्रभु के पास आकर उपस्थित हुआ।

गौर देखि अष्ट अंगे पादपद्मे प्रणमिला। गोपने स्वपन तत्व सम प्रकाशिला।।68

महाप्रभु को देखते ही उसने उनके चरण कमलों में साष्टांग प्रणाम किया और एकान्त में अपने स्वप्न की सारी बात बतायी।

गौर कहे एइ कथा राखिह गोपने। एबे काशीधामे तुहुं करह प्रस्थाने।।69

श्रीगौरचन्द्र ने कहा, यह सब बात गुप्त रखना।

अब तुम काशीधाम में चल कर रहो।

आमा सह तहिं काले साक्षात् हइवे। तव मन अभिलाष अवश्य पुरिवे।।70

वहां ही कुछ समय बाद तुम्हारा मुझसे मिलन होगा।

तुम्हारे मन की अभिलाषा अवश्य पूर्ण होगी।

तपन मिश्र नाम तार सरल हृदय। काशीधामे गेला महाप्रभुर आज्ञाय।।71

उस ब्राह्मण का नाम तपन मिश्र था, वह बड़ा सरल

हृदय था। महाप्रभु की आज्ञा पाकर वह काशीधाम चला गया।

ऐछे पूर्व बंगदेश कृतार्थ करिया। देशे चले विश्वम्भर बहु अर्थ लजा।।72

इस प्रकार पूर्वी बंगदेश को कृतार्थ कर, अनेक धन

लेकर श्रीविश्वम्भर अपने देश की तरफ चल दिये।

तबे श्रीगौरांग नवद्वीपे उत्तरिला। लक्ष्मीर तिरोभाव शुनि दुख प्रकाशिला।।73

श्रीगौरांग नवद्वीप आ पहुंचे और लक्ष्मीदेवी के तिरोभाव का समाचार सुना और

लौकिक रीति के अनुसार दुख प्रकाशित किया।

श्रीशचीमाता के देखि अति शोकमना। नाना योग कहि ताने करिल सान्त्वना।।74

श्रीशची माता को उन्होंने बहुत शोकग्रस्त देखा।

प्रभु ने अनेक युक्तियों से उसे सान्त्वना दी।

तबे गौरेर भक्त आर प्रिय बन्धुगण। गौरांगेर विवाह तथि कैला संघटन।।75

कुछ दिन बाद भक्तों ने और बान्धवों ने

मिलकर श्रीगौरांग का पुनर्विवाह सम्पन्न किया।

राजपण्डित सनातन मिश्र द्विजराय। श्रीसत्राजिताविर्भाव प्रभु जारे कय।।76

वहां राजपण्डित श्रेष्ठ ब्राह्मण श्रीसनातन मिश्र रहते थे,

जिन्हें मेरे प्रभु– श्रीअद्वैतचन्द्र श्रीसत्राजित का अवतार कहा करते थे।

तान कन्या विष्णुप्रिया साध्वी शिरोमणि। सर्व सद्गुण सम्पूर्णा रूपामृतेर खनि।।77

उनकी एक दैवीय कन्या विष्णुप्रिया थी, जो साध्वी–शिरोमणि, सर्व सद्गुण

सम्पन्ना तथा रूपामृतसिन्धु की पूर्ण निधि थीं।

श्रीसत्याह्लादिनी लक्ष्मी प्रभु जारे कय। तांहारे श्रीगौरचन्द्र कैला परिणय।78

मेरे श्रीअद्वैतप्रभु उन्हें सत्याह्लादिनी श्रीलक्ष्मीदेवी कहते थे।

उनके साथ श्रीगौरचन्द्र ने विवाह किया।

ताहे महोत्सव हैल शचीर मन्दिरे। पुत्रवधु पाजा शची आनन्दे विहरे।।79

शचीगृह में विवाह का महोत्सव हुआ। पुत्रवधू को

पाकर श्रीशची माता परमानन्द में रहने लगी।

श्रीअच्युत कहे मोरे एइ शुभाख्यान। तार सूत्रलवमात्र करिनु व्याख्यान।।80

श्रीईशान नागर कहते हैं– मुझे यह सारा आख्यान श्रीअच्युतानन्दजी ने सुनाया था। मैंने उसे अति संक्षेप में वर्णन किया है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आस। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।81

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत प्रभु के चरणों की अभिलाषा
करते हुए मैं श्रीअद्वैत–प्रकाश का वर्णन करता हूँ।

चतुर्दश–अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्यप्रभु की जय हो। श्रीसीतानाथ की जय हो।
श्रीनित्यानन्द राम सब भक्तवृन्द के साथ जय हों।

तबे किछु दिन परे श्रीशचीनन्दन। पितृकार्ये गयाधामे करिला गमन।।02

कुछ दिन के बाद श्रीगौरहरि पितृ–श्राद्ध करने के लिए गया धाम को चले गये।

भक्ति करि गदाधरेर पदे पिण्ड दिला। तहि श्रीईश्वरपुरीर साक्षात् पाईला।03

वहां जाकर श्रीगदाधर भगवान् के चरणों में श्रद्धापूर्वक पिण्डदान किया।
वहां इनका श्रीईश्वरपुरी से मिलन हुआ।

पुरीराजे देखि निमाञि दण्डवत कैला। तिंहो सम्भ्रमे गौरचन्द्र आलिंगिला।04

श्रीईश्वरपुरी महाराज को देखकर श्रीनिमाईचाँद ने उनको दण्डवत् प्रणाम किया।
उन्होंने आनन्दपूर्वक श्रीगौरचन्द्र को आलिंगन किया।

पुरीराजे वक्ता श्रीमान विश्वम्भर श्रोता। समग्र रजनी आलापिला कृष्णकथा।।05

श्रीपुरीराज वक्ता–थे और श्रोता थे–श्रीविश्वम्भर।
और उनके बीच सारी रात कृष्ण–कथा चलती रही।

हरिकथामृत पिया दोंहे हैला मत्त। प्रेमावेशे नाचे कान्दे जैछे उनमत्त।।06

श्रीहरिकथामृत का पानकर दोनों उन्मत्त हो उठे।
प्रेमावेश में भावुको की भांति नाचने एवं रोने लगे।

पर दिन महाप्रभु देखि शुभक्षण। पुरीराज स्थाने मन्त्र करिला ग्रहण।।07

दूसरे दिन शुभ मुहूर्त्त देखकर श्रीगौरचन्द्र ने
श्रीईश्वरपुरी जी से प्रार्थनाकर मन्त्रदीक्षा ली।

दशाक्षर मंत्र ताहे कृष्ण अधिष्ठान। प्रत्यक्षेते देखाइला कृष्ण मूर्त्तिमान।।08

दशाक्षर मन्त्र जिसमें श्रीकृष्णचन्द्र अधिष्ठित रहते हैं,

उस मन्त्र ने मूर्त्तिमान श्रीकृष्ण को दिखाया।

देखिया अपूर्वरूप श्रीशचीनन्दन। शुद्धप्रेमे मत्त हैया करये क्रन्दन।।09

अपरूप श्रीकृष्ण को देखकर श्रीशचीनन्दन
शुद्ध प्रेम में उन्मत्त हो उठे और रोने लगे।

पुरीराजे प्रणमिया कहे बारे बार। बड़ कृपा करि कैला मो–छारे उद्धार।।10

वे श्रीपुरीराज को बार–बार प्रणाम करके कहने लगे–
"आपने महान् कृपाकर मुझ दीन–हीन का उद्धार किया है।

पुरी कहे तत्त्व जानि ना करिह दैन्य। जीव शिक्षाइते धराय हैला अवतीर्ण।।11

श्रीपुरी बोले– निमाई! मैं तुम्हारे तत्व को जानता हूँ, इतनी दीनता मत दिखाओ!
आप जीवों को शिक्षा देने के लिये धरा पर अवतीर्ण हुए हैं।

स्वतन्त्र ईश्वर तुहुँ चिदानन्दमय। तव माया नाटये कार नाहि भ्रम हय।।12

आप स्वतन्त्र चिदानन्दमय ईश्वर हैं, तब आपके
माया–नाटक को देखकर किसको भ्रम नहीं होगा?

तुया गूढ़ प्रतिबिम्ब मन्त्रदरपणे। देखिया विस्मय हैला आपनार मने।।13

मन्त्रदर्पण में अपने ही गूढ़ प्रतिबिम्ब को देख–आपके मन में विस्मय हो रहा है।

जैछे शिशु निज बिम्ब देखि क्रीड़ा करे। तैछे निज बिम्ब देखि तव प्रेमांकुरे।।14

जैसे बालक अपने बिम्ब को देखकर क्रीड़ा करता है,
वैसे अपने बिम्ब को देखकर आपमें प्रेमांकुर उदित हो आया है।

राधा अंग कान्त्ये कैला अंग आच्छादन। राधाभावे करो स्वमाधुर्य आस्वादन।।15

आपने राधा अंग कान्ति से अपने अंगों को आच्छादित कर रखा है
और राधाभाव– भावित होकर आप अपना माधुर्य आस्वादन करते हैं।

शुनि महाप्रभु करि विष्णु स्मरण। कहे गुरु किवा कह मुञि अभाजन।।16

श्रीपुरी के वचन सुनकर श्रीमहाप्रभु ने विष्णु स्मरण किया और कहने लगे–
"गुरूदेव! आप मुझ अपात्र के प्रति यह क्या कह रहे हैं?

तुया दिव्य भक्ति चक्षे ना हय अन्य स्फूर्ति। सर्वत्र देखये चिदानन्द कृष्णमूर्त्ति।।17

आपको दिव्य भक्ति नेत्र प्राप्त हैं, अतः सर्वत्र आप सच्चिदानन्द
श्रीकृष्णरूप को ही देखते हैं। आपको अन्य स्फूर्ति होती ही नहीं है।

पुरीराज प्रेमावेशे ताहा ना शुनिया। अट्ट अट्ट हासे नाचे ऊर्ध्वबाहु हञा।।18

श्रीपुरीराज ने प्रेमावेश में कोई बात प्रभु की न सुनी और
अट्ट–अट्टहास कर भुजाएं ऊँची उठा कर नाचने लगे।

लोकेर संघट्ट देखि प्रेम संकोचिला। गौरे गाढ़ आलिंगिया कृतार्थ मानिला।।19

वहां अनेक लोगों को आया देख उन्होंने प्रेम का सम्वरण कर लिया और श्रीगौर को गाढ़ आलिंगन कर अपने को कृतार्थ माना।

तबे कुमार हट्टे गेला गौर विश्वम्भर। पुरीराजेर जन्मस्थान अति पुण्यतर।20

वहां से श्रीगौरप्रभु कुमारहट्ट गांव में गये, जो श्रीपुरीराज का जन्म स्थान होने से अति पुण्यमय तीर्थ तुल्य है।

कुमारहट्टेर गौर बहु प्रशंसिला। पुरीराजे प्रणमिया विदाय मांगिला।।21

श्रीगौरचन्द्र ने कुमारहट्ट की बहुत स्तुति की और श्रीपुरीराज को प्रणाम कर उनसे विदा मांगी।

क्रमे महाप्रभु नवद्वीप धामे आइला। प्रियबन्धु भक्तवृन्द आसिया मिलिला।।22

इसप्रकार श्रीमहाप्रभु फिर नवद्वीप धाम में लौट आये और विप्र बान्धवों एवं भक्तों से आकर मिले।

गौरे देखि बन्धुगण स्मित मुखे कहे। काहे नव वेश निमाञि देखि तव देहे।।23

श्रीगौरचन्द्र को देखकर बान्धवगण मुस्कारा कर कहने लगे– "निमाई! तुम्हारे शरीर पर यह कैसी नवीन वेष–भूषा हम देख रहे हैं?

द्वादश अंगेते कैला तिलक रचन। सर्व अंगे हरिनाम करिला लिखन।।24

द्वादश अंगों पर आपने तिलक रचना कर रखी है– और सर्व अंगों पर हरिनाम लिख रखा है।

तुलसी काष्ठेर माला कण्ठेते परिला।। शंखचक्राकार चिह्न केन वा धरिला।।25

गले में तुलसी–कण्ठी और शंख–चक्राकार चिन्ह अपने अंगों पर क्यों धारण कर रखे हैं?

शुनि गौरा कहे उपहास ना करिह। तिलकादि धारणेर नित्यता जानिह।।26

श्रीगौरचन्द्र ने कहा– "आप मेरा उपहास न करें। तिलकादि धारण करना व्यक्ति का नित्य कर्तव्य है।

तिलक तुलसी माला जेई ना धरय। तार सन्ध्या पूजादि विफल शास्त्रे कय।।27

तिलक, तुलसी–कण्ठी जो व्यक्ति धारण नहीं करता, उसकी सन्ध्या–पूजादि सब निष्फल जाती है– ऐसा शास्त्रवृन्द कहते हैं।

अतएव इहाके सद्वेश करि मानि। सद्वेशेर अनन्त शक्ति कहे महामुनि।।28

अतएव इन्हें तो मैं सद्वेश धारण करना मानता हूँ। महामुनियों ने सद्वेश–वैष्णव वेश की अनन्त शक्ति बखान की है।

सद्वेश धारण चित्त शुद्धिर कारण। गुरु परम्परा धर्म सेइ पूज्यतम। ।29

वैष्णव वेश धारण करने से चित्त शुद्धि होती है।

यह गुरुपरम्परा धर्म पूज्यतम् और वरेण्य है।

सद्वेश धरिया जीव जीवन्मुक्तिपाय। सद्वेशे पूतना दिव्यगति प्राप्तहय। ।30

सद्वेश को धारण करने से जीव जीवन्मुक्ति को प्राप्त करता है।

इस वेश को धारण करने से पूतना ने दिव्य गति प्राप्त की थी।

शुनि सभे कहे गौरेर हैल भावान्तर। आनन्दे डुबिल भक्त मानस–मकर। ।31

श्रीमहाप्रभु के वचन सुनकर सब कहने लगे– निमाई के भावों में परिवर्तन आ गया है। भक्तों का मन–मकर तो आनन्द सागर में डूब गया।

गौरेर प्रियतम श्रीपण्डित गदाधर। गौरे पुछे वृत्त गयार शुभ समाचार। ।32

श्रीपण्डित गदाधर श्रीगौर के प्रियतम थे।

वे महाप्रभु से गया का शुभ समाचार पूछने लगे।

महाप्रभु कहे गयाधाम तीर्थराज। पादपद्म तीर्थ तहिं करये विराज। ।33

महाप्रभु ने कहा– प्रिय गदाधर! गयाधाम तीर्थराज है।

वे श्रीविष्णु पादपद्म तीर्थ में शोभायमान हैं।

अनाथेर बन्धु हरि दयार भाण्डार। पदचिह्न द्वारे जीवे करये निस्तार। ।34

श्रीहरि अनाथ–बन्धु हैं, दया के भण्डार हैं, वहां

अपने श्रीचरण–चिन्हों से जीवों का निस्तार करते हैं।

सेइ देखे गयासुरेर शिरः स्थितपद। अन्ते सेइ पाय देवदुर्लभ–पद। ।35

गयासुर के सर पर उन पद चिन्हों को देखकर–

जीव अन्त में उस देव दुर्लभ चरणों को प्राप्त करता है।

सेइ हरिपदे जेइ करे पिण्ड दान। तार मातृ–पितृकुल पाय परित्राण। ।36

उन हरिचरणों में जो पिण्डदान करता है उसके

पिता–माता के पूर्वजों का उद्धार हो जाता है।

बहुस्थाने बहु रूपे हरिकृपा करे। भाग्यवन्त सुविश्वासी जीवे मात्र स्फुरे। ।37

अनेक स्थानों पर श्रीकृष्ण अनेक रूप धारण कर जीवों पर कृपा करते हैं, किन्तु उस कृपा की स्फूर्ति भाग्यवान दृढ़विश्वासी जीवों को ही अनूभुत होती है।

कहिते कहिते हइल प्रेम उद्दीपन। लोकापेक्षा नाहि करि करये क्रन्दन। ।38

ऐसा कहते–कहते निमाईचाँद में प्रेम का उद्दीपन हो उठा।

लोकापेक्षा न करके वे रोने लगे।

कृष्ण कृष्ण रवे गोरा छाड़ये हुँकार। भक्तगण कहे ठाकुर हैल परचार।।39

"कृष्ण–कृष्ण" ध्वनि कर निमाई हुंकार करने लगे। भक्तगण कहने लगे अब श्रीगौर का वास्तव स्वरूप सामने आने लगा है।

महाप्रभुर प्रेम देखि कान्दे भक्तगण। सभे मिलि आरम्भिला नाम संकीर्तन।40

श्रीमहाप्रभु को देखकर भक्तगण भी क्रन्दन करने लगे। सबने मिलकर तब श्रीहरिनाम संकीर्तन आरम्भ किया। नदियावासी भक्तगण इस आनन्द में डूबे।

क्रमे संकीर्तनेर प्रेम तरंग बाढ़िल। गौर गदाधर दोंहे बहु नृत्य कैला।।41

क्रमशः संकीर्तन की प्रेम तरंग बढ़ने लगी और
गौर–गदाधर दोनों ने बहुत नृत्य कीर्त्तन किया।

श्रीवासादि कहे एबे हइनु विजय। श्रीगौरांगे हैल जबे महाप्रेमोदय।।42

श्रीवासादि कहने लगे– अब हमारी पाषण्डियों पर विजय होगी,
क्योंकि श्रीगौरांग में अब महाप्रेम का उदय हो आया है।

गया हइते निमाञि पण्डित आइला घरे। शुनि बहु पढ़ुया आइला पढ़िवारे।।43

श्रीनिमाई पंडित गया से घर लौट आये हैं–
यह सुनकर अनेक छात्र इनके पास पढ़ने के लिए आये।

केह व्याकरण पढ़े केह दरशन। सर्वसूत्रे गौर करे कृष्णेर वर्णन।।44

कोई छात्र व्याकरण और कोई दर्शन शास्त्र पढ़ने लगा, किन्तु समस्त सूत्रों की व्याख्या में श्रीगौरसुन्दर श्रीकृष्णचन्द्र का वर्णन करते थे।

छात्रगण कहे विद्यासागर किवा कहे। महाप्रभु कहे इथे ना कर सन्देह।।45

छात्रगण विस्मित होकर कहने लगे– विद्यासागर! आप यह क्या कहते हैं?
श्रीमहाप्रभु कहने लगे– जो कुछ मैं कह रहा हूँ, इसमें कुछ सन्देह मत करिये।

शब्द ब्रह्म कृष्ण इहा चारिवेदे कय। इहा वै अर्थ मोर नाहिक स्फुरय।।46

श्रीकृष्ण ही शब्द ब्रह्म हैं– यह बात चारों वेद कहते हैं। इसको छोड़कर मुझे कोई अर्थ स्फुरित ही नहीं होता। श्रीकृष्ण के अलावा शब्द का मूलार्थ नहीं।

शुनि श्रीअच्युतेर हैला वैराग्य उदय। श्रीगौरांगेर संगे तिहो कृष्ण गुणगाय।।47

यह सुनकर श्रीअच्युत को तो वैराग्य हो गया और
वह श्रीगौरांग के साथ कृष्णगुण–नाम गाने लगे।

आर जे जे छात्रेर छिल परम सौभाग्य। अच्युतेर उपदेशे पाइला वैराग्य।।48

और भी जो जो छात्र परम सौभाग्यवान थे,
उनमें भी श्रीअच्युत के उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया।

महाप्रभुर प्रेमोल्लास देखि भक्तगण। श्रीअद्वैत स्थाने सब कैला निवेदन।।49

महाप्रभु का प्रेमोल्लास देखकर भक्तों ने जाकर

सब विवरण श्रीअद्वैताचार्य से कह सुनाया।

यद्यपि आचार्य गौरेर जाने सब तत्त्व। तबु तार प्रकाश शुनि हैला प्रेमोन्मत्त।।50

यद्यपि श्रीआचार्य श्रीगौरहरि तत्व को सम्पूर्णतः जानते हैं,

तो भी उस तत्व के प्रकाश की बात सुनकर प्रेमोन्मत्त हो उठे।

भावावेशे कहे भक्तस्थाने सीतानाथ। शुन शुन कहि मुञि गूढ़ एक बात।।51

भावावेश में आकर श्रीअद्वैतचन्द्र भक्तों से कहने लगे–

सुनिये मैं आपको एक गूढ़ बात सुनाता हूँ।

नित्य मोर गीता पारायणेर नियम। अर्थग्रहण करि जाङ करिते पठन।।52

गीता–परायण का मेरा नित्य नियम है और पढ़ते समय

मैं अर्थों पर भी पूरा विचार करता हूँ।

एकदिन एक श्लोके हइल संशय। बहुविध चिन्ता कैलों हैल समन्वय।।53

एकदिन एक श्लोक के अर्थ में मुझे संशय हुआ।

मैंने अनेक चिन्तन किया, किन्तु कुछ भी समाधान न कर पाया।

उपवास करि मुञि रहिल शुतिया। स्वप्ने एक जन मोरे कहिला हासिया।।54

मैं उस दिन उपवास कर सो गया। रात को स्वप्न में

एक व्यक्ति ने मुझे हंसते–हंसते आकर कहा–

उठह आचार्य काहे कर उपवास। एई श्लोकेर एई अर्थ जानिह निर्यास।।55

आचार्य! उठो, उपवास क्यों करते हो? देखो–

इस श्लोक का अर्थ– सार इस प्रकार है।

शुनि मोर मने हैल अति चमत्कार। चक्षु मेलि देखि आछे गौर विश्वम्भर।।56

सुनकर मेरे मन में चमत्कार हुआ। मैंने आँखों को

खोलकर देखा तो सामने खड़े थे श्रीगौर विश्वम्भर।

देखिते देखिते तेंहो हैला अन्तर्धान। बुझिलु निमाञि हय पुरुष प्रधान।।57

देखते–देखते वह वहां से अन्तर्धान हो गये।

मैं समझ गया कि श्रीनिमाई पुरुष–प्रधान–श्रीकृष्ण हैं।

धूमदृष्टे जैछे हय अग्नि अनुमान। तैछे अलौकिक गुणे ईश्वरेर प्रमाण।।58

धुँआ को देखकर जैसे अग्नि का अनुमान।

वैसे अलौकिक गुणोंको देख ईश्वर का प्रमाण मिलता है।

प्रेम महासिन्धु कृष्ण स्वयं भगवान। कैछे लुकाइते पारे तरंग ताहान।।59

श्रीकृष्ण स्वयं भगवान एवं महाप्रेम सिन्धु हैं।
उनको उनकी तरंगें कैसे छिपा रख सकती हैं?

सत्यानुकरण ईश्वरेर लीला हय। आपने आचरि धर्म जीवेर शिखाय।।60

सत्य का अनुकरण ही श्रीभगवान् की लीला होती है
वह स्वयं धर्माचरण करके जीवों को शिक्षा देते हैं।

कहि तेञि हैल प्रभुर महाभावावेश। कहे प्रेम वन्याय भासाइमु सर्वदेश।।61

श्रीअद्वैतप्रभु को महाभावावेश हो उठा और कहने लगे–
"मैं समस्त जगत् को प्रेमवन्या में डूबा दूँगा।

सघने हुंकार करे लोक चमत्कार। भक्तगणेर मने हैल आनन्द अपार।।62

ऐसा जोर से हुंकार करने लगे कि सब लोग
चमत्कृत हो गये। भक्तों के मन में तो अपार आनन्द उछल उठा।

साधु समुझिला कृष्ण हैला अवतीर्ण। शुद्ध प्रेमदाने विश्व करिवेन धन्य।।63

भक्तों ने समझ लिया कि श्रीकृष्ण अवतीर्ण हो गये हैं। वे शुद्ध प्रेमदान देकर
विश्व को कृतार्थ कर भव सागर से पार कर देंगे।

तबे सभे संकीर्तन करे प्रेमानन्दे। हासे कान्दे नाचे गर्जे जैछे मेघवृन्दे।।64

तब सब मिलकर प्रेमानन्द में संकीर्तन करने लगे। हंसने–रोने नाचने लगे और
मेघों की भांति गर्जना करने लगे। संकीर्तन नाद् से आकाश गूंज उठा।

एबे शुन प्रभु नित्यानन्देर विजय। जाहार श्रवणे जीवेर हय प्रेमोदय।।65

अब श्रीनित्यानन्द प्रभु का यात्रा–चरित्र सुनिये,
जिसे सुनकर जीवों में प्रेमोदय होता है।

राढ़देशे एकचाका नामे ग्रामधन्य। जाँहा नित्यानन्द राम हैला अवतीर्ण।।66

राढ़ देश में एकचाका नाम का पावन ग्राम है, जहां श्रीनित्यानन्द प्रभु जो साक्षात्
श्रीबलरामजी के अवतार हैं, उस ग्राम में अवतीर्ण हुए थे।

वसुदेव अवतार हाड़ाइ पण्डित। तान पुत्र नित्यानन्द सदाइ आनन्दित।।67

श्रीवसुदेव जी के अवतार हैं **हाड़ाई पण्डित**। उनके पुत्र रूप में
सदा आनन्द स्वरूप श्रीबलरामजी के अवतार **श्रीनित्यानन्द प्रभु** प्रकट हुए।

पद्मावती माता ताँर साध्वी शिरोमणि। मोर प्रभु कहे जाँरे साक्षात् रोहिणी।।68

साध्वी शिरोमणि पद्मावती इनकी माता है, मेरे प्रभु
श्रीअद्वैतचन्द्र उन्हें साक्षात् रोहिणी कहते थे।

तेरशत पंचानवेइ शके माघ मासे। शुक्ला त्रयोदशीते रामेर प्रकाशे।।69

शकाब्द 1395 (संवत् 1530) माघमास में शुक्ला
त्रयोदशी को श्रीनित्यानन्द राम का आविर्भाव हुआ।

व्रजे बलराम जेइ सेइ नित्यानन्द। अवतीर्ण हैला वितरिते प्रेमानन्द।।70

ब्रज में जो श्रीबलराम थे, वही नित्यानन्द रूप में
अवतीर्ण हुए जगत में प्रेमानन्द वितरण हेतु।

संन्यासीर संग छले गृहत्याग कैला। बहु तीर्थ भ्रमि शेषे ब्रजधामे गेला।।71

श्रीशंकरानन्द नाम के संन्यासी के संग के बहाने उन्होंने गृह का त्याग किया
और अनेक तीर्थों का भ्रमण करते हुए अन्त में ब्रजधाम में गये।

तँहि किछु दिन रहि प्रभु नित्यानन्द। गौर परकाशे मने पाइला प्रेमानन्द।।72

वहां वे कुछ दिन रहे। उनके मन में स्फूर्ति हुई कि नवद्वीप में
श्रीगौर अवतीर्ण हो चुके हैं– यह जानकर उन्हें प्रेमानन्द प्राप्त हुआ।

ताँहा हैते तिहों श्रीधाम नवद्वीपे आइला। नन्दन आचार्य घरे अवस्थिति कैला।।73

वहां से वे श्रीनवद्वीपधाम में आये और
श्रीनन्दनाचार्य के घर में श्रीगौर का आव्हान करने लगे।

नित्यानन्देर आगमन जानि विश्वम्भर। गोपने कहे तत्व भक्तेर गोचर।।74

श्रीविश्वम्भर श्रीनित्यानन्द के आगमन को जानकर भक्तों के सामने उनका
विवरण एकान्त में वर्णन करके इसप्रकार कहने लगे।

एक महापुरुष सत्कल्पतरु प्राय। भक्तिफल समर्पिते आइला हेथाय।।75

सत्कल्पतरु के सामन एक अतिमहापुरुष प्रेमभक्ति–फल
प्रदान करने के लिये यहाँ आये हैं।

चल सभे जाइवाङ ताँहार गोचर। देखिले जानिवा तान महिमा विस्तर।।76

चलिये सब चलते हैं– उनको देखने को, उनके दर्शन कर
उनकी महिमा, महत्व आप जान सकोगे।

शुनि सर्वभक्तगण सत्कण्ठित हैला। महाप्रभु संगे सभे आनन्दे चलिला।।77

महाप्रभु के वचन सुनकर सब उत्कण्ठित हो आनन्दपूर्वक उनके साथ चल दिये।

श्रीनन्दन आचार्येरे घर उत्तरिला। नित्यानन्दे देखि सभे विस्मय मानिला।।78

श्रीनन्दन आचार्य के घर आकर प्रभु रुक गये।
वहां श्रीनित्यानन्द प्रभु को देखकर सब विस्मित हो उठे।

अलौकिक रूप ताँर प्रकाण्ड शरीर। कोटि सुधा सम कांति प्रकृति गम्भीर।।79

अलौकिक रूप था, प्रकाण्ड शरीर था उनका,
कोटि सुधासम उनकी गम्भीर कान्ति एवं स्वभाव था।

ललाटे तिलक शोभे जैछे चन्द्र प्रभा। तुलसीकाष्ठेर मालाय कण्ठ करे शोभा।।80

उनके मस्तक पर चन्द्रप्रभा के समान तिलक शोभित था–
और उनके गले में तुलसीकण्ठी सुशोभित थी।

हास्ययुत मुखपद्म परम सुन्दर। न्यासी चूड़ामणि दया गुणेर आकर।।81

उनका मुखकमल मुस्कान युक्त एवं परम सुन्दर था।
वे संन्यासी चूड़ामणि एवं दयागुण के सागर थे।

नित्यसिद्ध बलदेवे देखि विश्वम्भर। गण सह ताँर पदे कैला नमस्कार।।82

श्रीविश्वम्भर ने नित्य सिद्ध बलदेव को देख
समस्त भक्तों सहित उनके चरणों में नमस्कार किया।

गौर सूर्येर छटा पड़ि नित्यानन्द चाँदे। शुद्धप्रेमामृत ज्योत्सनाय व्यापे अविच्छेदे।83

श्रीगौर रूप सूर्य की छटा नित्यानन्द चाँद पर पड़ी
जिससे शुद्ध प्रेमामृत की ज्योत्सना सर्वत्र फैल गयी।

गौरे देखि स्वयं भगवानेर लक्षण। कृष्ण ज्ञाने हैल तार स्तम्भ उद्दीपन।।84

श्रीगौर में स्वयं भगवान् के लक्षण देखकर श्रीनित्यानन्द ने
उन्हें श्रीकृष्ण जाना और उनमें स्तम्भादि भावों का उद्दीपन हुआ।

नित्यानन्द स्तम्भित देखिया गौरराय। नित्यानन्द प्रकाशिते सृजिला उपाय।।85

श्रीनित्यानन्द को स्तम्भित देखकर श्रीगौर ने
उनके स्वरूप को प्रकाशित करने का उपाय सोचा।

भक्तद्वारे भागवतेर श्लोक पढ़ाइला। शुनि नित्यानन्द प्रेमे मूर्च्छित हैला।।86

श्रीवास भक्त के द्वारा श्रीभागवत का एक श्लोक पढ़वाया। जिसे सुनकर
श्रीनित्यानन्द प्रेम में मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर लोट–पोट होने लगे।

चेतन पाइया प्रभु करये क्रन्दन। कभु नाचे कभु हासे उनमत्त सम।।87

फिर चेतनता पाकर वे रोने लगे, कभी नाचने,
तो कभी उन्मत्त की तरह हंसने लगे।

कभु कृष्ण पाइलू बुलि छाड़ये हुंकार। कभु अविश्रान्त नेत्रे बहे अश्रुधार।।88

मैंने कृष्ण को पा लिया कभी ऐसा कहकर हुँकार भरने और उनके नेत्रों से
अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी भाव विकारों को देख सभी आनन्दित हुए।

नित्यानन्देर प्रेमानन्द मेघ वरिषणे। भक्तनेत्र–गंगा स्रोत बहये द्विगुणे।।89

नित्यानन्द प्रभु के प्रेमानन्द रूपी मेघ की वर्षा से
भक्तों की नेत्र रूप गंगा का प्रवाह दुगना होकर बहने लगा।

ताहे गौरप्रेम–सिन्धुर तरंग बाढ़िल। सर्वज्ञेरमन–मकर ताहाते डुबिल।।90

उससे फिर गौरप्रेम सिन्धु की तरंगें बढ़ने लगीं।
सर्वज्ञ– महाप्रभु का मनरूपी–मकर उसमें डूब गया।

कथोक्षण परे सभे सुस्थिर हइला। श्रीगौरांग नित्यानन्दे सदैन्ये कहिला।।91

कुछ देर पीछे सब सुस्थिर हो गये।
श्रीगौरांग ने दीनतापूर्वक श्रीनित्यानन्द प्रभु से कहा–

तुहुँ शुद्ध भक्तिमेघ दया प्रकाशिला। वरिषण करि मोरे पवित्र करिला।।92

आप शुद्ध महाप्रेमभक्ति के मेघ हैं।
आपने अपार दयारूपी वर्षा कर मुझे पवित्र कर दिया है।

कोटि सिंहरव सम तुया गरजने। विश्व भासाइवो प्रेमे हेन वासों मने।।93

आपकी कोटि सिंहों के समान गर्जना से मैं विश्व को
प्रेम से प्लावित करूंगा ऐसा मेरा मन मानता है।

शुनि नित्यानन्द हासि कहे मृदुभाषे। अति गुरुत्वेर गति निम्ने परकाशे।।94

यह सुनकर हंसते हुए श्रीनित्यानन्द ने मधुर वाणी में कहा–
"जो अति गुरुत्वमय (भारी) होते हैं, उनकी गति सदा नीचे को आती है।

प्रेम महासिन्धु तुहुँ मेघेर कारण। तव दया सूर्याकर्षण द्वितीय कारण।।95

आप महाप्रेमसिन्धु हैं, आप ही मेघ के कारण हैं, फिर आप का
दयारूप सूर्य ही इस मेघ को यहां खींच लाने में दूसरा कारण है।

हेन मते तिहों शुद्ध भक्तिर उल्लासे। गौरहरि वस्तुतत्व गूढ़ परकाशे।।96

इस प्रकार नित्यानन्द प्रभु शुद्ध भक्ति के उल्लास में
गौर हरि भगवत् तत्व रहस्य प्रकाशित करने लगे।

तबे नित्यानन्द संगे श्रीशचीनन्दन। निति संकीर्तन करे लञा भक्तगण।।97

तब से श्रीशचीनन्दन श्रीनित्यानन्द प्रभु के साथ
भक्तों को लेकर नित्य संकीर्तन करने लगे।

एक दिन श्रीअद्वैत मने विचारिला। भक्ति प्रचारिते कृष्ण नवद्वीपे आइला।।98

एकदिन श्रीअद्वैतप्रभु ने मन में सोचा श्रीकृष्ण भक्ति का प्रचार करने के लिए नवद्वीप में आये हैं। किन्तु मुझको गुरू मानकर प्रणामादि करते हैं, अत्यन्त दीनता का प्रकाश करते हैं। भक्ति को गुप्त रख रहे हैं, और भगवद्भाव

का प्रकाश नहीं कर रहे हैं। इससे मुझे भारी वेदना हो रही है।

भक्ति हैते ज्ञान बड़ करिमु व्याख्यान। इथे किवा आचरये स्वयं भगवान्।।99

मैं भक्ति से भी ज्ञान को अधिक महत्व देकर सभा में व्याख्या करूँ,
तब देखूं इस विषय में स्वयं भगवान् क्या आचरण करते हैं?

एइ गूढ़ भावावेशे आचार्य गोसाञि। योगवाशिष्ठेर व्याख्याय करे चतुराञि।।100

इस गूढ़ भावावेश में श्रीअद्वैत आचार्य चतुरतापूर्वक
सभा में योगवशिष्ठ ज्ञानमार्ग व्याख्या करने लगे।

शिष्यगणे प्रभु कहे ज्ञान भक्तिर बड़। ज्ञानात्परतरं नहि एइ कथा दृढ़।।101

वे अपने शिष्यों को कहने लगे कि ज्ञान भक्ति से बड़ा–श्रेष्ठ है। गीता में जो
यह कहा गया है ज्ञान से परे और कुछ नहीं– यह बात पक्की है।

शिष्यगण दुखी हञा भावे मने मने। विपरीत बुद्धि प्रभुर उपजिल केने।।102

शिष्यगण दुःखी होकर मन–मन में सोचने लगे कि
प्रभु में यह विपरीत बुद्धि क्यों उत्पन्न हो आयी है।

जेई प्रभु कहे भक्ति महाराणी हय। ज्ञान तार दासेरदास जानि त निश्चय।।103

जो प्रभु भक्ति को महाराणी कहा करते और
ज्ञान को उसके दासों का दास बतलाते थे।

भक्तिशून्य ज्ञाने नाहि मिले सारात्सार। तुषारघातीर जैछे क्लेश मात्र सार।।104

और कहते थे कि "भक्तिरहित ज्ञान में सारतत्व की प्राप्ति नहीं होती, जैसे धान
के छिलके कूटने वालों के हाथ चावल नहीं, किन्तु एक मात्र क्लेश ही हाथ
पड़ते है।

सेई प्रभु कहे भक्तिर किवा प्रयोजन। अहं ब्रह्म ज्ञाने मुक्ति कहे श्रुतिगण।।105

वही अद्वैताचार्य आज कहते हैं कि भक्ति का क्या प्रयोजन है?
अहं ब्रह्म ज्ञान से मुक्ति प्राप्त होती है– ऐसा वेद कहता है।

हेथा नवद्वीपे सर्वज्ञान विश्वम्भर। पूर्वेञि जानिया छिला आचार्येर अन्तर।106

यहां नवद्वीप में सर्वज्ञ श्रीविश्वम्भर श्रीअद्वैतप्रभु के पास जाते समय रास्ते में एक
मद्यप सन्यास के आश्रम में गये जहां के सन्यासी ने कहा– आनन्द करोगे
"अर्थात् मदिरा पियोगे महाप्रभु ने जवाब में कहा– हम अभी स्नानकर आते हैं,
प्रभु का इंतजार पूर्वक चिन्तनकर वह पवित्र हो गया महाप्रभु उसके मन की
चाल पहले ही समझ गये।

नित्यानन्द संगे लञा धाइला चलिला। मद्यपेर दया करि शांतिपुर गेला।।107

श्रीमहाप्रभु श्रीनित्यानन्द को साथ लेकर जगाई
माधाई का उद्धार कर शान्तिपुर में तुरन्त आ पहुँचे।

महाप्रभुर शुभगति जानिया आचार्य। दृढ़ करि ज्ञान–व्याख्यार बाढ़ाय माधुर्य।।108

श्रीअद्वैतचन्द्र भी महाप्रभु के शांतिपुर में आगमन को जानकर और भी दृढ़ता पूर्वक ज्ञान की व्याख्या को सुमधुर बनाकर बढ़ा–चढ़ा कर व्याख्यान करने लगे।

हेनकाले श्रीचैतन्य नित्यानन्द सने। उत्तरिला आसि श्रीअद्वैताचार्य स्थाने।109

उसी समय श्रीमहाप्रभु श्रीनित्यानन्द के साथ श्रीअद्वैतचार्य के घर आ पहुँचे।

क्षीरनिधि हैते जैसे विष उद्गीरण। तैछे सीतानाथ मुखे भक्तिर खण्डन।110

क्षीर समुद्र से जैसे विष निकला, उसीप्रकार श्रीअद्वैतचन्द्र
के मुख से भक्ति का खण्डन निकल रहा था।

जानिया आचार्य मानि गौर भगवान। रजः स्वीकारिया क्रोधे हैला कम्पवान।।111

आचार्य को वक्ता मानकर श्रीगौर भगवान् ने रजोगुण
को स्वीकार किया और क्रोध में वे काँपने लगे–

उच्चस्वरे कहे नाढ़ा किवा बुद्धि तोर। स्पर्शमणि छाड़ि काचे करिह आदर।।112

वे जोर से बोले– अरे नाढ़ा! क्या हो गया तेरी बुद्धि को?
पारस मणि को त्यागकर कर कांच का आदर करने लगे हो?

लोके कहे आचार्य हय भक्ति प्रयोजक। एबे देखि हैलि तुञि भक्ति कण्टक।।113

लोग तो कहते हैं– अद्वैत भक्ति का स्थापक है,
अब देखा कि तुम तो भक्ति के कण्टक–बाधक बन गये।

तोरे संहारिया करों भक्ति संस्थापन। त्रिलोके काहार शक्ति करिवे खण्डन।।114

तुम्हारा विनाश कर मैं भक्ति की संस्थापना करूँगा।
त्रिभुवन में किसकी शक्ति कि भक्तिका खण्डन करे?

एत कहि महाप्रभु श्रीनृसिंहावेशे। पिण्डा हैते आचार्येर फेले नीचे देशे।।115

इतना कहकर श्रीमहाप्रभु श्रीनृसिंहावेशरूप में आ गये और
चौंतरे से श्रीअद्वैतप्रभु को नीचे ढकेल दिया।

गौरे देखि भक्ति रक्षार गाढ़ अनुराग। प्रेमे मूर्च्छा हैला श्रीअद्वैत महाभाग।।116

श्रीगौर में भक्ति संरक्षण का गाढ़ अनुराग देखकर
महाभाग्य मेरे प्रभु श्रीअद्वैत प्रेम से मूर्च्छित हो गये।

ताहा देखि हाहाकार करे शिष्यगण। सर्वज्ञा श्रीसीता प्रेमे करये क्रन्दन।।117

यह देखकर सब शिष्यगण हाहाकार करने लगे–

और सर्वज्ञा सीतारानी प्रेम में क्रन्दन करने लगी।

कथ क्षणे मोर प्रभुर बाह्य–स्फूर्ति–हैल। तबे विश्वम्भर ताने कहिते लागिल।।118

कुछ देर बाद श्रीअद्वैतको चेतना आयी। तब श्रीविश्वम्भर उनसे बोले–

अरे नाढ़ा मने यदि एइ छिल आश। तबे काहे मोरे तुञि करिल परकाश।।119

अरे आचार्य! मन में तुम्हारे यदि ऐसा करने की– भक्ति से ज्ञान को ऊँचा स्थापन करने की इच्छा थी, तो तुमने मुझे क्यों रो–रोकर अवतीर्ण कराया?

वेदे कहे ब्रह्मेर अंश मध्ये जीवगण्य। जैछे दुग्ध दधि हय बहु तारतम्य।।120

वेद कहता है ब्रह्म के एक अंश में समस्त जीव समुदाय है, जैसे दूध दही में बदल जाता है। दूध का अंश दही में रहता है, किन्तु दूध और दही में अनेक भेद हैं, उसी प्रकार ब्रह्म एवं जीव में अनेक तारतम्य है।

सोऽहं ज्ञाने जीवेर कृष्णे अपराध हय। क्षणिक मुकति पाञा पुन भवे जाय।।121

सोऽहं ज्ञान में जीव का श्रीकृष्ण के प्रति अपराध होता है। क्षणकाल के लिये मुक्ति पाकर फिर वह संसार में पड़ता है। इसीलिये भक्त मुक्ति नहीं चाहते हैं। क्योंकि यह शुद्ध भक्ति का अंग नहीं।

शुनि भक्त अवतार भक्तिनेत्रे चाय। भक्तरूपे कृष्ण प्रकट देखिवारे पाय।122

यह सुनकर भक्तावतार श्रीअद्वैत ने भक्तिनेत्रों से देखा तो भक्तरूप में भगवान् श्रीकृष्ण को अपने सामने पाया।

द्विभुज मुरलीधर शिरे शिखि–पाखा। राधा अंगकान्त्ये तार सर्व अंग ढाका।।123

द्विभुज, मुरलीधारी, सिर पर मोरमुकुट था और राधाअंग कान्ति से उनके सारे अंग ढक रहे थे।

यद्यपि अद्वैत कृष्ण सर्वतत्व ज्ञान। सिद्धरूप देखि प्रेमे हैला अज्ञान।।124

यद्यपि श्रीअद्वैत को श्रीकृष्ण के सर्वतत्व का ज्ञान था, तो भी सद्धरूप ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण को राधाद्युति सुवलित देखकर प्रेम में बेसुध हो गये।

संज्ञा पाञा कहे अपराध हैल मोर। एबे भक्ति विलाइवाङ आज्ञा पाइल तोर।।125

चेतना पाकर श्रीअद्वैतचन्द्र बोले– मुझसे अपराध हो गया है। मैं एकमात्र भक्ति का ही प्रचार कर अब आपकी आज्ञा का पालन करूंगा।

एत कहि दुइ ग्रन्थ आनि सयतने। गौर नित्यानन्द आगे करिला स्थापने।।126

इतना कहकर दो ग्रन्थ लाकर श्रीअद्वैतचन्द्र ने श्रीगौर–नित्यानन्द प्रभु के सामने रखे।

श्रीयोग वशिष्ठ आर श्रीभगवद्‌गीता। एइ दुयेर भाष्य मोर प्रभु रचयिता।।127

एक श्रीयोगवशिष्ठ, दूसरा श्रीमद्भगवद्गीता।
इन दोनों ग्रन्थों पर भाष्य श्रीअद्वैत प्रभु ने लिखा था।
भक्तिवर्त्म भाष्य सेइ अति चमत्कार। गौरे देखाइला प्रभु करिया आदर।।128
भक्तिवर्त्म–भाष्य जो अति चमत्कारी था,
उसे श्रीअद्वैतचन्द्र ने श्रीमहाप्रभु को आदरपूर्वक दिखाया।
श्रीगौरांग सेइ दुइ भाष्यपाठ करि। शुद्धप्रेमे आर्द्र हञा कहये फुकारि।।129
श्रीगौरहरि ने उन दोनों भाष्यों को पढ़ा तो शुद्ध प्रेम
में द्रवित चित्त हो उठे और उच्च स्वर में बोले–
एइ दुई भक्तिवर्त्म भाष्य जे रचिला। सेई अप्राकृत भक्ति–सागर मथिला।।130
"इन दोनों भक्तिधर्म भाष्यों को जिसने रचा है,
उसने चिन्मय भक्तिसागर को मंथन किया है।
सेइ कृष्णेर आत्मरूप भक्त अवतार। ताँहार चरणे मोर कोटि नमस्कार।।131
वह श्रीकृष्ण का आत्मरूप भक्तावतार है,
उसके चरणों में मेरा कोटि नमस्कार है।
ऊर्ध्वबाहु हञा कहे प्रभु नित्यानन्द। एइ भाष्यकार हय जगतेर वन्द्य।।132
प्रभु नित्यानन्द भुजाएं ऊँची उठाकर बोले–
इस भाष्य का रचयिता तो जग–वन्दनीय है।
शुनि श्रीअद्वैत कहे सकलि सम्भवे। भक्त मान बाढ़ाइते कृष्णेर स्वभावे।।133
यह सुनकर सीतानाथ (श्रीअद्वैतप्रभु) बोले– यह सब सम्भव है
क्योंकि भक्तों का मान बढ़ाना यह श्रीकृष्ण का नित्य ही स्वभाव है।
कृष्ण कृपाय भक्तहृदे नित्या सरस्वती। उदय हइयां भक्तितत्व करे स्फूर्त्ति।।134
श्रीकृष्ण की कृपा से भक्तहृदय में नित्या–सरस्वती
उदित होकर भक्ति तत्व की स्फूर्त्ति कराती रहती है।
कृष्ण बड़ दयामय पतित पावन। ताँर अवतार जीव निस्तार कारण।।135
श्रीकृष्ण बड़े दयामय एवं पतित पावन हैं,
जीवों के निस्तार के लिए ही उनका अवतार होता है।
एत कहि भावावेशे करये रोदन। गौर नित्यानन्द प्रेमे करये नर्त्तन।।136
यह कहकर श्रीअद्वैत भावावेश में रोने लगे और
श्रीनिमाई–निताई प्रेम में नृत्य करने लगे।
हरिदास हरि बलि गंभीर गर्ज्जन। अच्युतादिर हैल शुद्ध प्रेम–स्तम्भोदय।137

श्रीहरिदास हरि हरि बोल कर गम्भीर गर्जना करने लगे। श्रीअच्युत आदि में शुद्ध प्रेम के स्तम्भादि विकार होने लगे। उस समय भक्त–भगवान का अपूर्व प्रेममय मिलान हुआ।

तबे महाप्रभु आर प्रभु दुइजन। महा प्रेमावेशे फुकारये घने घन।।138

तब श्रीमहाप्रभु तथा अद्वैत प्रभु एवं नित्यानन्द प्रभु
महाप्रेमावेश में जोर से पुकारने लगे–

आइस आइस जीवगण आर भय कारे। माया महारोगेर महौषधि देवो सभाकारे।।139

आओ–आओ जीवगण! अब तुम सबको कुछ भय नहीं है।
माया महारोग की महौषधि सबको हम देंगे।

सेइ महौषधि एक बिन्दु पान कैले। पाइवा अटल प्रेमानन्द अवहेले।।140

उस महौषधि का एक बिन्दु मात्र पान करने से ही
अखण्ड प्रेमानन्द अनायास प्राप्त हो जायेगा।

शुनि भक्तगणेर शुद्धप्रेम उपजिल। सभे मिलि हरिसंकीर्तन आरम्भिल।।141

यह सुनकर सब भक्तों में शुद्ध प्रेम उदित हो आया
सबने मिलकर हरिनाम संकीर्तन का आरम्भ किया।

महाप्रभु अविचिन्त्य–प्रेम कल्पवृक्ष। दुइ प्रभु हय तार दुइ स्कन्ध मुख्य।।142

श्रीमहाप्रभु अविचिन्त्य प्रेम कल्पतरु समान और दोनों प्रभु
श्रीनित्यानन्द श्रीअद्वैत उस कल्पतरु के प्रमुख स्कन्ध हैं।

तिने एक वस्तु केवल रूप मात्र भेद। जैछे राम नृसिंहादिर किन्चित प्रभेद।।143

तीनों प्रभु एकवस्तु केवल रूपमात्र का भेद है।
जैसे श्रीराम नृसिंहादिक का स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण से किंचित् भेद है।

केह भक्तरूप केह भक्तेर स्वरूप। केह भक्त अवतार तिन रसकूप।।144

कोई भक्तरूप है तो कोई भक्तस्वरूप है।
कोई भक्त अवतार है तीनों ही प्रेमरस के पूर्ण भण्डार हैं।

तिन वेदरूप हय तिनेर हुंकार। हरिनामे निस्तारिला सकल संसार।।145

तीनों वेदरूप हैं। तीनों की श्रीहरिनाम में होने वाली
हुंकार ने समस्त संसार का निस्तार कर दिया।

कतक्षणे निवर्त्तिया हरिनाम संकीर्तन। युक्ति करे कैछे हैव धर्म प्रवर्त्तन।।146

कुछ देर बाद हरिनाम संकीर्तन से निवृत होकर
तीनों विचार करने लगेकि धर्म का प्रवर्त्तन कैसे हो।

हेथा गौर–गत–प्राणा सीता पाक घरे। वस्त्रे मुख बांधि रान्धे हरिष अन्तरे।।147

इधर गौर–गत प्राणा सीतादेवी रसोई घर में हर्षित मन होकर रसोई तैयार कर रही थी। मुख पर उसने वस्त्र बान्ध रखा था कि कहीं भोग–वस्तु में मुख की सांस (गन्ध) का प्रवेश न हो जाये।

बहुत व्यंजन शाक आर पिठा पाना। घृत्पक्व पायासान्न अमृत उपमा।।148

अनेक प्रकार के शाक, पिठा पाना, पक्वान्न और
अमृत समान पायस उन्होंने तैयार किये।

मुञि अधम कैलो तार जलेर टहल। मोरप्रति माता स्नेह करये अटल।।149

मैं अधम वहां जलसेवा करता रहा। मेरे प्रति माता अतिअखण्ड स्नेह करती थी।

तबे मदनगोपले भोग लागाइला। तुलसी मंजरी भोगेर ऊपरे अर्पिला।।150

तब श्रीमदनगोपाल को सब व्यंजन भोग लगाये गये
और भोग पर तुलसी मंजरी छोड़ी गयी।

भोग सराइया आसन दिला तिन ठाञि। दक्षिणे निताई मध्ये वसिला निमाञि।151

भोग उठाकर तीन जगह आसन लगा दिये गये।
दक्षिणमें श्रीनित्यानन्द मध्य में श्रीनिमाई महाप्रभु बैठे।

अद्वैत वसिला वामे करि दैन्यपाना। परिवेशन करे सीता जैछे अन्नपूर्णा।।152

श्रीअद्वैत बायीं दिशा में दीनतापूर्वक बैठे।
अन्नपूर्णा देवी की भांति श्रीसीतादेवी परिवेशन करने लगी।

तिन ठाकुर सेवा कैला नानाविध रसे। ताहार उच्छिष्ट मागे श्रीईशान दासे।।153

तीनों ठाकुरों ने नानाविध प्रसाद का रसास्वादन किया। उनके उच्छिष्ट को श्रीईशान दास ने मांगकर ग्रहण करने की जन्म–जन्म में कामना किया है।

भोजनान्ते महाप्रभु युकति करिया। नवद्वीपे गेला दुइ प्रभुरे लइया।।154

भोजन के बाद श्रीमहाप्रभु ने युक्ति की और
दोनों प्रभुओं को साथ लेकर नवद्वीप धाम चले आये।

तिने मिलि हरिनाम करिला विस्तार। कत शत महापापी करिला निस्तार।।155

तीनों मिलकर श्रीहरिनाम का प्रचार करने लगे।
उन्होंने कितने ही शत–शत महापापियों का निस्तार कर दिया।

जागाई–माधाई आर काजिर उद्धार। कैला अत्यद्भुत लीला लोक चमत्कार।।156

जगाई माधाई एवं काजी का उद्धार किया।
ऐसी अद्भुत लीलाएं कीं कि लोग चमत्कृत हो उठे।

एइलीला कथा लिखिवारे नाञि क्षम। मुञि कराइमूं मात्र दिगदरशन।।157

उन समस्त लीलाओं को उल्लेख करने में मैं समर्थ नहीं हूँ। मैंने यहां केवल उनका दिग्दर्शन कराया।

अथः श्रीचैतन्यचरितामृत से सभार आदिलीला परिच्छेद सप्तदशः

काजी का उद्धार

नित्यानन्द गोंसाञिर आवेश जानिल।
गंगाजल पात्र आनि सम्मुखे धरिल।।१०६

श्रीनित्यानन्द गोसांई जान गये कि प्रभु को श्रीबलराम का भावावेश है। उन्होंने एक गंगाजल का पात्र लाकर सामने रख दिया।

जलपान करि नाचे हइया विह्वल। यमुनाकर्षण लीला देखाय सकल।।११०

श्रीमहाप्रभु गंगाजल का पान कर विह्वल होकर नृत्य करने लगे। उस समय श्रीबलदेवजी की यमुना को हल से खींचने की जो लीला है- वही सबने देखी।

मदमत्त गति बलदेव अनुकार। आचार्य्य-शेखर ताँरे देखे रामाकार।।१११

श्रीबलराम की भांति मतवाली चाल का श्रीमहाप्रभु अनुकरण करने लगे। श्रीचन्द्रशेखर आचार्य ने उस समय श्रीमहाप्रभु के श्रीबलरामरूप में दर्शन भी किये। महाप्रभु स्वयं श्रीकृष्ण हैं, और श्रीबलराम उनका ही अभिन्न स्वरूप है।

बनमाली आचार्य्य देखे सोनार लांगल।
सबे मिलि नृत्य करे आवेशे विह्वल।।११२

श्रीवनमाली आचार्य ने श्रीमहाप्रभु के हाथ में सोने का हल देखा, समस्त भक्त बलराम- आवेश के दर्शन कर प्रेम विह्वल होकर नृत्य करने लगे।

एइ मत नृत्य हइल चारि प्रहर। सन्ध्याय गंगास्नान करि सबे गेला घर।।११३

वह नृत्य चार प्रहर तक बराबर होता रहा। संध्या के समय सबने गंगा पर जाकर स्नान किया एवं सब अपने-अपने घर चले गये।

नागरिया लोके प्रभु यबे आज्ञा दिल। घरे घरे संकीर्त्तन करिते लागिल।।११४

श्रीमहाप्रभु ने नदिया नगर में संकीर्तन करने का जब आदेश सब लोगों को दिया, तब संकीर्तन संकीर्तनप्रेमी उनके भक्तगण नाच-नाचकर-

हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः। गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन।।११५

'हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः। गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन'
इस ध्वनि का संकीर्तन घर-घर में वैष्णवगण करने लगे।

मृदंग करताल संकीर्त्तन उच्चध्वनि।
हरि हरिध्वनि बिना आर नाहि शुनि।।११६

घर-घर में मृदंग करताल बजने लगे। नाम संकीर्तन की उच्च ध्वनि होने लगी। हरि हरि ध्वनि के सिवाय और कुछ सुनाई न देता था।

शुनिया ये क्रुद्ध हैल सकल यवन।
काजि पाशे आसि सबे कैल निवेदन।।११७

समस्त यवन लोग क्रोधित होकर काजी के पास
आये और मिलकर उसे सब कथा कह सुनाई।

क्रोधे सन्ध्याकाले काजि एक घरे आइल।
मृदंग भांगिया लोके कहिते लागिल।।११८

वह क्रोधित होकर संध्या के समय एक घर में पहुँचा। जहां संकीर्तन हो रहा था। काजी ने आकर मृदंग को तोड़ा और सबको कहने लगा-

एत काल केह नाहि कैल हिन्दुयानि।
एबे ये उद्यम चालाओ कोन बल जानि।।११९

"आज तक किसी ने इस प्रकार हिन्दू-आचरण नहीं किया।
तुम लोग किसके बलबूते पर यह आडम्बर चलाने लगे हो?"

केह कीर्त्तन ना करिह सकल नगरे।
आजि मुञि क्षमा करि याइतेछि घरे।।१२०

काजी ने फिर कहा- "सुनो! इस नदिया नगर में कोई भी कीर्तन न करे। आज तो मैं तुम्हारे दोष को क्षमा करता हूँ और जा रहा हूँ।

आर यदि कीर्त्तन करिते लागि पाब।
सर्व्वस्व दण्डिया तार जाति ये लइब।।१२१

किन्तु इसके पश्चात् यदि मैंने किसी को कीर्तन करते देखा, तो याद रखो, उसकी सब सम्पत्ति जब्त कर लूंगा, इतना ही नहीं,
उसे मुसलमान बना दूंगा"

एत बलि काजि गेल, नगरिया लोक।

प्रभु स्थाने निवेदिल पाञा बड़ शोक।।१२२

इतना कहकर काजी तो अपने घर चला गया।
नगर वासी बड़े दुखित हुए एवं श्रीमहाप्रभु के निकट आकर
अपना दुख निवेदन किया।

प्रभु आज्ञा दिल याह करह कीर्त्तन।
आमि संहारिब आजि सकल यवन।।१२३

श्रीमहाप्रभु ने आज्ञा दी कि– "जाओ। निडर होकर संकीर्तन करो।
मैं आज ही सब यवनों का नाश किये देता हूँ।

घरे गिया लोक सब करे संकीर्त्तन।
काजिर भये स्वच्छन्द नहे चमकित मन।।१२४

प्रभु की आज्ञा पाकर सब लोग घरों में जाकर संकीर्तन करने लगे,
किन्तु काजी के डर से स्वच्छन्दता से नहीं, मन में काजी का खटका
लगा ही रहा।

ता सबार अन्तर्भय प्रभु मने जानि।
कहिते लागिला लोक शीघ्र डाकि आनि।।१२५

श्रीमहाप्रभु ने उनके मन के भय की बात जान ली।
प्रभु ने शीघ्र ही उन सबको बुलाया और कहने लगे–

नगरे नगरे आजि करिव कीर्त्तन।
सन्ध्याकाले सबे कर नगर मण्डन।।१२६

मेरे प्रिय भक्तगणों सुनिये! आज नगरी की गली–गली में मैं कीर्तन
करूँगा। तुम लोग सन्ध्या के समय सब नगर को सजाओ।

सन्ध्याते दिउटी सब ज्वाल घरे घरे।
देखि कोन् काजि आसि मोरे माना करे।।१२७

सन्ध्या के समय घर–घर पर दीप जलाओ। मैं देखूंगा कौन काजी है,
जो मुझे कीर्तन करने से रोकता है?" भगवान के भक्तों को सेवा में
बाधा देने से प्रभु रूष्ट होते हैं।

एत कहि सन्ध्याकाले चले गौरराय।
कीर्त्तनेर कैल प्रभु तिन सम्प्रदाय।।१२८

सन्ध्याकाल आ पहुँचा, श्रीमहाप्रभु नगर–कीर्तन में चले। कीर्तन करते
समय प्रभु ने तीन मण्डलियाँ बनायीं।

आगे सम्प्रदाये नृत्य करे हरिदास।
मध्ये नाचेन आचार्य्य परम उल्लास।।१२९

आगे-आगे पहली मण्डली में श्रीहरिदास कीर्तन एवं नृत्य करते जा रहे थे। बीच में अद्वैताचार्य गोसाईं परम उल्लास युक्त संकीर्तन कर रहे थे।

पाछे सम्प्रदाये नृत्य करे गौरचन्द्र।
तार संगे नाचि बुले प्रभु नित्यानन्द।।१३०

पीछे-पीछे श्रीगौरचन्द्र स्वयं नृत्य करते हुए चले। श्रीनित्यानन्द प्रभु भी श्रीमहाप्रभु के साथ भ्रमण करते हुए नृत्य कर रहे थे।

वृन्दावन दास इहा चैतन्यमंगले।
विस्तारि वर्णियाछेन प्रभु कृपाबले।।१३१

श्रीवृन्दावनदास ने इस चरित्र को प्रभु की कृपा-शक्ति से श्रीचैतन्यभागवत् ग्रन्थ में विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। अतः यह ग्रन्थ अवश्य ही पठनीय है।

एइ मत कीर्त्तन करि नगर भ्रमिला।
भ्रमिते भ्रमिते काजिर बहिद्वारि गेला।।१३२

इस प्रकार कीर्तन करते-करते समस्त नगर में भ्रमते हुए सब काजी के दरवाजे पर ही आ पहुँचे। महाप्रभु को पाकर भक्तों के आनन्द का ठिकाना नहीं है।

तर्जे गर्ज़े नागरिया करे कोलाहल।
गौरचन्द्र बले लोक प्रश्रय पागल।।१३३

सब लोग क्रोध में आकर गर्जने लगे। बड़ा भारी शोर करने लगे, श्रीगौरचन्द्र के बल एवं साहस को प्राप्त कर मानो- वे उन्मत्त हो उठे।

कीर्त्तन-ध्वनि शुनि काजि लुकाइल घरे।
तर्ज्ज़न गर्ज्जन शुनि ना हय बाहिरे।।१३४

कीर्तन ध्वनि को सुनकर काजी घर में छिप गया एवं लोगों की तर्ज्जना गर्ज्जना को सुनकर वह बाहर आने का साहस ही न कर सका।

उद्धतलोक भांगे काजिर पुष्पवन।

विस्तारि वर्णिला इहा दास वृन्दावन।।१३५

उद्धत लोगों ने जिस प्रकार काजी के घर एवं बगीचे की तोड़-फोड़ की, उसका श्रीवृन्दावनदास ने विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

तबे महाप्रभु ताँर द्वारेते बसिला।
भव्यलोक पाठाइ काजिरे बोलाइला।।१३६

श्रीमहाप्रभु काजी के दरवाजे पर बैठ गये एवं शिष्ट लोगों को अन्दर भेज कर काजी को बाहर बुलवाया। महाप्रभु परम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, उन्होंने कोई अस्त्र-शस्त्र नहीं उठाया।

दूरे हैते आइसे काजि माथा नोङाइया।
काजिरे बसाइला प्रभु सम्मान करिया।।१३७

काजी ने आते ही दूर से प्रभु के आगे सिर झुकाया। प्रभु ने सादर काजी को पास बैठाया। नृसिंह रूप से उन्होंने कितना क्रोध किया था, आज वे अपराधियों पर कितने करूण हैं।

प्रभु कहे आमि तोमार आइलाम अभ्यागत।
आमा देखि लुकाइले ए धर्म्म केमत।।१३८

श्रीमहाप्रभु ने कहा, मैं तुम्हारे घर पर अतिथि रूप में आया हूँ और तुम मुझे देखकर घर में जा छिप गये हो। आपका यह कैसा धर्म?

काजि कहे शुनि तुमि आइस क्रुद्ध हैया।
तोमा शान्त कराइते रहिनु लुकाइया।।१३९

महाप्रभु के वचन सुनकर काजी ने कहा- "आप क्रोधित होकर आये थे, इसलिए आपको शान्त करने के लिये मैं छिप गया"

एबे तुमि शान्त हैले आमि मिलिलाम।
भाग्य मोर तोमा हेन अतिथि पाइलाम।।१४०

अब आप शान्त हो गये हैं, अतः मैं भी मिलने आ गया हूँ। आप जैसे अतिथि को पाकर मैं अपने बड़े भाग्य मानता हूँ।

ग्रामसम्बन्धे चक्रवर्त्ती हय मोर चाचा।
देह सम्बन्ध हैते ग्राम सम्बन्ध साचा।।१४१

काजी ने कहा, "ग्राम सम्बन्ध से नीलाम्बर चक्रवर्ती मेरा चाचा लगता है और यह तो आप जानते हैं कि शरीर सम्बन्ध से ग्राम का सम्बन्ध अधिक श्रेष्ठ होता है।" काजी दुर्योधन की तरह राजनैतिज्ञ

था, साक्षात् सरस्वती पति को वाणी से मोहित करने की चेष्टा कर रहा था।

लीलाम्बर चक्रवर्त्ती हय तोमार नाना।
से सम्बन्धे हओ तुमि आमार भगिना।।१४२

और श्रीनीलाम्बर चक्रवर्ती आपके नाना हैं, इस सम्बन्ध से आप मेरे भांजे लगते हैं। जीव पहले तो अपराध करता है, किन्तु पशुओं की तरह दण्ड दिखाने पर ही वह सिर झुकाता है।

भागिनार क्रोध मामा अवश्य सहय।
मातुलेर अपराध भागिना ना लय।।१४३

भांजे के क्रोध को मामा अवश्य सहन करता है। काजी ने कहा- और मामा के अपराध को भांजा भी क्षमा कर देता है।

एइ मत दोंहे कथा हय ठारे ठारे।
भितरेर अर्थ केह बुझिते ना पारे।।१४४

इस प्रकार दोनों में इशारे-इशारे में ही बातें होने लगीं। ताकि काजी के भीतरी भावों को, अर्थात् वह मृदंग तोड़ने एवं संकीर्तन बन्द करने के अपराध की क्षमा प्रार्थना कर रहा है, कोई न जान सके।

प्रभु कहे प्रश्न लागि आइलाम तोमार स्थाने।
काजि कहे आज्ञा कर ये तोमार मने।।१४५

श्रीमहाप्रभु ने कहा कि मैं तुम्हारे पास कई एक प्रश्न पूछने आया हूँ। काजी ने कहा- "आप अपने मन की बात कहिये।" महाप्रभु साक्षात् कृष्ण गोपाल हैं, यह भी प्रमाण है कि उन्होंने गौ-रक्षा, गौ-पालन की बात की है।

प्रभु कहे गोदुग्ध खाओ गाभी तोमार माता।
वृष अन्न उपजाय ताते तेहों पिता।।१४६

प्रभु ने कहा- "तुम लोग गौ का दूध पीते हो इसलिए गौ तुम्हारी माता तुल्य है और बैल अन्न उत्पादन कराते हैं, अतः वे तुम्हारे पिता तुल्य हैं।

पिता माता मारि खाओ एबा कोन धर्म्म।
कोन् बले कर तुमि एमत विकर्म्म।।१४७

तो आप बताइये तुम लोग पिता माता का वध कर उनको भक्षण करते हो, आपका यह कैसा धर्म है? और किस बल पर आप ऐसा निन्दित कर्म करते हैं?

काजि कहे तोमार यैछे वेद पुराण।
तैछे आमार शास्त्र किताब कोराण।।१४८

काजी ने कहा- "आपके शास्त्र जैसे **वेद और पुराण** हैं, उस प्रकार हमारे शास्त्र का नाम **'कुरान शरीफ'** है।

सेइ शास्त्रे कहे प्रवृत्ति निवृत्ति मार्ग भेद।
निवृत्ति मार्गे जीवमात्र बधेर निषेध।।१४६

हमारे उस शास्त्र में प्रवृत्तिमार्ग तथा निवृत्ति मार्ग ये दो मार्ग कहे गये हैं। निवृत्ति मार्ग में जीव मात्र का वध निषेध किया गया है।

प्रवृत्तिमार्गे गोवध करिते विधि हय।
शास्त्र आज्ञा वध कैले नाहि पाप भय।।१५०

किन्तु प्रवृत्ति मार्ग में गोवध करने की विधि कही गई है। अतः शास्त्र आज्ञा से वध करने में पाप का भय नहीं रहता है।

तोमार वेदेते आछे गोवधेर वाणी।
अतएव गोवध करे बड़ बड़ मुनि।।१५१

आपके वेदों में भी तो गोवध के वाक्य मिलते हैं। जिससे बड़े-बड़े मुनि गोवध करते थे। इसका सुन्दर समाधान महाप्रभु ने उसे बताया।

प्रभु कहे वेदे कहे गोवध निषेध।
अतएव हिन्दुमात्रे ना करे गोवध।।१५२

श्रीमहाप्रभु ने कहा- "सुनिये! वेद में गोवध निषेध है। इसलिये हिन्दुमात्र कभी गोवध नहीं करता।

जीयाइते पारे यदितबे मारे प्राणी।
वेद पुराणे एइ आछे आज्ञावाणी।।१५३

हां यदि जिलाने की शक्ति किसी में हो तो वह गोमेध-यज्ञ आदि करे, वेद-पुराण में इस प्रकार की आज्ञा है।

अतएव जरद्गण मारे मुनिगणे।
वेदमन्त्रे शीघ्र करे ताहार जीवने।।१५४

श्रीमहाप्रभु ने फिर कहा- "प्राचीन काल में मुनियों में इसप्रकार की शक्ति थी) कि वे गोमेध यज्ञ में बूढ़ी गौ का वध करते थे, किन्तु मारकर वेद मन्त्रों द्वारा शीघ्र ही उसे फिर जीवित कर देते थे।

जरद्गव हैञा युवा हय आरवार।
ताते ताँर बध नहे हय उपकार।।१५५

वह बूढ़ी गौ फिर युवावस्था को प्राप्त कर लेती थी। इसप्रकार के गोमेध में गौवध नहीं होता था बल्कि उसका उपकार हो जाता था।

कलिकाले तैछे शक्ति नाहिक ब्राह्मणे।
अतएव गोवध केह ना करे एखाने।।१५६

किन्तु कलिकाल में मारकर फिर जीवित करने की शक्ति किसी ब्राह्मण में अब नहीं है, इसलिये कलियुग में गोवध निषेध है। इसका प्रमाण है-

तथाहि ब्रह्मवैवर्त्तपुराणे कृष्णजन्मखण्डे (१८५-१८०)

अश्वमेधं गवालम्भं सन्न्यासं पलपैतृकम्।
देवरेण सुतोत्पत्तिं कलौ पंच विवर्ज्जयेत्।।७।।

अश्वमेध-यज्ञ, गोमेध-यज्ञ, संन्यास, मांस के द्वारा पितृश्राद्ध तथा देवर (पति के छोटे भाई) के द्वारा पुत्र उत्पन्न कराना- ये पाचों बातें कलियुग में वर्जित हैं। (ये पांचों अनात्मधर्म हैं। देश, काल के परिवर्तन के साथ-साथ अनात्मधर्मों का परिवर्तन हो जाया करता है। ये पांचों पूर्व काल में हिन्दुओं में प्रचलित थे, किन्तु देशकाल के अनुकूल न होने से शास्त्र ने आगे के लिये (कलियुग के लिए) उन्हें निषेध कर दिया।

तोमरा जीयाइते नार वध मात्र सार।
नरक हइते तोमार नाहिक निस्तार।।१५७

श्रीमहाप्रभु ने फिर कहा- "तुम लोग पशुओं को जीवित तो कर नहीं सकते हो, केवल मात्र मारना ही जानते हो। इसलिये तुम्हारा नरक से कभी निस्तार नहीं होगा।" महाप्रभु की आज्ञा सर्व वेदों का सार है, अतः उनकी आज्ञा सदा पालनीय है

गरुर यतेक लोम तत सहस्त्र वत्सर।
गोवधी रौरव मध्ये पचे निरन्तर।।१५८

गौ के जितने रोम होते हैं, उतने हजार वर्षों तक गोवध करने वाला रौरव नरक में जाकर निरन्तर दुख भोग करता है। (हे बन्धूओ! इतने भारी नरक भोगों से बचने के लिये जीव हत्या न करें और इसे रोकें।)

तोमा सबार शास्त्रकर्त्ता सेह भ्रान्त हैल।
ना जानि शास्त्रेर मर्म्म ऐछे आज्ञा दिल।।१५६

"तुम्हारे शास्त्रकर्त्ता भ्रान्त हो गये। उन्होंने शास्त्र का मर्म न जानकर प्रवृत्ति मार्ग में गोवध की आज्ञा दे दी है।"

शुनि स्तब्ध हैला काजि नाहि स्फुरे वाणी।
विचारिया कहे काजि पराभव मानि।।१६०

जब श्रीमहाप्रभु ने ऐसा कहा तो प्रभु के वचन सुनकर काजी जड़वत् हो गया। वचन मुख से न निकल सके। कुछ समय पीछे अपने को पराजित मानते हुए काजी विचारपूर्वक बोला।

तुमि ये कहिले पण्डित सेइ सत्य हय।
आधुनिक आमार शास्त्र विचारस्थ नय।।१६१

हे पण्डितराज! तुमने जो कहा, वह सब सत्य है। हमारा शास्त्र अबका बना हुआ है, वह पूर्व-अपर विचार सहित नहीं है।

कल्पित आमार शास्त्र आमि सब जानि।
जाति अनुरोधे तबु सेइ शास्त्र मानि।।१६२

हम जानते हैं, हमारा शास्त्र कल्पित है,
तो भी जाति के अनुरोध से हम उसे ही मानते हैं।

--- इति ---

अथः श्रीचैतन्य भागवत से सभार मध्य लीला परिच्छेद त्रयोदश

जगाई-माधाई का उद्धार

एकदिन महाप्रभु हैल हेन मति।
आज्ञा कैल नित्यानन्द हरिदास प्रति।।०६

एकदिन महाप्रभु करूणा में आकर
नित्यानन्द हरिदास के प्रति आकर बोले।

शुन शुन नित्यानन्द! शुन हरिदास!
सर्वत्र आमार आज्ञा करह प्रकाश।।०७

हे नित्यानन्द! हे हरिदास! मेरी इस आज्ञा का सर्वत्र प्रचार करो।

प्रति घरेघरे गिया कर एइ भिक्षा।

कृष्ण भज कृष्ण बोल कर कृष्ण शिक्षा।।८

घर-घर में जाकर कृष्णनाम की भिक्षा लो।

कृष्ण भजाओ कृष्ण ही बुलाओ और सबको कृष्ण शिक्षा दो।

इहा बइ आर ना बलिबा बोलाइबा।

दिन अबसाने आसि आमारे कहिबा।।६

इसके अलावा न और बोलना न और बुलाना

और रोज संध्या समय मुझे इसका संवाद देना।

एक दिन पथे देखे दुइ मातोयाल।

महा दैत्य प्राय हइ मद्यप विशाल।।३१

इसप्रकार परम करूणामय श्रीनित्यानन्दप्रभु हरिदास के साथ हरिनाम बुलवाते जा रहे हैं कि रास्ते में जगाई-माधाई नाम के महापापियों को देखा, जो नशे में धूत होकर आपस में ही झगड रहे थे।

से दुइ जनेर कथा कहिते अपार।

तारा नाहि करे, हेन पाप नाहि आर।।३२

उन महादैत्यों के पापों की सीमा नहीं थी।

ब्राह्मण हइया मद्य-गोमांस भक्षण।

डाका चुरि परगृह दाहे सर्वक्षण।।३३

ब्राह्मण होकर मद्यपान, गोवध परस्त्रीहरण ऐसा

कोई पाप नहीं जो उन्होंने नहीं किया हो।

शुनिवारे पाय हेन निकटे थाकिया।

कहेन प्रभुर आज्ञा डाकिया डाकिया।।८२

श्रीनित्यानन्द प्रभु निर्भय होकर परमकरूणा पूर्वक उनके पास आकर महाप्रभु आज्ञा से युगधर्म श्रीहरिनाम की शिक्षा देने लगे।

बोल कृष्ण भज कृष्ण लह कृष्णनाम।

कृष्ण माता कृष्ण पिता कृष्ण धन प्राण।।८३

हे बन्धुओं! श्रीकृष्ण ही भजो और श्रीकृष्ण नाम ही लो।

श्रीकृष्ण ही तुम्हारे असली माता-पिता व धन प्राण हैं।

क्या भरोसा है इस जिन्दगी का। साथ देती नहीं ये किसी का।।

ओ तूने जीवन को यूं ही गंवाया। नहीं तूने हरिनाम गाया।।

गौर सुन्दर को अपना बनालो। हरे कृष्ण महामंत्र गा लो।।

(अन्यथा) सांस रूक जाएगी दम निकल जाएगा।।

साथ देती नहीं ये किसी का। यहां कोई नहीं है किसी का।।

तोमा सभा लागिया कृष्णेर अवतार।
हेन कृष्ण भज, सब छाड़ अनाचार।।८४

तुम जगतवासियों के लिए श्रीकृष्ण ने गौरांग अवतार धारण किया है। अब उनकी शरण लेकर अनाचार को छोड़कर केवल श्रीकृष्ण का भजन करो।

उद्धारिवे दुइजने हेन आछे मने।
अतएव निशाभागे आइला से स्थाने।।१७७

निताई चाँद प्रभु ने उन दोनों के उद्धार का संकल्प करके संध्या काल में वहां आगमन किया और उनको हरिनाम दान करने लगे।

अबधूत नाम शुनि माधाइ कुपिया।
मारिल प्रभु शिरे मुळुकी तुलिया।।१७८

अवधूत निताई चाँद से कुपित होकर माधाई ने उनके माथे पर शराब की कलसी दे मारी।

फुटिल मुदुकी शिरे रक्त पड़े धारे।
नित्यानन्द महाप्रभु गोविन्द स्मङरे।।१७६

जिससे नित्यानन्द प्रभु के मस्तक से लहु की धारा बहने लगी। श्रीगौरगोविन्द का स्मरण करके निताई चाँद सोचने लगे कि मैं ये अपना लहु देकर भी यदि कलि के जीवों की नरक सुरक्षा कर पाऊँ तभी मेरा निताई अर्थात् निश्चित तारने वाला ईश्वर नाम सार्थक है।

आथेव्यथे लोक गिया प्रभुरे कहिला।
सांगोपांगे ततक्षणे ठाकुर आइला।।१८३

ग्रामवासियों ने दौड़कर महाप्रभु को नित्यानन्द पर आघात का संवाद सुनाया सुनकर ही महाप्रभु ततक्षणात् दौड़े आये और चक्र-चक्र कहकर भुजा ऊपर उठाई। सुदर्शन चक्र आकर आकाश में घूमने लगा। दैत्य जगाई-माधाई देखकर व डरकर शरण मांगने लगे रक्षा

के लिए।

मो हइते मोर नित्यानन्द देह बड़।

तोर स्थाने एइ सत्य कहिलाम दढ़।।२०९

महाप्रभु ने उनसे कहा कोटि जन्म तुम्हें नरक में कीड़ों को खिलाउँगा। नित्यानन्द का देह मुझसे भी बड़ा है। यह ध्रुव सत्य है।

सत्य यदि कहिला ठाकुर मोर स्थाने।

बोलह निष्कृति मुञि तरिमु केमने?२१०

प्रभु यदि आपका यही वचन है, तो
हमें बोलिये हमारा उद्धार कैसे होगा?

प्रभु बोले अपराधकैले तुमि बड़।

नित्यानन्दचरण धरिया तुमि पड़।।२१३

प्रभु बोले तुमने नित्यानन्द प्रभु के चरणों में
अपराध किया है, उनके चरणों की शरण लो।

पाइया प्रभुर आज्ञा माधाइ तखन।

धरिल अमूल्यधन निताइरचरण।।२१४

महाप्रभु की अति सहज आज्ञा पाकर माधाई उसी क्षण
श्रीनित्यानन्द प्रभु के अमूल्य श्रीचरणों में गिर पड़ा।

नित्यानन्द बोले प्रभु कि बलिव मुञि।

भृत्य द्वारेकृपा कर सेह शक्ति तुञि।।२१८

श्रीनित्यानन्द प्रभु बोले! हे प्रभु आपकी अपार महिमा है। भक्तों का मान बढ़ाने वाले हैं और भक्तों के द्वारा ही कृपा करते हैं।

कोन जन्मे थाके यदि आमार सुकृति।

सब दिलुँ माधाइरे शुनह निश्चित।।२१९

हे महाप्रभु! किसी जन्म में भी यदि कोई सुकृति हो
वह सब मैंने माधाई को अर्पण करता हूँ। इसे क्षमा करें।

मोर यत अपराध किछु दाय नाइ।

माया छाड़ कृपा कर तोमार माधाइ।।२२०

आपकी कृपा से मेरे पास अपराध का विचार नहीं
आप क्रोध का सम्वरण करो और माधाई पर कृपा करो।

विश्वम्भर बोले यदि क्षमिला सकल।

माधाइरे कोल देह हउक कुशल।।२२१

विश्वम्भर प्रभु बोले-यदि तुमने माधाई को क्षमा
कर दिया तो इसे अपनी गोदी में ले लो।

प्रभुर आज्ञाय कैल दृढ़ आलिंगन।
माधाइर हैल सर्व बन्ध विमोचन।।२२२

सदय हृदय नित्यानन्द प्रभु माधाई को दृढ़
आलिंगन करके उसे सभी पापों से मुक्त किया।

माधाइर देहे नित्यानन्द प्रवेशिला।
सर्व शक्ति समन्वित माधाइ हइला।।२२३

साक्षात् श्रीनित्यानन्द बलराम जब माधाई के
शरीर में शक्तिरूप प्रविष्ट हो गये।

हेनमते दुइजने पाइला मोचने।
दुइजने स्तुति करे दुइर चरणे।।२२४

इसप्रकार जगाई और माधाई निष्पाप होकर निताई गौरांग के
श्रीचरणों में गिरकर स्तुति करने लगे।

लोमहर्ष, महाअश्रु, कम्प सर्व गाय।
जगाइ माधाइ दुइ गड़ागड़ि याय।।२४२

उनके शरीर में लोमहर्ष, महाअश्रु, कम्प होने लगा,
जिससे वे पृथ्वी पर लोटपोट होने लगे।

कार् शक्ति बुझिते चैतन्य अभिमत।
दुइ दस्यु करे-दुइ महाभागवत।।२४३

महावदान्याय श्रीमन्महाप्रभु की कलिहत जीवों पर असीम करूणा का
क्या बखान करें जिन्होंने तत्क्षणात् दो महादस्युओं को महाभागवत
बनाया।

" इति "

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।158

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के श्रीचरण आशा करते हुए श्रीईशान नागर
श्रीअद्वैत–प्रकाश का वर्णन करते हैं।

पंचदश–अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द–राम भक्तगण साथ।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो। श्रीसीतानाथ की जय हो।

श्रीनित्यानन्दराम प्रभु की भक्तवृन्द सह जय हो।

एबे कहि प्रभुर आर मुख्य शाखागणे। क्रमभंग दोषे पूर्वे ना कैलों लिखने।।02

अब मैं श्रीअद्वैत प्रभु की मुख्य शाखाओं का वर्णन करता हूँ।

क्रमभंग दोष के कारण मैंने पहले उल्लेख नहीं किया था।

चौद्द शत छदविंश शकेर पौष मासे। सीतार चतुर्थ पुत्र ताहे परकाशे।।03

1426 शकाब्द (सन् 1504) पौष मास में श्रीसीतादेवी ने

चौथे एक सुन्दर, गुणवान पुत्र को जन्म दिया।

केह कहे इन्द्र आसि लभिला जनम। केह कहे चन्द्र आसि हैला प्रकटन।।04

कोई कहता कि इन्द्र ने आकर जन्म लिया और

कोई कहता चन्द्र ने आकर जन्म लिया है।

यथाकाले ज्योतिर्विद पुरोहित आइला। जात बालकेर तत्त्व गणिया कहिला।।05

यथा समय ज्योतिषी पुरोहित ने आकर नवजात शिशु की तत्व गणना की।

द्विज बले एइ शिशु कुबेरावतार। कमला कृपा बड़ इहार ऊपर।।06

पुरोहित ने कहा यह शिशु कुबेर का अवतार है। इस पर लक्ष्मी की महाकृपा है।

वृहस्पति समतूल हैव बुद्धिमान। विद्यावान हैव आर अति रूपवान।।07

निश्चित ही यह बृहस्पति के समान यह बृद्धिमान,

विद्यावान व अति रूपवान होगा।

किन्तु सद्धर्मे करिवे कुतर्कादि वास। शेषे साधु संगे सेइ घुचिवे प्रमाद।।08

किन्तु सद्धर्म संदर्भ में यह कुतर्कवाद करेगा।

किन्तु बादमें भक्तसंग पाकर इसका वह प्रमाद नष्ट होगा।

शुनि वैष्णवेर गण हरिध्वनि करे। स्त्रीगणे देय हुलुध्वनि आनन्द अन्तरे।।09

यह सुनकर वैष्णवों ने हरि–ध्वनि की और

नारीगण ने मन में आनन्दित होकर हुलु ध्वनि की।

द्विज कहे एइ बालक हैव बलवान। अतएव नाम राखिलाङ बलराम।।10

पुरोहित ब्राह्मण ने यह भी बताया कि यह बालक बलवान होगा।

अतः इसका नाम बलराम रखता हूँ।

तबे श्रीमान बलराम सात मासेर हैला। देखि सीतानाथ तार अन्नाशन कैला।।11

जब श्रीबलराम सात मास का हुआ तो

श्रीअद्वैतचन्द्र ने उसका अन्नप्राशन संस्कार कराया।

ताहे कृष्ण भोग दिया कैला महोत्सव। भुन्जाइला अन्ध दीन ब्राह्मण वैष्णव।।12

उसे कृष्ण–प्रसाद देकर महोत्सव कराया और

अन्धे, दीन, ब्राह्मण–वैष्णवों को भोजन कराया।

वस्त्र कौड़ि समर्पिया सभारे भूषिला। आशीष करिया सभे निज स्थाने गेला।।13

सबको वस्त्र–दक्षिणा आदि से विभूषित किया।

सब आशीर्वाद कर अपने–अपने घरों को चले गये।

तबे चौद्दशत त्रिश शके ज्येष्ठ मासे। सीतार यमज पुत्र ताहे परकाशे।।14

तत्पश्चात् चौदहसौ तीस (1430) शकाब्द (सन् 1508) के ज्येष्ठ मास में

सीतादेवी ने फिर दो सुन्दर व गुणी जुड़वा लड़कों को जन्म दिया।

यथाकाले दुइ शिशुर नामकरण कैला। स्वरूप जगदीश नाम वाछिरा राखिला।।15

यथासमय दोनों बालकों का नामकरण किया गया।

उनके नाम रखे गये– स्वरूप और जगदीश।

ज्योतिषी कहये दोहे हैव बुद्धिमान। विषय–पाण्डित्य हैव राजार समान।।16

ज्योतिषी बोले– ये दोनों अतिबुद्धिमान होंगे।

राजाओं के समान विषय भोग एवं पाण्डित्य इनमें होंगे।

लव कुश सम दोंहार प्रणयोपजिवे। गन्धर्वेर सम सुललित कण्ठ हवे।।17

लव एवं कुश के समान दोनों में प्रीति होगी

और गन्धर्वो के समान दोनों का सुमधुर–कण्ठ होगा।

तबे यथाकाले महा परसाद दिया। अन्नाशन कैला दोंहार आनन्दित हञा।18

तब यथाकाल श्रीअद्वैतप्रभु ने आनन्दित होकर

महाप्रसाद देकर दोनों का अन्न प्राशन मनाया।

ब्राह्मण वैष्णव बहु हरिषे भुन्जिला। वस्त्र कौड़ि पाञा सभे आशीर्वाद कैला।।19

ब्राह्मण–वैष्णवों को हर्षपूर्वक भोजन कराया।

वस्त्र दक्षिणा पाकर सबने बालकों को आशीर्वाद दिया।

एक दिन प्रभु कृष्णेर आरात्रिक सारि। भक्तसंगे हरिनाम करे उच्च करि।।20

एकदिन श्रीअद्वैत श्रीकृष्ण की आरति करके

भक्तों के साथ उच्च स्वर में श्रीहरिनाम कर रहे थे।

हेनकाले आसि तँहि वैष्णव एक जन। प्रभुर आगे कहे नदियार विवरण।।21

उस समय एक वैष्णव ने आकर नदिया का हाल प्रभु को सुनाया।

वैष्णव कहये निमाञि गृहत्याग कैला। कटवा नगरे जाञा मस्तक मुण्डिला।।22

उसने कहा कि श्रीनिमाई ने गृहत्याग कर दिया है
और कण्टक नगर में जाकर मस्तक मुड़ा लिया है।

केशव भारती तारे संन्यासी करिला। श्रीकृष्णचैतन्य नाम ताहार राखिला।।23

श्रीकेशव भारती ने उन्हें संन्यासी कर दिया है
और उनका नाम रखा है श्रीकृष्णचैतन्य।

तान शोके शचीमातार नाहि बाह्यज्ञान।मूर्च्छा हञा पड़े कभु नाहि स्थानास्थान।।24

उनके विच्छेद–शोक में माता शची बेसुध पड़ी हैं। मूर्च्छित होकर गिरी पड़ी जा रही हैं, उन्हें स्थान–अस्थान का कुछ होश नहीं है।

कभु हा निमाञि बुलि कान्दे उच्च स्वरे। सेई खेद वज्राघाते पाषाण विदरे।।25

"हा निमाई" कह उच्च स्वर में वह रोने लगती है।
उस दुःख के वज्रघात से पाषाण भी फटे जा रहे हैं।

कभु उन्मादिनी समा इति उति धाय। कभु मरिवार तरे गंगातीरे जाय।।26

कभी वह पागल की भांति इधर–उधर दौड़ने लगती है
कभी डूब मरने के लिये गंगा तट पर भागती है।

विष्णुप्रिया मातार कथा कहने ना जाय। अविश्रांत अश्रु मेघे जगत् भासाय।।27

माता–विष्णुप्रिया की दशा तो वर्णन नहीं की जा सकती।
अविरल अश्रुधारा से मानों जगत् को डुबाना चाहती है।

शुनिया हइल प्रभुर स्तम्भ उद्दीपन। प्रहरेक परे तिंहों करये क्रन्दन।।28

यह हाल सुनकर श्रीअद्वैत तो स्तम्भित– जड़वत् हो गये
और एक प्रहर तक बराबर रोते ही रोते रहे।

कारण जानिया सीता कान्दे उच्चस्वरे। अद्वैतेरगण भासे शोकेर सागरे।।29

यह बात जानकर सीतादेवी जोर–जोर से रोने लगी
श्रीअद्वैतचन्द्र का सारा परिवार शोक सागर में डूबा।

द्वितीय प्रहरे प्रभुर हैल उच्च हास। कार शक्ति समुझिते पारे तदाभास।।30

दूसरे प्रहर के बाद श्रीअद्वैत उच्चहास करते हुए कहने लगे– श्रीनिमाई की लीला के आभास मात्र को भी समझने की किस में शक्ति है?

गौर प्रेमावेशे सेइ निशि भोर हैल। तबे प्रभु अन्तरंग भक्तस्थाने बैल।।31

श्रीगौर के प्रेमावेश में सारी रात बीत गई और सवेरा हो गया।
तब प्रभु ने अन्तरंग भक्तों को कहा–

महासागरेर कूल मिले बहुकाले। कृष्ण दयासिन्धुर कूल कभू नाहि मिले।।32

महासागर का किनारा भी अनेक बार मिल जाता है।, परन्तु श्रीकृष्ण के दयासिन्धुता के ज्ञान का किनारा कभी नहीं मिलता है।

जीव उद्धारिते कृष्णेर नाना लीला स्फुरे।
भक्त वान्छा पुराइते कत दैन्य करे।।33

जीवों का उद्धार करने के लिए श्रीकृष्ण को अनेक लीलाएं सूझती हैं और भक्तों की वान्छा पूरण करने के लिए न जाने वे कितनी दीनता को अपनाते हैं।

भक्ताधीन कृष्णनित्य सर्वशास्त्रे कय। एइ लीलाय तार पूर्ण दिला परिचय।।34

सब शास्त्र कहते हैं कि श्रीकृष्ण नित्य भक्ताधीन हैं।
इस लीला में इस बात का पूरा परिचय मिलता है।

कहिते कहिते हैला प्रेमेते विह्वल। कहे तोर भारिभुरि बुझिलूँ सकल।।35

यह कहते–कहते श्रीअद्वैतप्रभु प्रेम में विह्वल हो उठे और कहने लगे– निमाई! मैं तुम्हारी सब सन्यास के छल से कृपा करने की लीला को गुरुत्व को समझता हूँ।

जैछे नट लोके माताय साजि नानावेश। तैछे लोक शिक्षाइते हैलि न्यासीवेश।।36

जैसे नट अनेक वेश सजाकर लोगों को मुग्ध करता है,
उसी प्रकार तुमने भी लोक–शिक्षा के लिए संन्यासी वेश धारण कर लिया है।

तबे अद्वैतचन्द्रेर बाह्य स्फूर्त्ति हैल। उच्चस्वरे नाम संकीर्तन आरम्भिल।।37

कुछ देर में श्रीअद्वैत को बाह्य–स्फूर्ति हुई और
उन्होंने उच्च स्वर में संकीर्तन आरम्भ किया।

हेन काले श्रीआचार्यरत्न महाशय। सीतानाथेर घरे आसि हइला उदय।।38

उसी समय श्रीआचार्यरत्न श्रीअद्वैत के घर आ पहुंचे।

तारे देखि पूछे प्रभु उत्कण्ठित मने। कह कह झाट नदियार विवरणे।।39

उसे देखकर श्रीअद्वैतप्रभु उत्कण्ठित होकर बोले–
आचार्य! शीघ्र नदिया का क्या वृत्तान्त है कहो?

श्रीआचार्यरत्न कहे शुनह गोसाञि।संन्यास करिया हेथा आइला निमाञि।।40

श्रीआचार्यरत्न ने कहा– गोसाईं!
सुनो श्रीनिमाई संन्यास लेकर यहां शांतिपुर में आ रहे हैं।

सिहरिया प्रभु कहे काहां तिंहो रय। आचार्यरत्न कहे गंगा–पारेते उदय।।41

चौंककर श्रीअद्वैतचन्द्र ने कहा– कहां है वे?
आचार्यरत्न बोले– वे गंगा की परली पार पधारे हैं।

नौका लञा जाह तांरे पारि करि आन। प्रेमावेशे उपवासी आछे चारि दिन।।42

आप शीघ्र नौका लेकर जाओ और उन्हें यहाँ लिवा लाओ।
वे प्रेमावेश में चार दिन से उपवासी हैं।

शुनि मोर प्रभु दुखे हाहाकार करि। शीघ्र गंगा पारे उत्तरिला लञा तरी।।43

यह सुनकर श्रीअद्वैतप्रभु दुखित हो हाहाकार करते हुए
शीघ्र नौका लेकर गंगा के पार जाकर उतरे।

प्रेमाविष्ट गौर अद्वैतेर देखि गणे। किवाश्चर्य आचार्य आइला वृन्दावने।।44

प्रेमाविष्ट श्रीगौरहरि ने श्रीअद्वैतजी को देखकर कहा–
यह कैसा आश्चर्य? आचार्य आप भी वृन्दावन चले आये?

शुनि प्रभु कहे जाहाँ तोमार उदय। ताहाञि श्रीव्रजधाम सर्वशास्त्रे कय।।45

श्रीअद्वैत ने कहा– जहाँ आपका आविर्भाव है,
वहीं वृन्दावन है– सब शास्त्र यही कहते हैं।

एत कहि श्रीचैतन्य नित्यानंदे लञा। शांतिपुरे गेला प्रभु गंगा पार हञा।।46

इतना कहकर श्रीअद्वैत श्रीचैतन्य एवं नित्यानन्द प्रभु को
साथ लेकर गंगा पार होकर शांतिपुर चले आये।

गौरांगेर संन्यासीवेश देखि सीतामाता। कत खेद कैला तार नाहिक इयत्ता।।47

श्रीगौरांग का संन्यासीवेश देखकर सीतामाता ने
जितना दुख–विलाप किया, उसकी कोई सीमा नहीं।

तबे माता रांधे अन्न व्यंजन बहुत। पिष्टकादि रांधिला गौरांगेर प्रिय जत्त।48

तब माता ने अनेक व्यंजन–पिष्टकादिक, जो श्रीगौरांग को मनभाते तैयार किये।

सद्गन्धाज्य पक्वद्रव्य दिव्यामृतपूर। गाढ़ निष्ठाय माता पाक करिला प्रचुर।।49

सुन्दर सुगन्धियुक्त पक्वानादि द्रव्य जो अलौकिक अमृत के समान स्वादिष्ट थे,
माता ने ऐसे अनेक व्यंजन गाढ़ अनुरागवश तैयार किये।

तुलसी मंजरी दिला भोगेर उपरे। कृष्णे भोग लागाइला आनन्द अन्तरे।।50

तुलसी मंजरी उन पर छोड़कर श्रीकृष्ण को उनका भोग लगाया।
सीतामाता श्रीकृष्ण के भोग लगाने पर मन में अति प्रसन्न हुई।

तबे गौर नित्यानन्दे करि आवाहन। दिव्यपीठे वसाइला करिया यतन।।51

तब माता सीता ने श्रीगौर– नित्यानन्द को बुलाया
और दिव्य आसनों पर उन्हें यत्नपूर्वक बैठाया।

आचार्य आग्रहे दोंहे भोजने वसिला। पारश करिते प्रभु निजे दाण्डाइला।।52

श्रीअद्वैत के आग्रह से दोनों भोजन करने बैठ गये एवं

श्रीअद्वैत परिवेशन करने के लिये खड़े रह गये।

ताहा देखि हासि गौर कहे सीतानाथे। शिव हीन यज्ञ सिद्ध ना हय कोन मते।।53

यह देखकर श्रीगौर ने हंसकर श्रीअद्वैत से कहा–

शिव के बिना यज्ञ कभी सिद्ध नहीं होता।

हासि मोरल प्रभु कहे तुहुँ मूर्त शिव। तव कृपाय शिवत्व लभये सर्वजीव।।54

हंसकर श्रीअद्वैत ने कहा– मूल शिव तो आप ही हैं।

आपकी कृपा से सब जीव शिवत्व (मंगल) प्राप्त करते हैं।

महाप्रभु कहे तुहुं छाड़ भारिभूरि। तोमा छाड़ि मुञि किछु खाइते न पारी।।55

श्रीगौर ने कहा– आप अब विडम्बना छोड़िये,

आपके बैठे बिना मैं भोजन नहीं कर पा रहा हूँ।

ताहा शुनि उच्चहासि नित्यानन्द कय। मोर एक बात शुन गौर दयामय।।56

यह सुनकर श्रीनित्यानन्द ने जोर से कहकहा लगाया और कहा–

दयामय गौर! मेरी एक बात सुनिये।

एइ पेटुक वामुनारे ना कर आदर। चारि हाते भुन्जिलेउ ना पूरे उदर।।57

इस पेटुक ब्राह्मण का इतना आदर मत करो।

चार हाथों से खाने पर भी इसका पेट न भरेगा।

कभु माथा दिया भुंजे अग्निर समाने। ऐछे महाविद्याय अधिकार नाहि आने।।58

तभी तो यह भोजन में सिर देकर अग्नि के समान भोजन करता है–

ऐसी महाविद्या में और किसी का अधिकार नहीं है।

शुनि श्री अद्वैत कहे हास्य प्रेमरोषे। बहुरूपी हञा तुहुं भुंज देशे देशे।।59

तब श्रीअद्वैत ने भी परिहास करते हुए प्रणय कोप में भरकर कहा– तुम बहुरूपिया तो हो, देश–विदेश में खाते फिरते हो। अर्थात् हे निताई! तुम्हारे अनेक रूप हैं जिनसे हर युग में पृथ्वी में सर्वत्र भ्रमण करके करूणावश जो कोई जो कुछ भी देता है, उसका उद्धार करने के लिये मुख में डाल देते हो।

एकाञि अनन्त मुखे करह आहार। तुया पेट पुराइते शक्ति आछे कार।।60

अकेले ही अनन्त मुख से आहार करने वाले हो,

तुम्हारा पेट भर देने में किसकी शक्ति है?

हेन मते दोहें दोंहार तत्त्व प्रकाशिला। शुनि गौर मन्द मन्द हासिते लागिला।।61

इसप्रकार दोनों एक दूसरे का तत्व प्रकाश करते हैं हंसी में।

सुनकर श्रीगौर मन्द–मन्द मुस्कराने लगे।

मध्यस्थ हइया तबे महाप्रभु बोले। दोहांर तुलना हैव भोजनेर तुले। ।62

मध्यस्थ होकर तब श्रीमहाप्रभु बोले–
दोनों की तुलना होगी भोजन करने में, कौन अधिक खाता है?

शुनि मोर प्रभु कहे शुद्ध भक्ति भावे। एकमात्र तुँहुँ परिमाण शून्य भवे। ।63

यह सुनकर श्रीअद्वैत शुद्धभक्ति भाव में बोले– एकमात्र आप ही तुलनातीत हैं।

तोमाते अनन्त जगतेर मान हय। अन्य तौलयन्त्रेर काज ना देखि हेथाय। ।64

आप में अनन्त ब्रह्माण्ड परिमित होते हैं और किसी तराजू का काम यहां मैं नहीं देखता, अर्थात् आप ही हम दोनों का मापदण्ड करेंगे।

हेन मते महाप्रभु, प्रभु दुइ जन। ठोरे ठोरे वस्तु तत्त्व कैला उद्घाटन। ।65

इसप्रकार श्रीमहाप्रभु श्रीअद्वैतचन्द्र तथा श्रीनिताईचांद
समय–समय पर वस्तुतत्व का उद्घाटन करते हैं।

भोजनअन्ते तिन ठाकुर विश्राम करिया। साधु संगेर महाशक्ति कहे फुकारिया। ।66

भोजन करने के बाद तीनों ने वहां विश्राम किया। साधुसंग में महाशक्ति है–
तीनों उच्चस्वर में कहकर जगत को साधु संग की आज्ञा करने लगे।

ऊर्ध्वबाहु हञा बोले शुन सर्वजन। साधुसंगेर अविचिन्त्य स्वाभाविक गुण। ।67

ऊर्ध्वबाहु होकर वे बोले– सब सुन लीजिये कि
साधुसंग में अचिन्त्य स्वाभाविक गुण हैं।

तृण हइते आपनारे नीच करि माने। वृक्षापेक्षाय जार क्षम आछये सहने। ।68

तृण से भी अपने को जो नीच मानता है। वृक्ष की भांति जिसमें सहिष्णुता है।

मान पाईवार वान्छा नाहि जार मन। सर्वदा सद्व्रतजेई अन्येर मान दाने। ।69

जिसमें मान पाने की वान्छा नहीं है और जिसने
सदा दूसरों का मान देने का व्रत ले रखा है।

निरन्तर हरिनाम करये कीर्तन। एइ हय साधुगणेर स्वरूप लक्षण। ।70

जो निरंतर हरिनाम कीर्तन करे, वह साधु है, साधुओं
के यही स्वरूप लक्षण हैं जिनसे वे पहचाने जाते हैं।

साधु चरणाश्रय कर सर्वजन। ताहाते मिलिवे सत्य नित्य साध्य धन। ।71

सब लोग साधु अर्थात् कृष्ण भक्तों के चरणों का आश्रय करिये। इससे
सत्य–शाश्वत साध्य धन अर्थात् श्रीकृष्ण की प्रेमभक्ति प्राप्ति होगी।

अनन्त शास्त्रेर मर्म के बुझिते पारे। जेइ ज्ञानी सेइ साधु–वर्त्म रथे चढ़े। ।72

अनन्त शास्त्रों के मर्म को कौन समझ सकता है? जो विवेकशील व्यक्ति है वही साधु मार्ग या आचरण रूप रथ पर सवार होता है।

सर्व शास्त्रेर सार साधु करिया ग्रहण। सुलभ सत्पथ जाहा करे प्रकटन।।73

सब शास्त्रों का सार ग्रहण करके साधुगण
जिस सुलभ सत्पथ को प्रकाशित करते हैं।

सेइ पथे जेइ चले सेइ चक्षुष्मान। ताहे जेइ विमुख सेइ अन्धेर समान।।74

उस पथ का जो अनुगमन करता है। वही वस्तुतः नेत्र रखता है।
उस पथ से जो विमुख है, वह अन्धे के समान है।

जैछे काच छेदिते हीरार मात्र क्षम। छिद्र पाइले सूत्रादिर हय गम्यक्षम।।75

जैसे शीशे को काटने में एकमात्र हीरे में क्षमता होती है।

तैछे साधुर प्रचारित पथे जेइ चले। अज्ञ हइलेउ सेइ जाय भव पारे।।76

उसी प्रकार साधुजनों के बने प्रचारित पथ का जो अनुगमन करता है, वह अज्ञ होते हुए भी संसार से पार हो जाता है।

इहा लागि पुरातन ऋषिगण कय। साधुसंग बिना ना हय निर्मल हृदय।।77

इसीलिये प्राचीन ऋषिगण का उद्‌घोष है कि
साधुसंग के बिना हृदय कभी शुद्ध नहीं हो सकता।

सर्व जीवे समदया साधुर स्वभावे। संग मात्रे आपन स्वभाव देय जीवे।।78

सब जीवों के प्रति समान दया करना साधु का स्वभाव है। संग मात्र से वह अपने स्वभाव को दूसरे जीव में संचार कर देता है।

जैछे कुमिरा कीटेर स्वतः संगगुणे। तत्सारूप्य लभे सत्य अन्य कीटगणे।।79

जैसे कुमिरा कीट के संगगुण से दूसरा कीट
भी उसके स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

साधुसंग बिना ना हय भजन निर्णय। सदाचार आर कृष्णभक्तिर उदय।।80

साधुसंग के बिना भजन का भी निर्णय नहीं हो पाता, न ही सदाचार और कृष्णभक्ति का उदय ही हो सकता है। अतः श्रद्धालुजनों का कर्त्तव्य है कि सत्संग के द्वारा भगवत प्राप्ति का निर्धारण करें।

महापापी दुराचारी हय यदि केह। साधु सूर्योदये ध्रुव पूत हय सेह।।81

यदि कोई महापापी और दुराचारी है, वह भी
साधुरूपी सूर्योदय को पाकर पवित्र हो जाता है।

स्पर्शमणि स्पर्शे जैशे लौहेर स्वर्णत्व। तैछे साधुसंगे जीव हय नित्यमुक्त।।82

जैसे स्पर्शमणि के संग से लोहा सोना बन जाता है,
वैसे साधु संग से जीव नित्यमुक्त हो जाता है।

हेनमते कतशत सद्धर्म वर्णिला। शुनि श्रीवैष्णववृन्द आनन्दे डुबिला।।83

इसप्रकार तीनों ठाकुरों ने कितने ही सद्धर्मों को बखान किया। उसे सुनकर सब वैष्णव आनन्द सागर में डूबकर हरि–हरि बोलने लगे।

हेथा नवद्वीपे महाप्रभुर जननी। शांतिपुरे गौर आइला लोकमुखे शुनि।।84

इधर नवद्वीप में शचीमाता ने चन्द्रशेखर आचार्य व
लोगों के मुख से सुनाकि श्रीगौर शांतिपुर आया है–

नदीयार गौरभक्तगणेर मिलिञा। शांतिपुरे उत्तरिला आनन्दित हञा।।85

वे नदिया से भक्तों को साथ लेकर आनन्दित होकर शांतिपुर आ पहुंची।

श्रीचैतन्य माये देखि दण्डवत कैला। पुत्रमुख चाञा शची कान्दिते लागिला।।86

श्रीचैतन्य ने माता को देखते ही दण्डवत् प्रणाम किया।
पुत्रमुख को देखते ही शचीमाता रोने लगी।

शची कहे निमाञि तोर ए वेश देखिया। शैलाघात सम मोर विदरिछे हिया।।87

माँ शची बोली– "निमाई! तेरे इस वेश को देखकर
शूलाघात के समान मेरा हृदय फटा जाता है।

क्रमे मातार शोक सिन्धुर तरंग बाढ़िल। सेइ स्रोते जीवगण भासिते लागिल।।88

क्रमशः माता का शोक सिन्धु बढ़कर तरंगायित हो उठा,
उसके प्रवाह में सब जीव बहने लगे।

महाप्रभु सभारे कहिला महायोग। शुनि तान सर्व शोक हइल वियोग।।89

तब श्रीमहाप्रभु ने सबको महा–उपदेश दिया,
जिसे सुनकर सबका शोक कम हो गया।

तबे शचि पाक कैला सुगन्धि शाल्यान्न। गौरेर प्रिय घृतपक्व विविध व्यंजन।।90

तब माता शची ने अति स्वादु शाल्यान्न पकाया और
श्रीगौर के अतिप्रिय अनेक व्यंजन तैयार किये।

अमृत निन्दिया पायसादि मिष्ट अन्न। गण सह आनन्दे भुन्जिला श्रीचैतन्य।।91

अमृत को निन्दित करने वाले मिष्ठान्न का
भक्तों सहित आनन्दपूर्वक भोजन किया श्रीचैतन्यचन्द्र ने।

हेनमते दिन कत सीतानाथेर घरे। जे आनन्द हैल ताहा के वर्णिते पारे।।92

इसप्रकार अनेकदिन श्रीअद्वैतप्रभु के घर में जो परमानन्द हुआ,

उसको कौन वर्णन कर सकता है?

दिने महाप्रभु नाम उपदेश दिला। रात्रे पार्षद भक्त संगे संकीर्तन कैला।।93

दिन में तो श्रीमहाप्रभु नाम का उपदेश देते और रात
को अपने पार्षद–भक्तों के साथ संकीर्तन करते।

प्रेमानन्दे गौरगण हञा उनमत्त। प्रेमाश्रु ते शांतिपुर कैला अभिषिक्त।।94

श्रीगौर भक्त प्रेम आनन्द में उन्मत्त हो उठते। प्रेमाश्रुओं से श्रीगौर विरह में
उन्होंने शान्तिपुर को अभिषिक्त कर दिया।

एकदिन श्रीगौरांग सभाकार स्थाने। विदाय मांगये अति मधुर वचने।।95

एकदिन श्रीगौरांग महाप्रभु ने इतने दिन
सबको आनन्द दान करके अति मधुर वाणी में विदा मांगी।

शुनि सर्व भक्तेर शोक विष उपजिल। सेई ज्वालाय सर्व जीव छट–पट कैल।।96

यह सुनते ही मानो सब भक्तों में शोक का विष व्याप्त हो गया। कुररी पक्षिणी
के समान उस विष ज्वाला में सब लोग छटपटाने लगे।

शचीर शोकानलेर कथा कि कहिमु आर। अग्नि आसिलेह पुड़ि हय छार खार।।97

शची माता की तीव्र शोकाग्नि के विषय में और क्या कहूँ,
उसमें यदि स्वयं अग्नि आकर पड़ता तो वह भी झुलस कर भस्म हो जाता।

हाहाकार रवे माता कहे गोराचान्दे। काहां जाइवे मोरे बन्दिकरि शोक फान्दे।।98

हाहाकार करती हुई माता ने कहा– मेरे निमाई!
तू कहां जायेगा? मुझे शोक कारागार में बन्दी बनाकर।

नदीयाय नाहि जाइवे ताहे नाञि क्षति। हरि भज एइ देशे करिया वसति।।99

तू यदि नदिया न जाये, इसमें मुझे कुछ हानि नहीं है, किन्तु यहां शांतिपुर में ही
रहकर तू श्रीहरि का भजनकर। जिससे मुझे तुम्हारा संवाद मिलता रहेगा।

महाप्रभु कहे माता ना कह ए बात। स्वदेशे रहिले संन्यासीर धर्मवाद।।100

महाप्रभु ने कहा– माँ! यह बात मत कहो,
अपने ग्राम में रहने से संन्यासी के धर्म की हानि होती है।

यद्यपि श्रीशची पुत्र–वात्सल्येर खनि। पुत्रे आज्ञा कैला दुस्तर अविद्यारे जिनि।।101

यद्यपि शची माता पुत्र–वात्सल्य की खान है, फिर भी दुस्तर अविद्या को
जीतकर उसने पुत्र को इसप्रकार आज्ञा दी।

माता कहे वृन्दावन हय दूर देश। श्रीपुरुषोत्तमे रह पाइमु सन्देश।।102

हे प्राण निमाई! वृन्दावन देश यहां से बहुत दूर है। तुम श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र (जगन्नाथपुरी) में निवास करो, जिससे मैं तुम्हारा सन्देश तो पाती रहूंगी।

मातृ आज्ञा शिरे धरि श्रीगौरांग चले। प्रिय भक्तगण तान पड़े पदतले।।103

माता की आज्ञा को शिरोधार्य कर मात्री वत्सल प्रभु श्रीगौरांग वहां से चल पड़े, उनके प्रिय भक्तगण तो उनके चरणों में गिरकर अचेतन से हो गये।

भक्तगण कहे तोंहे पाङ कि ना पाङ। जनमेर मत देखि परान जुड़ाङ।।104

भक्त कहने लगे— प्रभो! फिर हम आपको देख सकेंगे कि नहीं,
अब तो हम आपको जीवन के समान पाकर प्राण शीतल करें।

शुनि श्रीचैतन्य कहे करुणार्द्र हञा। तुमि सबे खेद ना करिह मो लागिया।।105

उनके वचन सुनकर श्रीचैतन्य करुणार्द्र होकर बोले—
आप अब मेरे लिए कुछ दुख मत मानिए।

शुधु एइ बार नहे जनमे जनमे। तुमि सब छाड़ा मुञि नाहि एक क्षणे।।106

केवल इस जन्म में नहीं, जन्म—जन्म में
मैं आपको छोड़कर एक क्षण भी नहीं रह पाता हूँ।

जैछे एइ जन्मे सभे कैला महोत्सव। तैछे आर दुई जन्म करिवा उत्सव।।107

जैसे इस जन्म में सबने हरिनाम महोत्सव मनाया है,
वैसे और दो जन्मों में भी आप महोत्सव मनाएंगे।

मोर मात्र खालि देह तोरा पन्चप्राण। सभे छाड़ि शून्य देहे जाइमु कोन स्थान।108

मैं तो शरीर मात्र हूँ और आप मेरे पांच प्राणों के समान हैं। आपको छोड़कर शून्य देह लेकर मैं जाऊँ कहाँ और जाकर करूँगा भी क्या?

संन्यासीर धर्म एबे रक्षण कारण। देशे देशे तीर्थ क्षेत्रे करौं पर्यटन।।109

संन्यासी धर्म की रक्षा के लिए देश—विदेश के तीर्थों में,
श्रीकृष्ण की खोज में मैं भ्रमण करूँगा।

सभे मिलि कर निति नाम संकीर्तन। धर्मेर प्रचार आर साधुर सेवन।।110

सब मिलकर आप नित्य नाम संकीर्तन कीजिये।
धर्म का प्रचार और साधुओं की सेवा करते रहिये।

इथे प्रेमानन्दे लभ्य हइव निर्यास। मोहर लागिया सभे ना भाव हताश।।111

इसी में ही आपको प्रेमानन्द का निर्यास लाभ होगा।
आप मेरे लिए हताशा की भावना मत लाइये।

हेन मते गोरा सर्व भक्ते प्रबोधिया। श्रीपुरुषोत्तमे चले प्रेमाविष्ट हञा।।112

इसप्रकार श्रीगौरहरि सब भक्तों को समझा बुझा कर
प्रेमाविष्ट होकर श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र की ओर चल दिये।

संगे चले नित्यानन्द आर श्री मुकुन्द। दामोदर पण्डित आर श्रीजगदानन्द।।113

उनके साथ श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीमुकुन्द,
दामोदर पण्डित और जगदानन्द भी चल दिये।

पथे कत पतित पाखण्डी दुराचारे। उद्धारिला श्रीचैतन्य निज कृपा द्वारे।।114

रास्ते में कितने पतित, पाखण्डी दुराचारी व्यक्तियों का
उन्होंने अपनी कृपा से उद्धार कर दिया।

संगी चारिजन नाम उच्च करि गाय। प्रेमावेशे गौर सिंह गर्जिया चलय।।115

चारों भक्त उच्च स्वर से हरिनाम गान करते चल रहे थे और मध्य में श्रीगौर
सिंह प्रेमावेश में गर्जना कर रहे थे। जगत में शक्ति संचार करने के लिये।

क्रमे चलि चलि श्रीरेमुणा धामे गेला। गोपीनाथ देखि समे महानन्दी हैला।।116

चलते–चलते श्रीगौर श्रीरेमुणा धाम पहुँचे
श्रीगोपीनाथ खीरचोरा ठाकुर के दर्शन कर सब आनन्दित हुए।

नाचये गौरांग प्रेमे हञा मातोयारा। क्षणे कान्दे क्षणे धाय हइ दिशाहारा।117

श्रीगौरांग प्रेमोन्मत्त होकर नृत्य करने लगे।
कभी रोने लगते तो कभी इधर–उधर दौड़ने लगते।

नित्यानन्द प्रभुर प्रेमवन्या उथलिल। आकर्षिया सर्वजीवे ताहा डुबाइल।।118

श्रीनित्यानन्द प्रभु की प्रेमवन्या में भी उफान आया,
समस्त जीवोंको आकर्षित कर उन्होंने उसमें डुबाया।

तबे साक्षी गोपाले करिया दरशन। उत्तरिला गौरचन्द्र श्रीपुरुषोत्तम।।119

तब साक्षी–गोपाल श्रीविग्रह के प्रीतिपूर्वक दर्शन कर
श्रीगौरचन्द्र श्रीजगन्नाथपुरी आ पहुँचे।

जगन्नाथे देखि महाभाव उपजिल। कभु कान्दे कभु हासे जैछे मातोयाल।120

श्रीजगन्नाथ दर्शन करते ही इनमें महाभाव उछल पड़ा। कभी रोते तो कभी
हंसते पागलों की सी अवस्था में श्रीजगन्नाथ को आलिंगन करने दौड़े।

तबे गोरा प्रेमावेशे हइला मूर्च्छित। बहुक्षणे बाह्य स्फूर्त्ति रहिल किन्चित।।121

श्रीगौर प्रेमावेश में मूर्च्छित होकर मन्दिर में गिर पड़े।
बहुत देर तक उन्हें बाहर की सुध–बुध न लौटी।

ताँहा सार्वभौम भट्टाचार्य विज्ञतम। पण्डितेर शिखामणि वृहस्पति सम।।122

वहाँ मन्दिर में श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य खड़े थे,
जो परम विद्वान्, पं० शिरोमणि, बृहस्पति के समान थे।

तिंहो गौर अंगे देखि दिव्य महाभाव। कहे एइजन महापुरुष सम्भव।।123

वह श्रीगौर–शरीर में दिव्य महाभाव के विकार देखकर सोचने लगे कि यह अति दिव्य लक्षण तो किसी महापुरुष में सम्भव होते हैं।

तबे श्रीगौरांगे निज गृहे लञा गेला। नित्यानन्द आदि आसि ताहाञि मिलिला।124

श्रीभट्टाचार्य फिर श्रीगौरांग को अपने घर उठवाकर ले गये। श्रीनित्यानन्द आदि सब साथी उन्हें खोजते–खोजते वहां ही आकर बाद में मिले।

गौरे बेड़ि सभे करे नाम संकीर्तन। हरि बलि उठि गौरा करये नर्त्तन।125

श्रीगौरहरि को चारों ओर से घेरकर उन्होंने श्रीहरिनाम संकीर्तन आरम्भ किया। तब हरि–हरि बोलकर श्रीगौरांग उठ खड़े हुए और नृत्य–गान करने लगे।

तबे भट्ट श्री महाप्रसाद आनाइला। यतने चैतन्ये गणसह भुन्जाइला।।126

तब श्रीभट्टाचार्य ने श्रीमहाप्रसाद मंगवाया और
आग्रहपूर्वक भक्तों सहित श्रीचैतन्यदेव को खिलाया।

दिन कत परे गौरेर विभूति प्रकाश। देखि भट्ट मने हैल भक्तिर उल्लास।।127

कुछ दिनों बाद श्रीगौरांग का ऐश्वर्य प्रकाशित हुआ,
देखकर श्रीसार्वभौम में भक्ति–आनन्द आविर्भूत हुआ।

पूर्वे सार्वभौम छिल शुष्क ज्ञानीचर। गौर स्पर्शमणि गुणे हैला भक्तवर।।128

पहले श्रीसार्वभौम शुष्क ज्ञानानुयायी थे, किन्तु फिर गौर स्पर्शमणि के गुणों व उनकी कृपा से शुद्धभक्ति पाकर भक्तप्रवर बन गये।

तबे गौर दक्षिणेर तीर्थादि भ्रमिला। ताहे राय–रामानन्देर सहित मिलिला।129

उसके बाद श्रीगौरांग ने दक्षिण देश के तीर्थों की यात्रा की।
वहां इनका रामानन्द सह मिलन हुआ।

भक्ति शास्त्रेर सुसिद्धान्ते राय पटुतर। जारे मोर प्रभु कहे कृष्ण परिकर।130

भक्तिशास्त्रों के सुसिद्धान्त ज्ञान में राय रामानन्द अति चतुर थे। उन्हें मेरे प्रभु श्रीअद्वैत श्रीकृष्ण परिकर (विशाखा–सखी) कहा करते थे।

रामानन्द वक्ता ताँहा श्रीचैतन्य श्रोता। अमानुषि भाव सेइ भक्तमन–माता।।131

श्रीगोदावरी के तट पर सत्संग हुआ जहां राय रामानन्द तो वक्ता थे

और श्रोता थे श्रीचैतन्यचन्द्र। श्रीगौर प्रभु के अलौकिक भाव देखकर राय प्रेम में मतवाला हो उठा और गौर ने नीलाचल में आने की आज्ञा दी कहा हम पूरा जीवन सत्संग में बितायेंगे।

तबे गौर पुन श्रीपुरुषोत्तमे आइला। जगन्नाथ देखि शुद्ध प्रेमे मग्न हैला।।132

वहां से श्रीगौर फिर पुरी आये श्रीजगन्नाथ दर्शनकर शुद्धप्रेम में मग्न रहने लगे।

राजा प्रताप रुद्रे कृपा कैला भक्ताभासे। भक्तवान्छा पुराइते ऐश्वर्य प्रकाशे।।133

राजा प्रताप रूद्र को भक्त मान कर श्रीमहाप्रभु ने उस पर कृपा की। भक्त की वान्छा पूर्ण करने के लिये भक्तवत्सल प्रभु ने अपना ऐश्वर्य प्रकट किया।

षड़भुज हैला गोरा दयार नाञि ओर। सेरूप निरखि भक्त प्रेमे हैला भोर।।134

दया–पारावार श्रीगौरांग ने षड़भुज रूप के दर्शन कराये। उनकी दो भुजाओं में मुरली. दो भुजाओं में धनुष–बाण व दो भुजाओं में दण्ड–कमण्डल थे। उस रूप को देख सब भक्त प्रेम में विभोर हो गये। त्रेता में राम, द्वापर में श्याम, कलियुग में गौर नाम।

सेई कृपामृत गंगा केह भाग्ये पिला। केह ताहे ना पाइया हाहाकार कैला।।135

वह दर्शनरूपी कृपामृत गंगा किन्हीं भाग्यवानों ने ही पी। दुर्भाग्यवश जिन्होंने पान नहीं किया, वे हाहाकार करते वंचित रह गये।

स्वयं भगवानेर हय दयामृत मूर्ति। निश्चय भक्तद्वारे ताँरे दयापाय स्फूर्ति।।136

स्वयं भगवान् दयामृत की मूर्त्ति हैं। भक्तों के माध्यम से उनकी वह दया निश्चित स्फुरित होती है।

तबे जगन्नाथेर रथ–यात्रा उपलक्षे। गौरांग देखिते प्रभु चलिला श्रीक्षेत्रे।।137

तब श्रीजगन्नाथ के रथयात्रा उत्सव के उपलक्ष्य में श्रीअद्वैत श्रीगौरांग के दर्शन करने श्रीक्षेत्र गये।

आचार्येर संगे भक्त चले अगणन। सेइ संगे कृष्णमिश्र जाइते कैला मन।।138

आचार्य के साथ असंख्य भक्त भी चल दिये। उनके साथ श्रीकृष्णमिश्र ने भी चलने की उत्कण्ठा की।

श्रीअद्वैत कहे पथ अति सुदुर्गम। एबे जाइवार तोहार नाहि प्रयोजन।।139

श्रीअद्वैत ने कहा– बेटा! मार्ग अति दुर्गम है, इस बार तुम्हारे जाने का प्रयोजन नहीं है।

कृष्णमिश्र कहे असार संसार। श्रीगौरांगेर पदाश्रय सेइ सत्य सार।।140

श्रीकृष्ण मिश्र ने कहा– पिताजी! यह संसार असार है,

श्रीगौरांग का पदाश्रय लेना ही सत्य सार है।

यद्यपि नित्य वैराग्य कृष्णमिश्रेर हय। गौरांग ध्यानेते हैल वैराग्यातिशय।।141

श्रीकृष्ण मिश्र में सदा वैराग्य विद्यमान था तथापि अब श्रीगौरांग के ध्यान में उनका वैराग्य अतिशय बढ़ गया और तीव्र दर्शनोत्कण्ठा बढ़ गई।

ताहा जानि सीतामाता कृष्णदासे कय। श्रीक्षेत्रे जाइते तोर ना हइल समय।।142

यह जानकर सीतामाता ने उनसे कहा–
श्रीक्षेत्र जाने का समय अभी तुम्हारा नहीं हुआ है।

शुन कृष्णमिश्र मातृवाक्य शिरे धर। गृहे रहि कृष्ण भज सर्व शुभ कर।।143

हे लालकृष्ण मिश्र माता के वचन माथे पर धारण करो और घर में ही रहकर सर्वमंगलकारी कृष्ण भजन करते रहो। यही तुम्हारे लिए श्रेयस्कर है।

तोर ज्येष्ठ अच्युतेर कुमार वैराग्य। कृष्ण आर पितृसेवाय तोरे मानि योग्य।।144

माता ने कहा– तेरे बड़े भाई अच्युत कुमार का वैराग्य आभासमात्र है। श्रीकृष्ण और पिता की सेवा के लिये मैं तुम्हें उससे अधिक योग्य मानती हूँ।

तोर भार्या श्रीविजया सह मन्त्र लह। कृष्ण सेवाय सर्वसिद्धि नाहिक संशय।।145

तुम अपनी स्त्री विजया के साथ मन्त्र दीक्षा ले लो, फिर तुम्हें कृष्ण सेवा से सर्वसिद्धि प्राप्त हो जायेगी। इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

एत कहि दोंहे लञा गंगातीरे गेला। आपनार सिद्ध मन्त्र दोहांकारे दिला।।146

इतना कहकर माता उन दोनों को गंगातट पर ले गयीं
और अपना सिद्ध मन्त्र उन दोनोंको प्रदान कीं।

नित्य सिद्ध कृष्णमन्त्र पाइया दम्पति। प्रेमानन्दे मातृपदे कैला नति स्तुति।।147

नित्य सिद्ध कृष्ण मंत्र को पाकर दम्पती ने कृतार्थ होकर
प्रेमानन्द पूर्वक माता की नति–स्तुति की।

संक्षेपे कहिनु एइ गूढ़ विवरण। तबे श्रीअद्वैत कैला श्रीक्षेत्रे गमन।।148

मैंने इस गूढ़ विवरण को संक्षेप से कहा है। तब श्रीअद्वैतचन्द्र सरित भांति प्रेमसागररूपी गौरचन्द्र से मिलन तीव्र उत्कण्ठा लिए श्रीक्षेत्र चले गये।

निजगण पाञा गौर महानन्दी हैला। महासंकीर्तन करि नगर भ्रमिला।।149

अपने भक्तों से मिलकर श्रीगौरांग अति हर्षित हुए एवं महासंकीर्तन करते हुए नगर भ्रमण किया।

आगे आचार्येर दिला करिया सम्मान। मध्ये गौर नित्यानन्द पिछे भक्त जान।।150

सम्मान करते हुए आगे श्रीअद्वैतजी को रखा, बीच में श्रीगौरचन्द्र और फिर श्रीनित्यानन्द थे। उनके पीछे सब भक्तजन संकीर्तन करते जा रहे थे।

हईल अद्‌भुत नृत्य लोके चमत्कार। कीर्तन माधुर्य मन डुबिल सभार।।151

अद्‌भुत नृत्यगान को देखकर पुरीवासी लोग चमत्कृत हो उठे और सबका मन इस संकीर्तन रासबिहारी गौरचन्द्र की माधुरी में डूब गया।

केह हासे केह कान्दे प्रेमेर स्वभावे। केह मेघसम गर्जे हरे कृष्णरवे।।152

प्रेमावेश के कारण कोई हंसता, तो कोई रोता था।
कोई हरे कृष्ण ध्वनि कर मेघ की भांति गर्जता था।

बहु क्षणे हरि संकीर्तन निवर्त्तिया। स्नाने गेला महाप्रभु भक्तगण लञा।।153

महाप्रभु अनेक देर बाद संकीर्तन से निवृत्त हो भक्तों के साथ स्नान करने गये।

श्रीअद्वैत नित्यानन्देर कौतुक बाढ़िल। शुद्ध भक्तगण लञा जलक्रीड़ा कैल।।154

श्रीअद्वैत एवं श्रीनित्यानन्द में आनन्द उमड़ उठा,
तब वे शुद्ध भक्तों के साथ जल क्रीड़ा करने लगे।

प्रेमावेशे गोरा अद्वैतेरे शोयाइला। मोर प्रभु जले शुति भासिते लागिला।।155

प्रेमावेश में श्रीगौरांग ने श्रीअद्वैत को जल पर सुला दिया
और प्रभु जल में सोते–सोते तैरने लगे।

किवा भावावेशे गौर उठे तान बुके। महाप्रभु लञा प्रभु भासे अनुरागे।।156

किसी अनिर्वचनीय भाव में श्रीगौर उनके वक्षस्थल पर चढ़कर बैठ गये। अति महाविष्णुरूपी महाप्रभु को लेकर ही श्रीअद्वैत जल में प्रेमपूर्वक तैरने लगे।

किवा शक्ति प्रकाशिला नाहि पाङ ओर। देखि भक्तगण हैला प्रेमानन्दे भोर।।157

कैसी शक्ति प्रभु ने प्रकाशित की मैं नहीं जान पाया।
लीला को देखकर भक्तगण प्रेमानन्द में विभोर हो गये।

जैछे महाविष्णु शुइला अनन्त शय्याय। तैछे अद्वैतांगशय्याय गौर लीलोदय।।158

अनन्त शय्या पर महाविष्णु शयन करते हैं,
उसीप्रकार अद्वैत शय्या पर श्रीगौर विराजमानहोके लीला किये।

अपूर्व दोंहार नरलीला प्रकटने। हरि हरि ध्वनि करे सर्व भक्तगणे।।159

दोनों की नरलीला का अद्‌भुत प्रकटन देखकर
सब भक्तगण हरि–हरि ध्वनि करने लगे।

हेनमते गौर करि शेषशायी लीला। गणसह आचार्येर निमन्त्रणे गेला।।160

इसप्रकार श्रीगौर शेषशायी लीला करने के पश्चात् भक्तों के साथ श्रीअद्वैतचन्द्र के निवासधाम पर निमन्त्रण में अत्यन्त हर्षपूर्वक चले गये।

स्वगण–सह कृष्णचैतन्य करिला भोजन। सीतानाथ प्रेमावेशे करये स्तवन।।161

अपने भक्तों के साथ श्रीकृष्णचैतन्य ने महाप्रसाद ग्रहण किया।
श्रीसीतानाथ हर्षित होकर प्रेमावेश में उनकी स्तुति करने लगे।

ए हेन अद्भुत लीला न देखिनु मुञि। देखिला प्रत्यक्षे महा भाग्यवन्त जेई।।162

ऐसी अद्भुत लीलाएं मैंने नहीं देखीं,
जो महा भाग्यवान थे, उन्होंने प्रत्यक्ष देखा है।

श्रीपाद नित्यानन्द प्रभुर मुखाब्ज निःसृत। एइ लीला रसामृत पिया हैनु पूत।।163

श्रीपाद नित्यानन्द प्रभु के मुखकमल से इस
लीला रसामृत को मैं पान कर पावन हुआ।

चैतन्याद्वैतेर लीलार नाहिक गणन। सूत्र लव मात्र मुञि करिनु लिखन।।164

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत की लीलाओं की गणना नहीं
हो सकती। मैंने लवमात्र सूत्र ही उनको लिखा है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।165

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के श्रीचरणसेवाभिलाषा करते हुए
श्रीईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश रचना करते हैं।

षोड़श अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय हो, जय हो। श्रीसीतानाथ की जय हो।
श्रीनित्यानन्द राम की भक्तगण के सहित जय हो।

एकदिन श्रीकृष्ण चैतन्य भक्तगणे। वृन्दावने जाङ–बलि कहे संगोपने।।02

एकदिन श्रीकृष्णचैतन्य भक्तगणों से एकान्त में बोले कि– मैं वृन्दावन जाऊँगा।

भक्तगण कहे एइ हय वर्षाकाल। एबे ब्रजधामे जाओया नाहि देखि भाल।03

विरहकातर भक्तों ने कहा– प्रभु! अभी तो वर्षाकाल है,
ब्रजधाम में जाना उचित नहीं लगता।

साधु वैष्णवेर वाक्य महादेव हय। ताहार लंघने सर्वशुभ करे क्षय।।04

साधुवैष्णव के वचन तो महादेव के समान होते हैं,
उनका उल्लंघन करने में सर्व मंगल क्षय होते हैं।

एत कहि गौर भक्त वाक्य स्वीकारिला। निजगण लञा गौर देशेर चलिला।।05

इसप्रकार कहकर श्रीगौर ने भक्तों के वचन स्वीकार कर लिये।
भक्तों को लेकर प्रभु गौड़देश चले आये।

शांतिपुरे आचार्येर घरे उत्तरिला। गौर देखि प्रभु प्रेमे विह्वल हइला।।06

प्रभु शान्तिपुर में आकर श्रीअद्वैत के घर आये।
श्रीगौरहरि को देखकर वे प्रेम विह्वल हो उठे।

हुंकार करये क्षणे उद्दण्ड नर्त्तन। अद्य कि सौभाग्य मोर कहे अनुक्षण।।07

हुंकार करते हुए कुछ देर उद्दण्ड नृत्य किया और आज मेरे कैसे सौभाग्य जागे जो मेरे घर गौरसूर्य प्रकटे। ऐसा बार–बार कहने लगे।

सीतामातार प्रेमेर कथा कहेन ना जाय। नेत्र गंगाजले गोरार सर्वांग धोयाय।।08

श्रीसीता माता के प्रेम की कथा तो अकथनीय है। नेत्रों के गंगाजल से उसने श्रीगौर के सब अंगों को अभिषिक्त कर दिया।

सीतार नन्दनगण महा तेजोवान। तार मध्ये भक्तियोगे ए तिन प्रधान।।09

श्रीसीता के पुत्र सब महा तेजस्वी थे, उन सबमें–

श्रीअच्युत कृष्णमिश्र श्रीगोपाल दास। एइ तिनेर सुचरित्रे प्रभुर उल्लास।।10

श्रीअच्युत, श्रीकृष्णमिश्र एवं श्रीगोपाल दास ये तीन प्रधान थे। इन तीनों के सदाचार–चरित्र को देखकर श्रीअद्वैत बड़े हर्षित होते थे।

इहाँ सभार हय नित्य गौरगत–प्राण। गौरांगे देखिया प्रेमामृते कैला स्नान।11

ये सब नित्य गौर–गत प्राण थे। गौरांग को देख–सब प्रेमामृत में स्नात हो गये।

उच्च स्वरे नाम गाय गन्धर्व जिनिया। कभु प्रेमे मत्त हञा बुलेन गर्जिया।।12

गन्धर्वों को पराजित करते हुए वे उच्च स्वर से श्रीनाम गान करने लगे। कभी प्रेमोन्मत्त होकर गर्जना करते हुए घूमने लगते।

बाहु पासरिया नाचे गौर नित्यानन्द। महा संकीर्तन करे जत भक्त वृन्द।।13

श्रीगौर–नित्यानन्द भुजाऐं उठाकर नाचने लगे, सब भक्तगण मिलकर उनके साथ हरे कृष्ण महामंत्र नाम का अत्यन्त प्रीतिपूर्वक संकीर्तन करने लगे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम...

सुदर्शन गंगामृते मुञि स्नान कैलों। कोटि भाग्योदये सेवाकार्ये व्रती हैलों।14

उनके सुन्दर दर्शन रूपी गंगा में मैंने महास्नान किया था। सेवाकार्य लेने वाले के समान मेरे सौभाग्य कोटि–कोटि भाग्य उदित हुए थे।

सीतामाता पाक कैला अमृत निन्दिया। तिन ठाकुर सेवा कैला भक्तगण लैया।।15

सीता माता ने अमृत–विनिन्दित रसोई तैयार की।

भक्तगणों के साथ तीनों ठाकुरों की सेवा की।

कि आनन्द हैल ताहा कहने ना जाय। जार महाभाग्य सेई महाप्रसाद पाय।।16

जो आनन्द हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। जिसके महाभाग्य थे, उसने उस समय का महाप्रसाद प्राप्त कर अपना जीवन धन्य किया।

श्रीगौरांगेर आगमन शुभ वार्त्ता पाञा। शांतिपुरे शचीमाता आइला हर्ष हञा।।17

श्रीगौरांग के शुभागमन का समाचार पाकर शची माता भी शान्तिपुर में आ पहुंची। मातृवत्सल प्रभु ने उनकी वन्दना की शची माता को अति हर्ष हुआ।

मातार दर्शने गोरा दण्डवत् कैला। स्नेह भरे शची देवी ताने कोले लैला।।18

माता को आया देखकर श्रीगौरांग ने उनको दण्डवत् किया। स्नेही माता ने श्रीगौर को गोदी में ले लिया।

जैछे कुरुक्षेत्रे कृष्ण यशोदार कोले। सेइ भावोद्गम हैल भक्त हृतकमले।।19

जैसे कुरुक्षेत्र में माता यशोदा ने श्रीकृष्ण को गोद में भर लिया था। उस समय भक्तों के हृदय कमल में वही भाव जाग उठा।

हेन लीला देखि केवा स्थिर हैते पारे। सर्वचित्त आकर्षिला प्रेमसिन्धु तीरे।20

ऐसी लीला को देखकर भला कोई स्थिर रह सकता है? सबका चित्त प्रेमसिन्धु की ओर खिंचा गया।

तबे शची विविध व्यंजन कैला पाक। श्रीगौरांगेर प्रिय जत आर बातूया शाक।।21

तब माता शची ने अनेक प्रकार के श्रीमहाप्रभु के प्रिय व्यन्जन तैयार किये, बथुआ का शाक भी।

लाउ कलकी आर पायस पिठा पाना। अमृत निन्दिया सभ नाहिक उपमा।।22

लौकी, खीर, पिठापाना आदि जो जो व्यंजन श्रीगौर को प्रिय थे माता ने तैयार किये। अमृत से वे बढ़कर अलौकिक स्वादिष्ट थे, उनकी उपमा नहीं है।

भोजने वसिला तबे श्रीकृष्णचैतन्य। दक्षिणे निताइ वामे श्रीअद्वैतधन्य।।23

फिर भोजन के लिए श्रीकृष्णचैतन्य बैठे, उनकी दक्षिण ओर श्रीनित्यानन्द और बायीं में श्रीअद्वैत बैठे। तीनों प्रभु एक ही तत्व हैं।

महाप्रभु कहे शाक सर्वोत्तम हय। आर किछु पाइले भाल नित्यानन्द कय।24

महाप्रभु ने कहा– शाक सबसे अच्छा बना है। नित्यानन्द प्रभु ने व्यंग करते हुए कहा– और भी कुछ मिल जाता तो अच्छा होता।

गौर प्रभु हासि कहे प्रभु नित्यानन्दे। गंगा सम तुया प्रीति हय नीचवृन्दे।।25

महाप्रभु ने हंसकर श्रीनित्यानन्द से कहा– गंगा के समान आपकी

प्रीति भी नीचे की वस्तुओं पर रहती है अर्थात् आप पतित पावन हैं।

नित्यानन्द कहे तव शिर ऊर्ध्व मुखे। ऊर्ध्व वस्तु बिना कैछे नीच वस्तु देखे।।26

श्रीनित्यानन्द ने कहा– आपका मस्तक तो ऊर्ध्वमुख रहता है,
सर्वोत्तम वस्तु के बिना नीचे की वस्तु को आप कैसे देखें।

तबे तिन ठाकुरेर हइल उच्च हास। महा भाग्यवन्ते समझिला तदाभास।।27

तब तीनों ठाकुर जोर से हंस पड़े।
महाभाग्यवान भक्तों ने उन वचनों के रहस्य को समझ लिया।

क्रमेञि बाढ़ाय माता सेवार सौष्ठव। प्रतिदिने–प्रभुर घरे हैल महोत्सव।।28

क्रमशः माता का सेवा–सौष्ठव दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही गया श्रीअद्वैतचन्द्र के घर महोत्सव होने लगा।

दिन कत परे श्रीचैतन्य महेश्वर। व्रजे जाइवाङ बलि चलिला सत्वर।।29

कुछ दिनों के बाद श्रीचैतन्य महेश्वर ने कहा– मैं ब्रज में जा रहा हूँ। कृपया सब मुझे आज्ञा दें। इतना कहकर वे वहां से शीघ्र चल दिये। भक्तों में क्रन्दन व हाहाकार मच गया।

क्रमे रामकेलि ग्रामे करिला गमन। रूप–सनातन सह हइल मिलन।।30

वहां से वे रामकेलि ग्राम गये वहां श्रीरूप,
श्रीसनातन के साथ उनका प्रेममय मिलन हुआ।

श्रीरूप आर सनातन सर्वविद्यानिधि। राजमन्त्री छिला वृहस्पति समबुद्धि।।31

श्रीश्रीरूप–सनातन समस्त विद्याओं के निधि थे।
पहले राजमन्त्री थे। उनकी बुद्धि बृहस्पति सम थी।

महाप्रभु दोंहार प्रति बड़ कृपा कैला। विषय सुख छाड़ि दोंहे निर्मत्सर हैला।।32

महाप्रभु ने उन दोनों पर अति कृपा की। दोनों बन्धु भौतिक विषयों को त्याग कर मत्सर रहित हो गये।

श्रीचैतन्य कहे जाइवाङ वृन्दावन। निभृते निषेध करे रूप–सनातन।।33

श्रीमहाप्रभु ने जब उनसे कहा कि मैं वृन्दावन जाऊँगा, तो श्रीश्रीरूप–सनातन ने उन्हें एकान्त में वृन्दावन जाने के लिए निषेध किया।

दोंहे कहे शुन दयासिन्धु महाप्रभु। बहुजन संगे लञा ना जाइवा कभु।।34

उन्होंने कहा– हे दयासिन्धो महाप्रभु! अनेक लोगों को
साथ लेकर धाम में कभी नहीं जाना चाहिये।

भक्तवाक्ये श्रीगौरांग चलिला दक्षिणे। शांतिपुरे उपनीत हैला कत दिने।।35

भक्तों के वचन मानकर भक्त वत्सल महाप्रभु फिर दक्षिण देश को ही लौट आये
और कुछ दिनों बाद वृन्दावन जाते समय पथ में शांतिपुर पधारे।

गौर समागमे प्रेमानन्द उथलिल। मोर प्रभु संकीर्तन महोत्सव कैल।।36

श्रीगौरचन्द्र के दर्शनानन्द से प्रेमानन्द उछल पड़ा,
श्रीअद्वैतशंकर ने महा संकीर्तन महोत्सव मनाया।

तहि गोरा शचीमातार दरशन पाञा। दक्षिणे चलिला व्रजे जाओयार आज्ञा लञा37

वहां श्रीगौरचन्द्र ने माता शची के फिर दर्शन किये। वहां से ब्रज जाने की आज्ञा
लेकर दक्षिण दिशा चले गये। भक्तगण पुनः विरह वेदना से व्याकुल हुए।

पथे रघुनाथ दास सह सम्मिलन। जाहार भजने चमत्कार साधुगण।।38

रास्ते में श्रीरघुनाथदास से मिलाप हुआ, जिनके भजन को देख
सुनकर भक्तों को चमत्कार होता है। श्रीरघुनाथदासगोस्वामी की भजनस्थली
श्रीराधाकुण्ड तट पर आज भी विद्यमान है।

गौर–चन्दन कल्पवृक्षेर सद्‌गंध हिलोले। जार विषय–विष क्षय हैल अवहेले।।39

श्रीगौर चन्दन कल्पवृक्ष की सौरभ हिलोरों में गौरानुरागी श्रीरघुनाथ दास का
विषय सुख सहज में विनष्ट होकर मलवत्त हो गया।

जाहार वैराग्ये महाप्रभु प्रशंसिल। से तत्त्व वर्णित हय मोहर नहिल।।40

उनके वैराग्य की तो स्वयं श्रीमहाप्रभु प्रशंसा करते थे।
वह तत्त्व मुझसे वर्णित नहीं हो सकता।

एकदिन श्रीचैतन्य क्षेत्र धामे गेला। जगन्नाथे देखि प्रेम रसार्द्र हइला।।41

एकदिन श्रीचैतन्य पुरीधाम में जब श्रीजगन्नाथजी के दर्शन कर रहे थे,
उनका मन प्रेमरस में भीग गया।

गौरे देखि भक्तगण आनन्दे मातिला। नाम संकीर्तन महा महोत्सव कैला।42

श्रीगौरहरि को देखकर भक्तगण आनन्द में उन्मत्त हो उठे। उन्होंने नाम
संकीर्तन का महान् महोत्सव मनाया। जिसे सुन पशु–पक्षी भी तर गये।

दिन कत परे श्रीमान गौर विश्वम्भर। वृन्दावन जाइते दृढ़ करिला अन्तर।43

फिर कुछ दिन बाद श्रीगौर विश्वम्भर ने मन में
वृन्दावन जाने का दृढ़ सकंल्प कर लिया।

एकदिन गूढ़ भावे रजनीर शेषे। व्रजधामे चले गोरा महाभावावेशे।।44

एकदिन गूढ़ भावावेश में शेष रात्रि में श्रीगौरांग
महाभावाविष्ट होकर ब्रजधाम को चल दिये।

सुप्रशस्त पथ छाड़ि उपपथे जाय। झारिखण्डेर पथे चले लोकेर विस्मय।।45

प्रसिद्ध मार्ग को त्यागकर वे झारिखण्ड के घोर जंगल के मार्ग से चल दिये।

उनकी निर्भीकता को देखकर लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ।

उच्चकरि हरिनाम संकीर्तन करे। गौरे देखि पशुगणेर हिंसा गेल दूरे।।46

उच्च स्वर में आप नाम संकीर्तन करते जा रहे थे। उन्हें देखकर व्याघ्रादि

पशुओं का हिंसा भाव भी नष्ट हो गया और वे भी नाचने लगे।

महाप्रभु कहे अरे वन पशुगण। कृष्ण बलि कान्द समार छिण्डिवे बन्धन।।47

महाप्रभु कहने लगे– ओ मेरे प्यारे वनपशुगण!

तुम "कृष्ण–कृष्ण" कहकर रोवो, तुम्हारा सब बन्धन–पशु–योनि छूट जायेगी।

स्वयं भगवानेर आज्ञा अमोघ निश्चय। प्रेमे पशुगण कृष्ण बलिया कान्दय।।48

स्वयं भगवान् की आज्ञा तो निश्चय ही रामबाण की तरह अमोघ होती है।

कृपारूपी आज्ञा पाकर पशुगण प्रेम में "कृष्ण–कृष्ण" बोल कर रोने लगे।

निबिड़कानने हैल महामहोत्सव। नाम बले मुक्त हैला पशुपक्षी सब।।49

घोर जंगल में महा महोत्सव होने लगा।

कृष्णनाम उच्चारण कर वन के सब पशु–पक्षीगण मुक्त हुये।

कि कहिव श्रीचैतन्येर दयार महत्व। हरिनामे स्थावरादि हैला जीवन्मुक्त।।50

श्रीचैतन्यमहाप्रभु की दया की महिमा कहां तक कही जाये?

उन्होंने श्रीहरिनाम से स्थावरादिक को भी जीवन्मुक्त कर दिया।

श्रीकृष्णचैतन्येर लीला महारत्नाकर। चतुर्मुख आदि अन्त ना पाय इहार।।51

श्रीकृष्णचैतन्यदेव की लीला तो महा समुद्रवत अपार है,

ब्रह्मादि भी इसका पार नहीं पा सकते हैं।

मुञि क्षुद्रतम् जीव किछुइ न जानि। मनेर आनन्दे क्षुद्र सूत्रमात्र गणि।।52

मैं तो क्षुद्रतम जीव कुछ भी नहीं जानता हूँ, केवल अपने मन–हर्ष के लिए छोटा

सा सूत्र गणन किया। ईशाननागर जी ने दीनतापूर्वक ये वचन लिखें हैं।

अज्ञेर विश्वास इथे ना हय किन्चित। विज्ञेर गोचर इहा जानिह निश्चित।।53

मूर्ख और नास्तिक पुरुष का इसमें विश्वास नहीं हो सकता, किन्तु जो बुद्धिमान

और भगवद् भक्त हैं, उनको ये लीलाएं निश्चय गोचर होती हैं।

स्वयं भगवानेर लीला कथा बहु दूरे। भक्तेर दिव्यशक्ति भाग्य प्रत्यक्षे नेहारे।।54

स्वयं भगवान् की लीला की बात तो दूर रही,

भक्त की दिव्यशक्ति भी बड़े भाग्यों से गोचर होती है।

क्रमे महाप्रभु चले नाम प्रचारिया। पथे बहु वैष्णव कैल शक्ति संचारिया।।55

क्रमशः श्रीमहाप्रभु नाम प्रचार करते हुए जा रहे थे। मार्ग में अनेक व्यक्तियों में अपनी शक्ति का संचार कर उन्हें परम वैष्णव बना दिया।

दिन कत परे गौर काशीधामे गेला। मणिकर्णिकार घाटे गंगास्नान कैला।।56

कई दिनों में महाप्रभु काशीमें पहुँचे और मणिकर्णिका घाट पर गंगास्नान किया।

ताहाञि तपन मिश्र देखि श्रीगौरांगे। महानन्दी हञा प्रणमिल अष्ट अंगे।।57

वहां तपनमिश्र ने श्रीगौरांग के मंगल दर्शन किये। महानन्दित होकर उसने प्रभु को साष्टांग प्रणाम किया। प्रभु ने बहुत ही स्नेह किया।

निज गृह लैया गेला करिया मिनति। तहि गौरचन्द्र दिन कत कैला स्थिति।।58

अति विनय कर वह प्रभु को अपने घर ले गया।
वहां श्रीमहाप्रभु ने कुछ दिन निवास किया।

तबे गोरा बिन्दुमाधव दर्शन करिया। मनोहर नृत्य करे ऊर्ध्वबाहु हञा।।59

तब श्रीगौरहरि ने श्रीबिन्दुमाधव के दर्शन किये और प्रभु के सामने मनोहर नृत्य किया दोनों आजानुलम्बित, सुन्दर भुजाएं ऊंची उठाकर।

प्रेम सम्वरिया करे दण्डवत प्रणति। अनन्त समाने करे बहुविधा स्तुति।।60

प्रेम को सम्वरण कर उन्होंने श्रीबिन्दुमाधव को दण्डवत् प्रणाम किया और उनकी श्रीशेष जी के समान अनेकविध स्तुति गान की।

विश्वेश्वर देखि गौरार प्रेम उथलिल। मुखे मात्र हरिहर हरिहर बोले।।61

वहां श्रीविश्वेश्वर भगवान् के दर्शन करते श्रीगौर का प्रेम हिलोल मारने लगा। वे मुख से केवल "हरिहर–हरिहर" कह रहे थे।

प्रणमिया शिवे कैला दिव्य स्तुति पाठ। ब्रह्मा जैछे चतुर्मुखे करे वेद पाठ।62

प्रणाम कर महाप्रभु ने श्रीशिव की दिव्य स्तुति की
जैसे ब्रह्मा जी चारों मुख से वेद पाठ करते हैं।

अलौकिक प्रेम गोरार अलौकिक मूर्त्ति। देखे सबे कहे एइ साधक चक्रवर्ती।।63

श्रीगौरचन्द्र की अलौकिक मूर्त्ति और अलौकिक प्रेम देखकर सब कहते थे– ये महासाधक–शिरोमणि अथवा ये साक्षात् श्रीकृष्ण ही हैं।

तबे श्रीचैतन्य अन्नपूर्णारे देखिया। पौर्णमासी बलि डाके प्रेमेते मातिया।।64

फिर श्रीचैतन्य ने अन्नपूर्णा के दर्शन किये और प्रेम में उसे पौर्णमासी नाम से पुकारने लगे।

क्षणे हासे क्षणे कान्दे क्षणे मूर्च्छा जाय। क्षणेक हुंकार करि नाचिया बेड़ाय।।65

कभी हंसते कभी रोते और कभी मूर्च्छित हो जाते,

कभी हुंकार करते हुए नाचते हुए घूमने लगते।

देखि काशीवासीर मने लागे चमत्कार। केह केह कहे इहों देव अवतार।।66

इन्हें देखकर काशी वासियों को बड़ा चमत्कार होने लगा।

कोई कहने लगा, ये तो किसी देवता का अवतार है।

तबे मिश्र आपनार घरे लआ गेला। नाना उपहारे महाप्रभुर भोग दिला।।67

तब मिश्र महाप्रभु को अपने घर ले गया।

अनेक व्यंजन तैयार कर श्रीमहाप्रभु को भोग लगाया।

सबान्धवे महाप्रसाद करिला भोजन। तहि गोरा सह चन्द्रशेखर मिलन।।68

तत्पश्चात् श्रीतपन मिश्र ने सपरिवार महाप्रसाद ग्रहण किया।

वहां श्रीचन्द्रशेखर महाप्रभु से मिले।

तबे श्रीगौरांग आदिकेशव विग्रह। दरशन करि शुद्ध प्रेमे हैला मोह।।69

फिर श्रीगौरांग ने आदिकेशव भगवान् के दर्शन किये और

दर्शन करते ही शुद्ध प्रेम में मुग्ध हो गये।

हेन मते काशीधामे महोत्सव करि। ताँहा हैते श्रीप्रयागे गेला गौरहरि।।70

इसप्रकार काशी में अनेक दिन महोत्सव मनाकर श्रीगौर हरि प्रयाग चले गये।

त्रिवेणी देखिया हैला प्रेमेते विह्वल। कलिन्द–नन्दिनी बुलि डाकये केवल।।71

महाप्रभु त्रिवेणी को देखकर प्रेम में विह्वल हो उठे।

वे कलिन्द नन्दिनी बार–बार पुकारने लगे।

अहो भाग्य यमुनार पाइनु दर्शन। हाहाकार करि जले हैल उत्पतन।।72

मेरे अहो भाग्य हैं कि मैंने श्रीयमुना के दर्शन प्राप्त किये हैं।

इसप्रकार हा–हाकार करते हुए त्रिवेणी के जल में कूद पड़े।

दिन व्यापी गोरा यमुनाय डुबि रैला। दया करि सन्ध्याकाले भासिया उठिला।।73

पूरे दिन तक श्रीगौर जल में डूबे रहे।

फिर दयापूर्वक सन्ध्या के समय अपने आप बाहर आये।

नौकाय उठाइला ताँरे कैवर्त्तेर गण। नावे वसि गोरा करे हरि संकीर्तन।।74

केवल लोग श्रीमहाप्रभु को नौका पर चढ़ा ले गये,

वहां भी श्रीगौर भगवान बैठकर संकीर्तन करने लगे।

सेई सुमधुर रवे सभे मोह गेला। अति हरषित गोरा तटेते आइला।।75

इनकी सुमधुर ध्वनिसे सब मोहित हो उठे। अतिहर्षित हो गौर किनारे पर आये।

आरात्रिक कालेते तबे शचीरनन्दन। माधव देखिया प्रेमे करये क्रन्दन।।76

आरतीके समय गौरचन्द्रने श्रीमाधवके दर्शन किये और प्रेममें क्रन्दन करने लगे।

ऊर्ध्वबाहु हआ गोरा छाड़ये हुंकार। भक्ति देहि भक्ति देहि बोले बार–बार।।77

ऊर्ध्वबाहु होकर श्रीगौर प्रेमहुंकार करने लगे और
भक्ति दो भक्ति दो ऐसा बारंबार प्रार्थना करने लगे।

करये अद्भुत नृत्य लोक अगोचर। गौरांग प्रेमवैचित्त्ये कान्दे चराचर।।78

लोगों ने कभी नहीं देखा ऐसा नृत्य जो श्रीगौर नर्तक करने लगे। श्रीगौरांग प्रेम–विचित्रता को देखकर चराचर चमत्कृत हो उठे।

बहुक्षणे गोरा प्रेम कैला सम्वरण। भीमगंगा देखि हैल कौतुकोद्दीपन।।79

अनेक समय बाद श्रीगौर ने प्रेम का सम्वरण किया। फिर भीमगंगा को देखकर श्रीगौर में कौतुक का उद्दीपन हो उठा।

तबे श्रीप्रयाग हैते चले वृन्दावन। पथे जीव निस्तारिला दिया प्रेमधन।।80

फिर प्रयाग से श्रीमहाप्रभु वृन्दावन की ओर चल पड़े। मार्ग में सबको दर्शनमात्र से प्रेमधन प्रदान करते हुए निस्तार कर दिया।

क्रमे गौर मथुरा मण्डले उत्तरिला। गोपीभावावेशे आत्मविस्मरण हैला।।81

चलते–चलते श्रीगौर मथुरा मण्डल में आ पहुँचे। फिर तो गोपी भावावेश में वे अपने को भूल ही गये।

काँहा कानु काँहा कानु काँहा तारे पाङ। विच्छेद अनले पोड़ा पराण जुड़ाङ।।82

"कहाँ है प्रिय कान्हा? मेरा प्राणधन कृष्ण कहाँ है? मैं उन्हें कहाँ पाऊँगी"?
विच्छेद की अग्नि में जलते हुए प्राणों को मैं तब ही शीतल करूँगी?

एई पद गाइते गाइते वाक्य स्तम्भ हैल। कांहा कांहा बुलि मात्र कान्दिते लागिल।।83

यही वचन कहते–कहते आपका गला रूंध गया,
और "कहाँ–कहाँ" ही केवल बोलते रोने लगे।

कान्हा तूने बांसुरी ऐसी बजाई।
मैं भागी चली आई मैं दौड़ी चली आई।
कहां छिपा है मुझको बता दे, मेरे नयनों को दरश करा दे।
कान्हा कान्हा मेरे मोहना। मैं दौड़ी चली आई...

एइ भावे गेल गोरार द्वितीय प्रहर। शेषे गड़ागड़ि जाय लोक भयंकर।।84

यह भाव दूसरे प्रहर तक इनमें बना रहा। फिर तो ये पछाड़ें खाने लगे, इनके विरह दुख को देखकर लोग चिन्तित हो उठे।

कतक्षण परे आत्मलीला भावावेशे। इति उति बुले गोरा कंसेर उद्देशे।।85

कुछ समय पश्चात् वे आत्म–लीला (कृष्ण–लीला) वीररस के भावावेश में कंस को मारने के उद्देश्य से इधर–उधर घूमते रहे।

सिंहनाद करे आर बाहु आस्फालन। लाफ दिया उठे ऊर्ध्वे के जाने तार मन।।86

हाथों को पटक–पटक कर सिंह की भांति गर्जना करते, बार–बार ऊपर की तरफ छलांग, लगाते कौन जाने इनके मनमें क्या बात थी।

हेन मते नाना भावेर हैल उद्दीपन। दिवस रजनी गेल जैछे एक क्षण।।87

इसप्रकार श्रीगौरांग सुन्दर में अनेक भावों का उद्दीपन हुआ एवं रात –दिन एक क्षण के समान होकर बीत गये कुछ पता ही नहीं चला।

तबे ध्रुव घाटे गेला शचीर नन्दन। ध्रुवेर चरित्र स्मरि करये क्रन्दन।।88

फिर श्रीसंन्यासी प्रभु ध्रुव घाट पर पहुँचे और
ध्रुवजी के चरित्र को याद करके रोने लगे।

लोकेर संघट्ट देखि प्रेम संकोचिला। स्नान करि श्रीविग्रह दरशन कैला।।89

वहां लोगों की भीड़ जमा हो गई जिसको देखकर अपने प्रेम को संवरण किया। स्नान कर आपने वहाँ श्रीविग्रह के दर्शन किये।

तबे गेला महाप्रभु श्रीधाम वृन्दावन। व्रज–प्राप्ति मात्र प्रेमे हैल अचेतन।।90

वहाँ से फिर श्रीमहाप्रभु श्रीधाम वृन्दावन गये।
ब्रजप्राप्ति मात्र से वे प्रेम में अचेतन हो गये।

बहुक्षणे श्रीगौरांग पाइया चेतन। एइ एइबलि हैल वाक्येर स्तम्भन।।91

अनेक देर बाद श्रीगौरकृष्ण को चेतना आयी और "यही है यही है" (कृष्ण का प्यारा धाम) कहते–कहते आपका गला रुंध गया।

चिन्मय रजे गड़ागड़ि करे अविश्रान्त। महाभावे डाके गोरा काँहा मोर कान्त।।92

चिन्मय रज में निरन्तर आप लोट–पोट होने लगे।
राधाभाव में बार–बार कहते– "मेरा कान्त कहाँ है?

काँहा कानु काँहा कानु डाके घने घन। दिवस रजनी करे कृष्ण अन्वेषण।93

जोर–जोर से "कहाँ है कान्त, कहाँ है कन्हैया"?
दिन रात बस श्रीकृष्ण का ही अन्वेषण करने लगे?

अविश्रान्त प्रेमधारा बहे दुनयने। कभु उच्च स्वरे काँदि बुले वने वने।।94

इनकी आँखों से निरन्तर प्रेमधारा बह रही थी।
वन–वन में उच्च स्वर में रोते–रोते डोलने लगे।

कभु उच्च हास्य करे प्रहर पर्यन्त। कभु सिंहनाद करे के बुझे तार अन्त।।95

कभी तो एक प्रहर तक जोर से हंसने लगते और कभी सिंहनाद करने लगते–
कौन जाने महामना महाप्रभु के मन की बात?

महाप्रभुर महाभाव देव अगोचर। सेई भाव वर्णिते शकति आछे कार।।96

श्रीमहाप्रभु का महाभाव तो देवताओं के लिए भी अगोचर है।
उसे वर्णन करने की शक्ति किसमें है?

व्रजेर पथे पथे गोरा करये भ्रमण। कृष्ण बोल कृष्ण बोल कहे अनुक्षण।।97

ब्रज के पथ–पथ में श्रीगौर भ्रमण करने लगे।
कृष्ण बोलो– कृष्ण बोलो"– यही प्रतिक्षण कहते रहते।

श्रीकृष्ण चैतन्येर आज्ञाय स्थावर जंगम। कृष्ण कृष्ण रव करे अनन्तेर सम।।98

परमकरूणामय श्रीमहाप्रभु की कृपारूपी आज्ञा पाकर स्थावर–जंगम सब अनन्त देव की तरह निरन्तर "कृष्ण–कृष्ण" ध्वनि करने लगते। जिससे उनको कृष्णप्रेम धन प्राप्त हो गया।

हेनकाले गौरे घेरि गाभी–वत्सगण। कृष्णगंध गौर अंग करये लेहन।।99

उस समय गौओं एवं बछड़ों ने श्रीगौरश्याम को चारों ओर से घेर लिया और इनके अंगों को श्रीकृष्ण की ही दिव्य अंग–गन्ध समझ कर चाटने लगे।

गौरांग अमृत गंगा करि आस्वादन। महाप्रेमावेशे गोकुल करये क्रन्दन।।100

श्रीगौरांग प्रेमामृत गंगारस धारा का आस्वादन कर
महाप्रेमावेश में गौएं रुदन करने लगीं।

देखि गोरा कहे व्रजेर विचिन्त्य गुण। व्रजवासीजने स्वाभाविक कृष्णप्रेम।।101

यह देखकर श्रीगौर ब्रज के अचिन्त्य गुणों का बखान करते हुए कहने लगे–
ब्रजवासियों में तो स्वाभाविक कृष्णप्रेम विद्यमान है।

(अतः दोष दर्शन नहीं करना चाहिये)

एत कहि कर–पद्म दिला समार गाय। गो–कुल करये नृत्य ब्रजगोपी प्राय।।102

इतना कहकर महाप्रभु ने गौओं के शरीर पर अपना हस्त कमल फेरा, तो वे गौयें उनके स्पर्श से धन्य होकर ब्रजगोपियों की भांति नाचने लगीं।

गोवत्सेर नृत्ये गोरार प्रेम उथलिल। हइ हइ ध्वनि करि नाचे जैछे मातोयाल।103

गोवत्सों के नृत्य को देखकर तो श्रीगौर का प्रेम उछल पड़ा।
वे "ही–ही" ध्वनि करके वे भी गोपियों की भांति नाचने लगे।

हेथा श्री अच्युतानन्द अद्वैतनन्दन। गोरा चाहि बुले जैछे उन्माद लक्षण।।104

इधर अद्वैतकुमार श्रीअच्युतानन्द श्रीगौर को ढूँढते हुए ऐसे घूमने लगे जैसे उन्मत्त व्यक्ति।

क्षणे कौँहा गोरा बुलि छाड़ये हुंकार। श्रीगौरांग बुलि कभु कान्दे अनिवार।।105

कभी तो "गौर कहाँ गये तुम प्रभु दर्शन देकर मेरी प्राण रक्षा करो" ऐसा कहकर हुंकार भरने लगे और कभी "श्रीगौरांग" कहकर निरन्तर रोने लगे।

क्षणे कहे कौँहा मोर प्राण गोराचाँद। गौरांग जानिला प्रिय–भक्तेर विषाद।।106

कभी कहते मेरे प्राण गौरचन्द्र कहाँ गये?
श्रीगौरांग प्रियभक्त के दुख को जान गये।

आय आय बलि गोरा कैला आकर्षण। योगी सम ताँहा आइला सीतार नन्दन।107

"आ जाओ, आ जाओ" कहकर– श्रीगौर करूणा सागर ने श्रीअच्युत को अपनी ओर खींचा तो योगियों की भांति झट श्रीअच्युत वृन्दावन आ पहुँचे।

शांतिपुर हैते ब्रज बहु दिनेर पथे। अच्युत आइला गोरार आज्ञा–पुष्परथे।108

शान्तिपुर से ब्रज आने का बहुत दिनों का रास्ता है, किन्तु श्रीअच्युत तो श्रीगौरप्यारे की आज्ञारूप पुष्परथ (पुष्पविमान) में बैठकर तुरन्त ब्रजमें आ पहुँचे।

कृष्ण, कृष्ण–भक्तेर अचिन्त्य शक्ति हय। सकलि सम्भवे इथे नाहिक विस्मय।109

श्रीकृष्ण एवं श्रीकृष्ण भक्तों की शक्ति अचिन्त्य होती है। सब कुछ उनमें सम्भव है, कुछ संशय की बात नहीं और भक्ति की अपार महिमा है।

गौरांगे देखि अच्युत कहे उच्च भाषे। अरे गोरा प्राण लञे आइल दूरदेशे।।110

श्रीगौरांग को देखकर श्रीअच्युत बोले– अरे गौर!
(माखनचोर) मेरे प्राण लेकर तुम इतनी दूर आये?

ब्रजभक्ति छाड़ि आइल गोपी ब्रजधामे। भक्तिब्रजे जावि किवा भजिव गोपीप्रेमे111

ब्रज भक्ति को छोड़कर गोपियों के ब्रजधाम में आप चले आये? भक्ति ब्रज (नवद्वीप) चलोगे या यहाँ गोपी–प्रेम में यमुना स्नान करोगे?

यद्यपि श्रीगोपीब्रज नित्यानन्दमय। तार उत्तमांग सेइ भक्ति ब्रजहय।।112

यद्यपि श्रीगोपी–ब्रजधाम नित्यानन्दमय है,
तथापि उसका उत्तमांग है भक्तिब्रज। नवद्वीप धाम।

तुया लागि श्रीयशोदा आदि ब्रजजन। भक्तिब्रज नवद्वीपे हैला प्रकटन।।113

तुम्हारी गौर लीला के लिए तो श्रीयशोदादि
ब्रजजन भक्तिब्रज– नवद्वीप में अवतरित हुए हैं।

शून्य गोपीब्रजे आइल किवा भावावेशे। ताहा जानिवारे मुञि आइनु तोरपाशे।।114

हमें अनाथ करके तुम इस शून्य गोपीब्रज में किस भावावेश में चले आये? उसे जानने के लिए मैं यहां आपके पास चला आया हूँ।

श्रीगौरांग कहे तुहुँ भागवतोत्तम। सर्वजीवे हय तोमा श्रीकृष्ण स्फुरण।।115

श्रीगौर बोले हे अच्युत! तुम भागवतोत्तम हो।
सब जीवों में तुम्हें श्रीकृष्ण की स्फूर्ति होती है।

प्रेमावेशे कह कत वातुलेर सने। शून्य कह राधाकृष्णेर नित्यलीला स्थाने।116

तभी तो प्रेमावेश में बावलों की सी बात कह रहे हो? श्रीराधाकृष्ण की नित्य लीला स्थलि इस ब्रजधाम को शून्य कह रहे हो?

श्रीअच्युत कहे राधाकृष्ण दुये मिलि। किवा वान्छा लागि एवे एक अंग हैलि।।117

श्रीअच्युत ने कहा– श्रीराधाकृष्ण दोनों मिलकर किस वान्छा पूर्ति के लिए एकविग्रह में प्रकट हुए हैं? जिस दिव्य श्रीविग्रह को–

अनन्तादि ना देखिला जेइ दिव्यमूर्त्ति। कोटिभाग्ये सेइ रूप मोर आगे स्फूर्त्ति।।118

अनन्तादि देवगण भी नहीं देख पाते, वही श्रीराधाकृष्ण मिलित स्वरूप मेरे सामने स्फुरित हो रहा है, मेरे कोटि–कोटि भाग्य हैं।

तथापि कहिनु मुञि शून्य वृन्दावने। महा अपराध कैलों क्षम निजगुणे।।119

तथापि मैंने इस वृन्दावन को शून्य कहा है, मुझसे महापराध हुआ है। उसे आप अपनी भक्त वत्सलता की ओर निहार कर क्षमा कीजिये।

गोरा कहे कृष्णेर नित्य सिद्धभक्त जेई। राधाकृष्णेर श्रीमूर्त्ति सर्वत्र देखे सेई।।120

श्रीगौर ने कहा– श्रीकृष्ण के जो नित्यसिद्ध भक्त हैं।
वे सर्वत्र श्रीराधाकृष्ण मूर्ति का दर्शन करते हैं।

कृष्ण तारे प्राण–प्रियतम करि माने। तार अपराध कभुना करे ग्रहणे।।121

भक्त को श्रीकृष्ण भी अपने प्राणों सम प्रिय मानते हैं।
उनके अपराधों को वे कभी ग्रहण नहीं करते।

तुहुं कृष्णेर अन्तरंग भक्त सनातन। तोमा संगे मोर हैल प्रेम उद्‌दीपन।।122

तुम तो श्रीकृष्ण के सनातन अन्तरंग भक्त हो।
तुम्हारे संग से मुझे तक में प्रेमोद्‌दीपन हुआ है।

श्रीअच्युत कहे तुया आज्ञा महावेद। तव सुनिर्मल कृपार नाहि जीव भेद।123

श्रीअच्युत ने कहा– आपके वचन तो महावेद तुल्य हैं।
आपकी सुनिर्मल कृपा जीवों में भेद नहीं रखती।

तोमार कृपाते तोमाय कराय दैन्य उक्ति। तोहार महिमा जाने जार शुद्धभक्ति।124

आपकी कृपा आपको भी दैन्य वचन कहलाती है। उस कृपा की महिमा तो वही जान या देख सकता है जिसमें शुद्ध भक्तिरूपी प्रेम अंजन लगा होता है।

मुञि क्षुद्र वस्तुतत्त्व किछुई ना जानि। तव पदाश्रये मात्र महाभाग्य मानि।।125

मैं क्षुद्र जीव वस्तु तत्व को कुछ भी नहीं जानता हूँ।
आपके पदाश्रित हूँ– इसे अपना महाभाग्य मानता हूँ।

गोरा कहे कृष्णे तोर गाढ़ अनुराग। तव अंग स्पर्शि जीव हय महाभाग।।126

श्रीगौर ने कहा–तुम्हारा श्रीकृष्ण में गाढ़ अनुराग है। तुम्हारे अंग स्पर्श से ही जीव हरि–हरि बोलकर दृढ़ महाभाग्य को प्राप्त कर लेता है।

एतकहि श्रीचैतन्य अच्युतेरे धरि। दृढ़ आलिंगिया प्रेमे बले हरि हरि।।127

इतना कह श्रीअच्युत को श्रीमहाप्रभु ने हरि–हरि बोलकर दृढ़ आलिंगन किया।

श्रीअच्युत गौरप्रेमे हइया विह्वल। सखी भावे नाचे गाय जैछे मातोयाल।।128

श्रीअच्युत गौर प्रेम में विह्वल हो गये और
उन्मत्त होकर सखी भाव में नाचने–लगे।

ताहे श्रीचैतन्येर हैल राधाकुण्ड स्मृति। प्रेमावेशे सभे पुछे राधाकुण्ड कति।।129

तब श्रीचैतन्यचन्द्र को राधाकुण्ड की स्मृति आयी और
प्रेमावेश में सबसे पूछने लगे– कृष्णप्रिय राधाकुण्ड कहाँ हैं?

ब्रजजने कहे ताहा केह नाहि जाने। शुनि गोरा मूर्च्छा हआ पड़े सेइ स्थाने।।130

ब्रजवासी कहने लगे– उसे तो हममें से कोई नहीं जानता है।
यह सुनकर श्रीगौरांग वहां ही मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

अच्युत गौरांगेर सेइ महाभाव देखि। राधाकृष्ण नाम डाके झरे दुइ आखि।।131

श्रीगौरांग का यह महाभाव देखकर श्रीअच्युत
"राधाकृष्ण" नाम पुकारने लगे और उनकी आँखों से प्रेमाश्रु धारा बहाने लगी।

राधानाम शुनि गोरा गर्जिया उठिला। काँहा राधाकुण्ड बलि कान्दिते लागिला132

श्रीराधा नाम सुनते ही श्रीगौरांग गर्ज्जना कर उठ खड़े हुए और "कहां है महाअमृतरूपी कृष्णप्रेम से भरा श्रीराधाकुण्ड?" कहकर प्रेमावेश में रोने लगे।

श्रीअच्युत कहे प्रिय श्रीकृष्णचैतन्य। राधाकुण्डेर गूढ़ तत्त्व मोर स्थाने शुन।।133

श्रीअच्युत बोले– हे श्रीगौरांग! राधाकुण्ड का गूढ़ तत्त्व
तुम्हारे सुख के लिए कहता हूँ– मुझसे सुनो।

गोरा कहे तुहुँ कृष्णेर नित्य सहचर। चिन्मय तीर्थ क्षेत्रादिते तोंहार गोचर।।134

श्रीगौर ने कहा– तुम तो श्रीकृष्ण के नित्य सखा हो,

अतः इस चिन्मय ब्रजक्षेत्र का तुम्हें सब पता है।

श्रीअच्युत कहे तव दयारे प्रणाम। सर्वदा बाड़ाय निज भक्तेर सम्मान।।135

श्रीअच्युत ने कहा– आपकी दया को प्रणाम है,

जो सदा अपने भक्तों के मान को बढ़ाती है।

दुई महातीर्थ प्रचारिते कैला मने।आर निज भक्तेर सर्वविज्ञत्व विज्ञापने।।136

दोनों ने उस राधाकुण्ड महातीर्थ को प्रकाशित करने की इच्छा की जिससे अपने भक्तों की सर्वज्ञता भी विज्ञापित होती है।

कुण्डेश्वरी कुण्डेर अचिन्त्य शक्तिहय। तार सम शक्ति श्यामकुण्डेर निश्चय।।137

श्रीराधा के कुण्ड की अचिन्त्य शक्ति है,

उसी के समान शक्ति श्यामकुण्ड की भी सुनिश्चित है।

अनन्तादि देवे दोंहार अन्त नाहि पाय। मुञि छार कैछे जानों तार परिचय।।138

अनन्तादि देवता दोनों कुण्डों की महिमा का पार नहीं पा सकते।

तब मैं उस अनन्त प्रेमसिन्धु का परिचय भी कैसे पा सकता हूँ।

काष्ठेर पुतली सम जानिह मोहरे। सेइमत नाचों जेइ तव इच्छा स्फुरे।।139

मुझे तो आप अपनी कठपुतली के समान जानिये।

आपकी इच्छा (सुखविधान) के अनुसार नाचता हूँ।

मोर उपदेष्टा तव प्रिय गदाधर। पण्डित गोस्वामी जिहँ प्रेमार भाण्डार।।140

मुझे तो उपदेश करने वाले हैं आपके प्रिय गदाधर पण्डित।

वह पण्डित गोस्वामी तो प्रेम के भण्डार हैं।

मोर पिता कहे जाँरे श्रीराधिकार अंग। कृष्ण भक्ति लभ्य हय पाइले जार संग141

मेरे पूज्य पिता (श्रीअद्वैतप्रभु) तो उन्हें श्रीराधाजी का अंश कहते हैं।

उनके संग से कृष्णभक्ति होती है।

तिहों मोरे दया करि कहिल से वाणी। ताहा मुञि कहों भाल मन्द नाहि जानि142

उन श्रीगदाधर पण्डितजी ने मुझ पर दया कर जैसा कहा था, वही काष्ठ की पुतली के समान मैं आपको सुनाता हूँ, मैं कुछ नहीं जानता।

जांहा कुण्डेश्वरी राधार नित्य अधिष्ठान। ताहाञि श्रीराधाकुण्ड प्रत्यक्ष प्रमाण।143

जहाँ कुण्डेश्वरी श्रीराधा नित्य अधिष्ठित–विराजमान रहती है, वहां श्रीराधाकुण्ड है– सूर्य और उसके प्रकाश में अभेद के समान यही उसका प्रमाण है।

श्रीराधाकुण्ड माहात्म्य केवा जाने शेष। सर्व तीर्थेर अधिष्ठातृ रूप निर्विशेष।।144

श्रीराधाकुण्ड के संपूर्ण माहात्म्य को कौन जान सकता है, उसमें विशेष रूप से संसार के सब अड़सठ कोटि तीर्थ निवास करते हैं।

सर्वतीर्थ पापीर पाप करिया क्षालन। निजे सेइ पापपुंज करये वहन।।145

सब तीर्थ पापियों के पापों को धोकर अपने में उन्हें धारण कर लेते हैं। (जिसप्रकार माता अपवित्र बालक को गोदी में बैठाकर स्नान कराती है।)

साधु समागमे सेइ पाप हय क्षय। तीर्थेर तीर्थत्व लभ्य श्रुतिगणे कय।।146

उन तीर्थों के पाप फिर साधु समागम से उनमें भक्तों के स्नान करने से नष्ट हो जाते हैं। तभी से तीर्थ तीर्थत्व–पावन करने की शक्ति लाभ करते हैं– ऐसा वेद कहते हैं।

कृष्णेर चिच्छक्ति रूप राधाकुण्ड हय। नित्यसिद्ध वस्तु सर्वशक्ति समाश्रय।।147

किन्तु श्रीराधाकुण्ड तो श्रीकृष्ण की चिच्छक्ति स्वरूप है, नित्यसिद्ध है। समस्त शक्तियाँ उसमें विद्यमान रहती हैं। इसमें स्वयं श्रीकृष्ण सखाओं के साथ जलकेलि करते हैं।

श्रीराधकुण्ड स्मरणे सर्वपाप नाश। कथने हय सनातन धर्मेते विश्वास।।148

श्रीराधाकुण्ड का स्मरण करने से सब पाप नाश हो जाते हैं। उसका वर्णन करने से सनातन धर्म में विश्वास अर्थात् श्रीकृष्ण भक्ति प्राप्त होती है।

श्रीकुण्ड दर्शने भक्तिर अंकुर उपजय। स्पर्श मात्र हय प्रेम भक्तिर उदय।।149

श्रीकुण्ड के दर्शन से भक्ति–अंकुर उत्पन्न होता है
और उसके स्पर्श मात्र से प्रेमभक्ति उदित होती है।

कुण्ड जले स्नाने कृष्णप्राप्ति सुनिश्चय। तीरे देह त्याग हैले कृष्ण दास्य पाय150

राधाकुण्ड में स्नान करने से निश्चित श्रीकृष्ण प्राप्ति होती है। उसके तीर पर देह त्याग करने से श्रीकृष्ण का दास्य भाव प्राप्त होता है।

श्रीकुण्डेर असंख्य गुण के कहिते पारे। आनुषंगिक गुण किछु शुन अतः परे।।151

श्रीराधाकुण्ड के असंख्य गुणों का कौन वर्णन कर सकता है?
कुछ एक आनुषंगिक गुणों को सुनिये।

कुण्ड तीरे वैसे जत सिद्ध जीवगण। राधाकृष्ण नाम शुनि करये क्रन्दन।152

कुण्डतीर पर जो जीव रहते है वे सब सिद्धजीव हैं।
वे श्रीराधाकृष्ण नाम सुनते ही क्रन्दन करते हैं।

श्रीकुण्ड दर्शन मात्र ताप हय नाश। संसार विस्मृति मनेर बाढ़ये उल्लास।।153

श्रीकुण्ड के दर्शन मात्र से सब ताप दूर होते

और संसार की विस्मृति, मन में आनन्द उदित होता है।

किशोरी इतनो तो कीजो लाडली इतनो तो कीजो।

मेरो जंग जंजाल छुड़ाय वास राधाकुण्ड को दीजो।।

स्वतः सेइ जल मधुर औषधि समे। आयु वृद्धि रोगक्षय स्नान आर पाने।।154

उसका जल स्वतः मधुर औषधि के समान है उस जल में स्नान और उसके पान करने से आयु बढ़ती है व सभी रोग समूल नष्ट होते हैं।

श्रीकुण्ड संश्लिष्ट श्रीमान श्यामकुण्ड हय।राधाकुण्ड सम कृष्णप्रिय से चिन्मय।155

श्रीराधाकुण्ड के साथ मिला हुआ है श्रीश्यामकुण्ड। श्रीराधाकुण्ड के समान वह चिन्मय श्रीकृष्णकुण्ड भी श्रीकृष्ण को प्रिय है। जिसप्रकार श्रीराधाकुण्ड श्रीकृष्ण को अतिप्रिय है उसी तरह राधारानी को श्यामकुण्ड।

ताँहा श्रीनन्दनन्देर नित्यरूपे स्थिति। ताहार दर्शने कृष्ण रूप हय स्फूर्ति।।156

वहां श्रीनन्दनन्दन नित्यरूप से अवस्थान करते हैं।

उसके दर्शन से कृष्णरूप की स्फूर्ति होती है।

ताहार महिमा श्रीअनन्त नाहि जाने। राधाकृष्ण प्राप्ति हय स्नान आर पाने।।157

उसकी महिमा श्रीअनन्त भी नहीं जानते हैं। उसमें स्नान करने से एवं उसका जल श्रद्धापूर्वक पान करने से श्रीराधाकृष्ण की प्राप्ति होती है।

एत कहि श्रीअच्युत गौर प्रणमिला। प्रेमावेशे गोरा तारे गाढ़ आलिंगिला।158

इतना कहकर श्रीअच्युत ने श्रीगौर को प्रणाम किया और

उन्होंने उसे प्रेमाविष्ट होकर गाढ़ आलिंगन प्रदान किया।

गोरा कहे श्रीकुण्ड माहात्म्य आजि शुनि। देह प्राण मन मोर धन्य करि मानि।159

श्रीगौर बोले– मैंने श्रीकुण्डों का महात्म्य आज ही सुना है

और अपने शरीर–प्राण मन को धन्य मानता हूँ।

एत कहि चले महाभावेर आवेशे। उत्तरिला लुप्तप्राय राधाकुण्ड पाशे।।160

इतना कहकर वे महाभावावेश में वहां आये।

जहाँ श्रीराधाकुण्ड प्रायः लुप्त अवस्था में विद्यमान था।

श्रीकृष्णचैतन्य कहे आचार्य नन्दने। एइ राधाकुण्ड हय देख त लक्षणे।।161

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु ने श्रीअच्युतजी से कहा–

लक्षणों से तो यही श्रीराधाकुण्ड मालूम पड़ता है।

यद्यपि एइ महातीर्थ हइल लुप्तप्राय। तथापि देखिया मनस्ताप गेल क्षय।162

यद्यपि यह महातीर्थ लुप्तप्राय हो चुका है, तो भी

इसको देखते ही मन का ताप मिट गया है।

सहसा प्रेमोल्लास केने वा बाढ़िला। एत कहि राधाबलि हुंकार करिला।।163

सहसा प्रेमोल्लास भी बढ़ रहा है? फिर श्रीगौर ने श्रीराधा कहकर हुंकार किया।

राधानाम शुनि जत पशु विहंगम। प्रेमावेशे कान्दे जैछे कृष्ण भक्तोत्तम।।164

श्रीराधा नाम सुनते ही वहां जितने पशु–पक्षी थे वे

कृष्णभक्तोत्तम की तरह प्रेमावेश में रोने लगे।

एके राधा नाम नित्य आनन्दजनक। ताहे गौरमुख च्युत सत्प्रेम पूरक।।165

श्रीराधानाम तो पहले ही जीवों में नित्यानन्द उत्पन्न करता है फिर श्रीगौरमुख

से निकल कर सत्प्रेम से पूर्ण करने वाला है।

सेइ ध्वनि शुनि काहे प्रेम नाहि स्फुरे। प्रेमानन्दे स्थावर जंगमेर अश्रु झरे।166

यह ध्वनि सुनकर फिर प्रेम क्यों न स्फुरित होगा?

स्थावर–जंगम प्रेमानन्द में अश्रु प्रवाहित करने लगे।

श्रीगौरांग कहे देख आचार्य–तनय। राधानामे जीव मात्रेर हैल प्रेमोदय।।167

श्रीगौर बोले– देखो अच्युत! राधानाम लेने मात्र से

यहां के प्रत्येक जीव मात्र में प्रेमोदय हो गया है।

एइ सत्य राधाकुण्ड नाहिक संशय। इहार संश्लिष्ट खोद श्यामकुण्ड हय।।168

यही सचमुच राधाकुण्ड है– इसमें जरा भी संशय नहीं है।

इसके साथ खोदने से श्यामकुण्ड भी आविर्भूत हो जायेगा।

अहो भाग्य श्रीकुण्ड मुञि पाइनु दर्शन। साधुसंगेर हय एइ दिव्याचिन्त्य गुण।।169

अहोभाग्य हैं कि हमें श्रीकुण्ड के दर्शन प्राप्त हुए हैं।

साधुसंग का यही दिव्य अचिन्त्य गुण है।

एत कहि प्रेमामृते हइया विभोर। झांप दिया पड़े जले सर्वज्ञ ईश्वर।।170

इतना कहकर सर्वज्ञ ईश्वर श्रीगौर प्रेमामृत में विभोर हो गये

और उस जल में कूद पड़े।

राधाकुण्डे डूब दिया श्यामकुण्डे गेला।श्यामकुण्डे स्नानकरि राधाकुण्डे आइला171

राधाकुण्ड में डुबकी लगा कर श्यामकुण्ड पर आये।

उसमें स्नान कर फिर राधाकुण्ड में आये। स्नान करके–

स्नान समर्पिया कुण्डेर मृत्तिका लइया। सर्वांगे लेपये गोरा प्रेमाविष्ट हञा।।172

श्रीमहाप्रभु ने श्रीकुण्ड की मृत्तिका उठाई और अपने समस्त अंगों पर उसे

लगाया। जिसे लगाते ही श्रीगौर कृष्णप्रेमाविष्ट हो गये।

गाढ़ अनुरागे शत दण्डवत करि। कुण्डे बहुविध स्तव कैला गौरहरि।।173

गाढ़ अनुराग से सौ बार दण्डवत् प्रणाम किया और
अनेक प्रकार से श्रीगौरहरि कुण्ड की स्तुति करने लगे।

यथा राधा प्रिया विष्णोस्कुण्डं प्रियं तस्या तथा। सर्व गोपिषु सैवेका विष्णोरत्यन्त वल्लभा।।

जिस प्रकार से ब्रजेन्द्र सुन्दर श्यामसुन्दर को वृन्दावनेश्वरी श्रीराधिका रानी
समस्त गोपियों में सर्वाधिक प्रिया हैं, उसी तरह से यह दिव्य
श्रीराधाकुण्ड उन्हें संसार के समस्त तीर्थों से अत्यधिक प्रिय है।

ताहा देखि श्रीअच्युत प्रेमेते माहिया। एइ चिन्मय कुण्ड बुलि फिरये गर्जिया।।174

यह देखकर श्रीअच्युत भी प्रेम में उन्मत्त हो उठे। यही चिन्मय राधाकुण्ड है"–
जय श्री राधे कहकर गर्ज्जना व नर्तन कर प्रेमपूर्वक परिक्रमा लगे।

तबे महाप्रभु कुण्डेश्वरी राधाभावे। कोँहा प्राणनाथ बलि कान्दे उच्च रवे।175

तब श्रीमहाप्रभु ने कुण्डेश्वरी श्रीराधा के भाव में– मेरे "प्राणनाथ तुम कहां हो?"
कहते हुए उच्च स्वर में रोना आरम्भ किया।

क्षणे स्तम्भ क्षणे कम्प क्षणे उच्च हास। क्षणे हुंकार क्षणे नृत्य क्षणे दैन्य भाष।176

वे प्रेमाविष्ट प्रभु कभी स्तम्भ, कभी कम्प और कभी उच्च हास्य करने लगे। कभी
हुंकार तो कभी नृत्य और कभी दैन्य वचन उच्चारण करने लगे।

क्रमे महाप्रेमाब्धि तरंग बाढ़िल। मूर्च्छा हञा श्रीचैतन्य भूमिते पड़िल।।177

क्रमशः प्रेमसागर सम तरंगें बढ़ने ही लगीं और
महाभावश्रीचैतन्य मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर गये।

निस्पन्द गौरांग अंग देखि श्रीअच्युत। हाहाप्राण गौर बुलि कान्दे अविरत।।178

श्रीगौर अंग को निष्पन्द देखकर श्रीअच्युत
"हा–हा प्राण गौर" कहकर जोर से क्रन्दन करने लगे।

कत क्षणे सीतासुत हञा किछु स्थिर। हरि हरि बलि रव करये गम्भीर।।179

कुछ देर बाद श्रीअच्युत कुछ स्थिर हुए और
'हरि–हरि' नाम का जोर से उच्चारण करने लगे।

तृतीय प्रहरे गोरा पाइया चेतन। राधाकुण्ड पाइनु बलि करे नर्त्तन।।180

तीसरे प्रहर में जाकर श्रीगौर को चेतना आयी
मैंने "राधाकुण्ड पा लिया" ऐसा कहकर वे नाचने लगे।

जे दुएर कुण्ड दुइ सेइ दुइ मेलि। दया करि प्रकटिला देखि घोर कलि।181

जो दो युगलकुण्ड थे, महाभाव स्वरूप श्रीमन्महाप्रभु के आग्रह से वही दोनों परस्पर मिलकर दयापूर्वक घोर कलि में भी आविर्भूत हो गये।

तब गौरचन्द्र अच्युतेर हाते धरि। कुण्ड प्रदक्षिण कैला महामन्त्र पढ़ि।।182

तब श्रीगौरचन्द्र ने श्रीअच्युत का हाथ पकड़ा और
महामन्त्र पढ़ते हुए श्रीकुण्डों की परिक्रमा लगाई।

पुन पुन साष्टांग कैला शत शत। प्रेमावेशे कुण्डे स्नान करे श्रीअच्युत।।183

श्रीअच्युत ने बार–बार साष्टांग प्रणाम किया।
फिर प्रेमावेश युगल कुण्डों में स्नान किया।

ताहार आग्रह भक्ति दैन्योक्ति शुनिया। वृक्षमूले वैसे गोरा किछु स्वस्थ हञा।।184

उसके आग्रह एवं भक्तिपूर्वक दैन्योक्ति को
सुनकर वृक्ष के नीचे बैठकर श्रीगौरचन्द्र कुछ स्वस्थ हुए।

गौरांग कहे अच्युत तोर संग गुणे। दया करि राधाकुण्ड हैला प्रकटने।।185

श्रीगौरहरि बोले– अच्युत! तेरे संग गुण से ही श्रीराधाकुण्ड दयाकर प्रकट हुआ।

अच्युत कहये केने कर अपराधी। तुया पदाश्रिते मुञि हउ निरवधि।।186

अच्युत ने कहा– मुझे क्यों अपराधी बना रहे हो,
मैं तो सदा आपके ही चरणाश्रित हूँ।

युगे युगे कर तुहुँ अलौकिक लीला। जीव उद्धारिते गुप्त तीर्थ प्रकाशिला।।187

युग–युग में आप अलौकिक लीलाएं करते हैं। आपने कलिकाल ग्रस्त जीवों के उद्धार हेतु इस गुप्त तीर्थ को प्रकटित किया है।

गुप्त–प्रेम गुप्त–कुण्ड छिला चिर दिने। दया करि राधाकुण्ड हैला प्रकटने।।188

अनेक दिन से (श्रीकृष्णलीला के पश्चात्) श्रीराधाकुण्ड एवं उसका प्रेम गुप्त रह रहा था, श्रीराधाकुण्ड दया करके प्रकटित हुआ है।

शुनि महाप्रभु कहे एइ अति स्तुति। एइ तार पितृधर्मे नाहि मोरि प्रीति।।189

श्रीमहाप्रभु ने यह सुनकर कहा– अच्युत! तुम मेरी अति स्तुति कर रहे हो–
तुम्हारे इस अतिस्तुति में मेरी प्रीति नहीं है।

एके कृष्ण सर्वेश्वर आर सब दास। जीवेते ईश्वर बुद्ध्ये हय सर्वनाश।।190

दीनतापूर्वक उन्होंने कहा– एकमात्र श्रीकृष्ण ही सर्वेश्वर हैं, और सब ही उनके दास हैं। जीव में ईश्वर बुद्धि करने से सर्वनाश होता है।

श्रीअच्युत कहे तव लीलार धरमे। दैन्य उक्ति कर आत्मतत्त्व आच्छादने।।191

श्रीअच्युत बोले– आप भी नरलीला धर्म के कारण दैन्योक्ति

कहते हैं और अपने तत्व को छिपाना चाहते हैं।

जैछे लुकाइते नारे मेघेते तपन। तैछे प्रकट लीलाते कृष्णेर गोपन।।192

जैसे मेघ के सामने सूर्य छिपा नहीं रह सकता, उसी प्रकार प्रकट–लीला में श्रीकृष्ण का गोपन भी नहीं रह सकता।

एत कहि श्रीअच्युत करे हरि ध्वनि। गोरा कहे नाम सत्य छाड़ अन्य वाणी।।193

इतना कहकर श्रीअच्युत ने हरि ध्वनि की। तब श्रीगौर ने सन्तुष्ट होकर कहा– बस यही नाम ध्वनि ही सत्य है, और बातों को छोड़ो।

श्रीअच्युत कहे नामि पाइनु कोटि भाग्ये। एत बुलि कान्दे गोरार धरि पादयुगे।194

श्रीअच्युत ने कहा, मैंने तो कोटि भाग्यों से आप नामी को प्राप्त कर लिया है ऐसा कहकर वे रोते हुए श्रीगौर चरणों में गिर पड़े।

तबे दयासिन्धु गोरा दया प्रकाशिला। निज सिद्ध मूर्त्तियुगल तारे देखाइला।।195

तब दयासिन्धु श्रीगौर ने दया प्रकाशित की और
अपने दोनों सिद्ध रूपों का दर्शन उसे कराया।

रसराज पूर्णतम श्रीकृष्णेर मूर्त्ति। तार वामे महाभाव राधारूप स्फूर्त्ति।।196

एक तो रसराज पूर्णतम श्रीकृष्ण मूर्त्ति और दूसरी उसके वाम पार्श्व में महाभावस्वरूपा श्रीराधामूर्त्ति स्फुरित हो रही थी। रसराज महाभाव दोनों एकरूप।

ए दुई नित्य रूप देखि श्रीअच्युत। प्रेमेते विह्वल हञा कैला दण्डवत।।197

इन दोनों नित्य सिद्ध वस्तुतत्त्व को देखकर श्रीअच्युत
प्रेम विह्वल हो गये और दण्डवत् प्रणाम करते हुए–

बहुविध स्तुति कैला पद्य विरचिया। गोरा कहे मोर स्तव कर कि लागिया।।198

वे अनेकविध स्तुति करने लगे श्लोक रच–रचकर।
श्रीगौरने कहा– अच्युत मेरी स्तुति क्यों कर रहे हो?

पुन श्रीअच्युत गौरे देखि न्यासीरूप। कहे राधा अंगे लुकाइलि निजरूप।।199

फिर श्रीअच्युत ने श्रीगौर के संन्यासी रूप में दर्शन किये
और कहा– आपने अपने रूप को राधांग में छिपा लिया है।

भालि तव सेवाते युगल सेवासिद्ध। एत कहि शिरे धरे गौर पादपद्म।200

आपकी सेवा में श्रीराधाकृष्ण–युगल सेवा सिद्ध होती है–
इतना कहकर अच्युत ने गौर चरण कमलों पर मस्तक टेक दिया।

गोरा कहे तुहुँ कृष्णप्रेम चक्रवर्ती। जाहां ताहाँ हय तव राधाकृष्ण स्फूर्ति।201

श्रीगौर ने कहा– तुम तो कृष्णप्रेम के चक्रवर्ती हो,

सर्वत्र तुम्हें श्रीराधाकृष्ण की स्फूर्त्ति होती है।

एत कहि श्रीचैतन्य तारे आलिंगिल। प्रेमानन्दे श्रीअच्युत नाचिते लागिल।।202

इतना कहकर श्रीचैतन्य ने उसे आलिंगन किया।

प्रेमानन्द में विभोर होकर वह नाचने लगा।

सर्वलोके ज्ञात हञा कुण्ड विवरणे। पवित्र हइला स्नान पान दरशने।।203

सब लोगों को कुण्डों का विवरण ज्ञात हुआ, सब

आकर स्नान–पान एवं दर्शन कर पवित्र हुए।

तबे महाप्रभु गेला गिरि गोवर्धने। लीला–शैल देखि प्रेमे हैला अगेयाने।।204

वहां से फिर महाप्रभु श्रीगोवर्धन गये।

लीला–गिरि देखकर प्रेम में श्रीगौर अचेतन हो गये।

चैतन्य पाइया कहे ओहे गिरिवर। कृष्ण बिना हैल बुझि–जीर्ण कलेवर।।205

सुध पाकर श्रीगौर बोले– ओहे गिरिराज!

श्रीकृष्ण के बिना तुम्हारा ऐसा दुर्बल शरीर हो गया है।

पुन कहे किवाश्चर्य देखि हाय हाय। कृष्ण अंग गन्ध लागि रैल तुया गाय।।206

हाय! हाय!! कैसा आश्चर्य है श्रीकृष्णांग की सौरभ

अभी भी तुम्हारे शरीर में लग रही है।

आइस आलिंगिया पोड़ा पराण जुड़ाङ। तबे चलजाङ यदि प्राणकान्त पाङ।।207

आओ! तुम्हें आलिंगन करके मैं अपने जलते प्राणों को शीतल करूँ तभी मैं यहां

से जाऊँगा, जब अपने प्राणनाथ को पा लूंगा।

इहा कहि श्रीचैतन्य बाहु पसारिया। गिरि गोवर्धन आलिंगिते चले धाञा।।208

ऐसा कहकर श्रीचैतन्य ने भुजाएं पसार कर

श्रीगोवर्धन को दौड़कर आलिंगन कर लिया।

क्षणे पड़े क्षणे उठे नाचि स्थानास्थान। प्रदक्षिण करे प्रभु गाइ हरिनाम।।209

एकक्षण में गिर जाते तो दूसरे क्षण में इधर–उधर नाचने लगे। फिर अपने

हरिनाम उच्चारण करते हुए श्रीगिरिराज की परिक्रमा की।

अलौकिक प्रेम गोरार अविचिन्त्य लीला। दयामृत वितारिया जीव निस्तारिला।।210

श्रीगौर का प्रेम अलौकिक है और लीला अविचिन्त्य है। अपने करुणामृत को

वितरण कर उन्होंने जीवों का निस्तार कर दिया।

श्रीअच्युतानन्द प्रेमे हइया विभोर। कभु कान्दे कभु नाचे कभु देय लोड़।।211

श्रीअच्युतानन्द तो प्रेम में विभोर होकर कभी रोते

कभी नाचते एवं कभी पछाड़ें खाने लगते।

तबे सर्ववन तीर्थ भ्रमिला गौरांग। रासस्थली देखि उथलिल प्रेमोत्तुंग।।212

तब श्रीगौरांग ने समस्त वन–तीर्थों में भ्रमण किया।

रासस्थली को देखकर उनमें विशाल प्रेम उछला।

महाभावे कृष्ण अन्तर्धान आरोपिया। गोपीगीत पड़ि गोरा बुलेन कान्दिया।213

महाभाव में श्रीकृष्ण को अन्तर्धान हुआ मानकर

श्रीगौर गोपीगीत को पढ़ते हुए रोने लगे।

क्षणे करे राधाकृष्णेर लीलानुकरण। क्षणे गीतागाय क्षणे करये नर्त्तन।।214

कभी श्रीराधाकृष्ण लीला का अनुकरण करने लगते

तो कभी गीत गान करते हुए नृत्य करने लगते।

श्रीगौरांगेर प्रेम महासागर निचय। ताहा वर्णिवारे श्रीअनन्त ना पारय।।215

श्रीगौरांग का प्रेम तो महासागरों का समूह है,

उसका वर्णन तो श्रीअनन्त भी नहीं कर सकते।

मुञि मूर्ख क्षुद्र कीट नाहि किछु ज्ञाने। सूत्र मात्र गणि साधु वैष्णव वचने।।216

मैं तो क्षुद्र मूर्ख कीट के समान हूँ, कुछ जानता भी नहीं।

केवल साधु–वैष्णवों के वचनों से सूत्र मात्र कह रहा हूँ।

यद्यपि छाड़िते व्रज गौरेर इच्छा नहे। भक्त इच्छाय व्रज छाड़े अश्रुधारा बहे।।217

यद्यपि ब्रज को छोड़कर जाने की इच्छा श्रीगौर की न थी, तो भी भक्तों की

इच्छा के वशीभूत होकर उन्होंने रोते–रोते ब्रज को छोड़ा।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैतप्रकाश।।218

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के चरणों की अभिलाषा करते हुए।

श्रीईशान नागर श्रीअद्वैतप्रकाश वर्णन करते हैं।

सप्तदश–अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द रामभक्तगण साथ।।01

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु की जय हो, श्रीअद्वैत प्रभु की जय हो। श्रीनित्यानन्दराम

की भक्तों सहित जय हो।

तबे महाप्रभु श्रीप्रयागधामे आइला। एक द्विज वैष्णवेर घरे वासा कैला।।02

वहां से श्रीमहाप्रभु प्रयाग आये एवं एक वैष्णव ब्राह्मण के घर रुके।

त्रिवेणीते स्नान करि माधव दर्शन। शुद्ध प्रेमानन्दे करे नर्त्तन कीर्तन।।03

त्रिवेणी में स्नान कर उन्होंने श्रीवेणीमाधव के दर्शन किये,

और शुद्ध प्रेमानन्द में नृत्य–कीर्तन किया।

शत साष्टांग कैला महा भावावेशे। बहु स्तवन कैला नाहिं भावशेषे।।04

महाभावावेश में शत साष्टांग प्रणाम किये और भावाविष्ट हो अनेक स्तुति की।

तहिं श्रीचैतन्य प्रेमनाम विस्तारिला। जार कोटि भाग्य सेइ वैष्णव हइला।।05

वहां प्रेम–नाम का विस्तार किया श्रीमहाप्रभु ने।

जिसके कोटि भाग्य थे वह परम वैष्णव हो गया।

एक दिन श्रीरूप गोसाञि सुपण्डित। श्रीप्रयागतीर्थे आसि हैल उपनीत।।06

एकदिन सुपण्डित श्रीरूपगोस्वामी श्रीप्रयाग तीर्थ में आकर उपस्थित हुए।

रामकेलिवसि जिहों राजमन्त्री छिला। चैतन्य कृपाय विष विषय छाड़िला।।07

ये रामकेलि में रहते थे, राजमन्त्री थे,

श्रीचैतन्य कृपा से विषय विष त्याग कर दिया।

ताँर संगे आइला ताँर भाई अनुपम। परम उदार तिहों भागवतोत्तम।।08

उनके साथ उनके भाई श्रीअनुपम भी थे, जो परम उदार एवं भागवत श्रेष्ठ थे।

ताँहा श्रीगौरांग सह रूपेर मिलने। जे आनन्द हैल ताहा ना जाय वर्णने।।09

वहां श्रीरूप के साथ प्रभु का मिलन हुआ। वह आनन्द वर्णित नहीं हो सकता।

श्रीगौरांग देखि रूप प्रेमार्द्र हइला। शत अष्ट–अंग करि बहु स्तव कैला।।10

श्रीगौरांग को देखकर श्रीरूप का मन प्रेम से द्रवित हो उठा और शत साष्टांग

प्रणाम कर उन्होंने प्रभु की अनेक स्तुति की।

गौर देखि अनुपमेर प्रेमोद्‌गम हैल। गले वस्त्र बांधि दण्डवत स्तुति कैल।।11

श्रीगौर दर्शन करते ही श्रीअनुपम में प्रेम उदय हो उठा।

गले में वस्त्र डालकर उनकी अति दीनता पूर्वक प्रणाम स्तुति की।

श्रीचैतन्य दुहुं जने कैला आलिंगन। दोंहे कहे मोरा बहु अस्पृश्य अधमे।।12

श्रीगौर ने जब दोनों को आलिंगन किया। दोनों

कहने लगे– प्रभो! हम दोनों अधम हैं? अस्पृश्य हैं।

गोरा कहे कृष्णभक्त सर्वश्रेष्ठ हय। भक्तिरस योगे नीच द्विजत्व लभय।।13

श्रीगौर ने कहा– कृष्णभक्त सर्वश्रेष्ठ होता है

भक्तिरस से नीच भी ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लेता है।

ब्राह्मणेरद्वादश गुण आछे शास्त्रे उक्ति। सेई सबगुण भक्तिर आनुषंगिक वृत्ति।।14

शास्त्रों में ब्राह्मण के बारह गुण कहे गये हैं,

वे सब गुण भक्ति के साथ आनुषंगिक रूप से प्राप्त हो जाते हैं।

जैछे प्रभु गमने ताहार भृत्यगण। आनुषंगिक रूपे तारा करये गमन।।15

जैसे स्वामी के कहीं जाने पर उसके सेवकगण आनुषंगिकरूप से अपने आप
उसके पीछे चलते हैं।

श्रीरूपगोसाञि कहे एइ सत्य हय। कोँहा भक्ति पाइवाङ कह सुनिश्चय।।16

श्रीरूप ने कहा– आपके वचन सत्य हैं,
किन्तु आप यह कृपाकर कहो कि भक्ति मुझे कहां प्राप्त होगी?

श्रीअच्युत कहे भक्ति, मन्दाकिनी तीरे। वास करि कोन जन पिपासा मरे?।।17

श्रीअच्युत ने कहा– भक्ति– मन्दाकिनी के तीर
पर रहकर प्यास से कौन मर सकता है?

रूप कहे चातकेर से भाग्य वा कति। कृष्ण दयामेघ विना नाहि तृप्ति।।18

श्रीरूप बोले– चातक के भाग्य ऐसे कहां हैं,
उसकी तृप्ति तो कृष्णदयारूपी–मेघ के बिना नहीं होती।

महाप्रभु कहे भक्ति अमूल्य रतन। साधुकृपाय लभ्य हय कहे श्रुतिगण।।19

महाप्रभु ने कहा– भक्ति एक अमूल्य रत्न है। उसकी
प्राप्ति भक्तकृपा से होती है– ऐसा शास्त्र कहते हैं।

भाग्ये तोंहे हैल कोन साधुजनेर दया। ताहाते तजिला भोग्य संसारेर माया।।20

तुम पर तो किसी भक्तजन की दया हो चुकी है और उसी के फल से तुमने
संसार माया के भोगों का त्याग कर दिया है।

भक्तिदेवीर आविर्भाव मायार अन्तर्धान। सिंह समागमे जैछे हस्तीर प्रस्थान।।21

भक्तिदेवी के आविर्भाव से माया विनष्ट हो जाती है,
जैसे सिंह के आने पर हाथी भाग जाता है।

श्रीरूप कहये मुञि साधु नाहि चिनि। तुया आकर्षणे आइनु एइमात्र जानि।।22

श्रीरूप ने कहा– मैं साधु को नहीं जानता हूँ–
मैं तो आपके आकर्षण से यहां आया हूँ– इतना केवल जानता हूँ।

लोह जैछे अयस्कान्तेर शक्ति नाहि जाने। गमन करे मात्र आकर्षण गुणे।।23

लोहा जैसे चुम्बक की शक्ति का ज्ञान नहीं रखता,
उसके आकर्षण गुण से उसके पास खिंचा जाता है।

महाप्रभु कहे काहे कर दैन्यपणा। कोन सद्भाव हैल तुया हृदये धारणा।।24

महाप्रभु बोले– क्यों दीनता दिखा रहे हो?
तुम्हारे हृदय में कौन सी सद्भाव धारणा लाई है?

तोरा कृष्णेर नित्य परिकर अनुमानि। ताहार लक्षण सर्व साधु मुखे शुनि।।25

तुम्हें तो मैं नित्य कृष्ण परिकर जानता हूँ।

कृष्ण परिकर के सब लक्षण मैंने सन्तों से सुने हुए हैं।

जीवे दया साधुसंग आत्मदैन्य उक्ति। एइ तिन कृष्णदासेर स्वाभाविक वृत्ति।।26

जीवों पर दया, साधुसंग तथा अपने विषय में दैन्योक्ति—

ये कृष्णदास के स्वाभाविक लक्षण हैं।

तबे सनातनेर वार्त्ता पुछे व्यग्र हञा। श्रीरूप कहये ताँरे राखिला बांधिया।।27

तब व्याकुल होकर प्रभु ने श्रीसनातन की बात पूछी।

श्रीरूप ने कहा— उसे राजा ने कैद में बांध रखा है।

दया करि निज जने खण्डाह बन्धन। तुया पदे कैलों मोरा आत्म समर्पण।28

आप दया कर अपने भक्त का बन्धन नाश कीजिए।

हमने आपके चरणों में आत्म समर्पण कर दिया है।

गोरा कहे कृष्णभक्तेर नाहिक बन्धन। झाट् तव संगे तार हइव मिलन।।29

श्रीगौर ने कहा— कृष्णभक्त के लिए कोई बन्धन नहीं

होता। उसके साथ तुम्हारा शीघ्र मिलन होगा।

रूप कहे तव वाक्य अमोघ निश्चय। श्रीअच्युत कहे सेइ महावेद हय।।30

श्रीरूप ने कहा— आपके वचन निश्चय अमोघ है।

श्रीअच्युत ने कहा— प्रभुके वचन तो महावेद— वचन तुल्य हैं।

तबे गोरा रूप अनुपम दुई जने। साध्य साधन शिखाइला भक्तानुसन्धाने।।31

वहां श्रीगौर ने श्रीरूप एवं श्रीअनुपम को भक्ति के साध्य—साधन की शिक्षा दी।

श्रीरूप गोसाञि छिला महा कविवर। चैतन्यकृपाय हैला भक्तिरत्नाकर।।32

श्रीरूप गोस्वामी महान श्रेष्ठ कवि थे। श्रीचैतन्य कृपा से

वे भक्तिसागर के समान उभर कर सामने आये।

एकदिन गोरा कहे रूप अनुपमे। वृन्दावन धामे दोंहे करह पयाने।।33

एकदिन श्रीगौर ने श्रीरूप एवं श्रीअनुपम को कहा—

आप दोनों वृन्दावन धाम में चले जाओ।

करजोड़े रूप कहे शुन गौरचन्द्र। तोमा छाड़ि व्रजे जाइते न पाइ आनन्द।।34

श्रीरूप ने हाथ जोड़कर कहा— प्रभो!

आपको छोड़कर वृन्दावन में मुझे कुछ आनन्द न मिलेगा।

गोरा कहे व्रज हय चिदानन्द धाम। स्वयं भगवानेर ताँहा नित्यलीला स्थान।।35

श्रीगौर ने कहा– वृन्दावन नित्य–आनन्द धाम है।
वह स्वयं भगवान् की नित्य लीला का स्थान है।

कालक्रमे सेइ स्थल हैल लुप्तकार। साधुर कर्तव्य–कार्य ताहार उद्धार।।36

कालक्रम से वह कृष्णलीला धाम में लुप्त हो गया है।
भक्त का कर्तव्य है कि उसका उद्धार करे।

भक्तिर प्रचार भक्ति शास्त्रेर ग्रथन। लुप्त तीर्थ उद्धार तिन मुख्य प्रयोजन।।37

भक्ति प्रचार, भक्तिशास्त्रों की रचना एवं लुप्त तीर्थों का उद्धार–
ये मुख्य प्रयोजन हैं श्रीकृष्णभक्त के।

इहा लागि जाह झाट श्रीवृन्दावने। कृष्णकृपाय हैव तव अभीष्ट पूरणे।।38

इन तीनों के लिये तुम शीघ्र ही वृन्दावन चले जाओ।
श्रीकृष्णकृपा से तुम्हारा मनोभीष्ट पूर्ण होगा।

रूप कहे तव दिव्य भंगी बुझा भार। मुञि क्षुद्रतमे कैला आज्ञा गुरुतर।।39

श्रीरूप ने कहा– आपकी दिव्य भंगिमा कौन समझे?
आपकी गुरुतर आज्ञा मुझ क्षुद्रतम जीव पर डाल दिया है।

सकलि सम्भवे तोमार दया सहबले। कुकुर मृगेन्द्र हैते पारे अवहेले।।40

आपकी दया शक्ति से सब कुछ सम्भव है। कुत्ता भी
सहज में सिंह बन सकता है आपकी शक्ति से।

एत कहि श्रीकृष्ण चैतन्ये प्रणमिया। रूप अनुपम व्रजे चले मौन हञा।41

इतना कहकर श्रीरूप ने श्रीकृष्णचैतन्य को प्रणाम किया और चुपचाप
दोनों–श्रीरूप एवं अनुपम ब्रज की ओर चल दिये।

तबे प्रयाग हैते गौर वाराणसी गेला। चन्द्रशेखर ताँरे देखि निज घरे निला।।42

तब प्रयाग से श्रीगौर वाराणसी चले आये।
श्रीचन्द्रशेखर उन्हें देखकर अपने घर ले गये।

चन्द्रशेखर कहे आजि महाभाग्य गुणे। स्वप्ने तुहुँ दया करि दिल दरशने।43

श्रीचन्द्रशेखर ने कहा– आज मेरे महाभाग्य उदित हुए हैं।
स्वप्न में भी आपने दयाकर दर्शन दिया था।

गोरा कहे कृष्णभक्तेर अचिन्त्य महत्व। भावावेश जाने तारा त्रिकालेर तत्त्व।।44

श्रीगौर ने कहा– कृष्णभक्त का अचिन्त्य महत्व है।
आवेश में तीनों कालों की घटना को जान जाता है।

चन्द्रशेखर कहे मुञि हङ नराधम। श्रीचैतन्य कहे तुहुँ साधक उत्तम।।45

चन्द्रशेखर ने कहा– मैं तो नराधम हूँ। श्रीगौर ने कहा– तुम उत्तम साधक हो।

ताँहा हैल तपन मिश्र सह सम्मिलन। सबान्धवे मिश्र करे गौरांग सेवन।।46

वहां श्रीतपनमिश्र से भी मिलाप हुआ।

बान्धवों सहित वह श्रीगौरांग की सेवा करने लगे।

दिनकत काशी धामे श्रीकृष्णचैतन्य। नाम वितरिया बहु जने कैला धन्य।।47

श्रीकृष्णचैतन्यप्रभु अनेक दिन काशी रहे और नाम

वितरण कर अनेकों को धन्य–धन्य कर दिया।

एकदिन तहिं मणिकर्णिकार तीर्थे। दिगम्बर एक न्यासी गेला स्नानार्थे।।48

एकदिन वहां मणि कर्णिका घाट पर एक दिगम्बर संन्यासी स्नान करने आया।

हेन काले श्रीअच्युत गंगास्नान करि। तीरे उठे श्रीकृष्णचैतन्य नामोच्चरि।।49

उस समय श्रीअच्युत भी वहां स्नान कर रहा था। वह अत्यन्त प्रीतिपूर्वक

"श्रीकृष्णचैतन्य" नाम उच्चारण कर गंगा से बाहर निकला।

तारे देखि न्यासी कहे तव घर बंगे। भ्रम ज्ञाने ईश्वरत्व स्थापह गौरांगे।।50

उसे देखकर संन्यासी ने कहा– लगता है तुम्हारा घर बंगला देश में है, इसलिये

भ्रान्त होकर गौरांग में ईश्वरत्व की स्थापना करते हो।

कृत्ये करियाछे तिंह संन्यास ग्रहण। न्यासी धर्म छाड़ि करे हरि संकीर्तन।51

कर्म से उस गौर ने संन्यास धारण कर लिया है,

किन्तु संन्यास धर्म को छोड़कर हरिसंकीर्तन करता फिरता है।

शुनियाछों तिंह इन्द्रजाल विद्यागुणे। भुलाइला उड़िष्यार ज्ञानी सार्वभौमे।।52

सुना है उसने अपने इन्द्रजाल विद्यागुण से

उड़िया देशवासी ज्ञानवान सार्वभौम को भी मोहितकर लिया।

वेदेर विरुद्ध कार्य करे सर्वक्षण। यवन संसर्गे नाहि मानये दूषण।।53

सर्वक्षण वह वेद–विरुद्ध कर्म करता है।

मुसलमानों के साथ मेल–जोल में भी कुछ दोष नहीं मानता है।

छले केह म्लेच्छ यदि कहे हरिनाम। तारे आलिंगिते नाहि करे धर्मज्ञान।।54

कपटपूर्वक भी यदि कोई म्लेच्छ हरिनाम का उच्चारण करता है तो

वह उसे आलिंगन कर लेता है, उसे धर्मज्ञान ही नहीं है।

एत भ्रष्टाचारे लोक तारवश्य हय। इन्द्रजाल बिना इहा मूल कि आछय।।55

भ्रष्टाचार से लोग उसी के वशीभूत होते जा रहे हैं।

इन्द्रजाल के सिवाय इसका और क्या अर्थ है?

श्रीचैतन्येर निन्दावाद शुनि श्रीअच्युत। मृदुभाषे कहे मने हइया व्यथित।।56

श्रीअच्युत श्रीगौर की निन्दा को सुनकर मनमें बड़े दुखी हुए,
फिर भी मृदुल वाणी में बोले–

अहे दिगम्बर न्यासी शुन मोर वाणी। ईश्वर लक्षण जाहे तारे ईश्वर मानि।57

अरे दिगम्बर संन्यासी! मेरी बात सुनो, ईश्वर के लक्षण उनमें हैं,
जिससे उन्हें हम ईश्वर मानते हैं।

बत्रिश लक्षण महापुरुषेर हय। सेइ सब गौरेर आनुषंगिक गणय।।58

महापुरुष में बत्तीस लक्षण होते हैं,
वे सब श्रीगौर में तो आनुषंगिक रूप में पाये जाते हैं।

स्वयं भगवत्त्वेर स्वाभाविक गुण चिह्न। श्रीकृष्णचैतन्ये ताहा आछे परिपूर्ण।।59

स्वयं भगवत्ता के जो भी स्वाभाविक गुण चिन्ह है,
वह श्रीकृष्णचैतन्यप्रभु में परिपूर्ण रूप से विद्यमान हैं।

सेई सब गुण चिह्न भक्तिनेत्रे स्फुरे। कोटि पुण्ये ताहाँ जीव देखिते न पारे।।60

वे सब लक्षण भक्ति–नेत्रों से ही दीख पड़ते हैं, कोटि–कोटि पुण्यों के फल से
भी जीव उन लक्षणों को नहीं देख सकता।

न्यासी कहे परब्रह्म हय निराकार। साकार कल्पना मात्र साधु व्यवहार।।61

संन्सासी ने कहा– परब्रह्म तो निराकार है। केवल व्यवहारिक रूप में भक्तों ने
उसकी साकार रूप में कल्पना कर रखी है।

श्रीअच्युत कहे सेइ कल्पित असत्ये। भजि कैछे लभ्य हैव परब्रह्म सत्ये।।62

श्रीअच्युत ने कहा– उस असत्य–कल्पना से भला
सत्य ब्रह्म श्रीभगवान कैसे प्राप्त हो जाते हैं?

न्यासी कहे सर्वरूपे नित्य ब्रह्मेर सत्ता। तदेकान्म ज्ञाने मुक्तिर नाहिक अन्यथा।63

संन्यासी ने कहा– सर्वरूपों में नित्यब्रह्म की सत्ता है। उसके तदेकात्म ज्ञान से
ही (सोऽहंब्रह्म ज्ञान से ही) मुक्ति हो सकती है अन्यथा नहीं।

श्रीअच्युत कहे विश्वे ब्रह्मे किवा भेद। न्यासी कहे जगत् सर्व ब्रह्मेते अभेद।।64

श्रीअच्युत ने कहा– विश्व और ब्रह्म में क्या भेद है?
संन्यासी बोले–जगत सम्पूर्ण ब्रह्म से अभेद है।

श्रीअच्युत कहे तबे ब्रह्मैकाश विश्व। न्यासी कहे सत्य सेइ सर्वरूपे दृश्य।।65

श्रीअच्युत ने कहा– तब तो विश्व ब्रह्म का एक अंश हुआ? संन्यासी बोले–
परिदृश्यमान समस्त रूपों में वही सत्यरूप से अवस्थित है।

श्रीअच्युत कहे ब्रह्म आत्मा भगवान्। सच्चिदानन्दमय वेदेते प्रमाण।।66

श्रीअच्युत ने कहा– ब्रह्म, आत्मा एवं भगवान्–

ये तीनों सच्चिदानन्दमय हैं, इसका वेद प्रमाण है।

स्वेच्छा शक्तिद्वारे सिंह हय बहु रूपी। नित्य एक रूप तार तेजे सर्वव्यापी।।67

वह अपनी इच्छा शक्ति से अनेक रूप में आत्म प्रकट करता है।

वह नित्य एक रूप है, उसका तेज सर्वव्यापक है।

आब्रह्म स्तम्भ पर्यन्त जेह चराचर। समस्त जानिह ईश्वरांश अवतार।।68

आब्रह्म–स्तम्भ पर्यन्त जितने चर–अचर हैं,

वे सब ईश्वरांश में ही प्रकाशित हो रहे हैं।

अंशे अवतरे परिपूर्ण कैछे बाधा। सर्वशक्तिमाने किछु ना करिओ द्विधा।।69

फिर परिपूर्ण को अवतरित होने में कैसी, क्या बाधा हो सकती है?

वह सर्वशक्तिमान है, फिर उसमें तुम क्यों भेद देखते हो?

जांहार अविद्या शक्ति कटाक्षेर द्वारे। जलाकार शक्ति देह संकोच विस्तारे।।70

जिनकी अविद्या शक्ति के कटाक्ष से जल की

बिन्दु शरीर का संकोच और विस्तार करती है।

सेइ षड़ैश्वर्यपूर्ण भगवद्विग्रहे। व्याप्य व्यापकता शक्ति नाहिक सन्देहे।।71

उन षड़ैश्वर्यपूर्ण भगवद्विग्रह में व्याप्य एवं व्यापकता शक्ति है–

इसमें कोई भी सन्देह नहीं हो सकता।

धर्म संस्थापन लागि स्वयं भगवान। स्वयं प्रकटिया करे जीवेर कल्याण।।72

धर्म संस्थापन के लिए स्वयं भगवान् प्रकटित होकर

जीवों का परम कल्याण का विधान करते हैं।

इत्यादि अनेक युक्ति शास्त्रेर प्रमाणे। न्यासीर कुतर्कवाद करिला खण्डने।73

इसप्रकार अनेक युक्ति एवं शास्त्रप्रमाणों से श्रीअच्युत ने

संन्यासी के कुतर्कवाद का खण्डन कर दिया।

विस्मय हआ न्यासी कहे करिनु स्वीकार। जीव हित लागि ईश्वर करे अवतार।74

विस्मित होकर संन्यासी ने कहा– तुम्हारी बात को मैं स्वीकार करता हूँ। जीवों के हित के लिए ही ईश्वर अवतार धारण करते हैं।

कलिते ईश्वरेर अवतार कि प्रमाणे। श्रीअच्युत कहे तबे शुन सावधाने।।75

संन्यासी ने कहा कि कलि में ईश्वर का अवतार होता है– इसका क्या प्रमाण है? श्रीअच्युत ने कहा– इसे भी सावधान होकर सुनो–

श्रीभगवानेर अवतार असंख्य हय। वेद पुराणादि शास्त्रे फुकारिया कय।।76

श्रीभगवान् के असंख्य अवतार हैं– यह बात वेद–पुराणादि पुकार कर कहते हैं।

चारियुगे हय कृष्ण चारि अवतार। शुक्ल रक्त कृष्ण पीत रूपे परचार।।77

चार युगों में श्रीकृष्ण के मूल चार अवतार होते हैं– शुक्ल (सफेद), रक्त (लाल), कृष्ण (श्याम) एवं पीत (स्वर्णवर्ण)– यह बात सब वेदों में प्रसिद्ध है।

कलिते भकत रूपे हैला अवतीर्ण। सेई पीतवर्ण एइ श्रीकृष्णचैतन्य।।78

कलि में श्रीकृष्ण भक्तरूप में अवतीर्ण होते हैं– वही पीतवर्ण श्रीकृष्ण–चैतन्य हैं।

दया करि नवद्वीपे कैला शुभोदय। स्वयं धर्म आचरिया जीवेरे शिखाय।79

उन्होंने करुणा कर नवद्वीप में अवतार लिया है। वे स्वयं कलिधर्म–श्रीनाम संकीर्तन का आचरण कर जीवों को श्रीनाम जाप की शिक्षा दे रहे हैं।

मायाधीशे जीव सम देखये अभक्त। पित्त दूषित नेत्रे जैछे शंखे देखे पीत।80

किन्तु जो अभक्त हैं वे मायाधीश को भी जीव के समान देखते हैं, जैसे पित्त रोग से दूषित व्यक्ति के नेत्र सफेद शंख को भी पीले–रंग वाला देखते हैं।

न्यासी कहे सेइ एइ इथे कि प्रमाण। श्रीअच्युत कहे साक्षी रूप गुण नाम।81

संन्यासी ने कहा– फिर यहां श्रीगौर विषय में क्या प्रमाण है? श्रीअच्युत ने कहा– उनके रूप, नाम एवं गुण ही इस बात के उनकी भगवत्ता के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। श्रीगौरांग नाम की महिमा अपार है।

"गौरांग गौरांग" बलि डाक एकबार। रोमान्च हइवे देहे अति चमत्कार।।82

"गौरांग–गौरांग"– एक बार बोलकर देखो तो, तुम्हें इससे पुलक होगा शरीर में, जिससे तुम्हें चमत्कार होगा व और प्रेमभक्ति का उदय होगा।

शुनिन्यासी श्रीगौरांगनाम उच्चारिला। भक्त वाक्ये गौर कृपाज्योत्स्ना विस्तारिला83

यह सुनकर उस संन्यासी ने श्रीगौरांग–नाम का उच्चारण किया। श्रीअच्युत की वाणी अनुसार श्रीगौर कृपा ने अपना प्रभाव विस्तार किया।

कृष्णभक्तेर संगालापेर अविचिन्त्य गुणे। पुलक धरिला तेंह कदम्बेर समे।।84

कृष्णभक्त के साथ वार्त्तालाप करने का अचिन्त्य गुण है। उस न्यासी के शरीर में तत्काल कदम्ब वृक्ष के समान पुलकावली हो उठी इसीलिये–

साधु संग साधु संग सर्व शास्त्रे कहे। लव मात्र साधु संग से सर्व सिद्धि होय।।

आश्चर्य मानिया न्यासी फुकारिया कय। श्रीचैतन्य अप्राकृत नाहिक संशय।।85

आश्चर्य चकित होकर संन्यासी बोल उठा–
श्रीचैतन्य चिन्मय विग्रह हैं– इसमें संशय नहीं है।

श्रीगौरांग नाम शुद्ध–प्रेम रसमय। सिद्ध हरिनामापेक्षा माधुर्यातिशय।।86

श्रीगौरांग नाम शुद्ध प्रेमरसमय है।

सिद्ध हरिनामापेक्षा इसका माधुर्य अधिक है। जपकर मुझे आनन्द हुआ।

एबे काँहा रहे गोरा ताँहा मुञि जाङ। ताने देखि देह मन पराण जुड़ाङ।।87

न्यासी पूछने लगा– अब श्रीगौरांग कहां रहते हैं, वहां मैं जाना चाहता हूँ।

उनके दर्शनकर मैं अपने देह–मन–प्राणों को शीतल करूंगा।

श्रीअच्युत कहे तुहुँ चल मोर संगे। जीवन सफल कर देखि श्रीगौरांगे।।88

श्रीअच्युत ने कहा–चलो न मेरे साथ। श्रीगौरांग का दर्शनकर जीवनसफल करो।

किन्तु तोंहे दिगम्बर देखि गौरचन्द्र। लज्जित हइव बड़ आर निरानन्द।।89

श्रीअच्युत ने कहा– तुम्हें दिगम्बर (वस्त्रहीन) देखकर तो

श्रीगौरचन्द्र लज्जित होंगे और उन्हें दुख होगा।

न्यासी कहे अयाचके केवा वस्त्र दिव। श्रीअच्युत कहे मोर स्थाने लभ्य हैव।।90

तब संन्यासी ने कहा– मैं तो अयाचक–वृति हूँ। बिना मांगे मुझे वस्त्र कौन दे देगा? श्रीअच्युत ने कहा– लो मैं तुम्हें वस्त्र देता हूँ।

एत कहि अर्द्धवस्त्र छिण्डि दिला ताँरे। न्यासी ताहा परिला सज्जन व्यवहारे।।91

इतना कहकर श्रीअच्युत ने अपने वस्त्र में से आधा फाड़कर उसे दे दिया तब संन्यासी ने भी उनकी सज्जनता मानकर उसे धारण किया।

तार परे दोंहे श्रीचैतन्य–पाशे गेला। श्रीअच्युत गौरपदे दण्डवत कैला।।92

तब दोनों श्रीचैतन्य के पास आए।

श्रीअच्युत ने आकर श्रीगौरचरणों में दण्डवत् प्रणाम किया।

न्यासी एक दृष्टे चाहे गौरांगेर पाने। गोरा अंगे विश्वरूप देखे भाग्यक्रमे।।93

संन्यासी एकटक होकर श्रीगौर की ओर देखने लगा–

तो भाग्यवश श्रीगौर अंग में उसे विश्व (जगत) रूप दिखलाई देने लगा।

अत्यन्त अद्‌भुत दिव्य महिमा दर्शने। प्रेमगंगाधारा न्यासीर बहे दुनयने।।94

दर्शन में उसे अत्यन्त दिव्य महिमा दिखायी दी,

संन्यासी के दोनों नेत्रों से प्रेमगंगाधारा बह निकली।

कर जोड़े श्रीचैतन्ये करये स्तवन। तुहुँ सर्वेश्वर साक्षात् ब्रजेन्द्रनन्दन।।95

हाथ जोड़कर वह श्रीचैतन्य की स्तुति करने लगा।

आप तो साक्षात् सर्वेश्वर ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण हैं।

लोक शिक्षाइते आइला भक्तरूप धरि। तोंहार निर्मल दयाय जाङ बलिहारी।।96

लोकशिक्षा के लिए आप भक्तरूप में अवतीर्ण हुए हैं।
आपकी निर्मल–अहैतुकी दया पर मैं बलिहारी जाता हूँ।

मुञि नराधम तुया ना जानि महत्व। अनेक निन्दिनु अहंकारे हञा मत्त।।97

मैं तो नराधम हूँ, आपकी महिमा को नहीं जानता था।
मैंने अहंकारवश आपकी बहुत निन्दा की है।

दया करि अपराध कर त मार्जन। तव श्रीचरणे मुञि लइनु शरण।।98

आप कृपाकर मेरे अपराध को क्षमा कीजिये। मैंने
आज आपके चरणों की शरण ग्रहण कर ली है।

इत्यादि अनेक दैन्य स्तवन करिया। गौरपदे पड़े न्यासी दण्डवत् हञा।।99

इसप्रकार अनेक दैन्यपूर्वक उसने श्रीगौर की स्तुति
की और प्रभु के चरणों में दण्डवत् पड़ गया।

नमो नारायण बलि गोरा ताँरे छुइला। स्पर्श छले ताहे आत्मशक्ति संचारिला।100

"नमो नारायण" जय श्रीकृष्ण कहकर श्रीमहाप्रभु ने उसका स्पर्श किया। स्पर्श
कर उसमें अपनी शक्ति का संचार किया।

गौर स्पर्शमणिर स्पर्शे प्रेम उपजिल। ऊर्ध्वबाहु हञा न्यासी नाचिते लागिल।।101

श्रीगौर स्पर्श–मणि के स्पर्श से उसमें प्रेम आविर्भूत
हो उठा और वह ऊर्ध्वबाहु होकर नाचने लगा।

हुंकार गर्ज्जन करे लोके भयंकर। श्रीचैतन्य सर्वेश्वर बोले बारे–बार।।102

हुंकार और गर्जना करने लगा, जिसे देखकर लोगों को भय होने लगा।
बार–बार वह **"श्रीचैतन्य–सर्वेश्वर" "धन्य कलियुग में चैतन्य अवतार नाम"**
का उच्चारण कर रहा था।

श्रीअच्युत नाचे आर नाचे भक्तगण। धन्य कलियुग बलि करये कीर्तन।।103

उसके साथ श्रीअच्युत एवं सब भक्तगण नाचने लगे।
यह कलियुग धन्य है– ऐसा बार–बार कहने लगे।

साधु–कृपाय न्यासीवर हइला उद्धार। साधुर चरणे मोर कोटि नमस्कार।104

भक्तकृपा से उस दिगम्बर संन्यासी का उद्धार हो गया।
भक्तों के चरणों में मेरा कोटि नमस्कार है।

साधुर चरित्र लव नारिनु लिखिते। जे किछु लिखिनु श्रीवैष्णव परसादे।।105

भक्तचरित्र को जरा भी मैं नहीं लिख सका–
जो कुछ लिखा है वह श्रीवैष्णवों का प्रसाद ही है।

काशीपूर्ण हइल गोरार प्रभाव सम्बन्धे। अनेक वैष्णव हइला सेइ अनुबन्धे।।106

श्रीगौर–प्रभाव से सारी काशी गूंज उठी।
उसी बात से अनेक लोग वैष्णव बन गये।

तथि श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती ख्याति। सन्यासीर मध्ये जिंह बुद्ध्ये वृहस्पति।।107

वहां संन्यासियों में श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती भी रहते थे,
जो बुद्धि में बृहस्पति के समान विद्वान थे।

बहु शास्त्रवेत्ता पण्डितेर शिखामणि। गौरांग निन्दये तिंह हञा अभिमानी।108

वे अनेक शास्त्रों के वक्ता पण्डित शिरोमणि थे,
वह भी अभिमान में भरकर श्रीगौर की निन्दा करते थे।

दयासिन्धु श्रीचैतन्य दया प्रकाशिला। बहु शास्त्र युक्तये तारे स्वमते आनिला।109

दयासिन्धु श्रीचैतन्य ने दया प्रकाशित की और
अनेक शास्त्र–युक्तियों से उन्हें अपने अनुगत कर लिया।

श्रीप्रबोधानन्देर सब खण्डिल संशय। गौरांगे ईश्वर बलि करिला निश्चय।110

श्रीप्रबोधानन्द के सर्व संशय श्रीगौर ने खण्डन कर दिये और
उसने निश्चय कर लिया कि श्रीगौरांग भगवान् ही हैं।

श्रीप्रबोधानन्दे गोरा बड़ दया कैला। शक्ति संचारिया तारे प्रेमभक्ति दिला।।111

श्रीमहाप्रभु ने श्रीप्रबोधानन्द पर महान दया की और
उनमें शक्ति संचार कर उसे प्रेमभक्ति प्रदान की।

परम वैष्णव हैल श्रीप्रबोधानन्द। खण्डिल कुतर्कवाद पाइल प्रेमानन्द।।112

श्रीप्रबोधानन्द परम वैष्णव हो गये और प्रेमानन्द प्राप्त कर
स्वयं ही कुतर्कवाद का उन्होंने खण्डन किया।

सरस्वती हैला गौरेर भक्त प्रवीण। कृष्ण पीतरूपे प्रकट कहे रात्रि दिन।113

सरस्वती जी श्रीगौरभक्तों में प्रवीण भक्त हो गये– श्रीकृष्ण पीत वर्ण में प्रकट
हुए हैं" यही बात वे दिन रात कहते थे। महाप्रभु ने उन्हें प्रकाशानन्द से
प्रबोधानन्द नाम दिया।

संकीर्तने अश्रुधारा बहे दुनयने। कभु गड़ागड़ि जाय नाहिं स्थानास्थाने।।114

संकीर्तन में उनके दोनों नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगती। कभी–कभी तो
वे पछाड़ें खाने लगते, उन्हें स्थान–अस्थान का भी ज्ञान न रहता।

कभु नृत्य करे प्रेमे ऊर्ध्वबाहु हञा। आपनारे निन्दि कभु कान्दे फुकारिया।।115

कभी तो प्रेमाविष्ट होकर भुजाएं ऊँची उठाकर नृत्य करने लगते और अपनी अनेक निन्दा कर उच्च स्वर में रोने लगते।

श्रीगौरांगे स्तव करे पद्म विरचिया। अद्भुत वर्णने जीव उठे शितरिया।।116

श्लोक–रचना करके श्रीगौरांग की वे स्तुति गान करते। उस अद्भुत रचना को देख–सुनकर सब भक्त पुलकित हो उठते।

तार छात्र आदि जत पण्डितेर गण। गौरांग पदारविन्दे लइला शरण।।117

श्रीसरस्वती के जितने पण्डित छात्रगण थे,
उन सबने भी श्रीगौरांग चरणों की शरण ग्रहण करली।

गोराचाँदेर दिव्याद्भुत लीलार नहि अन्त।मुञि छार कि कहिमु ना पारे अनन्त118

श्रीगौरचाँद की दिव्याद्भुत लीलाओं का अन्त नहीं है,
फिर मैं क्षुद्र जीव उनका कैसे पार पा सकता हूँ।

श्रीकृष्ण चैतन्य शुद्ध दयार भाण्डार। सनातने शिक्षाइला भक्ति तत्वसार।119

श्रीकृष्णचैतन्य शुद्ध निरहैतुक दया के भण्डार हैं। उन्होंने श्रीसनातन को भी भक्तितत्व सार की शिक्षा दी।

गोरा सह सनातनेर काशी ते मिलन। महाप्रभुर आज्ञाय तिहुँ गेला वृन्दावन।।120

श्रीसनातन का काशी में ही श्रीगौर के साथ मिलन हुआ। वे भी प्रभु आज्ञा पाकर वृन्दावन चले आये।

श्रीमान सनातन हय सर्वशास्त्र ज्ञाता।परम वैराग्ये श्रीरूपेर ज्येष्ठ भ्राता।।121

श्रीसनातन गोस्वामी सर्वशास्त्रों के ज्ञाता,
परम वैराग्यवान और श्रीरूप के बड़े भाई थे।

व्रजे श्रीगोविन्द मूर्त्ति श्रीरूप स्थापिला। सनातन मदनगोपाले प्रकाशिला।122

ब्रज में श्रीरूपगोस्वामी ने श्रीगोविन्दजी का श्रीविग्रह स्थापन किया और श्रीसनातन ने श्रीमदनगोपाल के श्रीविग्रह को प्रकाशित किया।

एइ दुई भाइ महा साधु दयावान्। भक्तिशास्त्रे प्रकाशिया भक्ते कैला दान।।123

ये दोनों भाई परमदयालु कृष्णभक्त थे।
इन्होंने भक्तिशास्त्र प्रकाशित कर भक्तों को प्रदान किया।

एइ दोंहार भ्रातुष्पुत्र श्रीजीव गोसाञि। भक्तिशास्त्र सुसिद्धान्ते तार सम नाञि।124

इनके भतीजे थे श्रीजीव गोस्वामी, भक्तिशास्त्र सिद्धान्त स्थापन करने में जिनके समान और कोई नहीं है, न हो सकता है।

श्रीगोपाल भट्ट श्रीमान भट्ट रघुनाथ। परमपण्डित आर दास रघुनाथ।।125

श्रीगोपालभट्ट एवं श्रीरघुनाथभट्ट तथा परम पण्डित श्रीरघुनाथ दास

एइ सब निर्मत्सर भक्तिशास्त्रे वेत्ता। लुप्त तीर्थ प्रकाशक गोस्वामी आख्याता।126

ये सब भक्तिशास्त्र के निर्मत्सर वेत्ता हैं– ईर्ष्या–द्वेष एवं स्वप्रतिष्ठा के लिए कपोल कल्पित ग्रन्थों के रचयिता न थे। ये गोस्वामिवृन्द ही लुप्त तीर्थों के एवं सद्ग्रन्थों के प्रकाशक हुए हैं।

महाप्रभु आर दुई प्रभुर समेते। भक्तिशास्त्र भक्तिवर्त्म करिला विदिते।।127

श्रीमहाप्रभु तथा श्रीनित्यानन्द प्रभु एवं श्रीअद्वैत प्रभु– इन तीनों ने भक्तिशास्त्रों तथा भक्तिमार्ग को प्रकाशित कर जगत जीव का उद्धार किया।

मोर प्रभु एइ छयेर गुण प्रशंसय। राधाकृष्ण नित्या सखीर मंजरी कय।।128

मेरे प्रभु– श्रीअद्वैत इन छहों गोस्वामियों के गुणों की प्रशंसा किया करते थे। इन्हें श्रीराधाकृष्ण की नित्य सखी मन्जरी कहा करते थे।

महाप्रभु एक मात्र श्रीचैतन्य हय। नित्यानन्दाद्वैत दोंहे प्रभुते गणय।।129

श्रीकृष्ण चैतन्य ही एकमात्र महाप्रभु हैं और
श्रीनित्यानन्द तथा श्रीअद्वैत– इन दोनों की 'प्रभु' में गिनती है।

गदाधर पण्डित श्रीवासे कहे तत्व। द्वादश गोपाल आर चौषटि महान्त।।130

श्रीगदाधर पण्डित, श्रीवास को द्वादश गोपाल तथा
चौंसठ महन्तों आदि का तत्व वर्णन किये थे।

ताहा लिखि जाहा मुञि साधुमुखे शुनि। असंख्य गौरांगगणेर महिमा न जानि।131

मैंने वही लिखा है, जिसे मैंने भक्तों के मुख से सुना है।
असंख्य है गौरांग गणों की महिमा– मैं कुछ भी नहीं जानता।

तबे महाप्रभु वाराणसी धाम हैते। पुन झारिखण्डेर पथे आइला श्रीक्षेत्रे।।132

तब श्रीमहाप्रभु वाराणसी से झारीखण्डके मार्ग से चलकर श्रीक्षेत्र पुरी आ पहुँचे।

महाप्रभुर दरशने जत भक्तगण। प्रेमावेशे आनन्दाश्रु कैला वरिषण।।133

श्रीमहाप्रभु के दर्शन कर समस्त भक्त प्रेमाविष्ट होकर अश्रु विमोचन करने लगे।

रायरामानन्द आदि दण्डवत कैला। बाहु पशारिया गोरा सभे आलिंगिला।134

श्रीरामानन्द आदि सबने श्रीप्रभु को दण्डवत् किया।
श्रीप्रभु ने भुजाएं पसार कर सबको आलिंगन किया।

श्रीकृष्णचैतन्य द्विजराजेर ज्योत्स्नाय। संकीर्तन सुधा सिन्धुर तरंग बाढ़य।135

श्रीकृष्णचैतन्य–द्विजराज की ज्योत्स्ना में संकीर्तन
सुधा–सिन्धु अतिशय तरंगायित हो उठा।

सर्वभक्त मेलि करे महासंकीर्तन। मनुष्य कि छार देवे करे आकर्षण।।136

समस्त भक्त मिलकर महासंकीर्तन करने लगे, मनुष्यों की क्या बात, देवतागण भी आकृष्ट होकर आकाशगंगा नृत्यगान स्तुति करने लगे।।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागरईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।137

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत चरणों की अभिलाषा करते हुए
श्रीईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश की रचना करते हैं।

अष्टादश अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्यचन्द्र की जय हो, श्रीसीतनाथ की जय हो।
श्रीनित्यानन्द राम की समस्त भक्तों सहित जय हो।

एकदिन श्रीअद्वैत प्रभुर निकटे। सीता कहे उघारिया मनेर कपाटे।।02

एकदिन श्रीअद्वैत प्रभु से श्रीसीतादेवी अपने मन के भाव प्रकट कर बोलीं–

कतदिन गेल नाहि देखि गोराचाँदे। निरवधि तार लागि मन प्राण कान्दे।।03

अनेक दिन बीत गये हैं मैंने श्रीगौरचन्द्र को नहीं देखा है।
मेरे प्राण निरन्तर उसके लिए रो रहे हैं।

कबे मोर शुभ भाग्येर उपजिवे फल। पुन निरखिमु गोरार श्रीमुखमण्डल।।04

मेरे शुभ भाग्यों का फल कब उदित होगा कि
फिर श्रीगौरमुख मण्डल को मैं देखूंगी?

कबे प्रियतम वस्तु गौरे समर्पिया। जुड़ाइमु गौर विच्छेद–दाहदग्ध हिया।।05

कब मैं श्रीगौर को उसकी प्रियतम वस्तु खिलाकर
गौर–विरह में जलते हुए हृदय की ताप बुझाऊँगी?

कबे गौरार कथामृत पुनः पुन पिया। अशान्त संसार क्षुधा फेलिमु ठेलिया।06

कब फिर श्रीगौर–वचनामृत पानकर कभी न
बुझने वाली संसार क्षुधा को निवृत्त करूँगी?।

मनेर जे दुख मुञि करिल विदिते। प्रतिकार कर यदि स्नेह थाके चित्ते।।07

मैंने अपने मन का जो दुख आपसे निवेदन किया है, यदि आपका मेरे प्रति स्नेह है तो उसकी निवृत्ति का उपाय कीजिये।

एत कहि प्रेमावेशे करये क्रन्दन। प्रभु कहे धन्य धन्य तोमार जीवन।।08

इतना कहकर प्रेमाविष्ट होकर श्रीसीता माता रोने लगीं। श्रीअद्वैत बोले– सीता!
तुम्हारा जीवन धन्य है, धन्य है। तूने गौर प्रीति पाई है।

कहितेइ हैला प्रभु प्रेमे मातोयारा। हुंकार करये घन बुलि गोरा गोरा।।09

इतना कहते ही श्रीअद्वैत भी प्रेमोन्मत्त हो उठे और
हुंकार करके उच्चस्वर में "गौर–गौर" पुकारने लगे।

प्रभु कहे श्रीचैतन्य गत जार प्राण। ताहारे जानिये सत्य महाभाग्यवान।।10

श्रीअद्वैत बोले– जिसके प्राण गौरगत हैं,
उसे निश्चय ही महा महा भाग्यवान समझिये।

गोरा नाम शुनि जार पुलक उद्गम। सेइ जने जानो मुञि साधक उत्तम।11

गौर–नाम सुनकर जिसमें पुलक होता है, उसे मैं उत्तम साधक जानता हूँ।

गौरांग बलिते जार बहे अश्रुधार। सेईजन नित्य सिद्ध भक्त अवतार।।12

गौरांग कहते ही जिसकी अश्रुधारा बह निकलती है,
वह व्यक्ति नित्यसिद्ध भक्त का अवतार है।

एत कहि कैला तिंह गंभीर गर्ज्जन। ऊर्ध्वबाहु हञा करे नर्त्तन कीर्तन।।13

इतना कहकर प्रभु ने वहां गम्भीर गर्ज्जना की एवं
भुजा उठा कर नृत्य–कीर्तन करने लगे।

कथोक्षणे सीतानाथ बाह्य प्रकाशिला। गौरगुणालापे सीताय सान्त्वना करिला।।14

बहुत देर के बाद श्रीअद्वैतचन्द्र को बाह्य ज्ञान हुआ।
उन्होंने गौरगुणधाम श्रीसीतादेवी माँ को सान्त्वना दी।

हेनकाले एक वैष्णव प्रभु नमस्करि। सेन शिवानन्देर वार्त्ता कहये फुकारि।15

उसी समय एक वैष्णव वहां आया और प्रभु को
नमस्कार कर श्रीशिवानन्दसेन का सन्देश सुनाने लगा।

अहे प्रभु सीतानाथ कर अवधाने। शिवानन्द मोरे पाठाइला तव स्थाने।।16

वह बोला– हे प्रभो सीतानाथ! सुनिये,
मुझे आपके पास शिवानन्द सेन ने भेजा है।

रथयात्रा उपलक्षे श्रीपुरुषोत्तमे। तिनि सब चलिवेन लइ गौरगणे।।17

रथयात्रा उपलक्ष्य में वे सब गौर भक्तों को लेकर श्रीक्षेत्र जा रहे हैं।

प्रभु नित्यानन्द आर श्रीवासपण्डित। गदाधर आदि सभे हइला मिलित।।18

प्रभु नित्यानन्द एवं श्रीवास पण्डित श्रीगदाधर आदि सब सम्मिलित हो गये हैं।

श्रीवैष्णव मुखे प्रभु शुभ वार्ता पाञा। सीता सह सीतानाथ चलिला साजिया।।19

उस वैष्णव से यह शुभ संवाद पाकर सीतादेवी
के साथ तैयार होकर श्रीअद्वैत भी चल दिये।

महासाध्वी सीतादेवी आनन्दित मने। गौरेर प्रिय वस्तु सभ लईला यतने।।20

महासाध्वी सीतादेवी को मन में महा आनन्द हो रहा था। उसने श्रीगौर की समस्त प्रिय वस्तुएं भी यत्नपूर्वक साथ ले लीं।

श्रीगोपाल दास नित्य–गौरगत प्राण। गौरांग देखिते तिंह करिला पयान।।21

श्रीगोपालदास तो नित्य गौरगत प्राण थे।
वह भी श्रीगौर दर्शन के लिए साथ हो लिये।

श्रीगुरु वैष्णव कृपाय मुञि नराधम। सेइ संगे भृत्य कार्ये करिनु गमन।।22

श्रीगुरु–वैष्णव कृपा से मैं नराधम भी एक सेवक रूप में उनके साथ चल दिया।

श्रीगौरांग गण सह प्रभुर मिलने। आनन्द बाढ़िल दण्डवत् आलिंगने।।23

श्रीगौरांग भक्तों के साथ श्रीअद्वैत के मिलन में
दण्डवत् आलिंगन में अतिशय आनन्द प्राप्त हुआ।

संकीर्तनानन्दे सभे गमन करिला। पथे तीर्थ क्षेत्रे देखि नीलाचले आइला।।24

संकीर्तनानन्द में विभोर होकर सब चल दिये व
रास्ते के तीर्थों का दर्शन करते हुए नीलाचल आ पहुँचे।

निजगणेर शुभागमन शुनि गौरचन्द्र। भक्त संगे आगुलिला पाञा महानन्द।25

श्रीगौरचन्द्र अपने भक्तों के शुभागमन को सुनकर आनन्दपूर्वक अपने भक्तों के साथ उनकी अगवानी करने पहुँचे और सहर्ष सबका स्वागत किया।

दूर हैते श्रीगौरांगे देखि भक्तगण। प्रेमावेशे चले करि उच्च संकीर्तन।।26

दूर से ही श्रीगौरांग को देखकर भक्तों ने
प्रेमाविष्ट होकर उच्च संकीर्तन करना आरम्भ किया।

श्रीकृष्णचैतन्य सह भक्तेर मिलने। जे आनन्द हइल ताहा ना जाय वर्णने।27

श्रीकृष्णचैतन्य के साथ भक्तों के मिलन में
जो आनन्द उत्पन्न हुआ वह अकथनीय है।

प्रेमावेशे गौर बेढ़ि श्रीवैष्णवगण। नाम संकीर्तन आर करये नर्त्तन।।28

प्रेमावेश में भक्तों ने श्रीगौरांग को चारों तरफ से घेर लिया
और नृत्य पूर्वक उच्च संकीर्तन करने लगे।

महाप्रभु–प्रेम–महासमुद्र कल्लोले। डुबाइला सर्व भक्तगणे अवहेले।।29

श्रीमहाप्रभु ने प्रेम महासागर की तरंगों में अनायास
समस्त भक्तों को सराबोर कर दिया।

क्रमे ताहे आपनार हइल साँतार। नयन युगले बहे सुरधुनीर धार।।30

श्रीमहाप्रभु स्वयं भी प्रेमसागर में डूब गये और
उनके दोनों नेत्रों से अश्रु गंगाधारा प्रवाहित होने लगी।

प्रभु नित्यानन्द शुद्ध प्रेमेते माहिया। हरे कृष्ण बलि नाचे ऊर्ध्वबाहु हञा।।31

प्रभु नित्यानन्द शुद्ध प्रेम में उन्मत्त हो उठे और
ऊर्ध्वबाहुकर हरेकृष्ण महामन्त्र गानकर नाचने लगे।

श्रीअद्वैत प्रभुर प्रेम ना जाय वर्णने।
पाषण्ड दलिमु बलि करये गर्ज्जने।।32

श्रीअद्वैत प्रभु का प्रेम तो वर्णन ही नहीं हो सकता–"पाषण्डियों का मैं दलन कर
दूँगा" यह बोलकर वे गर्ज्जना कर रहे थे।

हेनकाले जगन्नाथ रथेते चढ़िला। देखि गोरा गोपीभावे एकपद गाइला।।33

जिससमय श्रीजगन्नाथजी रथ पर चढ़े।
यह देखकर श्रीगौर गोपीभाव का एक पदगान करने लगे।

बहुकाले तोरे काला लाग पाइलाङ। अन्तरे राखिमु भरि नाहि छाड़िवाङ।।34

हे श्याम! बहुतकाल पीछे मैंने तुम्हें पाया, अब
तुम्हें मन मन्दिर में बन्द करके मैं रखूंगी, जाने नहीं दूंगी।

एई गीत महाप्रभु धरे भावावेशे। ताहे दुइ प्रभु दिव्य आखर प्रकाशे।।35

भावावेश में श्रीमहाप्रभु यह पदगान कर रहे थे।
साथ–साथ श्रीनित्यानन्द तथा श्रीअद्वैत दिव्य ध्वनि कर रहे थे।

क्रमे भाव सिन्धुर तरंग उथलिल। स्तम्भादि रतन–भक्त सर्वांगे परिल।।36

इसप्रकार भावसिन्धु की तरंगे उछलने लगीं।?
भक्तों के अंगों पर स्तम्भादि रत्न भूषित होने लगे।

तबे श्रीगौरांग महाभावेर उद्‌गमे। संकीर्तन माझे पड़े हञा अचेतने।।37

तब श्रीगौरांगमहाप्रभु महाभावावेश में संकीर्तन के बीच में बेसुध होकर गिर पड़े।

सेइ पद पुन गीते चैतन्य जागिला। बाहु पसारिया नित्यानन्दे कोले दिला।।38

उसी पद के गान करने पर फिर प्रभु को चेतना आई तो
भुजाऐं पसार कर श्रीनित्यानन्द को आलिंगन कर लिया।

निताई दुइ हाते गौरेर दुई हात धरि। सुमधुर नृत्य करे अद्वैतेर धरि।।39

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने दोनों हाथों से श्रीगौरहरि के दोनों हाथ पकड़ लिये और
श्रीअद्वैतचन्द्र के साथ सुमधुर नृत्य करने लगे।

प्रभु कहे तो दोंहार रंगे बुझा भार। गौर निताई कहे तुञि रंगेर सूत्रधार।।40

श्रीअद्वैत कहने लगे– इस आनन्द का सारा श्रेय आपको है। श्रीगौर नित्यानन्द बोले– इस समस्त लीलानन्द के सूत्रधार तो आप हैं।

तबे परस्पर करि गाढ़ आलिंगन। हरि बलि तिन ठाकुर करये क्रन्दन।।41

तब तीनों प्रभु गाढ़ आलिंगन कर "हरि–बोल" उच्चारण करते हुए रोने लगे।

कभु कहे आइस जीव आर भय नाई। हरि बलि नाचि गाइ भव पारे जाई।।42

कभी तो यह कहते कि–"आओ, आओ हे जीवसमुदाय! अब तुमको कुछ भय नहीं है। हरि बोलो, नाचो, गाओ और भवसागर से पार हो जावो।

ताहा शुनि भक्तगण करये नर्त्तन। केह प्रेमे कान्दे केह करये गर्ज्जन।।43

यह सुन भक्तगण नृत्य करने लगे। कोई प्रेम में रोता तो कोई गर्ज्जना करता।

हेन काले श्रीगोपाल अद्वैतनन्दन। दुइ बाहु तुलि नाचे भुवन–मोहन।।44

इतने में श्रीअद्वैतनन्दन श्रीगोपालदास दोनों भुजाएं उठाकर त्रिभुवन मोहनकारी नृत्य करने लगा।

नाचिते नाचिते गोपाल हइला मूर्च्छित। बहु नाम कीर्तने नहिल संज्ञा प्राप्त।।45

नाचते–नाचते वह मूर्च्छित हो गया। अनेक नाम संकीर्तन करने पर भी उसे चेतनता न आयी।

मृत्युप्राय गोपालादासे देखे सीतानाथ। हा कृष्ण कि कैला बलि करे आर्त्तनाद।46

श्रीअद्वैतचन्द्र ने देखा कि गोपाल तो मृत–प्रायः हो गया है। वे दुखी होकर विलाप करके कहने लगे–हे कृष्ण! यह आपने क्या कर दिया?

हेन काले महाप्रभु श्रीशची नन्दन। उठह गोपाल बलि डाके घने घन।।47

तब श्रीमहाप्रभु ने जोर से कहा गोपाल उठो।

जाहार कृपाते जगतेर सचैतन्य। तांहार आज्ञाते केवा थाके अचैतन्य।।48

जिनकी कृपा से सारा जगत् चेतनता प्राप्त करता है,
फिर उनकी आज्ञा पाकर कौन अचेतन रह सकता है?

श्रीचैतन्य कृपा लवे श्रीगोपालदास। जागि कहे मुञि हङ चैतन्येर दास।।49

श्रीचैतन्य कृपालेशसे श्रीगोपालदास जाग उठा और बोला–"मैं तो चैतन्यदास हूँ।

श्रीकृष्णचैतन्य बलि छाड़ये हुंकार। भक्तगण कहे तेहों भक्त–अवतार।।50

वह 'श्रीकृष्णचैतन्य' नाम उच्चारण कर हुंकार करने लगा।
भक्तगण कहने लगे– यह भी किसी भक्त का अवतार है।

स्नेहार्द्र हइया गोरा गोपालेर धरि। आलिंगिया प्रेमाश्रुते अभिषेक करि।।51

प्रेम से द्रवित होकर श्रीगौरहरि ने श्रीगोपाल को गोद में उठा लिया–

श्रीअद्वैत प्रेमानन्दे अंगज गोपाले। कोले करि नाचि बेड़ाय हरि हरि बोले।52

और तब श्रीअद्वैतप्रभु श्रीगोपालको गोद में उठाकर हरिबोल कहकर नाचने लगे।

नित्यानन्द प्रेमे तार श्रीअंग मार्ज्जय। सर्व भक्त गोपालेर पदधूलि लय।।53

श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीगोपाल के अंगों को पोंछने लगे और सब भक्तगण
श्रीगोपाल की पदरज अपने अंगों पर लगाने लगे।

श्रीगोपालदास प्रभुर महिमा अपार। तार लव वर्णिते नारिनु मुञि छार।।54

श्रीगोपालदास प्रभु की महिमा अपार है।
मैं क्षुद्र जीव तो उसका एक कण भी वर्णन नहीं कर सकता हूँ।

श्रीजगन्नाथेर रथयात्रा महोत्सव। देखि सर्वजने करे हरि हरि रव।।55

श्रीजगन्नाथ की रथयात्रा का महोत्सव दर्शनकर सब हरि–हरि ध्वनि करने लगे।

कि आनन्द हैल ताहे कहने ना जाय। सर्वगौरगण प्रेमे धूलाय लोटाय।।56

कैसा आनन्द हुआ, कहा नहीं जाता। सब गौरभक्तप्रेम में पृथ्वी पर लोटने लगे।

उत्सवान्ते श्रीमहाप्रसाद किनि खाइला। इष्ट गोष्टी आलापिया निज वासाय गेला।।57

उत्सव के बाद श्रीजगन्नाथ का प्रसाद लेकर सबने पाया।
इष्ट गोष्ठी करते हुए सब अपने निवास स्थानों पर चले गये।

एकदिन शुन एक अपूर्व आख्याने। सीतानाथ कहे तथा सीतादेवी सने।।58

एकदिन की एक अपूर्व घटना सुनिये– श्रीअद्वैत सीतादेवी से बोले–

मनोमत श्रीगौरांगे नारि खाओयाइते। एइ दुख दिवा–निशि जागे मोर चित्ते।।59

मैं अपने मन के अनुसार श्रीगौर को प्रसाद नहीं खिला पाता हूँ।
यही दुख मेरे मन में दिन–रात बना रहता है।

जबे जबे गौर निमन्त्रिया आनि घरे। बहुत संन्यासी तार संगे सदा फिरे।।60

जब–जब गौर को घर आमन्त्रित करता हूँ,
उनके संग तो अनेक संन्यासी रहते हैं।

सब द्रव्य खाओयाय गोरा संन्यासीरे दिया। मोहर जे अभिलाष जाय पंगु हञा।61

श्रीगौर सब पदार्थों को संन्यासियों को खिला देते हैं।
मेरी अभिलाषा वैसेही पंगु (अधूरी) रह जाती है।

शुनि सीता कहे सत्य एइ मन कथा। एकागौरे पाङ यदि जाय मनोरथे।।62

सीतादेवी ने कहा– आपकी मन–व्यथा ठीक ही है। यदि अकेले श्रीगौर कभी
हमारे पास आवें, तभी यह मनोकामना पूरी हो।

तार प्रियवस्तु पूर्ण खाओयाइले तारे। तबे मोर चिर हृदयेर साध पुरे।।63

उनकी प्रिय वस्तु उनको भरपेट खिलायी जाये,
तभी हमारे हृदय की कामना पूरी हो।

हेन काले शुन एक अद्भुत घटने। दिने अन्धकार हैल मेघेर साजने।।64

इस समय की एक अद्भुत घटना सुनिये–दिन का समय था
किन्तु मेघों की घटा उमड़ आई और घोर अन्धकार हो गया।

देखिते देखिते हैल अति बड़ झड़। बहु शिलावृष्टि पड़े लोक भयंकर।।65

देखते–देखते जोर से तूफान–आंधी चलने लगी। अति भंयकर ओले पड़ने लगे।

श्रीचैतन्येर इच्छा इहा केह ना जानिल।ताहे व्यक्ति मात्रे वासा छाड़िते नारिल।66

यह सब श्रीचैतन्य की इच्छा से हो रहा था– यह कोई न जान पाया। उस
समय कोई भी व्यक्ति अपने घर को छोड़कर बाहर नहीं निकल सका था।

हेन काले श्रीगौरांग सर्व अन्तर्यामी। भक्त वान्छा पुराइते चलिला आपनि।67

इसी समय ही सर्वान्तर्यामी श्रीगौरांग अपने भक्त
श्रीअद्वैत की वान्छा पूर्ण करने के लिये घर से चले।

एकले आसिला अद्वैतेर वासा घरे। गौरे देखि सीताद्वैत भासे प्रेम नीरे।।68

अकेले ही श्रीअद्वैतचन्द्र के निवास स्थान पर आ पहुँचे। इन्हें देखकर श्रीअद्वैत
प्रभु एवं वात्सल्यमयी श्रीमतीसीतादेवी के प्यारेनेत्र प्रेमजल से डबडबा गये।

सीताद्वैत दोंहे गौर प्रेमामृतेर धनि। आत्यन्तिकी निष्ठा तहे नित्य सिद्ध जानि।।69

ये दोनों गौर–प्रेम के धनी हैं। आत्यन्तिकी निष्ठा है इनकी, जो नित्य सिद्ध है।

गौरांग देखिया दोहे उठे त्वरा करि। आइस आइस प्राण गोरा कहये फुकारी।।70

श्रीगौरांग को देखते ही दोनों उठ खड़े हुए और
आओ–आओ प्राण गौर पुकारने लगे।

तुहुँ सर्वजान भक्त हृतपद्मेर भृंग। शुद्ध दयामृत–महार्णव तोर अंग।।71

आप भक्तहृदय की सब बात जानते हैं, भक्तहृदय कमल के
मधुकर हैं आप। आपका श्रीविग्रह शुद्ध दयामृत का सागर है।

एत कहि दिव्यासने गौरे वसाइला। तांर सेवा लागि बहु आयोजन कैला।।72

इतना कहकर श्रीगौर को दिव्यासन पर बैठाया और
इनकी सेवा के लिए अनेक आयोजन करने लगे।

गौरेर पाद–धौत लागि मुञि कीट गेनु। तिंह कहे रह रह विप्र विष्णु हनु।73

मैं हीनजन श्रीगौर पद प्रक्षालन के लिए आगे बढ़ा– तो श्रीमहाप्रभु ने
कहा– रुको रुको तुम ऐसा मत करो– तुम तो वैष्णव ब्राह्मण हो।

मुञि कहि हाय हाय कि मोर दुर्भाग्य। श्रीगौरांग–पद सेवाय हइनु अयोग्य।।74

मैंने कहा– "हाय! हाय!! यह कैसा मेरा दुर्भाग्य!
मैं श्रीगौरांग सेवा के अयोग्य हो गया?

पुन कहि अनन्तादयेर सेव्य जे चरण। ताहा मोर प्राप्ति शिशुर चन्द्रस्पर्श सम।।75

अनन्तदेव के द्वारा भी जो चरण सेवनीय हैं– उनकी प्राप्ति वास्तव में एक बालक के लिए चांद पकड़ने की भांति असम्भव है।

मुन मने हैल कृष्ण दयार सागर। पतित पाषण्डोद्धारे एई अवतार।।76

फिर मेरे मन में आया कि श्रीकृष्ण तो दया के सागर हैं।
पतित–पाषण्डियों के उद्धार के लिए उनका यह अवतार है।

मो पतिते काहे तिंह दया ना करिवे। कान्दिया पड़िले पदे दया उपजिवे।।77

मुझ पतित पर वे क्यों दया न करेंगे? मैं रोकर
उनके चरणों पर पड़कर उनकी दया प्राप्त करूँगा।

तबे सेव्यवादी एइ यज्ञसूत्र हय। आर आत्म अभिमान स्वभावे जन्माय।।78

फिर भी यह मेरा यज्ञोपवीत (जो विप्र का लक्षण है) मेरी सेवा में बाधा डाल रहा है, यह ब्राह्मण होने का अभिमान भी स्वभाव में पैदा करता है।

इहा लागि श्रीवैष्णवेर करये वर्ज्जने। एत भावि यज्ञसूत्र छिण्डिनु तखने।।79

इसलिये विरक्त वैष्णव इसके धारण करने का निषेध करते
व यह सोच मैंने अपना यज्ञसूत्र तोड़ डाला।

ताहा देखि मोर प्रभु हासिया कहिला। कि लागि ईशान विप्र–धर्म विनाशिला।।80

यह देखकर मेरे प्रभु श्रीअद्वैत हंसने लगे।
बोले, ईशान! विप्रधर्म क्यों नष्ट कर डाला।

द्विजातिर यज्ञसूत्र चित्तशुद्धि दाता। निरन्तर परब्रह्म हृदया नियोक्ता।।81

द्विजातियों के लिए यज्ञसूत्र चित्त शुद्धि प्रदाता है।
निरन्तर यह परब्रह्म में हृदय को संलग्न रखता है।

एत कहि प्रभु पुन पैता दिला मोरे। प्रभु के कहिनु मुञि कातर अन्तरे।।82

इतना कहकर प्रभु ने मुझे फिर यज्ञोपवीत दिया।
मन में अति दुखी होकर मैंने प्रभु से कहा–

किवा काज गौर–सेवा–वादी उपवीते। ना वन्चह वलि मुञि लागिनु कान्दिते।।83

इस गौर सेवा में बाधक यज्ञसूत्र का क्या प्रयोजन?
मेरी आप वंचना न करिये यह कहकर मैं रोने लगा।

मोर खेदे प्रभु गौरे कहे बारे बार। भक्तमने दुख देह एइ विचार।।84

मुझे दुखी देखकर श्रीअद्वैत श्रीमहाप्रभु को बार–बार कहने लगे–
आप भक्त के मन को दुख दे रहे हैं– यह बात ठीक नहीं है।

प्रभु–वाक्ये महाप्रभुर मौनावलम्बने। तिह कह जाह ईशान श्रीपाद सेवने।।85

प्रभु के वाक्य सुन श्रीमहाप्रभु चुप हो गये। भाव समझकर प्रभु ने फिर कहा– तू
जाकर अब गौर पादपद्म की सेवा कर।

शुनि मुञि डुबिलाङ आनन्द सागरे। गुरु कृपा गौर सेवाय आज्ञा दिला मोरे।।86

मैं तो यह सुनकर आनन्द सागर में डूब गया।
गुरु कृपा ने गौर सेवा के लिए मुझे आज्ञा दे दी।

कोटि कोटि जन्मेर सुकृतिते ना पाय जाहा। श्रीगुरु कृपाते अवहेले मिले ताहा।87

कोटि–कोटि जन्मों के सुकृति से भी जिसकी प्राप्ति नहीं होती,
वह श्रीगुरुकृपा से सहज में मिलती है।

श्रीगुरु–वैष्णव कृपार अनन्त महिमा। मुञि कोन छार ब्रह्मा दिते नारे सीमा।।88

श्रीगुरु एवं श्रीवैष्णवकृपा की अनन्त महिमा है।
मुझ क्षुद्र का क्या कहना, ब्रह्मा भी उसका पार नहीं पा सकता।

तबे महाप्रभु गेला भोजन मन्दिरे। शुद्धासने वसिलेन आनन्द अन्तरे।।89

तब श्रीमहाप्रभु भोजन–मन्दिर में गये और
आनन्दपूर्वक शुद्ध आसन पर जाकर विराजमान हुये।

गोरा कहे बैस आसि आचार्य गोसाञि। मोर प्रभु कहे गौर छाड़ चतुराञि।।90

तब श्रीगौर ने कहा– आचार्य गोस्वामी! आप भी आकर साथ बैठिये ना! मेरे प्रभु
श्रीअद्वैत ने कहा– हमारे प्रभु श्रीगौरहरि! आप अब चतुराई छोड़ो।

सब द्रव्य आजि तुमि करिवा भोजन। तबे से छाड़िमु मुञि ए सत्य वचन।91

यह सब द्रव्य आज आपको ही भोजन करने हैं।
तभी मैं आज आपको छोड़ूँगा– मेरे सत्य वचन हैं यह।

हासि महाप्रभु तबे भोजने वसिला। सीतामाता पारश करिते आरम्भिला।।92

श्रीमहाप्रभु तब हंसकर भोजन करने बैठ गये और
सीता माता ने परोसना आरम्भ किया।

आर आर व्यंजनादि दिला सारि सारि।पिठा पाना दिला कत लिखिते ना पारि।93

अनेक प्रकार के व्यंजन बारी–बारी से सीतामाता परोसने लगी।
कितना पिठा पाना दिया कहां तक इसका उल्लेख करूँ।

गौरेर प्रिय वस्तु जत सीता यत्ने दिला। आनन्दे गौरांग सब भोजन करिला। ।94

गौर की प्रिय वस्तुएं जितनी माता ने दी, श्रीगौरांग ने भी उन सबको खा लिया।

गौरा कहे आचार्य मुञि कहिते ना पारि। जन्मे हेन गुरुतर भोजन ना करि। ।95

श्रीगौर ने कहा– आचार्य! आपसे मैं कुछ कह नहीं सकता। जन्म में मैंने आज तक इतना गुरुतर–अति अधिक भोजन कभी नहीं किया।

हास्य मुखे प्रभु कहे शुनह निमाञि। मोर काछे छापा नाइ तोर चतुराञि। ।96

मुस्करा कर श्रीअद्वैत बोले– निमाई! सुनो, मुझसे तुम्हारी चतुराई छिपी नहीं है।

तोर जिह्वाय आछे नित्य तिन महाशक्ति। भक्त–श्लाघा, साधु उपदेशे, दैन्य उक्ति। ।97

आपकी जिव्हा पर नित्य तीन शक्तियाँ विराजमान रहती हैं। भक्त–श्लाघा, सदुपदेश तथा दैन्योक्ति।

शुनि महाप्रभु कैला श्रीविष्णु स्मरण। आचमन करि कैला ताम्बूल सेवन। ।98

सुनकर श्रीमहाप्रभु ने विष्णु स्मरण किया। आचमन कर ताम्बूल सेवन किया।

आचार्य आग्रहे तिंह करिला शयन। हेनकाले शिलावृष्टि हैल निवारण। ।99

आचार्य के आग्रह से श्रीगौर वहां सो गये। इतने में ओले–वर्षा भी बन्द हो गये।

अलौकिक लीला करे श्रीकृष्ण चैतन्य। भक्ते नित्यानन्द दिते हैला अवतीर्ण। ।100

श्रीकृष्ण चैतन्य अलौकिक लीला करते हैं। भक्तों को नित्य नव आनन्द प्रदान करने के लिए ही वे अवतीर्ण होकर लीला कर रहे हैं।

कृष्ण बड़ दयामय नाहिक उपमा। महाविष्णु आदि जार दिते नारे सीमा ।101

श्रीकृष्ण महान दयामय हैं, उनकी कोई उपमा नहीं है। महाविष्णु आदि उनके सभी अवतार भी उनकी दया की सीमा नहीं पा सकते।

कृष्ण कृष्णेर शुद्ध–भक्ते नाहि किछु भेदे। ऊर्ध्वबाहु हञा फुकारिछे सर्ववेदे। ।102

श्रीकृष्ण एवं कृष्ण के शुद्ध भक्तों में कुछ भेद नहीं है–
यह बात भुजा उठाकर सब वेद पुकार रहे हैं।

कृष्णभक्त इच्छार स्वतः सिद्ध शक्ति हय। तार इच्छाय हय कृष्ण इच्छार उदय। ।103

कृष्णभक्त की इच्छा की स्वतः सिद्ध भक्ति होती है।
भक्त की इच्छा से श्रीकृष्ण में इच्छा उदय होती है।

आर कबे हैव मोर शुभ भाग्योदय। गुरु वैष्णव कृपा करि दिवे पदाश्रय। ।104

फिर कब मेरे शुभ–भाग्य उदय होंगे कि गुरु–वैष्णव
कृपा कर मुझे श्रीगौर चरण का आश्रय प्रदान करेंगे।

कबे गौर प्रेमामृत–सागरेर नीरे। डुबि सर्वेन्द्रिय आत्मार पाप जाइवे दूरे। ।105

गौर–प्रेमामृत सागर में कब मैं सर्वेन्द्रियों सहित
स्नान करूँगा और मेरी आत्मा के सब पाप मिटेंगे?

पूर्वतन नारदादि भक्त प्रधान। कृष्ण किवा राधा भजि पाइला परित्राण।।106

श्रीनारदादि प्राचीन भक्त प्रधान हैं, कृष्ण और
श्रीराधा का भजन कर उन्होंने गति प्राप्त की है।

केह वा युगल मूर्त्ति करिला सेवन। सिद्ध देह पाञा गेला नित्य वृन्दावन।।107

किसी ने युगल मूर्त्ति की भी सेवा लाभ की है।
सिद्ध देह प्राप्त कर वे नित्य वृन्दावन को प्राप्त हुए हैं।

रसराज महाभाव दुइ सम्मिलन। हेनरूप कभु केह ना पाइला दर्शन।।108

इस कलिकाल को छोड़कर रसराज एवं महाभाव– इन दोनों के सम्मिलित
स्वरूप इस श्रीगौरांग रूप का किसी ने भी दर्शन प्राप्त नहीं किया।

एइ धन्य कलिते सेइ रूपेर प्रचार। गौरांग हइया कैला जीवेर उद्धार।।109

यह कलि धन्य है कि इसमें इसी श्रीराधाकृष्ण मिलित स्वरूप का प्रचार हुआ
है। जिसने श्रीगौरांग रूप में प्रकाशित हो जीवों का उद्धार किया है।

एई रूप देखे भजे पूजे जेइ जन। अनायासे पाय सुदुर्लभ प्रेमधन।।110

इस रूप का दर्शन कर जो व्यक्ति इसकी सेवा–पूजा करता है, वह अनायास
सुदुर्लभ प्रेमधन को प्राप्त करता है और यह प्रेम ही सर्व पुरूषार्थ सार है।

हेन दयाल अवतारि कोँहा नाहि शुनि। सर्व कृष्ण प्रकाशेर हय मूल खनि।।111

ऐसा करुणामय अवतार और कहीं नहीं सुना है– श्रीकृष्ण के समस्त प्रकाश या
अवतारों का यह श्रीगौर अवतार ही मूल भण्डार अथवा सार है।

हरिनाम दिया कुक्कुरादि निस्तारिला। वैष्णव उच्छिष्टेर गुण जेहँ प्रकाशिला।।112

श्रीहरिनाम प्रदान कर कुत्ते आदि तक का भी इन्होंने उद्धार किया है।
जिससे वैष्णव–उच्छिष्ट की महिमा प्रकाशित की है।

सेन शिवानन्द नामे महाभागवत। गौरांगेर प्रिय भक्त जगत विख्यात।।113

श्रीशिवानन्द सेन महाभागवत हैं वे गौरांग के
जगत् में प्रसिद्ध और प्रिय भक्तोतम् हैं।

तार गृहे एक कुक्कुर करिला वसति। वैष्णेवर उच्छिष्ट खाञा शुद्ध हैल मति।।114

उनके घर में एक कुत्ता रहता था वैष्णवों का उच्छिष्ट
खा–खाकर उसका मन शुद्ध हो गया था।

शिवानन्द आइला जबे श्रीपुरुषोत्तमे। तार संगे सेइ कुक्कुर आइला भाग्यक्रमे।।115

श्रीशिवानन्द जब पुरी आये तो भाग्यवश वह कुत्ता भी
वैष्णव प्रीति वश उनके साथ हो लिया।

चैतन्यकृपाय तार कर्म–बन्ध गेल। हरे कृष्ण उच्चारिया सिद्ध–देह पाइल।।116

श्रीचैतन्य दर्शन और उनके हस्तकृपा के प्रसाद से उसका कर्म बन्धन छूट गया
और "हरे कृष्ण" नाम कर उसने सिद्ध देह प्राप्तकर लिया।

सिद्धवस्तु श्रीवैष्णवेर उच्छिष्ट निश्चय। जार एक लव खाइले कृष्णभक्ति हय।।117

शुद्ध श्रीवैष्णवों की उच्छिष्ट वस्तु निश्चय ही चिन्मय हुआ करती है।
उसका एक कण पाने से भी कृष्ण भक्ति की प्राप्ति होती है।

वैष्णवेर पदरेणुर महिमा अपार। तार एक बिन्दु स्पर्शे जाय भवपार।।118

वैष्णव–पदरज की महिमा भी अपार है। उसका एक
कण स्पर्श करने मात्र से व्यक्ति भव पार जाता है।

वैष्णव दर्शने हय विष्णुर दर्शन। वैष्णव सेवाते हय कृष्णेर भोजन।।119

वैष्णव–दर्शन से कृष्णदर्शन सम्भव होता है।
वैष्णव सेवा से श्रीकृष्ण का भोजन सम्पन्न होता है।

श्रीकृष्ण कहिला भक्त आमा हइते बड़। अपराध खण्डे भक्ते भक्ति कैले दृढ़।120

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है– भक्त मुझसे बड़े हैं।
वे भक्ति को दृढ़ कर अपराध का खण्डन कर देते हैं।

वैष्णवापराधीर आर नाहिक निस्तारे। कृष्ण सेइ अपराध खण्डाइते नारे।।121

वैष्णव–अपराधी का निस्तार नहीं होता।
श्रीकृष्ण भी उस वैष्णव अपराध को मिटा नहीं सकते।

भाग्ये यदि श्रीवैष्णेवर दया उपजय। तार सेइ अपराध अवश्य खण्डय।।122

भाग्यवश यदि वैष्णव चित्त में दया उपज आये तो
वह उस वैष्णव अपराध को निश्चय मिटा देता है।

कृष्णेच्छाते शुद्धभक्ते शक्त्याधिक हय। सेइ भक्तस्थाने कृष्ण आपनि बिकाय।।123

श्रीकृष्ण–इच्छा से शुद्धभक्त में अधिक शक्ति रहती है।
उस भक्त के हाथ स्वयं श्रीकृष्ण बिक जाते हैं।

स्वभावे श्रीकृष्णदास आपन आचार। जीव शिक्षाइया नित्य करये उद्धार।।124

श्रीकृष्णदास अपने स्वभाव से अपने आचरण द्वारा जीवों को शिक्षा देता है और
उनका नित्य उद्धार कर भवसागर से पार कर देता है।

राधाकृष्ण दुये एवे हञा भक्तरूप। जीवेर मंगले दया कैला अपरूप।।125

श्रीराधाकृष्ण दोनों अब एक भक्तावतार में प्रकट हुए हैं।
अतः जीवों के मंगल के लिये उनकी अनुपम दया प्रकाशित हुई है।

गौर कृपाय सेन शिवानन्देर नन्दने। अतिबाले सर्वशास्त्रे हइल स्फुरणे।।126

श्रीगौर कृपा से श्रीशिवानन्द के पुत्र में
बाल्यावस्था में ही सर्वशास्त्रों की स्फूर्त्ति हो उठी।

कवि कर्णपूर नामे हैला तिंह ख्यात। जगद् विस्मापक लीला कैला शचीसुत।।127

वे श्रीकवि कर्णपूर नाम से विख्यात है। इसप्रकार जगत् को विस्मय में डाल देने वाली अनेक लीलाएं श्रीशचीकुमार ने की हैं। जो निश्चित पठनीय है।

एवे कहि महाप्रभुर सेवा विवरणे। जार स्मृति मात्रे जीव हय परिमाणे।।128

अब श्रीमहाप्रभु की सेवा का विवरण बताता हूँ,
जिसके स्मरण मात्र से जीव का उद्धार हो जाता है।

श्रीअद्वैत सिंहेर कृपा गंगाब्धि संगमे। अति सुदुर्लभ सेवा दिला ए अधमे।129

श्रीअद्वैत प्रभु की कृपा रूप गंगा–सागर संगम ने
मुझ अधम को अति सुदुर्लभ सेवा प्राप्त करा दी।

गौरेर रांगा पादपद्म अति सुकोमल। ताहा सम्वाहने योग्य श्रीहस्त कमल।।130

श्रीगौरके चरणकमल अतिसुकोमल हैं, उनके सम्वाहन
के लिए वैसे ही श्रीकरकमलों की योग्यता है।

तबे मुत्रि कीट हर्षे कहिनु चैतन्य। दया करि कह किछु एइ भक्तिशून्य।131

उस समय कीट–अधम ने श्रीचैतन्य से कहा–
दया करके इस भक्तिशून्य के लिए कुछ उपदेश कीजिए।

सहास्ये मधुर भक्ति गौरांग कहिला। शुनह ईशान शास्त्र जाहा प्रकाशिला।।132

मुस्करा कर श्रीगौरांग ने मधुर–भक्ति का बखान किया।
वे बोले– ईशान! सुनो जिसका शास्त्रों ने वर्णन किया है–

साधुस्थाने करिवे सद्धर्मेर शिक्षण। सर्वधर्म श्रेष्ठ हरिनाम संकीर्तन।।133

सर्वप्रथम कृष्णभक्त से सद्धर्म की शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये।
सर्वधर्मों में श्रेष्ठ है श्रीहरिनाम संकीर्तन।

तप जप हैते नामेर महिमा प्रचुर। नाम लैले सर्व अपराध जाय दूर।।134

तप–जप से श्रीनाम की महिमा बहुत अधिक है।
श्रीनाम से समस्त अपराध दूर हो जाते हैं।

प्रकृति सम्भाषा उदासीनेर धर्मनाश। नाना देव–दैवीर कृष्णे ना हय विश्वास।।135

स्त्री से सम्भाषण करने से विरक्त–संन्यासी का धर्म नाश हो जाता है। नाना देवी–देवताओं के उपासकों का श्रीकृष्ण में एकनिष्ठ विश्वास नहीं होता है।

एइ श्रीकृष्ण चैतन्य मुखपद्म वाणी। जेइ शुने पड़े तार बड़ भाग्य मानि।136

श्रीकृष्णचैतन्य की यह श्रीमुखवाणी जो सुनता है अथवा पढ़ता है,
मैं उसके बड़े भाग्य मानता हूँ।

अनन्त प्रणाम मोर गौरांग–चरणे। जगत् शिक्षाइला प्रिय भक्तेर वर्ज्जने।।137

मैं श्रीगौर चरणों में अनन्त प्रणाम करता हूँ जिन्होंने स्त्री सम्भाषी अपने प्रिय भक्त–छोटे हरिदास को अपने दर्शन से वंचित कर जगत् को शिक्षा दी।

गायक श्रीहरिदास गन्धर्वेर सम। गौरगत प्राण जिंह भागवतोत्तम।।138

श्रीहरिदास गन्धर्व के समान मधुर कीर्तनिया था
महाप्रभु का गौर–गत प्राण एवं भागवतोत्तम था।

भिक्षार तण्डुल तिंह गौरसेवा लागि। परिवर्त्त करि भाल तण्डुल लैला माँगि।।139

वह गौरसेवा के लिए ही जाकर अच्छे चावलों की मांग कर भिक्षा एक स्त्री से कर लाया था– (श्रीभगवानाचार्य की आज्ञा से)।

उत्तम तण्डुल देखि गौरांग पुछिला। हरिदास कौंहा एइ तण्डुल पाइला।140

उत्तम तण्डुल देखकर श्रीगौर ने पूछा– हरिदास! यह तण्डुल कहां से लाया है?

हरिदास कहे श्रीमाधवी–माता स्थाने। परिवर्त्त करि इहा आनिनु यतने।।141

श्रीहरिदास ने कहा– श्रीमाध्वी माता से मांग कर यहां यत्नपूर्वक लाया हूँ।

गोरा कहे हरिदास कि कर्म करिला। उदासीनेर नित्य–सिद्ध धर्म विनाशिला।।142

श्रीगौर बोले– हरिदास! तुमने यह कैसा कार्य कर डाला?
विरक्त के नित्य सिद्ध धर्म का तुमने नाश कर ड़ाला।

यद्यपि माधवी महासाध्वी धर्मरता। गुरु–वैष्णवेते निष्ठा शुद्ध कृष्ण भक्ता।143

यद्यपि माधवी धर्मरता महा साध्वी है,
उसकी गुरु वैष्णवों में निष्ठा है और श्रीकृष्ण की शुद्धभक्ता है।

तथापि प्रकृति तिंह तार सम्भाषणे। उदासीनेर धर्म कैछे हय सुरंक्षणे।।144

तथापि है तो स्त्री, उसके साथ सम्भाषण करने से
विरक्त के धर्म की कैसे, सुरक्षा हो सकती है?

इहार कारणे तोरे करिनु वर्ज्जन। शुनि हरिदास बहु करिला क्रन्दन।।145

इस कारण से मैं तुम्हारा बहिष्कार करता हूँ।
यह सुनकर श्रीहरिदास ने बहुत क्रन्दन किया।

गौरे प्रणमिया तिंह गमन करिला। सर्व भक्तगण मने चमत्कार हैला।।146

श्रीगौर को प्रणाम कर वह चला गया।

सब भक्तों को यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ।

आहा श्रीगौरांग लीलार गुह्य अभिप्राय। गौरभक्त बिना तार अन्त नाहि पाय।।147

अहो! श्रीगौरांग लीला का कितना गुह्य अभिप्राय है? युगल लीला

अधिकारी गौरभक्तों को छोड़कर उसका अन्त कोई नहीं पा सकता।

तबे अद्वैतादिर गौड़ेते गमन। गौरांग–विच्छेदे सबार दुखित मन।।148

तब श्रीअद्वैतादि गौड़ देश में लौट आये और

श्रीगौरांग विच्छेद से सबका मन अति दुखित हुआ।

गौर गौरगणेर लीलार नाहि पार। मुञि क्षुद्र सूत्र मात्र करिनु प्रचार।।149

श्रीगौर एवं गौरभक्तों की लीलाओं का पार नहीं है।

मैं क्षुद्र जीव ने सूत्रमात्र का ही यहां वर्णन किया है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।150

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के चरणों की अभिलाषा करते हुए

श्रीईशान नागर श्रीअद्वैत प्रकाश वर्णन करते हैं।

उनविंश–अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीचैतन्य देव की जय हो, श्रीसीतानाथ की जय हो।

श्रीनित्यानन्द राम की सब भक्तों सहित जय हो।

एकदिन श्रीरूप देखिला स्वप्नावेशे। महाप्रभु कहे तारे मृदु मृदु भाषे।।02

एकदिन श्रीरूप ने स्वप्नावेश में देखा कि

श्रीमहाप्रभु उन्हें मधुर वाणी में कह रहे हैं–

अहे रूप अपूर्व नाटक विचारिला। राधाश्यामेर दिव्य लीला ताहे प्रकाशिला।।03

ओ रूप! अपूर्व नाटक रचना का तुमने विचार किया है।

इसमें तुमने श्रीराधाकृष्ण की दिव्य लीला को प्रकाशित किया है।

सेइ सुमधुर पुर नाटक सुन्दर। शुनिते मोहर मने स्मृता हैला बड़।।04

वह पुरनाटक सुमधुर और सुन्दर है।

उसे सुनने के लिए मेरे मन में बड़ी इच्छा जाग रही है।

एत कहि श्रीचैतन्य हैला अन्तर्हित। जागि रूप प्रेमावेशे हइला मूर्च्छित।।05

इतना कहकर श्रीचैतन्य अन्तर्धान हो गये।

जागकर श्रीरूप प्रेमावेश में मूर्च्छित हो गये।

कथोक्षणे भक्तराज पाइया चेतन। काँहा गौरांग बुलि करये क्रन्दन।।06

कुछ देर बाद भक्तराज श्रीरूप को चेतना आई–

"हा गौरांग! तुम कहां गये? पुकार कर रोने लगे।

क्षणे कहे तोर दिव्य–लीला बुझा भार। भक्तमान बाढ़ाइते कैला अवतार।।07

कभी कहते आपकी दिव्य–लीला का गम्भीर आशय है। किन्तु आपने भक्तों का मान बढ़ाने के लिए ही अवतार लिया है। आपको बारम्बार नमस्कार है।

स्वभक्तेरे देखा दिते दया उपजिल। तेहूँ स्वप्ने आसि मोरे आदेश करिल।08

अपने भक्त को दर्शन देने की दया आप में उत्पन्न हुई है, तभी स्वप्न में आकर मुझे आपने ऐसा आदेश किया है। दर्शनकर मैं कृतार्थ हुआ।

एत कहि करे रूप उद्‌दण्ड नर्त्तन। हेन काले आइला तथि गोसाई सनातन।।09

ऐसा कहकर श्रीरूप उद्‌दण्ड नृत्य करने लगे।

उसी समय वहां श्रीसनातन गोस्वामी आ पहुँचे।

तिंह कहे कहरूप शुभ समाचार। आजि बुझि गोरा प्रेम करिला विस्तार।।10

उन्होंने कहा– रूप! कहो क्या शुभ समाचार है? लगता है श्रीगौर प्रेम ने तुम पर अपना प्रेम विस्तार किया है। तुम पर गौरकृपा हुई है।

रूप कहे प्रभु तुहु सर्वशास्त्रवेत्ता। दरशन दिते गोरा स्वप्ने दिला वार्त्ता।।11

श्रीरूप ने कहा– प्रभो! आप सर्वशास्त्रवेत्ता अन्तर्यामी हैं।

स्वप्नमें आकर श्रीगौरने दर्शन देकर आज्ञाकी है।

सनातन कहे तोहार कोटि भाग्योदय। गौरांग देखिला प्रभु देखिवा निश्चय।।12

श्रीसनातन बोले– तुम्हारे कोटि भाग्य उदय हुए हैं।

श्रीगौरांग को स्वप्न में देखा है तो अवश्य अब उनके दर्शन प्राप्त होंगे।

श्रीरूप कहये तुया आज्ञा वेद समे। गौरांग देखिते जाङ श्रीपुरुषोत्तमे।।13

श्रीरूप ने कहा– आपकी आज्ञा वेद के समान है।

मैं श्रीगौरांग दर्शन हेतु श्रीनीलाचल जाना चाहता हूँ।

एत कहि सनातने दण्डवत करि। शुभ–यात्रा कैला तिंह स्मरि गौरहरि।।14

इतना कहकर उन्होंने श्रीसनातन को प्रणाम किया और श्रीगौर का स्मरण कर उन्होंने शुभयात्रा आरम्भ की। मंगलमय प्रभु का स्मरण करने से शुभ होता है।

गौर प्रेमावेशे चलि आइला श्रीक्षेत्रे। गौरांग देखिया प्रेमधारा बहे नेत्रे।।15

गौर प्रेमावेश में श्रीरूप श्रीक्षेत्र में आये और

श्रीगौर दर्शनकर उनके नेत्रों से प्रेमाश्रुधारा बह निकली।

शत अष्ट अंग कैला चैतन्य चरणे। गोरा श्रीरूपेरे कैला दृढ़ आलिंगने।।16

श्रीमहाप्रभु को शत साष्टांग प्रणाम किये।

श्रीरूप को श्रीगौर ने दृढ़ आलिंगन किया।

रूप कहे मुञि हङ अस्पृश्य पामर। स्पर्शिया मोहरे काहे अपराधी कर।।17

श्रीरूप ने कहा– हे करूणा सिन्धो! मैं अस्पृश्य पामर हूँ।

मुझे स्पर्श कर क्यों अपराधी बनाते हैं आप?

महाप्रभु कहे तुहु भागवतोत्तम। तव अंग हय मन्दाकिनी गंगा सम।।18

श्रीमहाप्रभु ने कहा– तुम भागवतोत्तम हो और

तुम्हारा शरीर मन्दाकिनी गंगा के समान पवित्र है।

श्रीरूप कहये तुहुं दया रत्नाकर। तव दया लव सर्व मंगल आकर।।19

श्रीरूप ने कहा– आप दया के महासागर हैं।

आपकी दया का कणमात्र समस्त मंगलों का भण्डार है।

भाग्ये तव पदामृत कणा स्पर्शे जेई। सुपवित्र श्रीवैष्णव देह धरे सेई।।20

भाग्य से जो आपके पदामृत का कण स्पर्श करता है, वह परम पवित्र होकर

श्रीवैष्णव शरीर धारण करके श्रीकृष्ण प्रेम प्राप्त कर लेता है।

जैछे शालग्राम स्पर्शे कूप नन्दोदक। देवेर दुर्लभ सर्वपाप विनाशक।।21

जैसे शालग्राम के स्पर्श से कुए का जल आनन्दमय हो जाता है, ऐसे ही

आपका चरणोदक देवदुर्लभ है, सब पापों को नाश करने वाला है।

महाप्रभु कहे एइ अति स्तुति हैल। रूप कहे इथे स्तुतिर बिन्दु ना छुईल।22

श्रीमहाप्रभु ने कहा– यह अति स्तुति है। श्रीरूप ने कहा– इसको तो स्तुति के

एक बिन्दु ने भी नहीं छुआ और ये यथासत्य व आपकी महिमा अनन्त है।

तबे गोरा राय–रामानन्द आदि स्थाने। रूपेर शुद्ध–वैराग्य कहिला आपने।23

तब स्वरूप दामोदर व राय रामानन्द आदि के सामने

श्रीमहाप्रभु ने रूप के शुद्ध वैराग्य का वर्णन किया।

रूप संगे गौरगणेर आनन्द बाढ़िल। श्रीगौरांग धरि संकीर्तन आरम्भिल।।24

श्रीरूप के साथ श्रीगौर भक्तों का आनन्द बढ़ा और

श्रीगौरांग के सामने संकीर्तन आरम्भ कर दिया।

महानन्दे केह गाय केह करे नृत्य। केह गोरा बलि कान्दे हञा प्रेमोन्मत्त।।25

कोई तो महानन्द में गाने लगा और कोई नाचने लगा।

कोई प्रेमोन्मत्त होकर गौर कहकर रोने लगा।

ताहे गौर प्रेम सिन्धुर तरंग बाढ़िल। हरे कृष्ण बलि तिंह नाचिते लागिल।26

तब श्रीगौर का प्रेमसिन्धु भी तरंगायित हो उठा

और वे 'हरे कृष्ण' बोलकर नाचने लगे।

क्षणे हर्ष क्षणे स्तम्भ क्षणे स्वेदोद्‌गम। क्षणे प्राणनाथ बलि करये क्रन्दन।।27

कभी हर्ष, तो कभी स्तम्भ, कभी स्वेद में नहाने लगे।

कभी "प्राणनाथ"! कहकर प्रभु क्रन्दन करने लगे।

हेन मते भक्त संगे श्रीकृष्ण चैतन्य। प्रेमामृत मेघे जगतेरे कैला धन्य।।28

इसप्रकार भक्तों के साथ श्रीकृष्णचैतन्य रूपी

प्रेमामृत मेघ ने जगत् को धन्य कर दिया।

कतक्षणे हरि संकीर्तन निवर्त्तिया। स्व स्व कृत्ये गेला सभे गौर आज्ञा लञा।।29

कुछ देर बाद संकीर्तन समाप्त कर श्रीगौर

आज्ञा से सब अपने अपने सेवाओं को चले गये।

एकदिन श्रीगौरांग भक्तगण संगे। आनन्दे आछेन वसि सत्कथा प्रसंगे।।30

एकदिन श्रीगौर भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक बैठे सत्कथा कह रहे थे।

हेन काले श्रीरूप गोसाञि तथि आइला। अष्ट अंगे गोराचाँदे दण्डवत् कैला।।31

उसी समय श्रीरूप गोस्वामी वहां आये एवं साष्टांग प्रणाम किया श्रीगौर को।

गोरा तारे आलिंगिया वसिते कहिला। तिंह भक्ते प्रणमिया दूरे वसिला।।32

प्रभु ने उसे आलिंगन कर बैठने को कहा। वे भक्तों को प्रणामकर दूर बैठ गये।

सर्वअन्तर्यामी श्रीचैतन्य महेश्वर। श्रीरूपे कहये जानि ताहार अन्तर।।33

सर्वान्तर्यामी श्रीचैतन्य ने कहा– रूप! मैं तुम्हारे हृदय की बात जानता हूँ।

साधु मुखे शुनियाछों तव विरचित। नाटक आछये एक श्रीकृष्ण चरित।।34

भक्तों के मुख से तुम्हारे द्वारा विरचित

श्रीकृष्णचरित नाटक की बात मैंने सुनी है।

ताहा श्रीवैष्णव माझे करह पठन। शुनिते मोहर हैल उत्कण्ठित मन।।35

उसका पाठ तुम सब वैष्णवों के सामने करो।

उसे सुनने के लिए मेरा मन उत्कण्ठित हो रहा है।

रूप कहे काँहा मुञि नीच नराधम। काँहा कृष्णलीला हय सर्व उच्चतम।।36

श्रीरूप ने कहा– प्रभो! कहाँ तो मैं नीच नराधम

और कहाँ श्रीकृष्ण लीला सर्व श्रेष्ठतम्?

पक्षहीन पक्षीर शक्ति जैछे उड़िवारे। तैछे एइ मूर्खेर क्षम शास्त्र परचारे।।37

पक्षहीन पक्षी की जितनी शक्ति आकाश में उड़ने की होती है, उतनी ही शक्ति मुझ मूर्ख की शास्त्रों के प्रचार में है। (ग्रन्थकार की दीनता का प्रकाश)

शिशु–क्रीड़ासम जाहा करिनु लिखने। ताहा प्रकाशिते हय लज्जा भय मने।।38

बाल्य–क्रीड़ा समान मैंने जो भी लिखा है,
उसे प्रकाशित करने में मेरा मन लज्जा भय मान रहा है।

तथापि श्रीमुखेर आज्ञा लंघिते ना पारि। सभे अपराध मोर क्षम दया करि।39

तथापि आपके श्रीमुख की आज्ञा का उल्लंघन
मैं नहीं कर सकता हूँ। आप मेरे सब अपराधों को क्षमा कीजिये।

एत कहि कैला रूप नाटक प्रकाश। शुनि सर्व भक्तगणेर बाढ़े प्रेमोल्लास।40

इतना कहकर श्रीरूप नाटक पढ़ने लगे।
उसे सुनकर सब भक्तों का प्रेमानन्द बढ़ने लगा।

रामराय आदि कहे प्रेमे मग्न हञा। पवित्र हइलूं एइ नाटकं शुनिञा।।41

राय रामानन्द प्रेम में मग्न होकर बोले–
इस नाटक को सुनकर मैं तो पवित्र हो गया।

ए हेन सुरस कृष्ण नामेर महिमा। कोँहा नाहि शुनि पद्य रचन गरिमा।।42

ऐसी श्रीकृष्णनाम की सरस महिमा तथा
पद्यरचना की गरिमा मैंने कहीं नहीं सुनी।

महाप्रभु प्रेमानन्दे श्रीरूपेर कह। एइ नाटक दुइ भागे हैले भाल हय।।43

श्रीमहाप्रभु प्रेमानन्द में श्रीरूप से बोले–
यह नाटक यदि दो भागों में रचा होता तो अच्छा होता।

विदग्ध माधव आर ललित माधव। एइ दुइ नामे हय चित्तेर उत्सव।।44

विदग्ध–माधव तथा ललित माधव–
इन दो नामों में होने से चित्त आनन्दित होता।

शुनि श्रीवैष्णवगण हरिध्वनि करे। सेइ दुइ नामे ख्यात हैल चराचरे।।45

यह सुनकर वैष्णवों ने हरिध्वनि की।
वही नाटक अब उक्त नामों से वैष्णव–जगत् में विख्यात है।

श्रीगौरांग सांगोपांगेर अविचिन्त्य गुणे। श्रीरूपेर यश–डंका बाजे सर्वस्थाने।46

श्रीगौरांग के सांगोपांग अचिन्त्य गुणों में
श्रीरूप का यश–नगाड़ा सब जगह बजने लगा।

रूपगोस्वामीर महादैन्ये नाहि ओर। सगण गौरांग प्रेमानन्दे हैला भोर।।47

श्रीरूप के महादैन्य की कोई सीमा नहीं है।

भक्तों सहित श्रीगौरांग प्रेमानन्द में विभोर हो उठे।

दिनकत श्रीरूप ताहाञि कैला वास। जगन्नाथ दरशने बाढ़े प्रेमोल्लास।।48

कुछ दिन तक श्रीरूप ने वहां नीलाचल में वास

किया। उन्हें श्रीजगन्नाथ के दर्शनों में अतिशय प्रेमानन्द मिलता।

तबे महाप्रभु तारे आदेश करिला। आज्ञा शिरे धरि तिंह व्रजधामे गेला।।49

तब श्रीमहाप्रभु ने उन्हें आज्ञा की ब्रजधाम चले जाने की।

श्रीरूप उसे शिरोधार्य कर ब्रजधाम चले आये।

श्रीगौरांग आर ताँर भक्तेर महिमा। चतुर्मुख आदि कहि दिते नारे सीमा।।50

श्रीगौरांग एवं उनके भक्तों की महिमा

श्रीब्रह्मा भी वर्णन कर पार नहीं पा सकते।

साधुमुखे शुनि मन स्थिर नाहि हय। तेंइ सूत्र मात्र गणि कहिनु निश्चय।।51

भक्तों के मुख से उसे सुनकर मेरा मन नहीं मान रहा था,

सो यहां मैंने सूत्र मात्र का ही उल्लेख कर दिया है।

एकदिन महाप्रभु अच्युतेर स्थाने। भागवतेर भक्तिटिका करिला व्याख्याने।52

एकदिन श्रीमहाप्रभु श्रीअच्युत के आगे

श्रीभागवत की भक्ति टीका सुनाने लगे।

श्रीअच्युत कहे एइ टिका सर्वोत्तम। स्वामी भाष्य आदिर आर नाहि प्रयोजन।।53

श्रीअच्युत ने कहा– यह टीका तो सर्वोत्तम है।

अब श्रीधर स्वामी भाष्य का भी और प्रयोजन नहीं है।

सर्व टिकार सार इथे व्याख्याधिक्य हय। शुनि श्रीकृष्ण चैतन्य अच्युतेरे कय।।54

समस्त टीकाओं का सार इसमें बहुत बखान किया गया है।

यह सुन श्रीमहाप्रभु अच्युत के प्रति बोले।

जाहे बहु साधुर महत्व हय हानि। ताहा संगोपन कर मोर आज्ञा मानि।।55

जिससे अनेक भक्तों के महत्व की हानि हो,

उसको छिपा कर रखना मेरी यही आज्ञा है।

शुनि श्रीअच्युत कहे विस्मय अन्तरे। एइ आज्ञा शुनि मोर पराण विदरे।।56

श्रीअच्युत ने मन में विस्मित होकर कहा–

आपकी यह आज्ञा सुनकर तो मेरे प्राण फटते हैं।

तव कृत टिका एइ भक्ति–राज्येश्वर। श्लोकेर प्रतिपदे हय रसेर भाण्डार।57

आपकी रची हुई यही टीका तो भक्तिराज्य की ईश्वर है।

श्लोक के प्रतिपद में रस का भण्डार भरा है।

हेन भक्ति टिका प्रचारिते निषेधिला। सत्य दयासिन्धु नाम आजि प्रकाशिला।।58

ऐसी टीका के प्रचारित करने में आप निषेध कर रहे हैं।

आपने अपना दयासिन्धु नाम सचमुच आज ही प्रकाशित किया है।

एत कहि प्रेमानन्दे करये क्रन्दन। गोरा तारे प्रेमाश्रुते करिला सेचन।।59

इतना कहकर श्रीअच्युत प्रेमानन्द में रोने लगा।

श्रीगौर ने भी उसे प्रेमाश्रुओं से अभिषिक्त कर दिया।

आहा श्रीचैतन्य दया अपार जलधि। श्रीअनन्त आदि जार ना पाय अवधि।60

अहो! श्रीचैतन्य का दया–सागर अपार है,

श्रीअनन्त भी उसकी सीमा नहीं पा सकते हैं।

स्व गौरव खण्डि गोरा जीवे सुखदेय। हेन दैन्य कृष्ण कभु ना कैला आश्रय।।61

अपने गौरव को लुप्तकर श्रीगौर जीवों को सुखी करते हैं–

ऐसा दैन्य तो श्रीकृष्ण ने भी कभी प्रकाशित किया था।

पूर्वे गोरा जबे शास्त्र कैला अध्ययन। तर्क शास्त्रेर टिका एक कैला विरचन।।62

जब पहले श्रीगौर शास्त्रों का अध्ययन कर रहे थे

तो तर्क शास्त्र पर आपने एक टीका लिखी थी।

सेइ टिका लञा तिंह गंगा पारे जाय। हेन काले द्विज एक ताहारे पुछय।63

उस टीका को लेकर वे एकदिन नौका में बैठकर गंगा पार जा रहे थे, तो एक वहां बैठे ब्राह्मण ने श्रीगौर से पूछा–

तव कक्षे कोन ग्रन्थ कह महाशय। न्याय शास्त्रेर टिका एइ श्रीगौरांग कय।।64

आपकी बगल में कौनसा ग्रन्थ लग रहा है?

श्रीगौर ने कहा– 'न्याय–शास्त्र' की टीका है यह।

द्विज सेइ टिका देखि करे हाहाकार। कहे मोर परिश्रम कैल छार खार।।65

उस टीका को देखकर वह विप्र हाय! हाय!!

कहने लगा– मेरा तो सारा परिश्रम मिट्टी हो गया।

इहा देखि मोर टिकार हैवे अनादर। श्रीगौरांग कहे भय नाहि द्विजवर।।66

इसको देखकर मेरी टीका का तो कोई आदर न करेगा। श्रीगौर ने अपने मित्र का मान बढ़ाने हेतु कहा– हे विप्र! तुम जरा भी भय मत करो।

सेइ क्षणे दयानिधिर दया उपजिल। निजकृत टीका गंगा माझे डारि दिला।।67

उस समय दया सागर की दया उछल पड़ी,

उसी समय अपनी टीका को सागर गंगा में डाल दिया।

ताहा देखि सेइ द्विज महानन्दे कय। हेन त्याग स्वीकारिते जीवे ना पारय।।68

यह देखकर वह विप्र महानन्दित होकर कहने लगा–

ऐसे त्याग करने की शक्ति जीव में नहीं हो सकती।

तुमि निश्चय साक्षात विष्णु अवतार। तोहार चरणे मोर कोटि नमस्कार।।69

आप तो साक्षात् विष्णु के अवतार हैं, आपके चरणों में मैं कोटि प्रणाम करता हूँ।

एत कहि द्विज हर्षे करिला गमन। गोराचाँदेर यश–ज्योत्स्नाय पुरिल भुवन।।70

इतना कहकर द्विज अपने घर चला गया।

श्रीगौरचन्द्र भगवान् की यश–ज्योत्स्ना से सारा जगत् पूर्ण हो उठा।

श्रीचैतन्यलीला गान अविचिन्त्य जानि। मुञि कीट सूत्र परमाणु गणि।।71

श्रीचैतन्यलीला का गान भी अचिन्त्य है मैं क्षुद्र कीट तो सूत्रमात्रही कह रहा हूँ।

तबे श्रीअच्युते कहे शचीर नन्दन। मोर दक्ष नेत्र काहे करये स्पन्दन।।72

तब श्रीमहाप्रभु बोले– हे अच्युत! मेरा दाहिना नेत्र क्यों फड़क रहा है?

तबे श्रीअच्युत कहे तुहुँ सुमंगलमय। सर्वदा मंगलगण तोंहे विराजय।।73

श्रीअच्युत ने कहा– आप तो सुमंगलमय हैं।

समस्त मंगल आप में अवस्थित रहते हैं।

बुझि–कोन प्रियभक्तेर हैव शुभोदय। ते कारणे भक्ताधीनेर नेत्र विस्फुरय।74

लगता है कोई प्रियभक्त आने वाला है।

उसी कारण भक्ताधीन प्रभु आपका नेत्र फड़क रहा है।

हेन काले व्रज हइते भागवतोत्तम। गौर आगे आसि दण्डाइला सनातन।75

इतने में ब्रज से भागवतोत्तम श्रीसनातन आकर श्रीगौर के सामने आ खड़े हुए।

तारे देखि श्रीगौरांग प्रेमानन्दे कय। कृष्ण नित्य भक्तेर सिद्धवाक्य सुनिश्चय।।76

उन्हें देखकर श्रीगौरांग प्रेमानन्द में कहने लगे–

श्रीकृष्ण के नित्य भक्तों के वाक्य निश्चय ही सिद्ध–सत्य होते हैं।

श्रीअच्युत कहे तुहुँ मनेर नियन्ता। नामरूपे स्थिति कैले जीवेर हय कर्त्ता।77

श्रीअच्युत ने कहा– आप ही तो मेरे नियन्ता है। श्रीनाम–रूप में अवस्थित होकर जीवों के कर्त्ता भी तो साक्षात्रूप में आप ही हैं।

शुनि महाप्रभु कैला श्रीविष्णु स्मरण। गौरे देखि प्रेमाविष्ट हैला सनातन।।78

सुनकर श्रीमहाप्रभु ने विष्णु का स्मरण किया।
श्रीगौर को देखकर श्रीसनातन प्रेमाविष्ट हो गये।

स्तम्भ स्वेद रोमान्चादि करिया धारण। प्रेमाश्रुते गौरपद कैला प्रक्षालन।।79

स्तम्भ–स्वेद, पुलकादि सात्त्विक–विकार उनमें विकसित हो आये और प्रेमाश्रुजल से उन्होंने श्रीगौरचरणों का प्रक्षालन किया।

बाहु पशारिया गोरा तारे आलिंगिला। तिंह कहे मोरे महापराधी कैला।।80

भुजा पसार कर श्रीगौर ने उन्हें आलिंगन किया।
वे कहने लगे– प्रभो! आपने मुझे महापराधी बना दिया।

एके मुञि हङ महा अस्पृष्य अधम। ताहे गात्रे कण्डुरसा घृणार भाजन।।81

एक तो मैं पहले ही महा अधम हूँ, अस्पृश्य हूँ। फिर मेरे शरीर में कण्डुरसा बह रहा है, मैं अति घृणा का पात्र बन रहा हूँ।

महाप्रभु कहे कति तुषा कण्डुरस। सुनिर्मल देह देखि जैछे सूर्य–भास।।82

श्रीमहाप्रभु बोले– कहाँ है वह कण्डुरसा,
तुम्हारा शरीर तो सूर्य के समान सुनिर्मल दीख रहा है।

शुनि सनातन निज तनु निरीक्षय। अरोग देखिया मने हैल विस्मय।।83

सुनकर सनातन ने जो अपने शरीर को देखा तो
बिल्कुल निरोग था। वे अति विस्मित हो गये।

अचिन्त्य कृष्ण चैतन्येर कृपा स्वीकारिला। ऊर्ध्वबाहु हञा प्रेमे नाचिते लागिला।84

श्रीकृष्ण चैतन्य की अचिन्त्य–कृपा को उन्होंने इसका कारण स्वीकार किया और भुजा उठा कर प्रेमानन्द में श्रीसनातन नाचने लगे।

सर्व भक्तगणे हर्षे करये गर्ज्जन। महाप्रभु आरम्भिला नाम संकीर्तन।।85

सब भक्तों ने हर्षित होकर गर्ज्जना की।
श्रीमहाप्रभु ने नाम संकीर्तन आरम्भ कर दिया।

केह खोल बाजाय केह वा करताल। केह प्रेमे हासे कान्दे जैछे मातोयाल।86

कोई खोल तो कोई करताल बजाने लगा।
कोई मतवाले की भांति कभी हंसने कभी रोने लगा।

क्रमे संकीर्तन सिन्धुर तरंग बाढ़िल। प्रेमावेशे श्रीगौरांग ताहे डुबि गेल।।87

क्रमशः संकीर्तन सिन्धु की तरंगें बढ़ती गयीं और
प्रेमावेश में श्रीगौरांग उसमें डूब ही गये।

क्षणे अश्रु क्षणे कम्प क्षणे अचैतन्य। क्षणे हरि बुलि कान्दे क्षणे करि दैन्य।88

कभी अश्रु, तो कभी कम्प और कभी अचेतना उन्हें आने लगी। दूसरे क्षण हरि–हरि बोलते, तो अगले क्षण दीनतापूर्वक रोने लगे।

बहु क्षणे नाम संकीर्तन निवर्त्तिया। आसने वसिला गोरा भक्तगण लञा।।89

अनेक क्षणों में श्रीहरिनाम संकीर्तन समाप्त कर
श्रीगौर भक्तगणों के साथ आसन पर बैठ गये।

तबे सनातन गौरे पुछे मृदु स्वरे। धर्म मध्ये सनातन धर्म कहि कारे।।90

तब श्रीसनातन ने मधुर स्वर में पूछा– हे गौरचन्द्र!
धर्मों में सनातन–धर्म किसे कहते हैं?

महाप्रभु कहे तुहुँ भागवतोत्तम। सर्व शास्त्रवेत्ता सर्व बुद्धे विचक्षण।।91

श्रीमहाप्रभु बोले– सनातन! आपतो भागवतोत्तम हो।
सब शास्त्रों के जानकार तथा सबसे विलक्षण प्रतिभाशाली हो।

तथापिह पुछिला सज्जन व्यवहारे। सत्संगालापे साधुर वान्छा नाहि पुरे।।92

तो भी सज्जन–स्वभाव से आपने पूछा है, क्योंकि सत्संग के कथोपकथन से भक्तों की कभी वान्छा तृप्त नहीं होती।

श्रीवैष्णवधर्मे कहि सनातन धर्म। ताहा बिना आने–कहे उपधर्म सम।।93

श्रीवैष्णव–धर्म को ही 'सनातन धर्म' कहते हैं।
उसे छोड़कर और सारे उपधर्मों के समान हैं।

श्रीवैष्णव धर्म नित्यसिद्ध वेदे कय। उपधर्म शिव प्रचारिला कृष्णाज्ञाय।।94

वेद कहता है श्रीवैष्णव धर्म नित्यसिद्ध है।
श्रीकृष्ण–आज्ञा से श्रीशिवजी ने उपधर्म का प्रचार किया है।

शिवाज्ञा विफल नहे गौण कार्य सिद्ध। वक्रपथे गति शीलेर जैछे श्रम–वृद्धि।।95

शिवाज्ञा भी निष्फल नहीं है, उससे गौण रूप से कार्यसिद्धि होती है, किन्तु उसी प्रकार जैसे टेढ़े–मार्ग से जाने वाले व्यक्ति को अधिक परिश्रम उठाना पड़ता है।

बहु जन्मे अन्य देव उपासना फले। विष्णु मन्त्र लभ्यहय चित्त शुद्धि हैले।।96

अनेक जन्मों तक दूसरे–दूसरे देवी–देवताओं की उपासना के फलस्वरूप
विष्णुमन्त्र प्राप्त होता है। उससे फिर चित्त शुद्धि होती है।

विष्णु कल्पतरु सम भक्त इच्छा द्वारे। अति सुदुर्लभ मोक्षादिक दान करे।97

श्रीविष्णु कल्पवृक्ष के समान है। भक्त इच्छा के
माध्यम से वे अति सुदुर्लभ मोक्षादि भी उन्हें प्रदान कर देते हैं।

सनातन कहे बुझिलाङ स्थूल मर्म। अनादि सुसिद्ध हय श्रीवैष्णवधर्म।।98

श्रीसनातन ने कहा– मैंने मोटा–मोटा यही मर्म समझा है कि
श्रीवैष्णवधर्म ही अनादि सुसिद्धधर्म है।

महाप्रभु कहे श्रीवैष्णव धर्मोत्तम। मुख्य हरिनामे रुचि कहे साधुगण।।99

महाप्रभु बोले– श्रीवैष्णव धर्म उत्तम है।
उसमें श्रीहरिनाम में रुचि को साधुगण उत्तम कहते हैं।

इत्यादि अनेक भक्ति तत्त्व उघाड़िला। सनातन आदिभक्त महा हर्ष हैला।।100

इसप्रकार महाप्रभु ने अनेक भक्ति तत्व प्रकाशित किये,
जिससे श्रीसनातनादि समस्त भक्त महा हर्षित हो उठे।

तबे श्रीमज्जगन्नाथेर रथयात्रा योगे। नाना देश हैते यात्री हइला एकयोगे।।101

उस समय श्रीजगन्नाथ के रथयात्रा उपलक्ष्य में
अनेक देशों से एकसाथ बहुत से यात्री एकत्रित हुए।

गौड़देशी यात्री आइला महाप्रभुगण। नित्यानन्द श्रीअद्वैत आदि भक्तजन।102

गौड़ देश से भी महाप्रभु के भक्त यात्रा करने आये।
उनमें नित्यानन्दप्रभु एवं श्रीअद्वैतादि भक्तगण भी थे।

निजगण पाञा गोरा आनन्दित हैला। क्रमे सर्व भक्तेर कुशल पुछिला।।103

अपने भक्तों को देखकर श्रीगौर आनन्दित हुए और
क्रमशः एक–एक भक्त से कुशल पूछा।

सभे गौर प्रणमिया मगल कहिला। क्रमे श्रीचैतन्य सभाकारे आलिंगिला।।104

सबने प्रणाम कर अपनी कुशलता कही।
फिर सबको क्रमशः प्रभु ने आलिंगन किया।

महाप्रभु तबे सब भक्तगण संगे। तीर्थराज सिन्धु स्नान कैला अति रंगे।।105

महाप्रभु ने भक्तों के साथ जाकर तीर्थराज
समुद्र में अति आनन्दपूर्वक स्नान किया।

ता सह कैला जगन्नाथ दरशन। सभे मेलि कैला महाप्रसाद भक्षण।।106

भक्तों के साथ जाकर श्रीजगन्नाथ जी का दर्शन किया।
सबने मिलकर, महाप्रसाद ग्रहण किया।

कि आनन्द हैल ताहे कहने ना जाय। जार कोटि भाग्य सेई देखिवारे पाय।।107

उस समय के आनन्द का वर्णन नहीं हो सकता।
जिसके कोटि–भाग्य थे, उसने उस आनन्द को प्रत्यक्ष देखा।

तबे महाप्रभु वक्ता श्रोता भक्तगण। व्रजगोपीर भाव श्रेष्ठ करये वर्णन।।108

तब श्रीमहाप्रभु तो वक्ता बने और भक्तगण श्रोता।
प्रभु ब्रजगोपियों के श्रेष्ठ भाव का वर्णन करने लगे।

शुनि भक्तगण शुद्ध प्रेमेते मातिला। गौरसंगे महासंकीर्तन आरम्भिला।।109

सुनकर भक्तगण शुद्ध प्रेम में उन्मत्त हो उठे।
फिर श्रीगौर के साथ भक्तों ने महासंकीर्तन आरम्भ किया।

बहु सम्प्रदाय बाजे खोल करताल। ऊर्ध्वबाहु हञा कहे नाचये रसाल।।110

चार टोलियों में खोल–करताल बजने लगे और कई गौर प्रिय भक्त प्रवर अपनी दोनों भुजाएं ऊँची उठाकर अति सुन्दर नृत्य करने लगे।

अद्वैत नाचये भाल आगे ताँरे दिला। मध्ये गौर नित्यानन्द नाचिया चलिला।।111

आगे–आगे श्रीअद्वैत नृत्य कर रहे थे।
बीच में श्रीनिमाई–निताई नाचते चल रहे थे।

पीछे भक्तगण नाचे रोमान्चित हञा। अंग भंगी करे कत प्रेमेते मातिया।।112

पीछे–पीछे सब भक्तगण रोमांचित होकर नाच रहे थे।
अनेक प्रकार की अंग–भंगिमा करते थे प्रेम में उन्मत्त होकर।

अपूर्व करिला नृत्य लोकेर विस्मय। गंधर्व निछिया सभे हरिगुण गाय।।113

ऐसा अपूर्व नृत्य था कि लोग विस्मित हो उठे।
गंधर्वों को निन्दितकर सब हरि गुणगान कर रहे थे।

संकीर्तन सुधा पिया भक्त चकोर। केह प्रेमावेशे कान्दे केह देय कोर।।114

भक्तचकोर संकीर्तन–सुधा पान कर कोई
प्रेमावेश में रो रहा था मुँह में कपड़ा देकर।

केह भावावेशे माति अट्ट अट्ट हासे। मूर्च्छा हञा पड़े केह महाप्रेमावेशे।115

कोई भावावेश में मत्त होकर अट्ट–अट्टाहास कर
रहा था। कोई महा प्रेमावेश में मूर्च्छित हो रहा था।

अद्भुत कीर्तनानन्दे देवे आकर्षय। कत पापी तरि गेल नामेर नौकाय।।116

इस अद्भुत कीर्तनानन्द में देव भी आकर्षित हो रहे थे। उस नाम–नौका पर चढ़कर असंख्य पापी भवसागर से पार उतर गये।

रथयात्रा दिने हैल महा–महोत्सव। वर्णिते नाहिक क्षम तार एक लव।।117

रथयात्रा के दिन तो महामहोत्सव हुआ,
उसका तो लव मात्र भी वर्णन नहीं हो सकता।

आगे चले सुभद्रा मायेर रथखनि। पिछे बलरामेर रथ चलये आपनि।।118

आगे था श्रीसुभद्रा माता का रथ, उसके पीछे श्रीबलराम का रथ था। फिर था।

जगन्नाथेर रथे टाने लक्ष लक्ष जने। नड़ाइते नाति पारे तार एक कोणे।।119

श्रीजगन्नाथजी का रथ जिसे लाखों जन खींच रहे थे

किन्तु उसे एक पद भी आगे नहीं चला।

आश्चर्य मानये ताहे सर्व यात्रिगण। हासि महाप्रभु डुबि कैला आकर्षण।।120

सब यात्रिगण आश्चर्य मान रहे थे कि रथ टस से मस नहीं हो रहा।

तब श्रीमहाप्रभु ने मुस्कराते हुए रथ का आकर्षण किया।

तानस्पर्श मात्रे रथ वेगेते चलिल। सर्वजने महानन्दे हरिध्वनि कैल।।121

उनका स्पर्श मात्र होते ही रथ तो तेजी से चल पड़ा

और सब लोगों ने महानन्दपूर्वक हरिध्वनि की।

करये अपूर्व लीला जगन्नाथ हरि। जेइ ताँरे देखे सेइ जाय भव तरि।।122

श्रीजगन्नाथ हरि अपूर्व लीला करते हैं,

जो उनका दर्शन करता है वही भवसागर से तर जाता है।

जे जैछे भावये जगन्नाथेर स्वरूप। दया करि तारे हरि देखाय तैछे रूप।123

जो जैसे स्वरूप में श्रीजगन्नाथ का भावना करता है

उसे दयाकर वे वैसा ही रूप दिखाते हैं।

केह देखे कृष्णमूर्त्ति केह त वामन। वेदे कहे पुन तार नाहिक जनम।।124

कोई तो उन्हें श्रीकृष्णमूर्त्ति देखता है, कोई वामन रूप में। वेद कहता है, जिस रूप में भी उनके जो दर्शन करता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

यदि केह मायावशे विषय चिन्तय। ताहाई देखये कृष्णे देखिते ना पाय।।125

यदि कोई मायावश होकर विषयों का चिन्तन करता है,

तो उसे विषय ही दिखते हैं, कृष्णमूर्त्ति नहीं।

श्रीजगन्नाथेर दिव्य लीलार नाहि पार। महाप्रसादेर शक्ति देव अगोचर।।126

श्रीजगन्नाथ की दिव्य लीलाऐं अपार हैं।

उनके महाप्रसाद की महिमाशक्ति देवताओं के अगोचर है।

चण्डाले आनिले अन्न ब्राह्मणेते खाय।द्विधा करिले महाव्याधि तत्व एई जन्मय।127

चण्डाल भी यदि महाप्रसाद अन्न ले आये तो ब्राह्मण पर्यन्त उसे पाते हैं। मन में दूसरा भाव आने पर उसे तत्काल महा व्याधि (कुष्ट रोग) हो जाता है।

श्रीमहाप्रसाद यदि कुक्कुरादि खाय। तार मुख भ्रष्ट प्रसाद देव–भोग्य हय।।128

महाप्रसाद यदि कुत्ते आदि के मुख से भ्रष्ट हो जाये,

तो भी वह प्रसाद देवता गण ग्रहण करते हैं।

महाप्रसादेर गुण अचिन्त्य अक्षय। श्रीअनन्त आदि तार अन्त ना जानय।।129

महाप्रसाद के गुण अचिन्त्य हैं और अक्षय हैं।

श्रीअनन्तदेव भी उनका अन्त नहीं पा सकते।

जे जन महाप्रसाद लव मात्र खाय। सर्व पाप मुक्त हञा श्रीवैकुण्ठे जाय।।130

जो व्यक्ति लव मात्र भी महाप्रसाद खा लेता है,

वह सर्वपापों से मुक्त होकर वैकुण्ठ धाम प्राप्त करता है।

श्रीपुरुषोत्तमे जैछे प्रसाद महिमा। ऐछे काँहा नाहि शुनि प्रसाद गरिमा।।131

श्रीपुरी क्षेत्र में महाप्रसाद की जैसी महिमा है,

वैसी प्रसाद गरिमा और कहीं नहीं सुनी जाती।

मुञि अति क्षुद्र कीट नाहि मोर क्षम। सूत्र परमाणु मन्त्र करिनु लिखन।।132

मुझ तुच्छ कीट की उस महिमा को वर्णन करने में क्षमता नहीं है।

सूत्र का भी परमाणु मैंने लिखा है।

रथयात्रा अन्ते गौर भक्तगणे डाकि। कहे तोरा बहु दुख पाइला मोर लागि।।133

रथयात्रा के बाद श्रीगौर ने सब भक्तों को बुलाकर कहा–

आप मेरे लिए बहुत कष्ट उठाकर आये है।

पुन पुन हेथा आसि नाहि प्रयोजन। देशे रहि कर सदा नाम वितरण।।134

बार–बार आपके यहां आने की प्रयोजनीयता नहीं है।

वहाँ में रहकर सदा श्रीनाम प्रचार कीजिए।

नित्य धर्म प्रचारिते तोमार सभार जन्म। जीवन सफल कर प्रचारिया धर्म।।135

नित्य धर्म (वैष्णव धर्म) के प्रचार के लिये ही आप सबका जनम हुआ है।

धर्म का प्रचार कर अपना जीवन सफल कीजिए।

दिन कत गूढ़ स्थाने करिमु सेवन। तबे मोर हय सर्व अभीष्ट पूरण।।136

मैं कुछ दिन तक एकान्त स्थान पर जाकर रहूँगा,

तभी मेरा सर्वाभीष्ट पूर्ण हो पायेगा।

नित्यानन्दे विवाह करिते आदेशिला। गौर–आज्ञाय भक्तवृन्द निजदेशे गेला।।137

श्रीमहाप्रभु ने श्रीनित्यानन्द प्रभु को विवाह करने की आज्ञा दी। फिर श्रीमहाप्रभु की आज्ञा पाकर रोते–रोते भक्तवृन्द अपने–अपने देश लौट गये।

निगूढ़ स्थानेते गोरा प्रवेश करिया। हरिनाम करे सदा प्रेमे मग्न हञा।।138

श्रीगौरसुन्दर ने निगूढ़ स्थान–गम्भीरा में जाकर निवास किया और निरन्तर प्रेममग्न होकर हरिनाम करते हुए लीला चिन्तन करने लगे।

प्रिय भक्ते देखि कहे हरिनाम सार। हरिनाम बिना जीवेर गति नाहि आर।।139

प्रिय भक्तों को देखकर प्रभु कहते हैं कि श्रीहरिनाम सार है। हरिनाम को छोड़कर जीवों की और गति नहीं है– उनके उद्धार का और साधन नहीं है।

नाम कर नाम चिन्त नाम कर सार। नामेर सहित हरि करये विहार।।140

हरिनाम जप करो, हरिनाम का चिन्तन करो, हरिनाम को सार वस्तु जानो। श्रीहरिनाम के साथ नामी श्रीहरि सदा विहार करते हैं।

जेई नाम सेइ हरि नाहि किछु भेदे। इहा सप्रमाण कहे पुराणादि वेदे।।141

जो नाम है वही श्रीहरि हैं– इनमें कुछ भी भेद नहीं है। इस बात को वेद–पुराण प्रमाण सहित कहते हैं।

एबे शुन ब्रह्म–हरिदासेर निर्याण। जिंह प्रतिदिन करे तिन लक्ष नाम।।142

अब श्रीब्रह्म हरिदास के निर्याण का प्रसंग सुनिए। जो प्रतिदिन तीन लाख हरिनाम करते थे।

हरिनामे ऐछे रुचि नाहि देखों आर। सर्वभक्तगणे जन्माइला चमत्कार।।143

उनकी एकमात्र हरिनाम में रुचि थी, कुछ भी उनमें सांसारिक वस्तुओं से कोई रूचि नहीं दिखी। उन्होंने सब भक्तों को चमत्कृत कर दिया।

हरिदास मने निज निर्वाण जानिया। संकीर्तन मात्रे आसि पड़िला शुतिया।।144

श्रीहरिदास ने अपने निर्वाण को जान लिया और वे महाप्रभु के संकीर्तन में आकर शरण लेकर सो गये।

महाप्रभु पादपद्म हृदये धरिला। श्रीकृष्णचैतन्य बलि पराण त्यजिला।।145

श्रीमहाप्रभु के चरणकमल उन्होंने हृदय पर धारण कर लिये और श्रीकृष्णचैतन्य बोलते–बोलते प्राणों का त्यागकर गौलोक की गति प्राप्त की।

देखि श्रीगौरांग करे उच्च ध्वनि। भक्तगण कहे इहों साधु शिरोमणि।।146

यह देखकर श्रीगौरांग ने उच्च हरिध्वनि की। भक्तगण कहने लगे ये हैं भक्तशिरोमणि जिन्होंने भीष्म पितामह जैसी परमगति प्राप्त की।

चौदिगे श्रीहरिनामेर वातास उठिल। संकीर्तन ढेउ तबे बाढ़िते लागिल।।147

चारों ओर श्रीहरिनाम की ध्वनि गूंजने लगी और हरिनाम संकीर्तन का कोलाहल बढ़ने लगा।

श्रीचैतन्य प्रेमानन्द सिन्धुते डुबिला। सर्वभक्तगण ताहे सातार खेलिला।।148

श्रीचैतन्य प्रेमानन्द सागर में मग्न हो गये। तब
सब भक्तों ने भी उस प्रेमसागर में अपने को बहा दिया।

तबे गोरा हरिदासेर समाधि करिया। महा महोत्सव कैला आनन्दित हञा।149

भक्तवत्सल श्रीगौरहरि ने श्रीहरिदास की समाधि कर
स्वयं भिक्षा की एवं आनन्दपूर्वक महामहोत्सव किया।

दयार सागर श्रीचैतन्य महाप्रभु। हेन दयाल अवतार नाहि शुनि कभु।।150

श्रीचैतन्य महाप्रभु दयाके सागर हैं ऐसा दयालु अवतार कहीं नहीं सुना गया है।

सर्व अवतारी गोरा सर्वशक्तिमान। लोकनिस्तारिते एइ लीलार निदान।।151

श्रीगौर सुन्दर सर्वावतारी सर्वशक्तिमान हैं। उनकी लीला का एकमात्र निदान
है– श्रीकृष्णप्रेम दानकर जीव–जगत् का निस्तार करना।

ब्रह्मार सुदुर्लभ शुद्धप्रेम आर हरिनाम।दयाकरि याचि दिला नाहि स्थानास्थान।152

ब्रह्मा के लिए भी शुद्ध ब्रजप्रेम तथा नामनिष्ठा होना सुदुर्लभ है। उसको
श्रीमहाप्रभु ने पात्र–अपात्र का विचार न कर सबको बुला–बुलाकर बांट दिया।

श्रीगुरु–गौरांगपदे कोटि नमस्कार। तांर दया–लव प्रार्थी हङ निरन्तर।।153

श्रीगुरु–गौरांग के चरणों में मेरा कोटि नमस्कार है।
उनकी लवमात्र दया की निरन्तर प्रार्थना करता हूँ।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।154

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के चरणों की अभिलाषा करते हुए
श्रीईशाननागर श्रीअद्वैतप्रकाशका वर्णन करते हैं।

विंश–अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्दराम भक्तगण साथ।।01

श्रीकृष्णचैतन्य की जय हो, जय हो, श्रीसीतानाथ की जय हो।
श्रीनित्यानन्दराम की भक्तों सहित जय हो।

एबे शुन नित्यानन्द प्रभुपाद लीला।महाप्रभुर आज्ञाय तिंह गौड़ देशे गेला।02

अब प्रभुपाद श्रीनित्यानन्द की लीला सुनिये।
श्रीमहाप्रभु की आज्ञा पाकर ये गौड़ देश चले गये।

उद्धारण दत्त हय प्रभुर कृपापात्र। निज प्रभुर सेवा तिंह करे अहोरात्र।।03

श्रीउद्धारणदत्त इनका कृपापात्र था जो दिनरात
अपने प्रभु की सेवा करता रहता था।

क्रमे श्रीमान नित्यानन्द आइला अम्बिकाय। धरिला मोहन रूप देवेर विस्मय।।04

क्रमशः श्रीनित्यानन्द अम्बिका ग्राम में आये और ऐसा
मोहनरूप धारण किया, देवता आश्चर्य करने लगे।

सेइ रूपे सर्वचित्त हरिल मोहन। सभे कहे एइ कोन राजार नन्दन।।05

उस रूप में सबका चित्त हरण हो गया।
सब कहने लगे– यह कोई महाराजेश्वर है।

हेन काले सूर्यदास पण्डित आइला। नित्यानन्देर रूप देखि आश्चर्य मानिला।।06

तब वहां पण्डित सूर्यदास आये और श्रीनित्यानन्द
के रूप को देखकर चकित हो उठे।

सूर्यदास कहे ताने विनय करिया। काँहा तव धाम नाम कह विवरिया।।07

सूर्यदास ने उन्हें विनयपूर्वक पूछा– आपका घर कहाँ है,
आपका नाम क्या है? विस्तारपूर्वक कहिये।

उद्धारण कहे इहों ब्राह्मण उत्तम। वादी श्रेणी सर्वशास्त्रे अति उच्चतम।।08

श्रीउद्धारणदत्त ने कहा– आप श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं
वादी श्रेणी के और सर्वशास्त्रों का उत्तम ज्ञान रखते हैं।

न्यायचूड़ामणि इँहार शास्त्रेर आख्याति। नित्यानन्द नाम प्रेमानन्दपुरे स्थिति।।09

इनकी शास्त्र–अध्ययन में "न्यायचूड़ामणि" उपाधि है। इनका शुभ नाम है
श्रीनित्यानन्द और प्रेमानन्दपुर में ये अवस्थान करते हैं।

शुनि हर्षे कहे सूर्यदास मतिमान। मोहर आश्रमे आसि करह विश्राम।।10

सुनकर श्रीसूर्यदासपण्डित ने हर्षपूर्वक कहा– आप मेरे घर चल विश्राम करिये।

शुनि नित्यानन्द हासि तार घरे गेला। यत्ने द्विज प्रभुरे भोजन कराइला।।11

उनके वचन सुनकर श्रीनित्यानन्द मुस्करा दिये और उनके घर चले आये।
श्रीसूर्यदास ने उन्हें प्रीति और यत्नपूर्वक भोजन कराया।

ग्रामेर रमणीगण झांके झांके आइला। नित्यानन्देर रूप देखि सभे प्रशंसिला।।12

ग्राम की रमणियां झांकती हुई वहां आई और
इनको देखकर इनके अतिसुन्दर रूपकी प्रशंसा करने लगीं।

सूर्यदास पत्नी स्थाने नारीगण कय। एइमात्र हैल तोर कन्यार योग्य हय।13

सूर्यदास की पत्नि को सब स्त्रियां कहने लगीं–
तुम्हारी कन्या के लिए यही एकमात्र योग्य वर है।

सूर्यदासेर दुइ कन्या कमलार समा। वसुधा जाह्नवा रूपे गुणे निरूपमा।।14

सूर्यदास की दो कन्याएं थीं जो लक्ष्मी के समान

रूपगुण में निरुपमा थी– वसुधा और जान्हवा।

श्रीककुद्‌मि महाराज सूर्यदास पण्डित। तार पत्नी साध्वी सती गुणे विभूषित।।15

श्रीककुद्‌मि सूर्यदास पण्डित महाराज की

पत्नि बड़ी साध्वी थीं, सती–गुणों से विभूषित थी।

तिंह कहे तोरा सभे कर आशीर्वाद।सत्‌पात्रे दुहिता दिते नाहि कार साध।16

वह बोली– आप सब आशीर्वाद करो। सत्‌पात्र के लिए

कन्या प्रदान करना किसे अच्छा नहीं लगता ?

किन्तु पण्डितेर किवा इच्छा नाहि जानि। तार मन हैल तबे शुभ करि मानि।।17

किन्तु पण्डितजी की क्या इच्छा है, उसे मैं नही जानती हूँ,

उनका मन मान जाये तो शुभ मानूंगी।

हेनकाले आइल सूर्यदास सुपण्डित। नारीगण कहे ताँरे हञा हरषित।।18

इतने में सूर्यदास पण्डित अन्दर आये और रमणियों ने उन्हें हर्षित होकर कहा–

विवाहेर योग्य दुइ कन्या तुया घरे। विधि दया करि हेथा मिलाइल वरे।।19

आपके घर में दोनों कन्याएं विवाह के योग्य हैं।

विधाता ने दयाकर घर बैठे ही वरको भेज दिया है।

किवा बुद्धि करियाछ कह देखि शुनि। पण्डित कहये सर्वमत हैले मानि।।20

आपने इस विषय में क्या सोचा है? आप अपनी राय तो कहो। (आन्तरिक रूप से सहमत होते हुए) भक्त प्रवर पण्डितजी बोले– सब यदि सहमत हों तो मैं भी सहृदय से इस प्रस्ताव को स्वीकार लूँगा।

एइ कहि सूर्यदास गेला बहिर्द्वारे। आत्मीय कुटुम्ब गणे आने निजघरे।।21

इतना कहकर पण्डित घर के बाहर आये और

अपने कुटुम्बी लोगों को अपने घर बुला ले गये।

पण्डित सभारे कहे विनय करिया। आगन्तुके कन्यादान कह समुझिया।।22

पण्डित ने सबसे विनयपूर्वक कहा कि इस आगन्तुक के

लिए कन्यादान कैसा रहेगा–विचार कर कहिये?

सभे कहे कति इहार घर नाहि जानि।अज्ञात कुल शील लोके ना पुछये ज्ञानी।23

सबने कहा– इसका घर–बार कहां है, हम तो जानते नहीं हैं।

अज्ञात कुलशील व्यक्ति की समझदार व्यक्ति बात नहीं पूछते।

कन्या दानेर योग्य पात्र सहज ना हय। शिवे कन्या दिया दक्ष छागमुख पाय।।24

कन्यादान के योग्य पात्र मिलना सहज बात नहीं होती। दक्ष ने शिवजी को अपनी कन्या दे दी। उनसे अपराध में उसने बकरे का सिर पाया।

हेन मते नाना कथा करे आलापन। ताहा बुझे नित्यानन्द करिला गमन।।25

इस प्रकार अनेक प्रकार की बातें सब करने लगे।
उनको समझ कर श्रीनित्यानन्द वहां से चल दिये।

गंगातीरे प्रभु नित्यानन्द चलि गेला। भावावेशे गौरीदास ताँहारे चिनिला।।26

वे गंगातट पर चले गये। भावावेश में श्रीगौरीदास ने उन्हें पहचान लिया।

नित्यानन्दे प्रणमिया कहे गौरीदास। अनन्त अर्बुद तुया लीलार प्रकाश।।27

श्रीगौरीदास ने श्रीनित्यानन्द प्रभु को प्रणाम किया और बोले–आपकी लीलाओंका अनन्त–असंख्य प्रकाश है। प्रभु आप साक्षात् बलरामही हैं।

शुनि अट्टहासि प्रभु गंगातीरे गेला। ताहार निराशे गौरीदास दुखी हैला।28

यह सुनकर श्रीनित्यानन्द प्रभु अट्टहास करते हुए गंगा के किनारे पर चले आये। उनको निराश देखकर श्रीगौरीदास दुखी हुए।

श्रीगौरीदास पण्डित नहे साधारण। व्रजे जेई कृष्ण–प्रियसखाते गणन।।29

श्रीगौरीदास कोई साधारण व्यक्ति न थे,
इनकी ब्रजलीला में श्रीकृष्ण के प्रिय सखाओं में गिनती है।

मोर प्रभु कहे जारे सुबल गोपाल। राधाकृष्णेर गूढ़ लीला जानये सकल।।30

श्रीअद्वैत तो इन्हें "सुबल गोपाल" कहा करते थे।
ये श्रीराधाकृष्ण की समस्त गूढ़ लीलाओं को जानते थे।

एबे राधाकृष्ण अवतीर्ण नदीयाय। सखागण हैला आसि लीलाय सहाय।।31

अब जब श्रीराधाकृष्ण नवद्वीप में आकर अवतीर्ण हुए तो सखागण भी लीला की सहायता के लिए साथ अवतीर्ण हुए हैं।

महाप्रभुर अन्तरंग भक्त गौरीदास। जबे गौर संगे कैला संकीर्तन–विलास।32

श्रीमहाप्रभु के अन्तरंग भक्त हैं श्रीगौरीदास।
संकीर्तन विलास में ये गौर के संगी थे।

गौर–निताई संग बिनु घरे नाहि रय। तार बन्धुगण महाप्रभुरे कहय।।33

श्रीगौर–निताई का संग छोड़कर यह अपने घर में न रहते थे।
इनके बन्धु–बान्धव महाप्रभु से कहा करते–

एइ बालकेरे आज्ञा कर दार ग्रहे। सभार आनन्द यदि थाके निजगृहे।।34

इस बालक को अपनी पत्नी के पास रहने की आज्ञा

दे दो। वह अपने घर में रहा आवेगा तो सबको आनन्द होगा।

महाप्रभु कहे भाल करिमु ताहाञि। सुस्थ हञा थाक सबे कोन चिन्ता नाई।।35

श्रीमहाप्रभु ने कहा था– ठीक है ऐसा ही करूँगा।

आप धैर्य रखिये कोई चिन्ता न कीजिये।

तब सन्ध्याय पण्डित ठाकुर गौरीदास। पुष्पमाला लञा आइला महाप्रभुर पाश।।36

तब उसी दिन सन्ध्या के समय पण्डित गौरीदास

एक पुष्पमाला लेकर महाप्रभु के पास आये।

श्रीगौरांगेर कण्ठे माला निजे पराइला। प्रेमे गद्गद हञा दण्डवत् कैला।।37

उन्होंने वह माला श्रीमहाप्रभु के गले में डाल दी

एवं प्रेम में गद्गद होकर उन्हें प्रणाम किया।

ब्रजेर शुद्ध भाव गौरेर उद्दीपन हैला।आइस प्राण सखा बलि तारे कोले कैला।38

ब्रज का शुद्ध भाव श्रीगौर में उद्दीपन हो उठा।

"आओ प्राण सखा" कह प्रभुने इन्हें गोद में उठाया।

अविश्रांत अश्रु गोरार बहे दुनयने। वस्त्रद्वारे गौरीदास मुछाय आपने।।39

श्रीगौर के नेत्रों से अविरल अश्रुधारा बहने लगी।

तब गौरीदास अपने वस्त्र से उसे पोंछने लगे।

श्रीराधार भाव महा–समुद्र गभीरे। डुबिला श्रीगोराचाँद नाहि बाह्य स्फुरे।।40

श्रीराधाभाव के गम्भीर महासागर में श्रीगौरचाँद डूब गये

और उन्हें बाहर की सुध–बुध न रही।

प्रहरेक परे तान हईल चेतन। गौरीदासेर हस्त धरि करये नर्त्तन।।41

एक प्रहर के बाद उन्हें चेतना हुई तब

गौरीदास का हाथ पकड़कर प्रभु नृत्य करने लगे।

नित्यानन्द आदि प्रेमे करये गर्ज्जन। सर्व भक्त मेलि करे महा संकीर्तन।।42

श्रीनित्यानन्द प्रभु आदि सब प्रेम में गर्जना करने लगे।

सब भक्तों सहित महासंकीर्तन आरम्भ किया।

हइल अद्भुत नृत्य–गीत–महोत्सव। वर्णिते नाहिक क्षम तार एकलव।।43

वहां अद्भुत नृत्यगान पूर्वक महोत्सव हुआ–

उसका लव मात्र भी मैं वर्णन नहीं कर सकता।

संकीर्तन अन्ते गौर निताई वसिला।निर्जने श्रीगौरीदासे डाकिया कहिला।।44

संकीर्तन के बाद श्रीगौर निताई ने एकान्त में श्रीगौरीदास को बुलाकर कहा–

महाप्रभु कहे शुन प्राण प्रियतम। विवाह करिया तुहुँ रह निजाश्रम।।45

सुनो प्राण प्रियतम् सखे! अब विवाह के बाद
तुम्हें अपने घर पर ही रहना उचित है।

गौरीदास कहे तुया आज्ञा वेदसार। ताहा जेइ लँघे सेइ अति दुराचार।।46

गौरीदास ने कहा– आपकी आज्ञा तो वेद का सार है,
जो उसका उल्लंघन करता है, वह दुराचारी है।

किछु तुया बिनु मुञि रहिते ना पारि। सलिल विहने जैछे मीन प्राणहरी।।47

किन्तु मैं आपके बिना तो नहीं रह सकता हूँ।
जैसे मछली पानी के बिना नहीं रह सकती है।

शुनि हासि गोरा चाहे नित्यानन्द पाने। तिंह कहे गौरमूर्त्ति करह निर्माणे।।48

यह सुनकर श्रीमहाप्रभु श्रीनित्यानन्द की तरफ देखकर हंस पड़े। उन्होंने
गौरीदास से कहा– तुम गौरमूर्त्ति का निर्माण कराओ।

गोरा कहे एकमूर्त्ति नहे सुशोभन। नित्यानन्देर प्रति–मूर्त्ति करह स्थापन।।49

श्रीगौर बोले– एक मूर्त्ति अच्छी न लगेगी–
नित्यानन्द की भी एक मूर्ति साथ स्थापन करो।

हेथे पाइवा कर दोंहार सदा परकाश। आने ना कहिवा मोर एइ गूढ़ भाष।।50

यहाँ ही फिर हम दोनों का प्रकाश–लीला देखते रहोगे।
किन्तु यह गूढ़ बात किसी से नहीं कहना।

शुनि गौरीदास प्रेमानन्दे पूर्ण हैल। गौरनित्यानन्द पदे दण्डवत् कैल।।51

सुनकर श्रीगौरीदास प्रेमानन्द से पूर्ण हो उठे एवं
गौर–नित्यानन्द के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया।

श्रीमान गौरीदास शिल्प कार्य पटुतर। ऐछे शिल्प नाहि जाने देव शिल्पीवर।।52

श्रीगौरीदास शिल्पकार्य में अति चतुर व सूनिपूण शिल्पकार थे कि देवताओं के
श्रेष्ठ शिल्पी–विश्वकर्मा भी ऐसी कारीगरी नहीं जानते हैं।

साक्षाते राखिया तिंह गौर नित्यानन्दे। दारु ब्रह्म दुई मूर्त्ति गड़िला आनन्दे।।53

उन्होंने श्रीगौर–नित्यानन्द को साक्षात् सामने
बैठाकर काष्ठ की दो मूर्त्तियाँ आनन्दपूर्वक तैयार कीं।

गौर नित्यानन्देर सेइ अविकल मूर्त्ति। दृष्टिमात्र जीवे हय प्रेमानन्द स्फूर्त्ति।54

वे दोनों बिल्कुल गौर–नित्यानन्द की अविकल मूर्त्तियाँ थीं।
देखते ही जीवों में अपूर्व प्रेमानन्द की स्फूर्त्ति होने लगती थी।

तबे गौर निताई आलिंगिया गौरीदासे। नाम प्रेम प्रचारिते गेला अन्य देशे।।55

तब श्रीनिताई–गौर गौरीदास को आलिंगन कर नाम–प्रेम प्रचार व जीवोद्धार करने के लिए अन्य देश–गाँव में चले गये।

सेई दुई मूर्त्ति प्रतिष्ठिते गौरीदास। युक्ति करि गेला श्रीअद्वैत प्रभुर पाश।।56

उन दोनों मूर्तियों की प्रतिष्ठा कराने के लिए
श्रीगौरीदास शान्तिपुर में श्रीअद्वैत प्रभु के पास गये।

सीतानाथ पदे तिंह कैला नमस्कार। प्रभु तारे यत्न करि पुछे समाचार।।57

उनके चरणों में इन्होंने नमस्कार किया।
श्रीअद्वैत प्रभु ने चेष्टापूर्वक इनसे समाचार पूछा।

हेथा किवा लागि वाछा कैला आमगन। गौरीदास आद्योपान्त कैला निवेदन।।58

कि "आपका यहाँ कैसे आना हुआ?"
श्रीगौरीदास से आद्योपान्त सब समाचार सुना दिया।

प्रभु कहे शिशु तुहुँ महाभाग्यवान। गौर नित्यानन्द मूर्त्ति कैला निर्माण।।59

श्रीअद्वैत ने कहा– वत्स! तुम बड़े भाग्यवान हो जो गौर नित्यानन्द की मूर्तियों का तुमने निर्माण किया है। जिनके दर्शनकर जगत् का कल्याण होगा।

प्रतिष्ठा करिमु मुञि सेइ मोर भाग्य। उद्योग करह यात्रा द्रव्य यथायोग्य।।60

मैं अपने भाग्य मानता हूँ कि उनकी प्रतिष्ठा चलकर करूँ।
तुम चलकर यथायोग्य प्रतिष्ठा की सामग्री का जुगाड़ करो।

ताहा शुनि श्रीअच्युत कहे जोड़ हाते। मोरे आज्ञा कर प्रभु जाङ अम्बिकाते।।61

यह सुनकर श्रीअच्युत ने पिताजी से हाथ जोड़कर निवेदन किया कि आप मुझे ही आज्ञा दीजिये मैं ही अम्बिका में जाऊँगा।

किवा ध्यान मन्त्रे पूजा हैव निर्माण। दया करि कह सत्य ना कर गोपन।।62

आप मुझे बताइये किस ध्यान, मंत्र से पूजा सम्पन्न की जाए।
दयाकर मुझसे सबकुछ खुलकर कहें।

हासि सीतानाथ कहे जानिया ना जान। स्वयं कृष्ण नवद्वीपे हैला अवतीर्ण।।63

हंसकर श्रीअद्वैत ने कहा– सब कुछ जानकर भी अन्जान बन रहे हो–
स्वयं कृष्ण ही तो नवद्वीप में अवतीर्ण हुए हैं।

राधा–अंग कान्त्ये ढाका सर्वकलेवर। जैछे वस्त्र आवरणे दृश्य रूपान्तर।।64

उनका कलेवर श्रीराधा अंग कान्ति से ढका हुआ है,
जैसे वस्त्र के आवरण से दूसरा रूप देखा जाता है।

सेइ गोपालेर दशाक्षरी मन्त्रध्याने। महाप्रभु पूजा हैव कहिनु सन्धाने।।65

उस गोपाल दशाक्षर मन्त्रध्यान से महाप्रभु की पूजा होगी– ठीक बता रहा हूँ।

कृष्ण आवरणी बलि पूजित राधाय। पूजा सिद्धि हैव इथे नाहिक संशय।।66

कृष्ण–आवरणी कहकर राधा की पूजा करना करवाना।

निश्चय ही पूजा सिद्ध होगी।

नारायण मन्त्रेते पुजिवा नित्यानन्द। हइवे पूजन सिद्ध पाइवा आनन्द।।67

श्रीनित्यानन्द की नारायण मन्त्र से पूजा करना,

उससे पूजा सिद्ध होगी और आनन्द प्राप्त करोगे।

शुनि श्रीअच्युतानन्द कहये विनये। तुया आज्ञा मते कार्य करिमु निश्चय।।68

अच्युत विनयपूर्वक बोले– पिताजी! आपकी आज्ञा से

ही सब काम कराऊँगा– ऐसा निश्चय जानिये।

किन्तु खण्डवासी सुपण्डित नरहरि। सरकार ठाकुर जेंह प्रेमेर गागरि।।69

किन्तु खण्डवासी पण्डित जो नरहरि सरकार हैं, जो मानों प्रेम की गागर हैं।

श्रीचैतन्येर अन्तरंग भक्तेते गणन। जाँरे कृष्णेर नित्य साथी कहे साधुगण।70

जिसकी श्रीचैतन्य के अन्तरंग भक्तों में गणना की जाती है,

और जिसे साधुगण श्रीकृष्ण का नित्य साथी कहते हैं।

तिंह मोरे कहे गौरेर पूजा मतान्तरे। इहार कारण किवा कह प्रभु मोरे।।71

उन्होंने तो मुझे गौर की पूजा दूसरे प्रकार से बतायी थी–

पिताजी! इसका कारण मुझे बताइये।

प्रभु कहे श्रीकृष्णचैतन्य प्रेमार्णवे। भक्ति अनुसारे पूजा सकलि सम्भवे।।72

श्रीअद्वैत ने कहा– श्रीचैतन्य प्रेमार्णव में भक्ति

अनुसार सब प्रकार की पूजा उनमें सम्भव है।

कृष्णेर प्रतिज्ञा दृढ़ आछे भक्त माझे। जे जैछे भजये कृष्ण तारे तैछे भजे।73

श्रीकृष्ण की दृढ़ प्रतिज्ञा है कि जो भक्त जिस भाव से उन्हें भजता है,

श्रीकृष्ण भी उसी भाव से उसकी पूजा ग्रहण करते हैं।

शुनि श्रीअच्युतानन्द आनन्दे मातिला। गौरीदास संगे तिंह अम्बिकाते गेला।।74

यह सुनकर श्रीअच्युत आनन्द से उन्मत्त हो उठे।

वे गौरीदास के साथ अम्बिका के लिए चल दिये।

महा समारोहे दुइ मूर्त्ति प्रतिष्ठिला। गौरीदास प्रेमानन्दे महोत्सव कैला।।75

महा समारोह से दोनों मूर्त्तियों की श्रीअच्युतानन्द ने प्रतिष्ठा करायी।

श्रीगौरीदास ने प्रेमानन्द से महान उत्सव किया।

गौरीदास सर्व भक्तेर प्रियतम बड़। महाप्रभु प्रभु हये जार प्रेम गाढ़।।76

श्रीगौरीदास सब भक्तों के परम प्रिय थे

क्योंकि उनका श्रीगौरांग नित्यानन्द प्रभुमें गाढ़ अनुराग था।

एइ गूढ़ तत्त्व किवा जानों मुञि क्षुद्र। अच्युत प्रभुर आज्ञाय लिखि सूत्र मात्र।।77

मैं क्षुद्र जीव यह सब तत्त्व क्या जानूँ?

श्रीअच्युतप्रभु की आज्ञा से यहाँ सूत्रमात्र में वर्णन किया है।

हेथा प्रभु नित्यानन्द गंगातीरे वसि। उद्धरणे तत्त्व कथा कहे हासि हासि।78

इधर प्रभु नित्यानन्द जब गंगातीर पर बैठे थे

तो उद्धारणदत्त को हंस कर गूढ़ कथा बता रहे थे।

हेनकाले वसुधार–मृत देह लञा। गंगा तटे आइला पण्डित दुखी हञा।।79

इतने में वसुधा का मृतक–देह लेकर सूर्यदास

पण्डित अति दुखी होकर गंगा तट पर आये।

सत्कार करिते सभे उद्योग करिला। तँहि प्रभु आसि सूर्यदासेरे कहिला।।80

उसका संस्कार करने के लिए सब उद्यम किया गया।

तब नित्यानन्द प्रभु उठकर सूर्यदास के पास आये और बोले–

एइ कन्या यदि मुञि जीयाइते पारि। तबे मोरे कन्या दिवा कह सत्य करि।।81

तुम्हारी इस कन्या को यदि मैं जीवित कर दूँ,

तो प्रतिज्ञा करके कहो कि इसे तुम मुझे दान दोगे।

शुनिया पण्डित कहे तार बन्धुगण। जीयाइले कन्या दिव करिलाङ पण।।82

तब पण्डित तथा सब बान्धवों ने कहा–

जिला देने पर कन्या आपको देंगे– हम प्रतिज्ञा करते हैं।

ताहा शुनि नित्यानन्द आनन्दित मने। मृत–संजीवन नाम दिला तार काणे।।83

यह सुनकर श्रीनित्यानन्द ने आनन्दित

होकर मृतसंजीवन कृष्णनाम उसके कान में कहा।

हरिनामामृत पिया वसुधा उठिला। अलौकिक कार्ये सभे विस्मय मानिला।।84

हरिनामामृत पीते ही वसुधा जीवित होकर उठ बैठी।

इस अलौकिक कार्य से सब विस्मित हो गये।

सूर्यदास हर्षे कन्या लञा गेल घरे। महानन्दे सर्वजन हरिध्वनि करे।।85

सूर्यदास हर्षपूर्वक कन्या को घर ले आये–

यह देखकर सब लोग महानन्द में हरि ध्वनि करने लगे।

नित्यानन्दे केह कहे इहों महामुनि। केह कहे मायारूपी देव अनुमानी।।86

कोई कहता– ये श्रीनित्यानन्द कोई महामुनि हैं।
कोई कहता ऐसा लगता– ये कोई मायावी देवता है।

सूर्यदास नित्यानन्दे घरे लञा गेला। लक्षणे प्रभुरे चिनि प्रेमाविष्ट हैला।।87

श्रीसूर्यदासप्रभु नित्यानन्दको अपने घर लाये।
उनकी प्रभुता को पहचान कर पण्डित प्रेमाविष्ट हो गया।

महाभाग्य मानि तिंह नित्यानन्द चाँदे। समारोहे कन्यादान कैला महानन्दे।88

उससे महानन्दपूर्वक अपने महाभाग्य मानते हुए
अपनी कन्या वसुधा श्रीनित्यानन्द को प्रदान कर दी।

वसुधा देवी के प्रभु विवाह करिला। जौतुक छले जाह्नवारे आत्मसाथ कैला।।89

वसुधा को विवाह लेने के बाद कौतुकी
नित्यानन्द प्रभु ने जान्हवा को भी दहेज में ले लिया।
जान्हवा वसुधा का हुआ है विवाह
निताई चांद दूल्हा बने, दूल्हा बने हैं निताई चांद दूल्हा बने।
जान्हवा वसुधा का बढ़ाये हैं भाग्य। निताई चांद दूल्हा बने।।

ताँहा हैते प्रभु खड़दह ग्रामे गेला। तँहि श्याम सुन्दरेर सेवा प्रकाशिला।।90

वहां से श्रीनित्यानन्द प्रभु खड़देह गाँव गये
और वहाँ श्रीश्यामसुन्दर की सेवा स्थापित की।

महाप्रभुर अप्रकटे श्रीवसुधा–माता। शुभक्षणे एक पुत्र प्रसविला तथा।।91

श्रीमहाप्रभु के अप्रकट हो जाने के बाद
श्रीवसुधा ने शुभक्षण में एक पुत्र को जन्म दिया।

नित्यानन्दात्मज तिंह हय सदानन्द। जगते विख्यात नाम हैल वीरचन्द्र।।92

श्रीनित्यानन्द प्रभु का पुत्र सदानन्द रूप था
जो जगत् में श्रीवीरचन्द्र के नाम से विख्यात हुआ।

मोर प्रभु कहे जारे संकर्षणेर व्यूह। ताँर रूप देखि जीव मात्रे हय मोह।।93

मेरे प्रभु श्रीअद्वैत उसे संकर्षण का व्यूह कहते थे।
उसके रूप को देख सब जीवों को मोह होता था।

साधु मुखे शुनि आर जे किछु देखिनु। तार सूत्र बिन्दु मात्र प्रकाश करिनु।।94

भक्तों के मुख से जो सुना है और देखा है,

उसके सूत्र का एक बिन्दुमात्र मैंने प्रकाशित किया है।

हेथा श्रीअद्वैत प्रभु गौरांग–विच्छेदे। काँहा प्राणनाथ बलि फुकारिया कान्दे।।95

इधर श्रीमहाप्रभु के चले जाने पर श्रीअद्वैत

"हे प्राणनाथ आप कहाँ हैं?" ऐसा पुकार कर रोने लगे।

क्रमे गौर–प्रेमसिन्धुर तरंग बाढ़िल। भक्ति कल्पवृक्ष सीतानाथे डुबाइल।।96

उनमें गौर–प्रेम सागर की तरंगें बढ़ने लगीं

जिनमें भक्तकल्पतरु श्रीसीतानाथ निमग्न हो गये।

तिन दिन परे प्रभु भासिया उठिला। गौरांग देखिते मने युक्ति स्थिर कैला।।97

तीन दिनके बाद श्रीअद्वैतको बाह्यज्ञान हुआ और श्रीगौर दर्शन की युक्ति सोची।

हा गौरांग तुया चिर–विच्छेद अनले। भक्तमन–प्राण पोड़ाइलि अवहेले।।98

हे गौरांग! आपकी चिर वियोग रूप अग्नि में

भक्तों के मन–प्राण अपने आप जलने लगते हैं।

भक्ति विलाइते तोर हैल प्रकटने। ज्ञान प्रकाशिया ताप दिञु तोर मने।।99

भक्ति वितरण करने के लिए आप प्रकट हुए थे। अब मैं ज्ञान का प्रचार कर

आपके मन को दुख दूँगा। जिससे मैं आपके शीघ्र दर्शन पा सकूँ।

एक बार ज्ञान व्याख्या करि पाइनु तोरे। पुनः शुष्कज्ञान शिक्षाइमु समाकारे।।100

एकबार पहले भी ज्ञान की व्याख्या कर मैंने आपको

प्राप्त किया था। फिर मैं अब शुष्क ज्ञान की शिक्षा सबको दूंगा .....।

देखिमु इहाते कर किवा व्यवहार। ना पाङ चरण यदि नाशिमु संसार।।101

देखूँगा मैं कि अब क्या व्यवहार करते हैं, आप यदि इस युक्ति

से भी आपके दर्शन प्राप्त न हुए तो मैं संसार को ज्ञान देकर भ्रष्ट कर दूँगा।

एत भावि शिष्यगणे डाकि निज पाशे। ज्ञानयोग उपदेश देय मृदु भाषे।।102

यह सोचकर श्रीअद्वैत ने शिष्यों को अपने पास बुलाया और

मधुर वाणी में ज्ञान योग का उपदेश करने लगे।

भक्ति हैते ज्ञान बड़ ज्ञानिगणे कय। भक्तिर चरमे हय ज्ञानेर उदय।।103

ज्ञानी कहते हैं कि भक्ति से ज्ञान बड़ा है।

भक्ति के चरमावस्था पर पहुँचने पर ज्ञानका उदय होता है।

ज्ञान–योगे जेइ जन ईश्वरे भजय। दिव्य पुष्प रथे सेई भव पारे जाय।।104

ज्ञानयोग से जो व्यक्ति ईश्वर का भजन करता है,

वह दिव्य पुष्पक विमान पर बैठकर भव से पार चला जाता है।

पूर्वतर ऋषिगण ज्ञान–योग द्वारे। भक्ति–मुक्ति पाइला निज वान्छा अनुसारे।।105

प्राचीन ऋषिगण ने ज्ञान–योग के द्वारा अपनी
कामनानुसार भक्ति और मुक्ति प्राप्त की है।

इत्यादि अनेक ज्ञान उपदेश दिला। गुरु वाक्य शिष्यगण स्वीकार करिला।।106

इसप्रकार अनेक ज्ञान का उपदेश दिया। गुरु के
वाक्यों को शिष्यों ने स्वीकार कर लिया।

यद्यपि मौखिके प्रभु ज्ञान प्रकाशिला। द्विगुण नियम कृष्णसेवार करिला।।107

श्रीअद्वैत ने तो ऊपर–ऊपर से केवल मौखिक ज्ञान की चर्चा की
और श्रीकृष्ण–सेवा का नियम बढ़कार दुगना कर दिया।

गाढ़ अनुरागे श्रीतुलसी कृष्णे–दिला। नानाविध मिष्ट अन्न भोग लागाइला।।108

गाढ़ अनुराग पूर्वक श्रीकृष्ण को श्रीतुलसी अर्पण करने लगे।
अनेक प्रकार के मधुर व्यंजनों का श्रीकृष्ण को भोग लगाया।

नयन मुंदिया करे गौरांग–चिन्तन। मर्म ना बुझिया कान्दि बेड़ाय गौरगण।।109

नेत्र बन्द करके श्रीगौरांग का चिन्तन करने लगे। इस रहस्य को न जानकर
गौरभक्त श्रीअद्वैत के ज्ञान–उपदेश को सुन व्याकुल होकर घूमने एवं रोने लगे।

मुक्ति वाखानिल शुनि श्रीशचीनन्दन। अन्तर्यामी अन्तरे जानिला भक्तमन।।110

श्रीगौर ने जब सुना कि श्रीअद्वैत मुक्ति की व्याख्या
कर रहे हैं तो अन्तर्यामी भक्त की बात जान गये।

भक्त वान्छा पुराइते पुरुषोत्तम हैते। अद्वैतेर घरे गोरा आइला आचम्बिते।।111

तब श्रीगौर अचानक पुरी से भक्त की वान्छा
पूर्ति के लिए शान्तिपुर श्रीअद्वैत के घर आ पहुँचे।

गौर अंग–गंध पाञा चाहे सीतानाथ। देखे अग्रे स्फूर्त्ति पाय सचल–जगन्नाथ।112

श्रीसीतानाथ ने गौरांग गन्ध का अनुभव किया, ज्यों ही आगे देखा तो सामने
सचल ठाकुर जगन्नाथरूपी श्रीगौर को देखा।

अचिन्त्य चैतन्यकृपा देखि भक्तप्रति। महाप्रेमे श्रीअद्वैत करे दैन्य–स्तुति।।113

भक्त के प्रति अचिन्त्य चैतन्य कृपा को देखकर
श्रीअद्वैत श्रीगौर की विनीत स्तुति करने लगे।

दण्डवत् करि श्रीगौरांगेर–चरणे। कहे मोर सम भाग्य नाहि त्रिभुवने।।114

शत साष्टांग प्रणाम किये गौरचरणों में और कहा
त्रिभुवन में मेरे समान भाग्यवान और कोई नहीं है।

गोरा कहे तुहुँ नित्य भक्त अवतार।शुद्ध भक्ति बले मोहे करिला प्रचार।।115

श्रीगौर ने कहा– आप नित्य भक्तावतार हैं,

शुद्ध भक्ति के बल से आपने मुझे प्रकटित कराया है।

मोर कार्य हैते सत्य तोर कार्य बड़। वान्छा पुनाइते तोर हइनु गोचर।।116

मेरे कार्य से आपका कार्य बड़ा है। आपकी वान्छा

पूरण करने के लिए ही मैं यहां आया हूँ।

तबे गोरा आचार्येर वान्छा अनुसारे। आनन्दे भोजन कैला नाना उपहारे।।117

तब श्रीगौरहरि ने आचार्य की इच्छानुसार

आनन्दपूर्वक अनेक व्यंजनों का भोजन किया।

भोजनान्ते करि तिंहु ताम्बूल चर्वण। मिष्ट भाषे श्रीअद्वैते करये भर्तस्ने।।118

भोजन प्रसाद के बाद ताम्बूल प्रसाद चबाया और

फिर मीठे वचनों में श्रीअद्वैत की भर्त्स्ना करने लगे।

मोर देखिवारे दिला ज्ञान–योग शिक्षा। जीवेर भावी क्लेशे तुहुँना कैला अपेक्षा119

आपने मुझे देखने के लिए ज्ञान योग की शिक्षा देना शुरू कर दिया। जीवों के

भावी क्लेश का भी आपने ध्यान नहीं किया?

मोरे देखिवारे यदि तव मन हय। चिन्ता मात्र ताँहा मुञि हइमु उदय।।120

मुझे देखने का ही यदि मन आपका होगा तो आपके

चिन्तन करते ही मैं आपके सामने उपस्थित होऊँगा।

आर कभु ज्ञान–योग मुखे ना आनिवा। शुद्धभक्ति शिक्षाइया जीव निस्तारिवा।121

इसके बाद आप फिर कभी भी ज्ञान–योग मुख पर नहीं लाना। सदा शुद्ध भक्ति

की शिक्षा देकर जीवों का निस्तार कीजिएगा।

श्रीअद्वैत कहे वान्छा मते पाइनु वर। एक दया करि अपराध क्षमा कर।।122

श्रीअद्वैत ने कहा– वान्छानुसार मैंने वरदान प्राप्त कर लिया है।

अब आप दयाकर मेरे अपराध क्षमा करें।

महाप्रभु कहे भक्तेर कोटि अपराध। दया करि क्षमि कृष्ण करये प्रसाद।।123

महाप्रभु ने कहा– भक्तों के कोटि अपराध भी क्षमा कर

श्रीकृष्ण उन पर कृपा करते हैं।

हेन काले सेइ स्थाने सीतामाता आइला। गौरदेखि प्रेमाश्चर्य आनन्दे डुबिला।।124

उसी समय सीतादेवी वहां आ पहुँची और श्रीगौर को

देखकर प्रेमाश्चर्य में आनन्द मग्न हो गयीं।

फुकारिया कान्दे माता गोरे कोले करि। गोरा कहे माता मोर तृष्णा हैल भारी।125

श्रीगौर को अंक में लेकर माता क्रन्दन करने लगीं।
श्रीगौरहरि ने कहा– माँ! जोर से प्यास लग रही है।

शुनि सीता क्षीर–सर गंगाजल आनि। वात्सल्ये गौरांग मुखे दिलेन आपनि।।126

सुनते ही श्रीसीता क्षीरसर से गंगाजल ले आयीं और
वात्सल्य प्रेम से गौर को अपने हाथ से पिलाया।

सुधाधिक्य सेइ सभ महानन्दे खाञा। अन्तर्धान कैला गोरा दोंहे प्रबोधिया।।127

श्रीगौर ने सुधा से भी अधिक आनन्द से उसका पान किया और दोनों को
सन्तुष्ट व प्रबोधित कर भक्तवत्सल श्रीगौरहरि अन्तर्धान हो गये।

सीताद्वैत दोंहे गौरदया स्मरिया। सकल दिवस रहे प्रेमेते मातिया।।128

श्रीअद्वैतचन्द्र एवं सीता माँ श्रीगौरकी दया का
स्मरण कर सारा दिन प्रेम में मतवाले होकर रहे आये।

तबे प्रभु प्रेम सम्वरिया सन्ध्याकाले। शिष्यगणे डाकि कहे शुनह सकले।।129

श्रीअद्वैतचन्द्र ने प्रेम का सम्वरण कर
संन्ध्या के समय शिष्यों को बुलाकर इसप्रकार कहा–

पूर्वे ज्ञान बड़ कहि चित्तेर वैषम्ये। एबे विचारिया देखि नाहि भक्ति रसाम्ये।।130

सब सुनिये! मैंने चित्त के व्यथित होने से पहले ज्ञान को बड़ा कहकर उपदेश
किया था, किन्तु अब विचार कर देखा है तो ज्ञान भक्ति से बड़ा क्या, वह
उसके बराबर भी नहीं है।

ज्ञानेते ईश्वरे जानि भक्त्ये तारे पाई। ज्ञान हैते भक्ति श्रेष्ठ बहु शास्त्रे गाई।131

ज्ञान से केवल श्रीभगवान को जाना जाता है, परन्तु उनकी प्राप्ति होती है भक्ति
से। सब शास्त्रों में ज्ञान से भक्ति की श्रेष्ठता वर्णन की गयी है।

ज्ञानेर चरमे मुक्ति जानिह निश्चय। मुक्तजनेर शेषे हय अभिमानोदय।।132

ज्ञान का चरम फल निश्चय ही मुक्ति जानो, किन्तु
मुक्तजनों में अन्त में अभिमान उदित हो आता है।

मुक्ति अभिमानी कृष्णसेवा नाहि करे। सेइ अपराधे पुनः डूबये संसारे।।133

मुक्ति अभिमानी व्यक्ति कृष्णसेवा नहीं करते–
इस अपराध से वे फिर भवसागर में डूबते हैं।

अतएव भक्तियोग हय सर्वोत्तम। भक्तिपथे प्रवर्त्तकेर नाहि पतन।।134

इसलिए भक्तियोग ही सर्वोत्तम है।

भक्तिपथ में प्रवेश करने वाले का कभी पतन नहीं होता।

भक्ति महिमार अन्त अनन्त ना जाने।भक्ति देवीर दासी मुक्ति शास्त्र परिमाणे135

भक्ति की महिमा का अन्त श्रीअनन्त भी नहीं पा सकते। मुक्ति भक्तिदेवी की दासी कहकर शास्त्रों में प्रमाणित की गयी है।

निष्ठा भक्तिद्वारा कर श्रीकृष्ण सेवन। अनायासे भवबन्धन हैवे मोचन।।136

अतः निष्ठा–भक्ति द्वारा श्रीकृष्ण का सेवा कीजिये।
अनायास भवबन्धन से छुटकारा मिलेगा।

इत्यादि अनेक भक्ति–उपदेश दिला। तिन शिष्य बिना सभे भक्तिवर्त्मे गेला।।137

इसप्रकार श्रीअद्वैतचन्द्र ने उन्हें बहुत प्रीतिपूर्वक उपदेश दिया।
उनमें तीन शिष्यों को छोड़कर सबने भक्तिपथ में प्रवेश किया।

कामदेव–नागर आर आगल पागल। एइ तिने नाहि माने आचार्येर बोल।138

कामदेव नागर आगल तथा पागल इन तीनों ने
जगद्गुरू श्रीआचार्य के वचन नहीं माने।

एइ तिने कहे शुन आचार्य गोसाञि। तव उपदेशेर इयत्ता किछु नाञि।।139

इन तीनों ने कहा– आचार्य गोस्वामि!
सुनिये, आपके उपदेश का कुछ मूल्य नहीं है।

क्षणे कह ज्ञान बड़ क्षणे भक्ति बड़। ज्ञान–वर्त्म मोरा चित्त करियाछि दृढ़।।140

एक क्षण में ज्ञान को बड़ा कहते हैं, दूसरे क्षण में भक्ति को बड़ा कहते हैं, हमारे चित्त ने ज्ञान मार्ग को दृढ़ता से ग्रहण कर लिया है।

प्रभु कहे यदि तोरा आज्ञा ना मानिलि। मुख ना देखिमु आर मोर त्यज्य हैलि।141

प्रभु ने कहा– यदि तुम मेरी आज्ञा नहीं मानेंगे–
तो मैं आपका मुँह न देखूँगा, मैंने आपका त्याग किया।

जे आज्ञा बलिया तारा पूर्वदेशे गेला। आचार्य हइया निजमत चालाइला।142

वे तीनों– "जो आज्ञा" कहकर पूर्व देश में चले गये
और वहां आचार्य बनकर उन्होंने अपना मत प्रचारा।

गौरलीलागणे मोर कोटि नमस्कारे। अलौकिक खेला गौरेर देखे भक्तिद्वारे।।143

श्रीगौरलीला के पार्षदों को मेरा कोटि नमस्कार है। वे प्रेमभक्ति के माध्यम से श्रीगौरहरि की अलौकिक लीला देखते एवं अनुभव करते हैं।

नित्यलीला श्रीगौरांगकरे भक्तदेशे। महाभाग्य शुद्धभक्तिचक्षे मात्र भासे।।144

श्रीगौरांगहरि भक्तों के स्थान पर नित्यलीला करते हैं। महाभाग्यवान भक्तगण शुद्ध भक्ति नेत्रों से दर्शन करके उसका आस्वादन करते हैं।

मोरे कोटि दया कैला श्रीअद्वैत ईश्वर। तेंह दिव्यलीला सूत्र करिमु प्रचार।।145

श्रीअद्वैत ईश्वर की अनन्त कृपा से उस दिव्य लीला का सूत्रमात्र ही मैं यहां उल्लेख (प्रचार) कर रहा हूँ।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।146

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के चरणों की अभिलाषा करते हुए श्रीईशाननागर श्रीअद्वैतप्रकाशका वर्णन करते हैं।

एकविंश अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।01

श्रीश्रीचैतन्य की जय हो, श्रीसीतानाथ की जय हो। श्रीनित्यानन्द राम की भक्तों सहित जय हो।

एकदिन महाप्रभु वसिया निर्जने। अति प्रियतम श्रीजगदानन्द गणे।।02

एकदिन महाप्रभु एकान्त में बैठे थे। उससमय अपने प्रियतम् श्रीजगदानन्द से बोले–

गौड़ देशे चल तुहुँ त्वरित गमने। पहिले नदीया जाइवा मोर जन्म स्थाने।03

आप शीघ्र गौड़ देश चले जाइये, पहले मेरे (पूर्व)जन्मस्थान नदिया में जाना।

मातृपद कहिवा मोर कोटि नमस्कार। जाँहा ताँहा थाकों मुञि ताँहार किंकर।।04

माता के श्रीचरणों में जाकर मेरा कोटि नमस्कार करना एवं कहना– मैं जहाँ भी रहूँ, हूँ आपका दास।

पुत्र हञा पुत्रधर्म पालिते नारिनु। इथे तान पदे महा अपराधी हैनु।।05

पुत्र होकर मैं पुत्रधर्म का पालन न कर सका। इसीलिये उनके चरणों का महापराधी हूँ।

कोटियुगे तान ऋण नारिमु शोधिते। अपराध क्षमे यदि निज दयामृते।।06

कोटि जन्म तक भी मैं उनका ऋण नहीं चुका सकता। वे अपने दयामृत से मेरा अपराध क्षमा करें।

तबे त पाइमु रक्षा न तु वा पतन। ताहार श्रीपादपद्मे लइनु शरण।।07

तभी मैं उद्धार पाऊँगा नहीं तो मेरा पतन हो जायेगा। उनके चरण कमलों की ही मैंने शरण ग्रहण की है।

कृष्णभक्तगणे मोर कहिवा सन्देश। आचार्येर निकटे कहिवा सविशेष।।08

हे जगदानन्द! कृष्ण भक्तों को मेरा सन्देश देना।
आचार्य के पास विशेषतः जाकर मेरा समाचार देना।

श्रीजगदानन्द महाप्रभुर आज्ञा पाञा। गौड़े यात्रा कैला गौरचन्द्रे प्रणमिया।09

श्रीजगदानन्द महाप्रभु की आज्ञा पाकर व उनको प्रणामकर गौड़ देश चले आये।

क्रमे नवद्वीप धामे उपनीत हैला। शचीमातार पदे जाञा दण्डवत् कैला।।10

सर्वप्रथम नवद्वीप धाम में आये और शची माता के
श्रीचरणों में जाकर दण्डवत् प्रणाम किया।

श्रीगौरांगेर दैन्य उक्ति कैला निवेदन। शुनि शची आशीष करये पुनः पुन।11

उन्हें श्रीगौरांग की दैन्योक्ति कही।
शची माता सन्देश को सुनकर बारम्बार आशीर्वाद करने लगीं।

श्रीजगदानन्द गौरेर भक्तकण्ठहार। शची मायेर सेवा कैला विविध प्रकार।12

श्रीजगदानन्द गौर भक्तों के कण्ठहार समान हैं।
शची माता की उन्होंने अनेक प्रकार की सेवा की।

भक्तगणे कहिला श्रीगौरांग संवाद। शुनि शुद्ध भक्तगणेर हैल प्रेमोन्माद।।13

नदिया के भक्तों के प्रति श्रीगौरांग का संवाद कहा।
सुनकर सब भक्तों को प्रेमोन्माद हुआ।

केह कहे हा गौरांग काहे न्यासी हैलि। पदछाया दिया केने दुखे भासाइलि।।14

कोई कहने लगा– हा गौरांग! तुम संन्यासी क्यों बन गये?
पदाश्रय देकर फिर हमें क्यों दुख दे गये।

केह कहे मोर महाभाग्य उपजिल। दया करि प्राण गोरा मोरे स्मरिल।।15

कोई कहता– मेरे महाभाग्य हैं कि श्रीगौरांग ने करुणाकर मेरा स्मरण किया है।

भक्त खेदे दुखी हञा पण्डित चलिला। शांतिपुरे जाञा प्रभु पदे प्रणमिला।16

भक्तों के दुख से दुखी होकर पण्डित जगदानन्द शांतिपुर में
महाविष्णु श्रीअद्वैतजी के पास आये और उन्हें प्रणाम किया।

प्रभु तारे कैला प्रेमे दृढ़ आलिंगन। वसिवारे दिला झाट उत्तम आसन।।17

श्रीअद्वैतप्रभु ने उन्हें प्रेम से आलिंगन किया। बैठने के लिए उत्तम आसन दिया।

गौरांगेर कुशल पूछे प्रेमे पूर्ण हञा। गौरेर तत्त्व पण्डित कहे विवरिया।।18

उन्होंने प्रेमयुक्त होकर श्रीगौरांग का कुशल पूछा,
श्रीपण्डित ने श्रीगौर का सब वृतान्त कह सुनाया।

एबे श्रीकृष्ण चैतन्येर सदा प्रेमोन्माद। क्षणे राधा राधा बलि करये विषाद।।19

वे बोले अब तो श्रीचैतन्य में सदा प्रेमोन्माद रहता है,
क्षण–क्षण में "राधा–राधा" बोलकर विलाप करते हैं।

क्षणे काँहा प्राणनाथ बलिया गर्ज्जय। सेई रवे सर्वप्राणीर ह्रदय द्रवय।।20

क्षण–क्षण में– "हा प्राणनाथ! कहाँ गये आप?" ऐसा कहकर गर्जना
करते हैं। उस ध्वनि से सब प्राणियों के ह्रदय पिघल जाते हैं।

शुनि मोर प्रभुर हैल शुद्ध प्रेमोन्माद। हा नाथ गौरांग बिनु नाहिं अन्यवाद।21

यह सुनकर श्रीअद्वैत को शुद्ध प्रेमोन्माद हो उठा
"हा गौरांग" के बिना और वह कुछ न बोल रहे थे।

प्रहरेक परे प्रभु स्तम्भित हैला। द्वितीय प्रहरे उच्च हुंकार करिला।।22

एक प्रहर के बाद प्रभु स्तम्भित हो गये और
दूसरे प्रहर तक उच्च हुंकार करते रहे।

क्षणे उच्च हास्य क्षणे करये क्रन्दन। प्रकटाप्रकट मात्र करि उच्चारण।।23

कभी उच्च हास्य और कभी क्रन्दन करते,
कुछ स्पष्ट कुछ अस्पष्ट बोलने लगते।

हेन मते कत भावेर हैल उद्‌गम। मो अधमेर ताहा वर्णिवारे नाहि क्षम।।24

इसप्रकार उनमें विविध प्रेमभाव उदित हो उठे।
मैं अधम तो उनको वर्णन भी नहीं कर सकता हूँ।

जाहा देखि ताहा लिखि ना बुझिनु मर्म। जैछे शुक गीत गाय शिक्षणेर धर्म।।25

जो देखा उसे लिख रहा हूँ, किन्तु मर्म नहीं जानता
जैसे तोता सिखाये हुए गीत ही गान करता है।

तबे पण्डितेर प्रभु बहु सत्कार कैला। गौरगुण आलापिया निशि पोहाइला।26

तब श्रीअद्वैत ईश्वर ने पण्डित का बहुत सत्कार किया
और गौरगुण कहते सुनते सारी रात बिता दी।

प्रभाते जगदानन्द श्रीअद्वैत स्थाने। जाइवारे आज्ञा मागे विनय वचने।।27

प्रभात को जगदानन्द ने श्रीअद्वैतप्रभु से
नीलांचल जाने हेतु विदा मांगी अति विनीत वाणी में।

तरजा प्रहेली प्रभु कहिला इंगिते। गौर विनु अन्य ताहा ना पारे बुझिते।।28

श्रीअद्वैतजी ने गूढ़– पहेली को इंगित करके कहा,
जिसे श्रीगौर के बिना और कोई न समझ सका।

प्रभु कहे श्रीगौरांग मोर प्राणधन। तार रांगा श्रीचरणे एइ निवेदन।।29

श्रीअद्वैतप्रभु ने कहा– श्रीगौरहरि मेरे प्राण धन हैं
उनके श्रीचरणारविन्द में मेरा यह निवेदन करना–

बाउलके कहिओ लोक हइल बाउल। बाउलके कहिओ हाटे ना विकाय चाउल।।30

(प्रेम) "बावले से कहना, लोक (प्रेम दीवाना) बावला हो गया है। बावले से कहना अब दुकानपर चावल नहीं बिकता अर्थात् प्रेम प्रचार की जरूरत नहीं।

वाउलके कहिओ काजे नाहिक आउल। बाउलके कहिओ इहा कहिछे बाउल।।31

(प्रेम दीवाने) बावले से कहना अब और काज नहीं रहा है आपका। बावले से कहना– बावले ने (आपके प्रेमी किंकर ने) यही कहा है।

शुनि श्रीजगदानन्द ईषत हासिया।नीलाचले यात्रा कैला प्रभु सन्तोषिया।।32

सुनकर श्रीजगदानन्द मुस्कराये और श्रीअद्वैतचन्द्र
समाचार देने का आश्वस्त कर नीलाचल चले आये।

कतदिने उपनीत हइला श्रीक्षेत्रे। गौरे देखि प्रेमधारा बहे दुइ नेत्रे।।33

कुछ दिनों बाद वे श्रीक्षेत्र में आ पहुँचे।
श्रीगौरहरि का दर्शन कर आपके नेत्रों से प्रेमधारा बह निकली।

अष्ट अंगे श्रीचैतन्ये दण्डवत कैला। तिंह उठि श्रीजगदानन्दे आलिंगिला।।34

श्रीचैतन्य को उन्होंने साष्टांग दण्डवत् प्रणाम किया।
श्रीगौरांगने उठकर श्रीजगदानन्दको आलिंगन किया।

तबे कर जोड़ेते पण्डित क्रमे कहे। नदीयार भक्तगण आछये कुशले।।35

तब हाथ जोड़कर पण्डित ने क्रम से कहा– नदियावासी भक्तगण कुशल से थे और हरपल आपको याद कर रहे थे।

शचीमातार वत्सलता निरुपम हय। तोमार मंगल लागि देवे आराधय।।36

माता शची की आपमें वत्सलता तो निरुपम है ही।
आपके मंगल के निमित्त देवाराधना करती रहती हैं।

साधुस्थाने आशीर्वाद लहये मांगिया। आशीष करये निजे ऊर्ध्वबाहु हञा।।37

साधु–भक्तों से आशीर्वाद आपके लिए मांगती रहती है
एवं स्वयं भी भुजाएं उठाकर आपको आशीष करती हैं।

विष्णुप्रिया मातार कथा कि कहिमु आर।तान भक्ति निष्ठा देखि हैनु चमत्कार।38

माता विष्णुप्रिया की अवस्था क्या कहूँ?
उसकी भक्तिनिष्ठा देख कर तो मैं चमत्कृत हो उठा।

शची मातार सेवा करेन विविध प्रकारे। सहस्रेक जने नारे ऐछे करिवारे।।39

वह शची माता की विविध प्रकार से सेवा में लगी रहती है। हजारों व्यक्ति भी ऐसी सेवा नहीं कर सकते। विरह, वैराग्य और प्रेम की मूर्त्ति हैं वे।

प्रत्यह प्रत्यूषे गिया शची माता सह। गंगास्नान करि आइसेन निज गृहे।।40

प्रतिदिन बहुत सवेरे शची माता के साथ गंगास्नान
करने जाती और अतिशीघ्र घर में आ जाती हैं।

दिनान्तेह आर कभु ना जान बाहिरे। चन्द्रसूर्य तान मुख देखिते ना पारे।।41

दिन ढलने पर तो घर से बाहर ही नहीं निकलती हैं।
यहां तक कि चन्द्र–सूर्य भी उनका मुख नहीं देख सकते।

प्रसाद लागिया जत भक्तवृन्द जाय। श्रीचरण बिनामुख देखिते ना पाय।।42

प्रसाद लेने जितने भक्त जाते हैं, वे केवल
श्रीचरण दर्शन ही कर पाते हैं, मुख दर्शन नहीं।

तान कण्ठध्वनि केह शुनिते ना पारे। मुख पद्म म्लान सदा चक्षे जल झरे।।43

उनके कण्ठ की आवाज तो कोई सुन ही नहीं सकता। उनका मुख सदा उदास रहता है और नेत्रों से जल बहा करता है।

शची मातार पात्र शेष मात्र से भुन्जिया। देह रक्षा करे ऐछे सेवार लागिया।।44

शची माता का शेष पात्र मात्र भोजन करती हैं।
केवल सेवा के लिए वह जीवन धारण कर रही हैं।

शची सेवा कार्य छाड़ि पाइले अवसर। विरले वसिया नाम करे निरन्तर।।45

शची माता के सेवा कार्य से निवृत्त होने पर
एकान्त में बैठकर श्रीहरिनाम जाप निरन्तर करती रहती हैं।

हरिनामामृते तान महारुचि हय। साध्वी–शिरोमणि शुद्ध प्रेमपूर्ण काय।।46

श्रीहरिनामामृत में उनकी महारुचि है। वह महासाध्वी
शिरोमणि तो शुद्ध प्रेम की घनीभूत मूर्त्ति है।

तव श्रीचरणे ताँर गाढ़ निष्ठा हय। ताहान कृपाते पाइनु ताँर परिचय।।47

आपके चरणों में उनकी गाढ़ निष्ठा है। उनकी
कृपा से ही उनका यह परिचय पा सका हूँ।

तव रूप–साम्य चित्रपट निर्माइला। प्रेमभक्ति महामन्त्रे प्रतिष्ठा करिला।।48

आपके रूप के समान चित्रपट निर्माण कराया है
और प्रेमभक्ति महामन्त्र से उसकी प्रतिष्ठा करायी है।

सेई मूर्त्ति निभृते करेन सुसेवन। तव पादपद्मे करि आत्म समर्पण।।49

उस मूर्त्ति का वह एकान्त में सुसेवन करती है और आपके श्रीचरण कमलों में उन्होंने तन मन प्राण से आत्मसमर्पण कर दिया है।

तान सद्गुण श्रीअनन्त कहिते ना पारे। एक मुखे मुञि कत कहिमु तोमारे।।50

उनके सद्गुण तो श्रीअनन्त भी वर्णन नहीं कर सकते।
एक मुख से भला मैं क्या कहूँ?

महाप्रभु कहे आर ना कह ए बात। शान्तिपुरे आचार्यर कह सम्वाद।।51

श्रीमहाप्रभु बोले– बस, ऐसी बात और मत सुनाओ।
शान्तिपुर में श्रीआचार्य का संवाद सुनाओ।

प्रभुर मंगल आगे पण्डित कहिला। तरजा प्रहेली तान परे प्रकाशिला।।52

पहले जगदानन्द ने श्रीअद्वैत का कुशल मंगल सुनाया,
फिर तरजा प्रहेली भी सुनायी।

तरजा शुनिया हासि कहे श्रीचैतन्य। ताँर जेइ अनुमति सेइ मोर मान्य।।53

तरजा सुन हंसते हुए श्रीचैतन्य बोले–जो उनकी अनुमति है, वही मुझे मान्य है।

एत कहि गौरांग स्तम्भित हइला। स्वरूपादि भक्तगण ताहाने पुछिला।।54

यह कहकर श्रीगौरांग स्तम्भित हो गये। श्रीस्वरूपादि भक्तों ने प्रभु से कहा।

कह महाप्रभु एइ तरजार अर्थ। मोरा सभे बुझिवारे हैनु असमर्थ।55

प्रभु आप इसका अर्थ बताइये, क्योंकि इस
तरजा का अर्थ जानने में हम सब असमर्थ हैं।

श्रीगौरांग कहे सेइ अद्वैताचार्य। कृष्ण सिद्धि कैला तिंह अलौकिक कार्य।।56

श्रीगौरांग बोले– श्रीअद्वैताचार्य ने श्रीकृष्ण की सिद्धि
प्राप्त कर ली है। उनके सब कार्य असाधारण हैं।

ताँर प्रेम रज्जु–बद्ध स्वयं भगवान। ताँर इच्छाय कृष्णेर अप्रकट अधिष्ठान।।57

उनकी प्रेमरज्जु में स्वयं भगवान बन्धे हुए हैं।
उनकी इच्छा से श्रीकृष्ण का उनमें अप्रकट अधिष्ठान है।

ताँर तरजार अर्थ के बुझिते पारे। ताँर अर्थ सेइ बुझे आने नाहि स्फुरे।।58

उनकी तरजा का अर्थ कौन समझ सकता है।
उसका अर्थ वे स्वयं ही जानते हैं, और कोई नहीं जान सकता।

साधुगण कहे ताँरे देवतार आर्य। भक्ति कल्पतरु तिंह जगतेर पूज्य।।59

भक्त कहते हैं वे देवताओं के भी आर्य पुरुष (महाविष्णु) हैं।
वे भक्ति कल्पवृक्ष के समान जगत् के वन्दनीय और पूजनीय हैं।

शुनि भक्तगण मने लागे चमत्कार। सेइ दिन हैते गोरार हइल दशान्तर। ।60

यह सुनकर भक्तों को चमत्कार हुआ।

उस दिन से फिर श्रीगौरांग की दशा कुछ और ही हो गयी।

श्रीराधार दिव्योन्माद हैल उद्दीपन। हा नाथ हा कृष्ण बुलि करये क्रन्दन। ।61

उनमें श्रीराधा का दिव्योन्माद उद्दीपित होने लगा।

वे "हा नाथ! हा कृष्ण!! पुकार कर रोने लगे।

दिवा निशि नाहि ज्ञान महा भावावेशे। तरास लागये भक्तगणेर मानसे। ।62

महाभावावेश में उन्हें दिन–रात का ज्ञान भी न रहता था

और भक्तों के मन में भय सा रहने लगा।

एकदिन गोरा जगन्नाथ निरखिया। श्रीमन्दिरे प्रवेशिला हा नाथ वलिया। ।63

एकदिन श्रीगौर श्रीजगन्नाथ के दर्शन कर

"हा नाथ" बोलते हुए श्रीमन्दिर में प्रविष्ट हुए।

प्रवेश मात्रेते द्वार स्वयं रुद्ध हैल। भक्तगण मने बहु आशंका जन्मिल। ।64

प्रवेश करते ही मन्दिर का कपाट अपने आप बन्द हो गया।

भक्तों को बहुत आशंका हुई मन में।

किछुकाल परे स्वयं कपाट खुलिला। गौरांगाप्रकट सभे अनुमान कैला। ।65

थोड़ी देर में अपने आप किवाड़ खुल गया– किन्तु श्रीगौरांग वहां न थे। सबने श्रीगौरांग के अप्रकट होने का अनुमान लगा लिया।

यद्यपि चैतन्याप्रकट नहे भक्तस्थाने। लोक सिद्ध–महाखेद कैला गौरगणे ।66

यद्यपि भक्तों के लिये श्रीचैतन्य कभी अप्रकट नहीं हैं, तथापि लौकिक व्यवहारानुसार भक्तों में महाखेद और हाहाकार मच गया था।

सेइ खेद रुद्र वह्नि महा तेजीयान। सर्वजीवेर पोड़ाइल देह मन प्राण। ।67

वह अत्यन्त खेद रूपी रुद्र की अग्नि के समान महान संकटयुक्त था, उसने समस्त जीवों के देह–मन प्राणों को जला ड़ाला।

श्रीगौरांगेर लीला हय समुद्र पाथार। अनन्त वर्णिते नारे तार एकधार। ।68

श्रीगौरांग की लीला तो समुद्र की धाराओं की भांति अनगिनित है,

श्रीअनन्त भी उसकी एक धारा का, वर्णन नहीं कर सकते।

क्षुद्रतम कीट हैते मुञि अति क्षुद्र। चिदानन्दे कहि परमाणु सूत्र मात्र। ।69

मैं तो क्षुद्रतम कीट से भी अति क्षुद्र हूँ। अपने चित्त विनोदन के लिए परमाणु सूत्रमात्र उल्लेख किया है।

हेथा मोर प्रभु अलौकिक भावावेशे। महाप्रभुर अप्रकट बुझिला मानसे।।70

इधर श्रीअद्वैतचन्द्र ने अलौकिक भावावेश में
महाप्रभु का अप्रकट होना मन में जान लिया।

दिव्योन्माद हैल प्रभुर नांहि बाह्य ज्ञान। निमाञि निमाञि बुलि करे आह्वान।।71

उन्हें दिव्योन्माद हो उठा, बाहर की सुध–बुध न रही।
'निमाई–निमाई' ही पुकारने लगे।

क्षणे कहे आयरे निमाञि पुस्तक लइया। गृह–कृत्ये आछे झाट जाङ पड़ाइया।।72

कभी कहते– अरे निमाई! पुस्तक लेकर आ जा, मुझे कहीं जाना है
घर के काम काज के लिये, जल्दी आजा तुम्हें पढ़ा तो जाऊँ।

क्षणे कहे तोर जारि–जुरि मुञि जानि। कोन भावे गौर हैलि कह देखि शुनि।।73

कभी कहते– मैं तुम्हारी कपटता को सब जानता हूँ।
कह तो सही, तू कैसे (काले से) गोरा बन गया?

क्षणे कहे निमाञि तुहुँ रह मोर घरे। शचीमायेर दुख हैव गेले देशान्तरे।।74

कभी कहते– निमाई! तुम मेरे ही घर पर रहे आओ।
देशान्तर जाने से माता शची को बहुत दुख होगा।

क्षणे कहे गौर तुहुँ विधातार धाता। कलियुगे हैलि नाम संकीर्तनेर पिता।।75

कभी कहते– गौर! तू विधाता का भी विधाता है, किन्तु
कलियुग में तू नाम संकीर्तन का पिता होकर अवतीर्ण हुआ है।

कभु कहे व्रजेर वस्तु व्रजे लुकाइलि। खूजि नाहि पाङ एकि कर चतुरालि।।76

कभी कहते– ब्रज की वस्तु ब्रज में तुमने छिपा दी।
मैं तो उसका कुछ पता न पा सका– यह कैसी चतुराई तुमने करदी?

हेन मते बहुत प्रलाप फुकारिल। बहु क्षण परे प्रभुर बाह्य स्फूर्त्ति हैल।।77

इसप्रकार अनेक समय तक विविध प्रलाप
करने के बाद श्रीअद्वैतचन्द्र को बाह्य ज्ञान हुआ।

हरि हरि बुलि तिंह छाड़ये हुंकार। सभे कहे व्याधि एबे हइल अन्तर।।78

हरि–हरि बोलकर वे हुंकार छोड़ने लगे। सब
कहते कि कोई आन्तरिक रोग इन्हें लग गया है।

एइ शुद्ध महाभाव के बुझिते पारे। शुद्ध भक्तगण मात्र बुझये अन्तरे।।79

इस शुद्धभाव को कौन समझ पाता? केवल शुद्ध
भक्त ही मन में उनकी अवस्था को जान रहे थे।

मुञि क्षुद्रतम कीटेर नांहि ज्ञानाभास। जे देखिनु तार सूत्र करिनु प्रकाश।।80

मुझ क्षुद्रतम कीट को तो ज्ञानाभास तक नहीं है,
जो कुछ मैंने देखा उसका सूत्रमात्र प्रकाशित किया है।

एकदिन सीतानाथ वसि बहिर्द्वारे। हरे कृष्ण नाम डाके आनन्द अन्तरे।।81

एकदिन श्रीसीतानाथ दरवाजे के बाहर बैठ कर
आनन्दमन से 'हरे–कृष्ण' नाम जाप कर रहे थे।

क्षेत्रवासी भक्त एक तथाय आइला। देखि प्रभु समादरे तारे वसाइला।।82

वहाँ एक क्षेत्रवासी भक्त उनके पास आया।
श्रीअद्वैत प्रभु ने उसे आदरपूर्वक बैठाया।

लोकाचार मते तेहों अश्रु विमोचिया। गौरांगेर कुशल पुछे अति व्यग्र हञा।83

लोकाचार के अनुसार आँसू प्रवाहित करते हुए श्रीअद्वैत ने व्यथित होकर उससे
पूछा– "मेरे गौरांग की कुशल तो कहो"

श्रीवैष्णव कहे जानों चैतन्येर संवाद। अप्रकट हैला तिंहो हञाछे प्रवाद।।84

श्रीवैष्णव ने कहा मैं तो यही श्रीचैतन्य का संवाद
जानता हूँ कि सब कहते हैं वे अप्रकट हो गये हैं।

ताहा शुनि देखे प्रभु सर्व शून्यायित। बुझिनु बुझिनु बैला हइला मूर्च्छित।।85

यह सुनते ही श्रीअद्वैत के आगे अन्धेरा छा गया। जान गया,
समझ गया– ऐसा कहते हुए वे मूर्च्छित हो गये।

बहु क्षण परे तेंहो पाइला चेतन। कत भाव हैल प्रभुर ना जाय वर्णन।।86

अनेक देर बाद उन्हें चेतनता आयी न जाने कितने गौर प्रेम
भावों का उनमें उद्‌गम हो उठा, कौन वर्णन कर सकता है उन्हें?

क्षणे स्तम्भ क्षणे हुंकार गड़ागड़ि। क्षणे गोरा गोरा बुलि कान्दये फुकारि।।87

एक क्षण में स्तम्भ, होता तो दूसरे क्षण हुंकार करते, फिर धरती पर लोट–पोट
होने लगते। फिर 'गोरा–गोरा' पुकार कर रोने लगते।

क्रन्दन शुनिया तहिं सीतामाता आइला। कारण शुनिया तिहों मूर्च्छित हइला।।88

उनके रोने की आवाज सुनकर सीतादेवी वहाँ आयीं, कारण
जानते ही वह भी मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं।

बहु क्षणे सीतादेवी पाइया चैतन्य। फुकारिया कान्दे बहु बलिया चैतन्य।।89

बहुत देर बाद सीतादेवी को चेतनता आयी। वह भुजाएं उठाकर
मेरे प्राणन प्यारे चैतन्य–चैतन्य पुकारने और रोने लगीं।

श्रीअच्युत कान्दे आर कान्दे कृष्णदास। श्रीगोपाल दास कान्दे हइया हताश।।90

श्रीअच्युत, श्रीकृष्णदास तथा श्रीगोपालदास–

ये सब हताश होकर जोर से रोने लगे।

सीतार नन्दन मध्ये ए तिन प्रधान। शुद्धभक्त हय तिनेर गौरगत प्राण।।91

श्रीसीतादेवी के पुत्रों में यही तीन प्रधान थे।

ये तीनों शुद्ध भक्त एवं गौरगत–प्राण थे।

ता सभार विलाप वर्णिते नाहि क्षम। सूत्र परमाणु मात्र करिनु वर्णन।।92

उन सबका विलाप वर्णन नहीं हो सकता। यहाँ मैंने सूत्रमात्रका वर्णन किया है।

दिवा–रात्रगेल प्रभु नाहि बाह्याभास। सपरिवारे आचार्य कैला उपवास।।93

प्रभु को तो बाह्य ज्ञान नहीं हुआ दिन–रात निकल गये।

उस दिन श्रीअद्वैत ने सपरिवार उपवास किया।

परदिन प्रभु महामहोत्सव कैला। बहु द्विज श्रीवैष्णवे सेवा कराइला।।94

दूसरे दिन श्रीअद्वैत ने महा महोत्सव किया–

अनेक ब्राह्मण, वैष्णवों की सेवा करायी।

शत शत दरिद्रेरे कैला अन्नदान। वस्त्र कौड़ि दान कैला पर्वत प्रमाण।।95

सैकड़ों गरीबों को अन्नदान किया, वस्त्र–धन पैसा के ढेर दान कर दिये।

हरिसंकीर्तन–सुधा शुद्ध गंगानीरे। शान्तिपुर भासि गेल प्रेमार सागरे।।96

हरिसंकीर्तन सुधा रूप शुद्ध गंगा–धारा में

शान्तिपुर बहता हुआ प्रेमसागर में जा मिला।

तार तरंगेते कत ग्रामवासीजन। सपरिवारेते कैला स्नानावगाहन।।97

उसकी तरंगों में असंख्य ग्रामवासियों ने परिवार सहित अवगाहन किया।

सेइ दिन हैते प्रभु महायोगेश्वर। श्रीगौरांगेर रूप ध्यान करे निरन्तर।।98

उसीदिन से महायोगेश्वर श्रीअद्वैतप्रभु श्रीगौरांगके रूपका निरन्तर ध्यान करते।

स्वप्ने महाप्रभु आसि कहे अद्वैतेरे। मो विच्छेदे नाढ़ा दुख ना भाव अन्तरे।।99

स्वप्न में आकर एकदिन श्रीमहाप्रभु ने श्रीअद्वैत से कहा–

मेरे विच्छेद में आप मन में कुछ दुख न माने।

तो प्रेमाकर्षणे मुञि आइनु तोर घरे। कृष्णमिश्रेर पुत्ररूपे देखिवा आमारे।।100

मैं आपके आकर्षण में आपके घर आया हूँ–

श्रीकृष्ण मिश्र के पुत्र के रूप में मुझे देखोगे।

प्रभु नित्यानन्द चाँदे दिन कत परे। कृष्णमिश्रेर पुत्ररूपे पाइवा निजघरे।।101

प्रभु नित्यानन्द चाँद को भी कुछ दिन पीछे
कृष्णमिश्र के पुत्ररूप में अपने घर प्राप्त करोगे।

तव प्राण–प्रियतम पुत्र कृष्णदास। जाहार हृदये मोर सर्वदा विलास।।102

आपका पुत्र कृष्णदास मुझे प्राणों के समान प्रियतम है,
उसके हृदय में मैं सर्वदा विलास करता हूँ।

जेइ नित्य–भक्त मोर नियुक्त सेवाते। पुन प्रकट हैमु तार वान्छा पुराइते।।103

जो मेरा नित्यभक्त है और मेरी सेवा में लगा हुआ है।
उसकी वान्छापूरण करने के लिए फिर मैं प्रकटित हूँगा।

अत्याश्चर्य स्वप्न देखि प्रभुर विस्मय। सेइ दिने कृष्णमिश्रेर हइल तनय।।104

अति आश्चर्यमय इस स्वप्न को देखकर श्रीअद्वैत विस्मित हो उठे।
उसी दिन ही श्रीकृष्णमिश्र के घर पुत्र का जन्म हुआ।

श्रीगौरांगेर प्रतिकृति भुवन मोहन। रूप देखि हैला प्रभु प्रेमेते मगन।।105

वह श्रीगौरांग की प्रतिमूर्त्ति और त्रिभुवन सुन्दर था।
उसके रूप को देखकर प्रभु प्रेममग्न हो गये।

रघुनाथ नाम तान तिंह प्रेमाकर। गौरगुण शुनि जार बहे अश्रुधार।।106

उस प्रेमाकर का नाम रघुनाथ था, गौरगुण सुनते ही
जिसके नेत्रों में से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगती।

तबे यथाकाले कृष्णेर दोल–पूर्णिमाय। कृष्णमिश्र प्रभुर हैल द्वितीय तनय।।107

तब यथा समय कृष्णदोल पूर्णिमा के दिन
श्रीकृष्ण मिश्र के यहाँ दूसरे पुत्र का जन्म हुआ।

नित्यानन्देर प्रतिकृति दयार सागर। गौरांग महिमा जेइ कहे निरन्तर।।108

वह श्रीनित्यानन्द की प्रतिमूर्त्ति था, दया सागर था।
वह निरन्तर श्रीगौरांग महिमा का गान करता था।

श्रीदोलगोविन्द नाम प्रभु तार थुइला। शुनि भक्तगण प्रेमे हरिध्वनि कैला।।109

उसका नाम प्रभु ने रखा– श्रीदोल गोविन्द।
भक्तों ने उसका नाम सुनकर प्रेमपूर्वक हरिध्वनि की।

एकदिन श्रीअद्वैत डाकि पुत्रगणे। निर्जने कहये अति मधुर वचने।।110

एकदिन श्रीअद्वैत प्रभु ने अपने पुत्रों को बुलाया
और निर्जन स्थान में बैठकर अति मधुर वचन कहने लगे।

अहे वत्सगण ! सभे स्थिर कर मन। गार्हस्थ्य धर्मेर सार करह श्रवण।।111

श्रीअद्वैतजी बोले– हे पुत्रो! आप सब मन को
स्थिर कर गार्हस्थ्य धर्म के सार को सुनो।

सन्ध्या वन्दनादि आर पन्च महायज्ञ। जेइ जन करे नित्य सेइ महाविज्ञ।।112

जो व्यक्ति नित्य सन्ध्या–वंदन और पन्च महायज्ञ करता है, वही महाविद्वान है।

परदार परधने लोभ ना करिवा। इथे इह परकाले यातना पाइवा।।113

परस्त्री और पराये धन का कभी लोभ नहीं करना,
नहीं तो यहाँ और परलोक में यातना भोगनी पड़ेगी।

जीवमात्रे दया राखि ना करिह हिंसा। निन्दा ना करिह साधुर करिह प्रशंसा।।114

जीवमात्र के ऊपर दया रखो, किसी की हिंसा मत करो।
साधु की कभी निन्दा नहीं, सदा स्तुति करो।

गृहांगने श्रीतुलसी करिवे स्थापन। तुलसी विहने गृह श्मशानेर सम।।115

गृहांगन में श्रीतुलसी स्थापन करो, तुलसी के बिना घर श्मशान के बराबर है।

निति हरि–संकीर्तन हय सर्वोत्तम। पापेर प्रायश्चित इथे पलाय शमन।।116

नित्य हरिसंकीर्तन करना सर्वोत्तम है। समस्त पापों का वह प्रायश्चित है, सब
पाप उससे दूर भाग जाते हैं। केवल यही एकमात्र उपाय है।

अपराध खण्डे नित्य साधुसंग हय। कृष्णभक्ति लाभ हय नाहिक संशय।117

उससे अपराध दूर होते हैं और नित्य साधु संग प्राप्त होता है, जिससे कृ
ष्णभक्ति की प्राप्ति होती है– इसमें कुछ भी संशय न करना।

आर एक कथा मोर स्मरण राखिवा। आत्मसुख लागि कोन कर्म ना करिवा।।118

और एक बात मेरी याद रखना कि अपने सुख के लिए कोई कार्य ना करना।

कृष्णसेवा लागि यदि संसार करय। कर्म–जन्य पाप पुण्य भागि नाहि हय।।119

श्रीकृष्णसेवा के लिए सांसारिक कर्म करते रहोगे,
तो कर्मजन्य तथा पापों के भागी आप नहीं बनेंगे।

काम्यकर्मे विषय वासना क्रमे बाढ़े। सेइ सूत्रे संसारे जीव गतागति करे।।120

कामनामय कर्मों से विषय वासना क्रमशः बढ़ती ही जाती है।
उसी वासना सूत्र से जीव संसार में आता–जाता रहता है।

अतएव काम्यकर्म सर्वथा त्यजिवे। कृष्णार्थ करिले कर्म अभीष्ट पूरिवे।।121

इसलिये काम्य कर्मफल की वासना से किये जाने वाले कर्मों का सर्वथा त्याग
कीजिये। वही कर्म यदि श्रीकृष्ण के लिए किये जायें तो सर्वाभीष्ट पूरण हो
जाते हैं और बन्धन नहीं होता।

हेनमते बहुविध उपदेश दिला। शुनि श्रीअच्युत आदि आनन्दित हैला।।122

इसप्रकार श्रीअद्वैत ने अपने पुत्रों को नानाविध उपदेश दिया,
जिसे सुनकर श्रीअच्युतादि सब पुत्र आनन्दित हुए।

श्रीअच्युत कृष्णमिश्र आर गोपालदास। ए तिनेर कृष्णसेवाय सतत उल्लास।।123

श्रीअच्युत श्रीकृष्णमिश्र तथा श्रीगोपालदास– इन तीनों का
कृष्णसेवा के लिए निरन्तर उल्लास–उत्साह रहता था।

कृष्ण–वैष्णवेते सदा गाढ़ अनुराग। श्रीअच्युतेर संसारेते सम्पूर्ण–विराग।।124

उनका श्रीकृष्ण एवं वैष्णवों में सदा गाढ़ अनुराग था।
श्रीअच्युत को संसार से बिल्कुल वैराग्य था।

प्रभु आज्ञाय प्रेमगंगार कल्लोल बाढ़िल। नाना उपचारे कृष्णेर सेवा आरम्भिल।125

प्रभु आज्ञा से उनमें प्रेम गंगा की हिलोरें मारने लगी।
उसने नाना उपायों से श्रीकृष्ण–सेवा को आरम्भ कर दिया।

यद्यपि एइ तिनेर हय कृष्णे एकान्त मन। कृष्ण मिश्रे सेवा दिते प्रभुर हैलमन।।126

यद्यपि इन तीनों का मन श्रीकृष्ण में ऐकान्तिक निष्ठा था,
फिर भी कृष्णमिश्र को सेवा देने की इच्छा श्रीअद्वैतचन्द्र की हुई।

आश्रमी श्रीकृष्ण मिश्र शुद्ध भक्तिमान। कृष्णसेवाय योग्यपात्र करि अनुमान।।127

कृष्णमिश्र गृहस्थी थे– शुद्ध भक्तिभाव थे।
अतः उसे ही कृष्ण सेवा का योग्य पात्र उन्होंने विचारा।

अच्युतेर प्रति कहे लाभार नन्दन। शुन वाछा श्रीअच्युत आमार वचन।।128

श्रीअच्युत के प्रति श्रीअद्वैत प्रभु बोले–
मेरे प्रिय पुत्र श्रीअच्युत! तुम मेरे हितकर वचन सुनो।

तुमि मोर ज्येष्ठ पुत्र वैष्णवाग्रगण्य। तोमा हेन पुत्र पाञा हैनु मुञि धन्य।।129

तुम मेरे ज्येष्ठ पुत्र हो, वैष्णवों में अग्रगण्य हो।
तुम्हारे जैसे पुत्र को प्राप्त कर मैं धन्य हूँ।

परम पवित्र तुहुँ शास्त्रे वृहस्पति। धार्मिकेर शिरोमणि अतिशुद्ध मति।।130

तुम परम पवित्र हो और शास्त्रों में भी बृहस्पति के समान ज्ञाता हो।
धर्मात्मा शिरोमणि हो और तुम्हारी बुद्धि अति सुनिर्मल है।

बाल्यकाल हैते तुमि संसारे विरक्त। परम वैराग्य धर्मे सदा अनुरक्त।।131

बाल्यकाल से ही तुम संसार से विरक्त हो और
परम वैराग्य धर्म में तुम्हारी सदा अनुरक्ति है।

तेञि दारपरिगृह हइला विमुख। तुच्छ कैला जीव प्रिय बाह्येन्द्रिय सुख।।132

अतः तुमने विवाह भी स्वीकार नहीं किया है। तुमने जीवों के प्रिय बाह्येन्द्रियों के सुख को अति तुच्छ जानकर त्याग दिया है।

अतएव श्रीविग्रहेर सेवादिक क्रिया। तोमा हइते ना चलिवे देखिनु बुझिया।।133

इसलिए श्रीविग्रह की सेवादि तुमसे न चलेगी– यह मैंने विचार किया है।

कृष्णदास मिश्र एइ तोमार कनिष्ठ। देव–द्विज अनुरक्त वैष्णवेर श्रेष्ठ।।134

कृष्णदास मिश्र तुम्हारा छोटा भाई है, जो देव–विप्रों में
अनुरक्त रहता है, और वैष्णवों में सर्वश्रेष्ठ है।

सुपण्डित शुद्ध बुद्धि भक्ति भाण्डारी। प्रेमिकेर शिरोमणि सदा शुद्धाचारी।।135

यह सुपण्डित है शुद्धबुद्धि है, भक्ति का भाण्डारी है,
प्रेमियों में शिरोमणि तथा सदा शुद्धाचरण शील है।

मोर मतग्राही सदामोर अनुगत। गौरगत प्राण तेञि गौरप्रिय पात्र।।136

मेरे मत को ग्रहण करने वाला सदा मेरे अनुगत रहने वाला है।
वह गौरगत–प्राण और श्रीगौर का प्रियपात्र होगा यही मेरा मत है।

विवाह करिया ताहे हञाछें आश्रमी। मोर मते तारे कृष्णसेवार योग्य मानि।।137

विवाह करके वह गृहस्थी बन चुका है–
अतः मैं अपने मत से उसे कृष्णसेवा के योग्य मानता हूँ।

विशेषतः कृष्णदासेर पुत्र दुई जन। परमधार्मिक श्रीगौरांग–परायण।।138

विशेषतः कृष्णदास के जो दो पुत्र हैं, वे भी परम धार्मिक हैं और गौरपरायण हैं।

ज्येष्ठ रघुनाथ छोट श्रीदोलगोविन्द। श्रीकृष्णसेवने दोंहार परम आनन्द।।139

बड़ा रघुनाथ है और छोटा दोलगोविन्द–
इन दोनों को कृष्णसेवा में परम आनन्द होता है।

एकदिन श्रीमान रघुनाथ कहे मोरे। वेदव्यास वाक्य स्थिर रहे कि प्रकारे।।140

एकदिन रघुनाथ ने मुझसे कहा– वेदव्यास के वचन कैसे संगत हो सकते हैं?

कलिकाले चौराशी नरक हैलपूर्ण। सेइपथ रुद्ध कैला श्रीकृष्णचैतन्य।।141

उन्होंने कहा है कि कलिकाल में चौरासी नरकों का समावेश है,
अब उस नरक द्वारों को श्रीकृष्णचैतन्य देव ने रुद्धकर काट दिया है?

हरिनाम महामन्त्रे उद्धारिला जीवे। कह शुनि कैछे जीवेर नरक पूरिवे।।142

श्रीहरिनाम महामन्त्र का उच्चारण करने
वाले जीवों के लिए वे चौरासी नरक कैसे चलेंगे?

शुनि श्रीदोलगोविन्द कहिला हासिया। पूर्ण हैव गौर–द्वेषी पापी सभ दिया।।143

यह बात सुनकर छोटे भाई दोलगोविन्द ने हंसकर कहा– वे चौरासी नरक उन पापियों से पूर्ण होंगे, जो श्रीगौरहरि से द्वेष करते हैं।

ऐछे बात शुनि मोर हइल चमत्कार। सेइ हइते जानि दुहु देव अवतार।।144

यह सुनकर मेरे हृदय में चमत्कार हुआ,
तभी से मैं जान गया कि ये दोनों देव अवतार हैं।

धन्य कृष्णदास मोर धन्य तार पुत्र। श्रीमदनगोपाल सेवार योग्य पात्र।।145

मेरा पुत्र कृष्णदास धन्य है, फिर उसका पुत्र धन्य है।
वह श्रीमदनगोपाल की सेवा का योग्य पात्र है।

सेइ मोर आत्मीय गौरांग भजे जेई। मोर प्राणधन सेवार अधिकारी सेई।।146

मेरा तो वही आत्मीय है जो श्रीगौरांग का भजन करता है।
मेरे प्राणधन श्रीमदनगोपाल की सेवा का भी वही अधिकारी है।

अतएव कृष्णमिश्रे एइ सेवा भार। अर्पण करिते चाङ कि इच्छा ताहार।।147

अतः इस सेवा का भार कृष्णमिश्र को अर्पण करना चाहता हूँ–
तुम्हारी इसमें क्या राय है?

शुनि हर्षे श्रीअच्युत कहे जोड़ करे। जे आज्ञा करिला ऐछे मोर मन धरे।148

श्रीअच्युत ने सब बात सुनकर आनन्द से हाथ जोड़कर कहा–
जो आज्ञा आपने की है, वे मेरे मन को ठीक लगती है।

तबे श्रीअद्वैत कहे कृष्णमिश्र प्रति। मदनगोपाल हय मोर प्राणपति।।149

तब श्रीअद्वैत प्रभु ने कृष्णमिश्र को कहा– श्रीमदनगोपाल मेरे प्राणपति हैं।

भक्तिभावे निति ताने करिह सेवन। बहिर्मुखे नाहि दिवा करिते पूजन।।150

भक्तिभाव से नित्य उनकी सेवा करनी होगी।
बहिर्मुख को कभी सेवा नहीं करने देना।

नास्तिक पाषण्डगणे बहिर्मुख जानि। संन्यासी अद्वैतवादी आर योगीज्ञानी।।151

नास्तिक और पाषण्डीजन ही बहिर्मुख हैं,
जो संन्यासी अद्वैतवादी हैं और योगी ज्ञानी है।

भुक्ति–मुक्ति अभिलाषी भक्तिवान्छा हीने। कृष्ण बहिर्मुख मानि अवैष्णव जने।152

भुक्ति और मुक्ति चाहने वाले और जो भक्तिकामना से रहित हैं,
वे सब कृष्ण बहिर्मुख हैं और उन्हें अवैष्णव जानना चाहिये।

वैष्णवेर मध्ये जेइ सम्प्रदाय हीने। सम्प्रदायी मध्ये जेइ गौरांग ना माने।।153

वैष्णवों में भी जो सम्प्रदाय–हीन हैं– सम्प्रदायानुगत नहीं है,
सम्प्रदायी में भी जो श्रीगौरांग को भगवान् नहीं मानते हैं।

कृष्ण बहिर्मुख सेई करिमु निर्यास। आर एक कथा मोर शुन कृष्णदास।।154

वे सब कृष्ण बहिर्मुख हैं– यही सार बात है और भी एक बात कृष्णदास! सुनो–

मोर निजगण मध्ये दुर्मति जाहारा। मोर आज्ञा लंघि चले नाहि माने गोरा।।155

मेरे आत्मीयजनों अथवा शिष्यों में जिनकी दुर्मति है और मेरी आज्ञा का उल्लंघन
करते हैं और गौरचन्द्र को नहीं मानते हैं– वे भी बहिर्मुख हैं।

श्रीगौरांग मोर प्रभु मुञि ताँर दास। ताँर श्रीचरणरेणु मोर पंचग्रास।।156

श्रीगौरांग मेरे प्रभु हैं, मैं उनका दास हूँ।
उनकी श्रीचरण रज ही मेरे पंचग्रास–पांच प्राण हैं।

गोरा मोर प्राणपति गोरा मोर पूज्य। से गौरांग जे ना माने सेइ मोर त्यज्य।।157

श्रीगौर ही मेरे प्राणपति हैं, वही मेरे पूज्य हैं। अतः जो श्रीगौर को न माने वह
मेरा शिष्य या आत्मीय पुत्र होते हुए भी मेरे द्वारा बहिष्कृत है।

कृष्ण बहिर्मुख सेइ सभ नीचाश्रय। श्रीकृष्णविग्रह सेवार योग्य कभु नय।।158

जो श्रीकृष्ण से बहिर्मुख हैं, वे सभी नीच आश्रमी हैं,
वे श्रीकृष्णविग्रह की सेवा के कभी योग्य नहीं हैं।

पितृ सद्धर्मेर रक्षा करे जेइ जन। सेइ से यथार्थ पुत्र वेदेर वचन।।159

जो व्यक्ति–पुत्र पिता के सद्धर्म की रक्षा करता है,
वही यथार्थ पुत्र है– यह वेद वचन है।

एत कहि श्रीमदनगोपाल विग्रह। कृष्णमिश्रे समर्पिला करिया आग्रह।।160

इतना कहकर श्रीमदनगोपाल के श्रीविग्रह को
यत्नपूर्वक श्रीअद्वैतचन्द्र ने श्रीकृष्णमिश्र को सौंपा।

कृष्णसेवा पाञा कृष्णमिश्र प्रेमानन्दे। दण्डवत् कैला प्रभुर चरणारविन्दे।।161

कृष्णसेवा पाकर श्रीकृष्णमिश्र ने प्रेमानन्द में भरकर
श्रीअद्वैतचन्द्र के चरणकमलों में दण्डवत् किया।

दैन्य स्तुति करि मातृ पदे प्रणमिला। सीताद्वैत दोंहे तांरे आशीर्वाद कैला।।162

दीनतापूर्वक स्तुति करते हुए माता सीतादेवी के चरणों की वन्दना की।
माता–पिता दोनों ने उसे आशीर्वाद दिया।

श्रीअच्युते तबे प्रणमिला दैन्य करि। अच्युत कहे तुया भाग्येर जाङ बलिहारी।।163

श्रीकृष्णदास ने फिर बड़े भाई श्रीअच्युत के चरणों में दीनतापूर्वक नमस्कार किया। श्रीअच्युत ने कहा तुम्हारे भाग्यों पर तो मैं बलिहारी जाऊँ।

कृष्णेर इच्छा हैल तुंहे दया करिवारे। सेइ इच्छा प्रकाशिला आत्मभक्त द्वारे।।164

श्रीकृष्ण की तुम पर दया करने की इच्छा थी, अतः उन्होंने अपनी इच्छा को अपने भक्त (श्रीअद्वैत) के माध्यम से प्रकाशित–पूरण किया है।

जैछे ब्रह्माद्वारे कृष्ण वेद प्रकटिला। एत कहि तिंह कृष्णमिश्रे आलिंगिला।।165

जैसे श्रीकृष्ण ने ब्रह्मा जी के द्वारा वेदों को प्रकट किया।
इतना कहकर श्रीअच्युत ने श्रीकृष्णदास को आलिंगन किया।

गोपाल कहे कृष्ण हय बड़ दयावान। तेंहे कृपा करि वंशेर करिव कल्याण।।166

श्रीगोपालदास ने कहा– श्रीकृष्ण महान दयावान हैं,
वही कृपा कर हमारे वंश का कल्याण करेंगे।

जैछे वृक्षेर मूले जल करिले सेचन। शाखापल्लवादिर हय सुखेर उद्गम।167

जैसे वृक्ष के मूल में जल सेंचन करने से शाखा–
पल्लवादि सब सुखी–पुष्ट होते हैं।

अहो भाग्य बलि कृष्णमिश्रे प्रणमिला। कृष्णमिश्र तारे दृढ़ आलिंगन कैला।।168

अहोभाग्य कहकर उसने श्रीकृष्णमिश्र को नमस्कार किया।
कृष्णमिश्र ने उसे गाढ़ आलिंगन किया।

ताहे आर आचार्यसुत प्रभु बलराम। आर प्रभु जगदीश महा तेजीयमान।।169

श्रीअद्वैत के और पुत्र थे। श्रीबलराम और जगदीश जो परम तेजस्वी थे।

रोषावेशे निजगण लैञा युक्ति करि। एक कृष्णमूर्त्ति आनाइला यत्न करि।।170

वे क्रोध में भर गये अपने परिवार के साथ
सलाह परामर्श कर उन्होंने और एक कृष्णमूर्त्ति मंगा ली।

अभिषेक करि सेइ मूर्त्ति स्थापिला। आपनागण लञा महोत्सव कैला।।171

अभिषेक कर उस मूर्त्ति की स्थापना की और
अपने बान्धवों को लेकर महोत्सव मनाया।

श्रीअद्वैतेर लीला हय समुद्र दुष्पार। तान सूत्र बिन्दुमात्र करिनु प्रचार।।172

श्रीअद्वैत प्रभु की लीला समुद्र की भांति अथाह है,
उसका सूत्रबिन्दु मात्र मैंने यहाँ वर्णन किया है।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश। नागर ईशान कहे अद्वैत प्रकाश।।173

श्रीचैतन्य एवं श्रीअद्वैत के चरणों की अभिलाषा करते हुए

श्रीईशाननागर श्रीअद्वैतप्रकाश का गान करते हैं।

द्वाविंश अध्याय

जय जय श्रीचैतन्य जय सीतानाथ। जय नित्यानन्द राम भक्तगण साथ।।1

श्रीचैतन्य देव की जय हो, जय हो, श्रीसीतानाथ की
जय हो। श्रीनित्यानन्दराम की भक्तों सहित जय हो।

महाप्रभुर अप्रकटे प्रभु दुईजन। विरहे आकुल हञा करेन क्रन्दन।।02

श्रीमहाप्रभु के अप्रकट होने के बाद श्रीअद्वैत प्रभु एवं
नित्यानन्दप्रभु उनके विरह में व्याकुल हो रोते रहते।

जे सकल दशा चक्षे करिमु दर्शन। मुञि छार कीट ताहा लिखिते अक्षम।।03

जिस दशा को मैंने आँखों से देखा है, उसे
तो मैं क्षुद्र कीट वर्णन नहीं कर सकता।

कृष्णबिनु जैछे दशा व्रजगोपिकार। तैछे दशा दोंहाकार स्फुरे अनिवार।।04

जैसे श्रीकृष्ण के बिना (मथुरा चले जाने पर) ब्रजगोपियों की दशा हुई थी, वही
दशा इन दोनों की निरन्तर रहने लगी।

कभु उपवासी रहे कभु किछु खान। कभु दुइ चारि दिने करे जलपान।।05

कभी तो कुछ खा लेते, कभी उपवासी ही रहे आते।
कभी दो चार दिन में केवल पानी पी ही रह जाते।

विरह विवश तनु कभु नाहि स्फुरे। हा गौरांग बलि कभु डाके उच्चस्वरे।।06

विरह–विवश होकर उन्हें शरीर की सुध–बुध न रहती।
"हा गौरांग" ऊँचे स्वर में कभी पुकारते।

एक दिवसेरे करे शतयुग ज्ञान। दोंहाकार दशा देखि गलये परान।।07

एकदिन को शतयुग के समान जानते, दोनों की विरह दशा को देखकर प्राण
गलने लगते थे।

केवल गौरांग नाम उल्लास अन्तर। हेन मते गत हैल अष्टम वत्सर।।08

केवल गौरांग नाम का आनन्द हृदय में रहता था।
इसप्रकार विरहावस्था में आठ वर्ष बीत गये।

एकदिने शांतिपुरे श्रीअद्वैताचार्य। गौरगुण स्मरि प्रेमे हइला अधैर्य।।09

एकदिन शान्तिपुर में श्रीअद्वैताचार्य गौरगुण
स्मरण करते हुए प्रेम में अधीर हो उठे।

हेनकाले पत्री आइल खड़दह हैते। लिखिला श्रीनित्यानन्द आचार्ये जाइते।।10

इसी समय एक व्यक्ति खड़दह से श्रीनित्यानन्द प्रभु की पत्री ले आया, जिसमें श्रीआचार्य को खड़दह आने का लिखा था।

पत्री पाञा श्रीअद्वैत हइ त्वरान्वित। नित्यानन्द पुरे गिया हैला उपनीत।।11

पत्री पाते ही श्रीअद्वैत शीघ्रता पूर्वक चल दिये और श्रीनित्यानन्द के पास आकर पहुँचे।

नित्यानन्द श्रीअद्वैतेर शुभ सम्मिलने। महानन्दे परस्पर कैला आलिंगने।।12

श्रीनित्यानन्द ने श्रीअद्वैत को मिलकर उनका शुभ सत्कार किया और दोनों ने एक दूसरे को महानन्दपूर्वक आलिंगन किया।

दुहु दोंहा देखि हञा प्रेमेते मगन। गोरा बुलि फुकारिया करये क्रन्दन।।13

दोनों एक दूसरे को मिलकर प्रेम में मग्न हो उठे और हा गौर– हा गौर बोलकर उच्च क्रन्दन किये।

कतक्षणे दोंहाकार बाह्य स्फूर्त्ति हैल। तबे दोहे एकासने निर्जने वसिल।।14

बहुत देर बाद दोनों को बाह्य स्फूर्त्ति हुई। तब दोनों एकान्त स्थान पर बैठ गये।

क्रमे सप्त रात्रि दोंहे वसिया निर्जने। किवा कथावार्त्ता कहे केह नाहि जाने।।15

इसी प्रकार सात दिन पर्यन्त एकान्त स्थान पर बैठे रहे। न जाने परस्पर क्या कथोपकथन करते रहे– यह कोई नहीं जान सकता

अष्टम दिवसे श्रीअद्वैत महारंगे। गौरगुण कीर्तन करये भक्तसंगे।।16

आठवें दिन श्रीअद्वैत प्रभु ने श्रीगौरगुण कीर्तन का भक्तों सहित आयोजन किया।

मध्ये नाचे नित्यानन्द प्रेमे अगेयान। श्रीगौरांग पादपद्म करिया धेयान।।17

सबके बीच प्रेमोन्मत्त होकर श्रीनित्यानन्द नृत्य करने लगे एवं श्रीगौर–चरण कमलों का ध्यान कर रहे थे।

जतेक महान्त प्रेमे बाह्य पाशरिला। अलक्ष्येते नित्यानन्द अन्तर्धान हैला।।18

जितने महापुरुष वहां विद्यमान थे, उनको बाहर की सुध बुध भूल गयी। तब अलक्षितरूप में नित्यानन्द अन्तर्धान हो गये।

बाह्य स्फूर्त्ति पाइ जत महान्तेर गण। नित्यानन्दे ना देखिया करे अन्वेषण।19

जब बाह्य ज्ञान हुआ तो सब श्रीनित्यानन्द प्रभु को ना देखकर उनको इधर–उधर ढूँढ़ने लगे।

सर्वतत्त्व ज्ञाता प्रभु अद्वैत ईश्वर। बुझिला श्रीनित्यानन्द हैला अगोचर।।20

श्रीअद्वैत ईश्वर सर्वज्ञाता हैं, समझ गये कि श्रीनित्यानन्दप्रभु तो अप्रकट हो गये।

हाहा करि बुले जैछे उन्माद। कह कि लागिया कैला ऐछे परमाद।।21

वे 'हा–हा' नित्यानन्द पुकारने लगे जैसे कोई उन्मादग्रस्त हो।
कहने लगे– हाय! यह प्रमाद किसलिए आपने किया?

एके मुञि गोराचाँद विषम विच्छेदे। मृतप्राय हञा आछि मनेर विषादे।।22

एक तो पहले ही मैं गौरचन्द्र के बिना विषम विरह
में मृत–प्रायः हो रहा हूँ– मन में महान् दुखी हूँ।

तबु छिनु वाँचिया तोमार मुख चाइ। तुमिह छाड़िला यदि एवे काँहा जाई।23

फिर भी मैं तुम्हारे मुखचन्द्र को देखकर कुछ बच रहा था।
अब तुम्हारे त्याग जाने पर मैं कहाँ जाऊँ?

ऐछे एत कहि प्रभु विलाप करिला। तार एक बिन्दु मुञि लिखिते नारिला।24

ऐसा कहकर प्रभु जितना विलाप करने लगे–
उसका एक बिन्दुमात्र भी मैं वर्णन नहीं कर सकता।

नित्यानन्देर अप्रकट जानि भक्तगण। काँहा नित्यानन्द बुलि करये क्रन्दन।।25

श्रीनित्यानन्द प्रभु का अप्रकट होना जानकर भक्तगण– "हाय! कहाँ गये
दीनदयाल हमारे नित्यानन्द ऐसा बार–बार पुकार कर रोने लगे।

कान्दि प्रभु वीरभद्र धुलाय लोटाय। श्रीअद्वैतचन्द्र सभाकारे प्रबोधय।।26

श्रीवीरचन्द्र प्रभु तो रो–रोकर पृथ्वी पर पछाड़ें खाने लगे।
श्रीअद्वैत प्रभु ने सबको सान्त्वना दी।

महा महोत्सवेर उद्योग कराइला। जाँहा जाहा भक्त तांहा पातिया ठाइला।27

महा महोत्सव का आयोजन किया, जो भी भक्त जहाँ था,
उसे वह सूचना पत्र भिजवाया।

यथाकाले आइला जत महान्तेर गण। खड़दह हैल पुन हर्ष उद्दीपन।।28

यथासमय सब महान्तगण वहां एकत्रित हुए,
तब खड़दह में एक आनन्द उद्दीपित हो उठा।

महोत्सव दिने करि स्नान समापन। सभे मिलि आरम्भिला महा संकीर्तन।।29

महोत्सव के दिन स्नानादि समाप्त कर सबने महा संकीर्तन आरम्भ किया।

सात सम्प्रदाये बाजे चतुर्दश मादल। शत शत बाजे सुमधुर करताल।।30

सात सम्प्रदायों में चारों ओर मादल एवं शत शत बाजे,
करतालादि सुमधुर बजने लगे।

प्रति सम्प्रदाये नाचे एक एक जन। सर्व सम्प्रदाये नाचे कुबेर नन्दन।।31

एक एक सम्प्रदाय में एक–एक भक्त नाच रहा था

किन्तु अद्वैतप्रभु सब सम्प्रदायों में नृत्य कर रहे थे।

जैछे सेइ कीर्तनानन्द प्रत्यक्ष करिनु। बाहुल्येर भये तैछे लिखिते नारिनु।।32

जैसा मैंने वह कीर्तनानन्द प्रत्यक्ष देखा, विस्तार भय से
यहां उतने का उल्लेख नहीं कर पा रहा हूँ।

संकीर्तन अन्ते जत श्रीवैष्णव गण। गौरांगेर लीला रस करे आस्वादन।।33

संकीर्तन के बाद जितने श्रीवैष्णव प्रभु आये थे,?
वे श्रीगौरांग लीलारस का आस्वादन करने लगे।

तबे प्रभु वीरभद्र स्थान उपस्करि। एक स्थाने तिन ठाँइ कैला यत्नकरि।।34

तब श्रीवीरभद्र प्रभु ने स्थान शुद्ध किया।
एक जगह तीन स्थान चेष्टा पूर्वक बनाये।

तिन भोग साजाइया ताँहाहि राखिला। तबे श्रीअद्वैत स्थाने कहिते लागिला।।35

तीन भोग सजाकर उन स्थानों पर उन्होंने रखे।
तब उन्होंने श्रीअद्वैतप्रभु से कहा–

मोर एक अभिलाष कहि तव ठाँञि। बालकेर वान्छा पूर्ण करह गोसाञि।।36

मेरी एक अभिलाषा है जिसका आपको निवेदन करता हूँ।
हे गोस्वामी! आप मुझ बालक की यह वान्छा पूरण कीजिये।

जैछे महाप्रभु आर प्रभु दुईजने। एकत्रे वसिया पूर्व करिला भोजने।।37

जैसे श्रीमहाप्रभु और आप दोनों प्रभु मिलकर एक साथ तीनों भोजन करते थे–

तैछे आजि कर मोर गृहेते भोजन। देखिया सुख होक ए छार नयन।।38

वैसे आज मेरे घर पर भी तीनों एक साथ भोजन
करें। आपके दर्शन कर मैं अपने नयन सफल करूँ।

भाव बलि सकल महान्त साय दिला। भोग लागाइते तवे मोर प्रभु गेला।।39

उसका भाव जानकर श्रीअद्वैतप्रभु सब महान्तोंको लेकर भोग लगानेके लिए गये।

पहिले श्रीमहाप्रभुर भोग लागाइला। ताहान दक्षिणे नित्यानन्देर भोग दिला।।40

पहले उन्होंने श्रीमहाप्रभु को भोग लगाया,
उनकी दक्षिण दिशा में श्रीनित्यानन्द प्रभु को भोग दिया।

गौरांगेर वामे प्रभु वसिला आपने। देखि हरिध्वनि करे श्रीवैष्णव गणे।।41

फिर गौरांग की बांयी ओर स्वयं श्रीअद्वैत प्रभु विराजमान हो गये।
यह देखकर सब वैष्णवों ने अति आनन्द पाकर उच्च हरिध्वनि की।

भोजन आरति करे प्रभु वीरचन्द्र। धूप दीप ज्वालि नेहारये मुखचन्द्र।।42

भोजन–आरती प्रभु वीरचन्द्र ने उतारी। धूप–दीप
देकर प्रभुओं के श्रीमुखचन्द्रों के दर्शन किये।

नव अनुरागे जत माहान्तेर गण। गौरांगेर भोजनारति करये कीर्तन।।43

जितने भी महान्तगण उपस्थित थे, नवीन अनुराग
से श्रीगौरांग की भोजन आरती गान करने लगे।

किवा से अपूर्व शोभा आनन्देरकन्द।तांहा सभे वर्णिते ना पारों मुञि भाग्य मन्द।44

उस समय कैसी शोभा थी, कैसा आनन्द समूह छाया हुआ था।
मैं भाग्यहीन उस समस्त का वर्णन नहीं कर सकता।

सभा मध्ये वीरभद्र बाहु तुलि बले। मोर एक कथा शुन वैष्णव सकले।।45

सभा में श्रीवीरभद्र प्रभु ने भुजा उठाकर कहा–
समस्त वैष्णवजन! मेरी एक विनय सुनिये।

जेवा केह करिवेक अन्न महोत्सवे। ऐछे आगे तिन प्रभुर भोग लागाइवे।।46

जो भी कहीं अन्न महोत्सव भविष्य में करे वह
ऐसी प्रकार पहले तीनों प्रभुओं को भोग लगाया करें।

परे सेइ महाप्रसाद लइया यतने। समर्पिवे साधु द्विज वैष्णवेर गणे।।47

उसके बाद वह महा महाप्रसाद लेकर यत्नपूर्वक
साधु–वैष्णवजनों को परोसा जाना चाहिये।

तिन प्रभु भोजने हय महायज्ञपूर्ण। तिन प्रभुर भोजने हय भद्रासन धन्य।।48

तीनों प्रभुओं के भोजन करने से ही महायज्ञ की पूर्णता होती है।
उसी से ही भद्रासन धन्य होता है।

श्रीचैतन्य नित्यानन्द अद्वैतगोसाञि। तिने एक एके तिन भिन्न भिन्न नाञि।।49

श्रीचैतन्य, श्रीनित्यानन्द तथा श्रीअद्वैत–ये तीनों एक हैं इनमें कोई भेद नहीं है।

तिने भेद बुद्धि करिवेक जेइ जन। कभु सेइ ना पाइवे चैतन्य चरण।।50

इन तीनों प्रभुओं में जो भी भेद बुद्धि करेगा–
वह कभी भी श्रीचैतन्यचरण प्राप्त नहीं कर पायेगा।

गौर कृपा विनु प्रेमभक्ति ना लभिवे। एहेन दुर्लभ जन्म विफले जाइवे।।51

गौरकृपा के बिना प्रेमभक्ति प्राप्त नहीं होगी,
इससे दुर्लभ जन्म निष्फल चला जाएगा।

जे उत्सवे तिन प्रभुर भोग ना लागिवे। दक्ष यज्ञ सम तार यज्ञ ना पूरिवे।52

जिस उत्सव में तीनों प्रभुओं को भोग न लगाया जायेगा, दक्षयज्ञ की भांति वह यज्ञ कभी पूर्ण नहीं होगा अर्थात् निष्फल हो जाएगा।

अन्नदान फललाभ नारिवे करिते। सर्वनाश हैवे यज्ञ–जाइवे अधःपाते।।53

अन्नदान का फल उसे प्राप्त न होगा,

सर्वनाश होकर यज्ञकर्ता का अधःपतन हो जायेगा।

परकाले हैव तार नरके वसति। चन्द्र सूर्य शकिते ना पाइवे अव्याहति।।54

परकाल में उसे नरक में जाना होगा। चन्द्र सूर्यादि किसी भी देवता की शक्ति से उसका उद्धार नहीं हो सकेगा। चैतन्यकृपा बिना जीवन निष्फल होगा।

वीरचन्द्रेर मुखे हेन वाक्य शुनि सबे। तथास्तु तथास्तु कहे सकल वैष्णवे।55

श्रीवीरचन्द्र के श्रीमुख से यह वचन सुनकर सब वैष्णवों ने मिलकर कहा– "तथास्तु–तथास्तु–" ऐसा ही होगा। यही उचित विधि है।

तबे उठिलेन प्रभु करिया भोजन। आचमन करि कैला ताम्बूल सेवन।।56

तब श्रीअद्वैत प्रभु भोजन प्रसाद पाकर उठे।

आचमन लेकर उन्होंने ताम्बूल सेवन किया।

तबे वीरभद्र प्रभु हरषित हञा । सेइ महाप्रसादान्न दिला विवर्त्तिया।।57

तब श्रीवीरचन्द्र ने प्रसन्न होकर श्रीहरिनाम का

घोष करके उस महाप्रसाद को सबमें परोसा।

ब्राह्मण वैष्णवसाधु महान्तादि जत। महाप्रसाद पाञा सभे मानिला कृतार्थ।58

ब्राह्मण–वैष्णव साधु तथा सब महान्तगण

महाप्रसाद पाकर अपने को कृतार्थ माना।

उत्सवान्ते वीरचन्द्र प्रभुर आज्ञा पाञा। पशारेर उद्योग करिला हर्ष हञा।।59

उत्सव के अन्त में श्रीवीरचन्द्र ने श्रीअद्वैत की आज्ञा मांगकर पशार महोत्सव (नन्द महोत्सव) का महाआनन्द आयोजन किया।

हरिद्रा मिश्रित दधि नवीन हाण्डीते। शोभा करे नव आम्र–पल्लव ताहाते।।60

हल्दी, दही मिलाकर एक नवीन हाण्डी में भरा।

उसके ऊपर नवीन आम के पत्ते रखे और–

नूतन वस्त्रेते ताहा करि आच्छादन। अद्वैतेर आगे तिंह करिला स्थापन।।61

नवीन वस्त्र से उसको ढक दिया और

फिर श्रीअद्वैत प्रभु के आगे धर दिया।

मोर प्रभुर आज्ञामते श्रीअच्युतानन्द। पशार करिला करि कीर्तन आनन्द।।62

श्रीअद्वैत की आज्ञा पाकर श्रीअच्युतानन्द ने नन्दमहोत्सव का आनन्दमय कीर्तन आरम्भ किया। "नन्द के आनन्द भये जय कन्हैया लाल की। हाथी दिये घोड़ा दिये और दिये पालकी।।"

दधिमंगल करि जत श्रीगौरांगेर गण। गोकुलीया गोपभावे करये नर्त्तन।।63

तब गौरभक्तों ने दधि मंगल (दधि काना) करके
गोकुलीय गोपों के भाव में नृत्य–कीर्तन किया।

जे आनन्द हैल ताहार कूल नाहि देखि। आत्मशोधिवारे सूत्र लव मात्र लिखि।।64

वहां जो अपार आनन्द हुआ उसका पार नहीं दीखता है–
मैंने आत्मशोधन के लिए उस सिन्धू का यह सूत्रमात्र में ही उल्लेख किया है।

उत्सवान्ते भक्तगण निजस्थाने गेला। मो सभारे लञा प्रभु शांतिपुरे आइला।।65

उत्सव के अन्त में सब भक्तगण अपने–अपने स्थानों पर चले गये और हम सब किंकरों को साथ लेकर हमारे श्रीअद्वैत प्रभु शांतिपुर लौट आये।

निजघरे आसि प्रभु विषादित मने। आन बोल नाहि मुखे हरेकृष्ण बिने।।66

अपने घर में आकर प्रभु मन में बड़े दुखी होकर रहने लगे– "हरे कृष्ण" और श्रीकृष्णचैतन्य के बिना और कोई वचन उनके मुख से नहीं निकलता था।

एकदिन मुञि कीट प्रभु आज्ञा द्वारे। नवद्वीपेर तत्व जानिवारे आइनु शांतिपुरे।।67

एकदिन मैं दीन–हीन प्रभु आज्ञा से नवद्वीप का
समाचार लेने गया और शांतिपुर लौट आया।

प्रभुपदे कैनु दण्डवत नमस्कार। प्रभु कहे ईशानदास कह समाचार।।68

प्रभु के श्रीचरणों में मैंने दण्डवत् प्रणाम किया।
प्रभु बोले– ईशान! नवद्वीप का समाचार कहो।

मुञि कहिलाङ नवद्वीपवासीगण। गौरांग अप्रकटे सभार सुदुःखित मन।।69

मैं बोला– प्रभो! महाप्रभु के अप्रकट हो जाने से
सब नवद्वीप वासी मन में बहुत दुखी हैं।

भाग्ये पण्डित दामोदरे–पाइनु दर्शन। तिंहो कहे कोँहा इहा कैला आगमन।।70

भाग्यवश मुझे दामोदर पण्डित के दर्शन वहां हुए।
उन्होंने पूछा– तुम यहां कैसे आये हो?

विष्णुप्रिया माता शची देवीर अन्तर्धाने। भक्तद्वारे द्वाररुद्ध कैला स्वेच्छाक्रमे।।71

शची देवी के अन्तर्धान होने के बाद श्रीविष्णुप्रिया माता ने अत्यन्त तीव्र वैराग्य धारण कर अपनी इच्छा से भक्तों के लिए आना बन्द कर दिया है।

ताँर आज्ञा विना ताने निषेध दर्शने। अत्यन्त कठोर व्रत करिला धारणे।।72

उनकी आज्ञा के बिना उनका दर्शन कोई नहीं पा सकता।
उन्होंने अत्यन्त कठोर व्रत धारणकर लिया।

प्रत्यूषेते स्नान करि कृताह्निक हञा। हरिनाम करि किछु तण्डुल लइया।।73

बहुत सवेरे स्नान कर एवं दैनिक नियम कर वह
कुछ चावल लेकर हरिनाम करने बैठ जाती है।

नाम प्रति एक तण्डुल मृत्पात्रे राखय। हेनमते तृतीय प्रहर नाम लय।।74

सोलह नाम बत्तीस अक्षर हरिनाम महामंत्र के जपकर एक चावल का दाना गिनती मिलाती हैं इसप्रकार तीसरे प्रहर तक हरिनाम जपकर केवल वो ही गिने हुए चावलों का ठाकुरजी (श्रीगौर विग्रह) का भोग लगाती हैं।

जपान्ते सेइ संख्यार तण्डुल मात्र लञा। यत्ने पाक करे मुख वस्त्रेते बान्धिया।।75

प्रति श्रीहरिनाम पर वह एक चावल मिट्टी के पात्र में रखती जाती हैं फिर मुख बांध कर यत्नपूर्वक उनको पकाकर श्रीगौरसुन्दर को भोग लगाती हैं।

अलवण अनुपकरण अन्न लञा। महाप्रभुर भोग लागाय काकुति करिया।।76

बिना नमक एवं किसी सागादि उपकरण के अन्न से श्रीमहाप्रभु को
दीनतावपूर्वक भोग लगाती है।

विविध विलाप करि दिया आचमनी। मुष्टिक प्रसाद मात्र भुन्जेन आपनि।।77

अनेक विलाप करते हुए प्रभु को आचमन समर्पण करती है।
बाद में एक मुट्ठी भर प्रसाद अन्न वह आप ग्रहण करती हैं।

अवशेषे प्रसादान्न विलाय भक्तेरे। ऐछन कठोर व्रत के करिते पारे।।78

बाकी बचा महाप्रसादान्न वह भक्तों में वितरण कर देती हैं– ऐसा कठोर व्रत भला और कौन धारण कर सकता है? बिना नदिया ईश्वरी के।

वज्राघात सम वाक्य करिया श्रवण। भाविनु मातारे कैछे पाइमु दर्शन।।79

वज्राघात के समान यह वचन सुन मैं सोचने लगा कि–
माता विष्णुप्रिया के दर्शन मुझे कैसे प्राप्त होंगे?

हेनकाले आइला ताँहा दास गदाधर। श्रीरामण्डित आदि भक्त प्रवर।।80

इतने में श्रीगदाधर दास वहां आए,
श्रीरामपण्डित आदि भक्तप्रवर भी वहां आ पहुँचे।

प्रसाद लइते सभे दामोदर सने। अन्तःपुरे प्रवेशिला सजल नयने।।81

सबने श्रीदामोदर से प्रसाद लिया और उसके साथ

अन्तःपुर में सजल नेत्रों से प्रवेश किया।

तबे विष्णुप्रिया मातार आज्ञा अनुसारे। मो अधमे लञा पण्डित गेलान्तःपुरे।82

तब श्रीविष्णुप्रियाजी की आज्ञा पाकर वह

मुझ अधम को भी अन्तःपुर में ले गये।

जाञा देखि काण्डा पटे मायेर अंग ढ़ाका। कोटि भाग्ये श्रीचरण मात्र पाइनु देखा।।83

जाकर मैंने देखा कि उन्होंने एक मोटी चादर से अपना शरीर ढक रखा था,

कोटि भाग्यों से मुझे केवल उनके चरणों के दर्शन प्राप्त हुए।

भक्त कृपा लवे किन्चित् पाइनु प्रसाद। कृतार्थ हइनु मनेर घुचिल विषाद।।84

भक्त कृपालव से किन्चित प्रसाद भी मैंने पाया,

कृतार्थ मानकर मेरे मन का दुख दूर हो गया।

जे कष्ट सहेन माता कि कहिमु आर। अलौकिक शक्ति विना ऐछे साध्यकार।।85

माता कितना कष्ट सहन कर रहीं थीं– वह अलौकिक

शक्ति के बिना भला कौन सहन करेगा।

ताहा शुनि मोर प्रभु करये क्रन्दन। कृष्ण इच्छा मानि करे खेद सम्वरण।।86

यह सुनकर मेरे प्रभु श्रीअद्वैत रोने लगे– कृष्ण इच्छा

मानकर उन्होंने दुख का सम्वरण किया।

विष्णुप्रिया माता दशा चक्षे जे देखिनु। कहिते पराण फाटे लिखिते नारिनु।।87

श्रीविष्णुप्रियाजी की जो अवस्था मैंने नेत्रों से देखी,

उसे कहते प्राण फटते हैं, लिख नहीं सकता हूँ।

तबे किछु दिन परे प्रभु सीतानाथ। श्रीअंगने वसि पड़े श्रीमद्भागवत।।88

उसके कुछदिन बाद प्रभु सीतानाथ आंगन में बैठ श्रीभागवत पाठकर रहे थे तो–

हेन काले एक शुद्ध वैष्णव आइला। प्रभुर आगे तिंहो अष्ट–अंगे प्रणमिला।।89

उस समय एक शुद्ध वैष्णव वहां आया

और उसने प्रभु के आगे साष्टांग प्रणाम किया।

प्रभु तारे कहे अबे काँहा हैते आइला। तिंहो कहे प्रभु वीरभद्र पाठाइला।।90

प्रभु ने पूछा– इससमय तुम कहां से आ रहे हो?

उसने कहा मुझे प्रभु वीरभद्रने आपके पास भेजा है।

विंशति वत्सर तान वयस रखने। अदीक्षित आछेन गुरु योग्य पात्र विने।।91

उनकी उम्र बीस वर्ष की है। किन्तु अभी तक

वे योग्य गुरुपात्र के बिना अदीक्षित ही हैं।

तेत्रि तव स्थाने मंत्र लइवार आशे। नौका योगे तिंहो आसितेछे प्रेमावेशे।।92

अतः वे आपसे मंत्र दीक्षा लेने के लिये प्रेमपूर्वक
नौका द्वारा आपके पास आ रहे हैं।

प्रभु कहे वीरेर एइ बुद्धि नहे शुद्ध। इहा तार निजगणेर सम्मति विरुद्ध।।93

प्रभु ने कहा– श्रीवीरभद्र की यह बुद्धिमत्ता ठीक नहीं है।
यह उसके पारिवारिक जनों के सम्मति के भी विपरीत है।

मोर कथा बुझाइया कह जात्रा वीरे। जाह्ना–मातार स्थाने मन्त्र लइवारे।।94

मेरी बात समझाकर उनसे जाकर कहो–
कि वे जान्हवा माता से दीक्षा ग्रहण कर लें।

ताहाशुनि श्रीवैष्णव खड़दहे गेला। जाह्नवार स्थाने प्रभुर आज्ञा निवेदिला।।95

यह सुनकर वह वैष्णव खड़दह लौट गया और
जान्हवा माता के प्रति श्रीअद्वैत की आज्ञा सुनायी।

शुनि श्रीजाह्नवा एक साधु पाठाइला। फिराइया आनि वीरे दीक्षित करिला।96

यह सुनकर जगतगुरू श्रीजान्हवा माता ने एकभक्त को भेजकर श्रीवीरभद्र को
वापस बुला भेजा एवं उनको मंत्र दीक्षा देकर धन्य किया।

एबे शुन श्रीअद्वैत प्रभुर अन्तर्धान। जे कथा लिखिते मोर फाटये पराण।।97

अब श्रीअद्वैतप्रभु के अन्तर्धान का प्रसंग सुनिये,
जिसका उल्लेख करने में मेरे प्राण फटते हैं।

एकदिन प्रभुर हैल महा भावावेश। काँहा निमात्रि बलि बुलें करिया उद्‌देश।।98

एकदिन श्रीअद्वैत महाभावाविष्ट हो उठे और मेरा प्राणन प्यारा "निमाई कहां
है?" यही पुकारते हुए इधर–उधर भ्रमण कर श्रीगौर को ढूंढ़ने लगे।

बहुक्षणे आचार्येर बाह्य स्फूर्त्ति हैल। तबे निज प्रिय पुत्रगणे बोलाइल।।99

बहुत देर के बाद श्रीआचार्य को बाह्य ज्ञान हुआ।
तब उन्होंने अपने प्रियपुत्रों को बुलाया।

प्रभु कहे मोरदुख शुन वत्सगण। मोर दुष्टगणे करे गौरांग निन्दन।।100

प्रभु ने कहा– पुत्रो! मेरे दुख को सुनो। मेरे दुष्ट
शिष्यजन श्रीगौरांग की निन्दा करते फिरते हैं।

इहा मोर पराणे नाहिक सह्य हय। तार प्रायश्चिते देह त्यजिमु निश्चय।।101

यह बात मेरे प्राण सहन नहीं कर सकते। इसके
प्रायश्चित के लिये इस शरीर का मैं अब त्याग करना चाहता हूँ।

अतएव श्रीगौरांगेर प्रिय भक्तगणे। मोर आज्ञा जानाइया आनह एखाने।।102

इसलिए श्रीगौरांग के जितने प्रिय भक्त हैं,

उनको मेरी आज्ञा कहकर यहाँ बुलवाओ।

एत कहि मोर प्रभु हइला स्तम्भित। झाट सर्वस्थाने तत्व दिला श्रीअच्युत।।103

इतना कहकर श्रीअद्वैतचन्द्र स्तम्भित हो गये।

श्रीअच्युतजी ने सब जगह शीघ्र खबर भेज दी।

प्रभुर आज्ञा पाति पाञा प्रभु वीरचन्द्र। शांतिपुरे आसिलेन लञा भक्तवृन्द।।104

प्रभु की आज्ञा पाकर प्रभु श्रीवीरचन्द्र अपने

भक्तों को लेकर शीघ्र शांतिपुर आ पहुँचे।

अम्बिका हइते आइला पंडित गौरीदास।नवद्वीपेर भक्तजत आइला प्रभुर पाश।105

अम्बिका से पण्डित गौरीदास आये और नवद्वीप से

सब भक्तगण श्रीअद्वैतचन्द्र के पास आये।

भक्तगण लञा आइला सरकार ठाकुर। पण्डित प्रवर आइला कवि कर्णपूर।।106

सरकार ठाकुर नरहरि अपने भक्तों को लेकर वहां आये।

कविकर्णपूर पण्डित प्रवर वहां पहुँचे।

श्यामदास विष्णुदास श्रीयदुनन्दन। आर जत अद्वैतेर प्रिय शिष्यगण।।107

श्रीश्यामदास, श्रीविष्णुदास श्रीयदुनन्दन और भी

जितने श्रीअद्वैतप्रभु के प्रिय शिष्यगण थे।

शांतिपुरे आसि सभे प्रभुर चरणे। अष्ट–अंग प्रणमिया करिला स्तवने।।108

वे सभी शान्तिपुर में आये और प्रभु के चरणों में

साष्टांग प्रणाम कर अनेक स्तुति गान किया।

प्रभु कहे तोरा सभे मोर प्रियतम। मोर एक वाक्य सत्य करिह पालन।।109

श्रीअद्वैतप्रभु ने कहा– आप सब मेरे परम प्रिय हैं।

आप मेरा एक वाक्य सत्य मानकर पालन कीजिये।

श्रीचैतन्य महाप्रभुर गुण आर धर्म। यथासाध्य प्रचारिवा एइ मोर मर्म।।110

श्रीचैतन्य महाप्रभु के गुण और धर्म यथासाध्य प्रचार कीजिये।

यही मेरी आन्तरिक इच्छा है और–

श्रीगौरांग–द्वेषी जत पाषण्डी असभ्य। ता सभार संग त्याग अवश्य कर्तव्य।।111

श्रीगौरांग के द्वेषी जितने पाषण्डीजन हैं वे असभ्य हैं,

उन सबका संग त्याग आपका अवश्य कर्त्तव्य है।

तबे तोरा सभे करि गौर संकीर्तन। मोर चिर मनोवान्छा करह पूरण।।112

अब आप सब मिलकर गौर संकीर्तन कीजिये
और मेरी मनोवान्छा को पूरा कीजिये।

शुनि सर्व भक्तगणेर प्रेम उपजिला। गौरनाम गुण संकीर्तन आरम्भिला।।113

यह सुनकर सब भक्तों में श्रीगौर कृपा से प्रेम उछल पड़ा और उन्होंने श्रीगौर नाम–गुण का उल्लासपूर्वक संकीर्तन आरम्भ किया।

श्रीअच्युत कृष्णमिश्र गोपाल ठाकुर। प्रभु वीरचन्द्र नरहरि रसपूर।।114

श्रीअच्युत श्रीकृष्णमिश्र, श्रीगोपालठाकुर, प्रभु वीरभद्र रसिक, श्रीनरहरि पण्डित–

गौरीदास पण्डित आर पण्डित दामोदर। सात जने नृत्य करे अति मनोहर।।115

गौरीदास, पण्डित दामोदर– ये सात जने तो अति मनोहर नृत्य करने लगे।

गौरगुण शुनि प्रभुर प्रेम उथलिल। संकीर्तन मध्ये आसि नाचिते लागिल।116

गौरगुण सुनते ही प्रभु में प्रेम उछलने लगा और
संकीर्तन के मध्य में आकर नाचने लगे।

क्रमे संकीर्तन सिन्धुर तरंग बाढ़िला। महाभावे श्रीअद्वैत ताहाते डुबिला।।117

क्रमशः संकीर्तन सागर की तरंगें तो बढ़ने लगीं
और महाभावाविष्ट होकर श्रीअद्वैत उसमें डूब गये।

स्तम्भ आदि रत्नप्रभु सर्वांग परिला। कोँहा प्राणगोरा बलि कान्दिते लागिला।।118

स्तम्भ–अश्रु, कम्प–पुलकादि सात्विक विकार रूपी महारत्न श्रीप्रभु के अंगों पर विभूषित होने लगे। "कहाँ है प्राण गौरचांद" ऐसा पुकारते हुए रोने लगे।

प्रभुर अद्‌भुत भाव जीवे न सम्भवे। प्रभुरे घिरिया प्रेमे कान्दे भक्त सबे।।119

प्रभु में जो भावोद्‌गम हुआ वह साधारण जीवों में सम्भव नहीं है।
प्रभु को चारों ओर घेरकर दर्शन करते हुए सब भक्तगण रोने लगे।

तबे प्रभु कहे एइ पाइनु गौरांग। कदम्ब कुसुम सम हैल तान अंग।।120

तब प्रभु बोले– "यह पा लिया मैंने गौरांग–
ऐसा कहते ही उनके अंग कदम्ब कुसुम की भांति हुये।

हठात् मदन गोपालेर श्रीमन्दिरे गेला। प्राकृत जनेर प्रभु अगोचर हैला।।121

अचानक वे मदनगोपाल के मन्दिर में चले गये और वहां ही फिर प्राकृतजनों की दृष्टि से अगोचर होकर अपने धाम को चले गये।

प्रभु चाहि भक्तगण इति उति धाय। ताने नाहि पाञा कान्दि धूलाय लोटाय।।122

प्रभु को ढूँढ़ने के लिए भक्तजन इधर–उधर भागे।

उन्हें प्राप्त न कर वे रोते धरती पर लोटने लगे।

श्रीअच्युत बुझि श्रीअद्वैत अन्तर्धाने। फुकारिया कान्दि कहे सर्व गौरगणे।।123

श्रीअच्युत ने श्रीअद्वैतप्रभु के अन्तर्धान के बाद
उच्च क्रन्दन करते हुए सब गौरगण से कहा–

गौरप्रेम कल्पवृक्षेर एक स्कन्ध छिल। ताहे गौरेर अप्रकट सम्पूर्ण नहिल।।124

गौरप्रेम कल्पवृक्ष का एक स्कन्ध थे श्रीअद्वैतचन्द्र। अतः उनके विद्यमान रहते हुए श्रीगौर का पूर्णतया अप्रकटन नहीं हुआ था।

आजि से गौरांग लीला हैल समाधान। शुनि सर्व भक्तगण कान्दे अविश्राम।।125

किन्तु श्रीअद्वैतप्रभु के अप्रकट होने से आज श्रीगौरांग लीला सम्पन्न हो गयी।
यह सुनकर सब भक्तगण निरन्तर रोने लगे।

हा गौरांग हा गौरांग हा नित्यानन्द। जय भक्तावतार श्रीअद्वैतचन्द्र।।126

"हा गौरांग– हा गौरांग– हा नित्यानन्द"
जय भक्तावतार श्रीअद्वैतचन्द्र। इसको छोड़कर और–

एइ बोल बिनु सभार मुखे नाहि आन। सेइ खेदे सत्य सत्य गलये पाषाण।।127

कोई वाक्य सबके मुख से न निकल पा रहा था।
उस समय के दुखद– विलापों से सचमुच पत्थर भी गले जा रहे थे।

दिवा रात्रि गेल कार नाहि बाह्य ज्ञान। द्वितीय दिवसे सबे कैल गंगास्नान।।128

दिन–रात गुजर गये किसी को बाहर की सुध ना रही।
दूसरे दिन सबने जाकर गंगा स्नान किया।

श्रीअच्युत प्रभु महामहोत्सव कैला। महाप्रसाद पाञा सभे निजस्थाने गेला।।129

श्रीअच्युत प्रभु ने महा महोत्सव किया। सब लोग
महाप्रसाद ग्रहण कर अपने–अपने स्थानों पर चले।

सओया शत वर्ष प्रभु रहि धराधामे। अनन्त अर्बुद लीला कैला यथाक्रमे।।130

125वर्षोतक श्रीअद्वैतप्रभुने धराधाम पर प्रकट रहकर अनन्त–असंख्य लीलाएं कीं।

सेई लीला अमिय–सिन्धु दुर्गम्य दुष्पार। अनन्त ना पाय अन्त मुञि कोन छार।।131

वे सब लीलाएं अमृत सिन्धु थीं, अति दुर्गम्य एवं दुष्पार थीं। उनका श्रीअनन्त भी अन्त नहीं पा सकते, फिर मैं तुच्छ जीव किस लेखे में हूँ?

आत्म शोधिवारे एइ दुःसाहस कैनु। लीला सिन्धुर एक बिन्दु छुँइते नारिनु।।132

आत्मशोधन के लिए मैंने यह दुस्साहस किया है, किन्तु लीला सागर के एक बिन्दु का भी स्पर्श नहीं कर पाया हूँ। हे प्रिय पाठकगण! कृपा करके इस ग्रन्थ

का प्रचार–प्रसार करके करूणामय निताई गौर सीतानाथ की लीला में सहयोग करके मेरे परिश्रम को सफल करें। इस सेवा को करने से मेरे प्रभु आप पर आशीर्वाद करेंगे।

विद्या बुद्धि नाहि मोर कैछे ग्रन्थ लिखि। कि लिखिते कि लिखिनु धरम तार साक्षी।133

मुझमें बुद्धि नहीं है कि कैसे ग्रन्थ रचना की जाती है। क्या लिखना चाहता था और क्या लिख गया– एकमात्र धर्म ही इसका साक्षी है।

(पूज्य ग्रन्थकार की यह अति दैन्योक्ति है)

साङड़िया कृष्ण दासेर बाल्य लीला सूत्र। जे ग्रन्थ पड़िले हय भुवन पवित्र।।134

श्रीकृष्णदास के बाल्य–लीला सूत्र स्मरण कर मैंने कुछ लिखा है।
उस ग्रन्थ के पढ़ने से भुवन–पवित्र और मन आनन्दित हो जाता है।

जे पड़िनु जे शुनिनु कृष्णदास मुखे। पद्मनाभ श्यामदास जे कहिल मोके।।135

जो कुछ मैंने श्रीकृष्णदास से पढ़ा और सुना
तथा श्रीपद्मनाभ श्यामदास ने जो मुझे कहा।

पाप–चक्षे जे लीला मुञि करिनु दर्शन। प्रभु आज्ञा मते जाहा करिनु ग्रन्थन।।136

फिर जो कुछ मैंने चर्म चक्षुओं से उनकी लीलाओं का दर्शन किया।
प्रभु की आज्ञा से मैंने उन सबको यहाँ ग्रथित किया है।

चौद्दशत नवति शकाब्द परिमाणे। लीलाग्रन्थ सांग कैनु श्रीलाउर धामे।।137

शकाब्द 1490 (सन् 1568) में यह महाग्रन्थ
'श्रीअद्वैतप्रकाश' श्रीलाउरधाम में सम्पूर्ण हुआ।

श्रीधाम लाउड़े मुञि आइनु जे कारणे। संक्षेपे से गूढ़ तत्व कहि साधु–स्थाने।138

मैं श्रीलाउरधाम में जिसके लिये आया था,
उसका संक्षेप गूढ़ तत्त्व भक्तों को सुनाता हूँ।

एकदिन प्रभु मोरे कहे संगोपने। गौरांग विच्छेद आर ना सहे पराणे।।139

एकदिन श्रीअद्वैत प्रभु ने मुझे एकान्त में कहा– हे प्रिय ईशान!
मेरे प्राण श्रीगौरांग के विरह को अब सहन नहीं कर सकते।

झाट मुञि जीव लोकेर हैमु अगोचर। गौरनाम गौरगुण कह निरन्तर।।140

अब मैं शीघ्र जीवलोक से अगोचर हो जाऊँगा
तुम निरन्तर श्रीगौरनाम–गुण का गान करते रहो।

आर एक कथा कहि शुन सावधाने। तुञि मोर प्रिय शिष्य आत्मज समाने।।141

और एक कथा ईशान! सावधान होकर सुनो,
तुम मेरे पुत्र के समान अति प्रिय शिष्य हो।

मोर अगोचरे दुख ना भाविह मने। गौरनाम प्रचारिवे मोर जन्मस्थाने।।142

मेरे अगोचर हो जाने पर मन में दुखी न होना।
श्रीगौरनाम का प्रचार मेरे जन्मस्थान पर करना।

एइ मोर आज्ञा सत्य करिह पालन। एत कहि कैला प्रभु मौनावलम्बन।।143

इस मेरी आज्ञा का सत्यपूर्वक पालन करना
इतना कहकर प्रभु धीर और शान्त हो गये।

मुञि भावों यदि गुरु–आज्ञा रक्षा हय। तबे मोर जन्म कर्म सफल निश्चय।।144

मैंने सोचा यदि श्रीगुरु आज्ञा का मैं पालन करूँ
तभी मेरा जन्म और कर्म सभी सफल होगा।

तबे प्रभुर अन्तर्धाने सीता ठाकुराणि। कि भावि एइ आदेशिला किछु नाहि जानि।।145

तब श्रीप्रभु के अन्तर्धान होने के बाद श्रीसीताठाकुराणी ने क्या सोचकर मुझे इसप्रकार आदेश किया।

अरे ईशानदास तोरे करि बड़ स्नेह। मोर तुष्टि हय तुइ करिले विवाह।।146

अरे ईशानदास! मेरा तुम पर अत्यन्त स्नेह है।
मेरी संतुष्टि तभी होगी यदि तुम गृहस्थाश्रम करो।

मुञि कहिलाङ माता बुझि आज्ञा कर। एइ आज्ञा पालिते नाहिक साध्य मोर।।147

मैंने कहा– माता! कुछ सोच–समझकर आज्ञा करो। मैं उस आज्ञा को पालन नहीं कर पा रहा हूँ। यह मेरे बस की बात नहीं है।

सप्तति वत्सर प्राय मोर वयः क्रम। इथे कोन द्विज कन्या करिवे अर्पण।।148

मेरी आयु 70वर्ष की है। इस अवस्था में कौन ब्राह्मण मुझे अपनी कन्या दे देगा?

माता कहे कृष्ण सदा भक्त वान्छा पूरे। तेञि भक्तवान्छा कल्पतरु नामधरे।।149

माता ने कहा– करूणा सिन्धु, भक्तवत्सल श्रीकृष्ण सदा भक्त की वान्छा पूरण करते हैं तभी तो वे भक्तवान्छा कल्पतरु कहलाते हैं।

पूर्वदेश जाह श्रीजगदानन्द सने। विवा कराइवे इहों करिया यतने।।150

तुम पूर्व बंग में श्रीजगदानन्द के साथ चले जाओ,
वह चेष्टाकर तुम्हारा विवाह करा देगा।

ताँहा गौरनाम धर्म करिवा प्रचार। ताहे बहु जीवगण हइवे निस्तार।।151

वहां जाकर श्रीगौर एवं गौरधर्म का प्रचार करना, श्रीहरिनाम के प्रभाव से उससे सहस्त्रों जीवों का निस्तार (उद्धार)होगा।

तोमार सन्तति हैव महाभागवत। हरिनाम दिया जीवे करिवेक मुक्त।।152

तुम्हारी सन्तान महाभागवत होगी।
वह हरिनाम प्रदान कर जीवों का उद्धार करेगी।

शिरे धरि एइ सीतामातार आदेश। जगदानन्द राय संगे आईमु पूर्वदेश।।153

श्रीसीतामाता का यह आदेश मस्तक पर धारणकर
मैं जगदानन्द राम के साथ पूर्व देश में चला आया।

वंशरक्षा करि प्रभुर आज्ञा पालिवारे। झाट चलि आइनु मुञि श्रीधाम लाउड़े।।154

वंश रक्षा एवं प्रभु की आज्ञा पालन के निमित्त
फिर मैं शीघ्र ही धाम लाउर में चला आया।

इहां रहि एइ ग्रन्थ करिनु लिखन। गुरु–आज्ञा मात्र मुञि करिनु रक्षण।।155

यहाँ रहकर मैंने इस ग्रन्थ का लिखना आरम्भ किया।
मैंने श्रीगुरु आज्ञा का पालन किया है।

सूत्रमात्र लिखिनु मुञि ऐछे आज्ञा मते। इथे किछु दोष गुण ना रहु आमाते।।156

उनकी आज्ञानुसार मैंने सूत्रमात्र का ही उल्लेख किया है।
मेरा इसमें कुछ दोष–गुण नहीं रहे।

एइ भिक्षा मागों श्रोता वैष्णवेर गणे। मो अधमेर अपराध क्षम निजगुणे।।157

यही भिक्षा मैं श्रोता–वैष्णवों के चरणों में मांगता हूँ।
अपने गुणों से वे मेरा अपराध क्षमा करें।
(ग्रन्थकार ने अत्यन्त दीनता के कारण ऐसा लिखा है।)

मुञि अति वृद्ध मोर नाहि किछु ज्ञान। श्रीचैतन्य पदे ग्रन्थ कैनु सम्प्रदान।।158

मैं अति वृद्ध हूँ, मुझे कुछ ज्ञान भी नहीं है।
मैंने यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य चरणों में समर्पण कर दिया है।

मोर जाहा साध्य ताहा करिनु लिखन। दया करि शोधन करिवे साधुगण।।159

मेरी जितनी समझ–सामर्थ्य थी, उसी का इसमें उल्लेख किया है।
साधुगण दयाकर इसका शोधन करके मुझे अनुग्रहीत करेंगे।

गुरु कृष्ण वैष्णवेर श्रीचरणसार। सबाकार पदे मोर कोटि नमस्कार।।160

श्रीगुरुगोविन्द एवं श्रीवैष्णवों के श्रीचरण ही सारवस्तु हैं। सबके श्रीचरणों में मेरा कोटि–कोटि प्रणाम है। उनकी कृपा के बिना कृष्ण कृपा दुर्लभ है।

एइ तिन एक वस्तु भिन्न–भिन्न काय। जीव निस्तारिते नाना रूप प्रकटय।।161

श्रीगुरु, श्रीकृष्ण एवं श्रीवैष्णवगण एक ही वस्तु है–केवल भिन्न शरीरों में प्रकाशित हो रहे हैं। जीवनिस्तार के लिये अनेक रूप धारण करते है।

कुण्डल हार ते जैछे दृश्य रूपान्तर। स्वर्ण एक कारण ताहा जीवेर गोचर।।162

सोना जैसे कर्णकुण्डल तोड़कर उसका रूपान्तर किया जाता है–
उसका एकमात्र कारण सोना है। यह सब देखते हैं।

एइ तिन हय दयासिन्धु अवतारी। एइ तिनेर पद मोर भव पारेर तरी।।163

ये तीनों दयासिन्धु अवतारी हैं।
इनके चरण मेरे भवपार जाने की नौका स्वरूप हैं।

एइ तिनेर पदे मोर एइ निवेदन। महा अपराधी मुञि ना जाय गणन।।164

इन तीनों के श्रीचरणों में मेरा यही निवेदन है कि
मेरी गणना दासानुदासों में हो जाय।

निजगुणे अपराध करह मार्जन। पतित–पावन नाम कर प्रकटन।।165

अतः आप सब अपने गुणों से मेरे सभी अपराध मार्ज्जन करें और अपने पतितपावन नाम और अपनी करूणा को विस्तार कीजिए।

मो सम पतित आर त्रिजगते नाञि। अन्ते येन पाङ रांगा श्रीचरणे ठाञि।।166

मेरे समान त्रिजगत् में और कोई पतित नहीं है।
अन्त में मुझे श्रीश्रीनिताईगौरसीतानाथ चरणकमलों की प्राप्ति हो।

श्रीचैतन्य श्रीअद्वैत पदे जार आश।
नागर ईशान कहे अद्वैत–प्रकाश।।
महाप्रभु शचीसुत श्रीगौर–गोविन्द।
ताँर स्कन्ध श्रीअद्वैत प्रभु नित्यानन्द।।
एइ तिन एक आत्मा मोर प्राणधन।
एइ तिनेर पदे सदा रहु मोर मन।।
श्रीचैतन्य नित्यानन्दाद्वैतचन्द्रेभ्यो नमः।।
।। इति श्रीअद्वैत प्रकाशे द्वाविंशोऽध्यायः।।
।। समाप्तश्चायं ग्रन्थः।।

त्रिभुवन को पावन करने वाले लेखक महाशय ने अत्यन्त दीनता के कारण अपने आप को पतित कहा है। यद्यपि लेखक महाशय नित्य सिद्ध पार्षद हैं। अपनी अति दीनता के कारण ऐसी भाषा लिखी है।